

मरुभूमि

2323

का

वट-वृक्ष

डॉ० अनुज प्रताप सिंह



बौद्धिकरस (१९६४ ई०) के प्रवर्तक कवि डॉ० रामप्रसाद मिश्र (१९ सितम्बर, १९३२) को डॉ० दुर्गाशंकर मिश्र (लखनऊ), स्व० पं० रामदयाल पांडेय (पटना), डॉ० एन्. चन्द्रशेखरन् नायर (तिरुवनंतपुरम्), डॉ० सुमेरसिंह 'शैलेश' (सतना), डॉ० चक्रधर 'नलिन' (रायबरेली) इत्यादि ने महाकवि माना है। उनकी तुलना प्रसाद (जून १९६५ की 'सरस्वती') और पंत (१९८० ई० में बच्चन) से की गई हैं। पंत और बच्चन ने उनकी मौलिकता सराही, तो डॉ० भगवतशरण अग्रवाल (अहमदाबाद) और श्री राजनाथ शर्मा (आगरा) ने उन्हें छायावादोत्तर कविता का प्रमुख कवि माना। डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव (पटना) उन्हें तुलनाओं से अलग एक विशिष्ट और असाधारण कवि मानते हैं। उनके 'पुरुषोत्तम' (३८ सर्ग), 'कल्पान्त' (१५ बड़े सर्ग), 'वेदायन' (१२ सर्ग), 'दृष्टि' (२२ सर्ग), 'मुहम्मद' (७ सर्ग), 'स्वर्गता' (७ सर्ग), 'सार्वभौम' (विशाल कविता संग्रह) इत्यादि के बौद्धिक और वैश्विक आयाम सर्वतः विलक्षण हैं, जिसे रामकुमार वर्मा, डॉ० विजयेन्द्र स्नातक, डॉ० रामदरश मिश्र, डॉ० भगवतीशरण मिश्र, डॉ० पवन कुमार इत्यादि ने सराहा है।

पुस्तकालय
 (पुस्तकालय नं. १३२३)
 १३२३

संस्कृत-विद्या-मन्दिर

संस्कृत-पुस्तकालय

(संस्कृत-विद्या-मन्दिर-केन्द्र)

आचार्य-.....

PLATE 100

(100)

PLATE 100

मरुभूमि का वटवृक्ष

३५५६ ॥ १६ ॥ ३५५६

मरुभूमि का वटवृक्ष

(वरिष्ठ सर्वविधाकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र
के कवि-रूप पर मौलिक प्रकाश)

संस्कृति एवं संस्कृत के प्रमोद

कवि

श्री मूषणलाल राजदान
के।

सादर

डॉ. अनुज प्रताप सिंह

एम.ए., पीएच.डी., डी.लिट्.

1 प्रसाद मिश्र.
20/11/2002

नवोदित प्रकाशन

63/3, जी, पीरबाबा रोड, लक्ष्मी पार्क,

नांगलोई - 110041

दूरभाष : 9891285918

भूत का मित्र

एन. प्रताप सिंह द्वारा रचित

(प्रथम संस्करण २००५)

© सर्वाधिकार सुरक्षित

ISBN : 81-902690-2-X

प्रथम संस्करण : 2005

प्रकाशक :

नवोदित प्रकाशन

63/3, जी, पीरबाबा रोड, लक्ष्मी पार्क,
नागलोई - 110041

शब्दसज्जा :

फ्रीडम इन्टरनेट कैफे

शॉप नं० 17, ए-6, डी0डी0ए0मार्केट

पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

फोन : 9213238273

मूल्य : रु. 400.00

मुद्रक :

चौधरी प्रेस, मौजपुर,
दिल्ली

Marubhoomi Ka Vatvraksha
by Anuj Pratap Singh

डॉ० रामप्रसाद मिश्र के सर्वविधाकार रूप के मर्मी,
'डॉ० रामप्रसाद मिश्र : व्यक्तित्व और कृतित्व', 'आलोचक डॉ०
रामप्रसाद मिश्र' तथा 'डॉ० रामप्रसाद मिश्र की मान्यताप्राप्त
कविताएं' के 'प्रस्थान'-ग्रंथकार, जिनके आधार पर पीएच०डी० और
एम०फिल० के अनेक शोध हुए और हो रहे हैं, सम्पादित और
स्वतन्त्र ग्रन्थ आये और आ रहे हैं। (वे गंभीर 'नवरहस्यवाद और
नई कविता' के विद्वान् शोधकर्ता और 'रामचन्द्र शुक्ल : एक
अध्ययन' के सुधी लेखक भी हैं)।

डॉ० पवनकुमार

एम०ए० (अं०), एम०ए०, पीएच०डी० (हिन्दी)

को

सप्रेम

समर्पित

अनुक्रम

अध्याय 1 :	(क) जीवनवृत्त	1-86
	(ख) एक विरल व्यक्तित्व	
	(ग) परिचय-विवरण	
	(घ) कुछ काव्यांजलियाँ	
	(ङ) पत्रों के दर्पण में	
अध्याय 2 :	समग्र काव्य-रचनी-विवरण	87-100
अध्याय 3 :	विश्ववाद और मानवतावाद	101-119
अध्याय 4 :	भारतीय संस्कृति की व्यापकतम विवृति	120-132
अध्याय 5 :	जीवन-दर्शन	133-164
अध्याय 6 :	व्यंग्य	165-181
अध्याय 7 :	क्रांतिदर्शिता	182-191
अध्याय 8 :	काव्य में बौद्धिकरस और जीवनदर्शन में बौद्धिक अद्वैतवाद	192-206
अध्याय 9 :	इतिहासबोध	207-217
अध्याय 10 :	राष्ट्रवाद	218-228
अध्याय 11 :	प्रकृतिचित्रण	229-238
अध्याय 12 :	रसवाद और प्रगति प्रयोग तथा नई कविता से उनका अवरोध	239-246
अध्याय 13 :	सौंदर्य दर्शन एवं सौंदर्य चित्रण	247-255
अध्याय 14 :	काव्य में एकाग्र चिंतन और अभिव्यक्ति	256-263
अध्याय 15 :	विज्ञान और वैज्ञानिक	264-273
अध्याय 16 :	काव्यपक्ष — भाषा, छंद, अलंकार और शैली	274-295
अध्याय 17 :	बिम्ब और प्रतीक	296-306
अध्याय 18 :	कुछ इतिहासपुरुषों के अंतिम क्षण	307-317
अध्याय 19 :	नारी-संवेदना	318-336
अध्याय 20 :	समाजशास्त्रीय अध्ययन	337-362

अध्याय 1

(क) जीवन-वृत्त

भूमिका

जीवन और साहित्य का सगा सम्बन्ध होता है। दोनों को कभी अलग नहीं किया जा सकता है। दोनों एक दूसरे में मिले रहते हैं; पुष्प और गंध की भाँति दोनों अन्यान्य होते हैं। साहित्य के अनेक मोड़ जीवन के अनुसार होते हैं। इसलिये किसी की कविता या साहित्य को समझने के लिए उसको समझना आवश्यक होता है। डॉ. रामप्रसाद मिश्र इसके अपवाद नहीं हैं, हो भी नहीं सकते हैं। अतः उनके जीवन के कुछ प्रसंगों को मैं यहाँ उतार रहा हूँ।

नाम

नाम के साथ सम्पूर्ण व्यक्तित्व और कर्तव्य जुड़ा रहता है। राम प्रसाद मिश्र उनका अपना रखा नाम है। यही नाम उनके सभी प्रमाणपत्रों और प्रशस्तिपत्रों में है। 1995 ई. में उनका उपन्यास 'पथ पर' छपा। तब आनन्दशंकर नाम से लिखते और छपते थे। कालान्तर में राम प्रसाद मिश्र नाम ही चलता आ रहा है। उन्होंने कोई कविनाम अथवा उपनाम अथवा छद्म नाम भी नहीं रखा है।

जन्मकाल

मिश्र जी का जन्म काल अविवादित रूप से 19-09-1932 ई. तदनुसार सोमवार विक्रम सम्वत् 1989 आश्विन कृष्ण-4 है। रात्रि प्रायः आठ बजे। उनका जन्मांक उपलब्ध नहीं है। वे ज्योतिष इत्यादि में विश्वास नहीं रखते।

जन्म एवं निवास-स्थान

कविवर रामप्रसाद मिश्र का जन्म स्थान उत्तर प्रदेश में साहित्य और राष्ट्रभक्तों का प्रसिद्ध जनपद उन्नाव में है। गंगा तट पर गाँव निम्बई है। निम्बई उनके नाना का घर था (नेवासा)। निम्बई स्वतंत्रता संग्राम सेनानी

अमर शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद के स्थान बदरका से दक्षिण की दिशा में 4-5 मील की दूरी पर सुरम्य गंगा तट के ऊँचे टीले पर अवस्थित है। बालक मिश्र को 3-4 वर्ष की अवस्था में ही निम्बई से सम्बन्ध विच्छेद करना पड़ा, फिर भी गंगा की उज्ज्वल जलधारा और महुओं के रस भरे टपकते फूल उनके स्मृति पटल पर सदैव बने रहे। उनका माटी का लगाव उनके साहित्य भर में फैला हुआ है। उनकी कुछ कविताओं में इन स्मृति-चित्रों के शब्द-रूप मिलते हैं। अपने पिता के साथ वे निम्बई से कानपुर, कानपुर से इटावा, इटावा से काशी, काशी से पुनः कानपुर के चक्कर काटते रहे। अर्थ के लिए उनके पिता जी को अनेक स्थान परिवर्तन करने पड़े। कानपुर का निवास काल कुछ स्थाई रहा। एम. ए. हिन्दी विषय से करते समय वे कानपुर के फजलगंज की एक छोटी सी कोठरी में रहते थे। यह स्थान डी.ए.वी. कालेज से 5 मील की दूरी पर है। डी.ए. वी. कालेज, नई दिल्ली में वे सन् 1962 ई. में नियुक्त हुए। इसके पूर्व अनेक स्थानों पर भटकते रहे। 6 वर्षों के अन्तराल में उन्होंने विद्याभवन उदयपुर (राजस्थान), विट्ठल भाई पटेल महाविद्यालय (आनंद, गुजरात), सहरिया कालेज, काला डेरा (जयपुर), बद्री विशाल महाविद्यालय फर्रुखाबाद, चिडावा कालेज (राजस्थान) 5 स्थानों में कार्य किया। मिश्र जी के ससुराल के भी अच्छे अनुभव हैं। रमईपुर से आगे कानपुर से जाते, दाईं ओर बन्वे पर कुछ दूर पत्नी का जन्मग्राम मटियारा है। पास में गंग नहर है। बड़ा रमणीक इलाका है। वह सदा हराभरा रहता है। सुन्दर बिम्बों और वर्णनों से कवि ने अपने निवासों का चित्रण किया है। मिश्र जी का प्रारंभिक काल बहुत उतार-चढ़ाव का रहा। 4 वर्ष की आयु में वे कानपुर आये थे, फिर काशी गये, पुनः 10 वर्ष की आयु से वे कानपुर में रहे। जिन दिनों मिश्र जी का विवाह हुआ उन दिनों जे. के. वाले कमलानगर के सामने (कानपुर) दुकान थी। दुकान छोटी थी पर इतनी चलती थी कि परिवार पोषण हो जाता था। परन्तु उनके बड़े भाई के मन में तनाव था, वे उसको तोड़कर स्वतंत्र कारबार करना चाहते थे। नौकरी की अच्छी व्यवस्था नहीं थी। उनकी कठिनाइयों को देखते हुए एक व्यापारी ब्राह्मण ने खाली पड़े विशाल कारखाने में (फजलगंज औद्योगिक क्षेत्र कानपुर) रहने की जगह दे दी। मिश्र जी निहाल हो गये, स्वतंत्र रहन-सहन प्रारम्भ हुआ। वह छोटा सा वनखण्ड था। एक छोटी सी मस्ती का जीवन था। वह काल 1953 ई. के आस-पास का है। इस निवास की बहुत सुंदर स्मृतियाँ हैं। 1 जनवरी 1957 ई. से डेढ़ वर्ष तक वे उदयपुर (राजस्थान) में रहे, अगले वर्ष वे वल्लभ विद्यानगर (आनंद

गुजरात) गये। वहाँ त्यागपत्र देकर फिर कानपुर वापस आ गये। अगले सवा वर्ष से काला डेरा (जयपुर, राजस्थान) में रहे। बंदी विशाल कालेज फर्रुखाबाद में कुछ दिनों तक रहे। तदनंतर चिड़ावा कालेज में लगे। 23 जुलाई 1962 में वे डी.ए.वी. कालेज नई दिल्ली में नियुक्त हुए, जहाँ से 20 दिसम्बर 1998 को अवकाश ग्रहण किया। तब से आज तक दिल्ली में ही हैं। 1966 ई. से वे सपरिवार दिल्ली निवासी हुए। मिश्र जी को कानपुर प्रिय रहा, पर वे रह न सके।

वंश एवं परिवार

कविवर रामप्रसाद मिश्र का जन्म एक ख्यातिलब्ध साहित्यसेवी एवं कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ। शांडिल्य गोत्रीय हिमकर के मिश्र हैं। कान्यकुब्ज ब्राह्मण शाखा में इस वंश का बहुत महत्व है। यह बात दूसरी है कि मिश्र जी जाति-पाँति में विश्वास नहीं रखते। वे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के जन्मग्राम दौलतपुर (रायबरेली जनपद, उत्तर प्रदेश) से संपृक्त हैं। कम्पिला में जन्मे तथा गुरुदक्षिणा में प्राप्त दौलतपुर को बसाकर वहीं अपना स्थायी निवासस्थल बनाने वाले रीति काल (शृंगार काल) के पिंगलाचार्य कविराज सुखदेव मिश्र के वंशज डॉ. मिश्र के पिता पं. शिवलाल मिश्र दौलतपुर से आकर निम्बई में बस गये थे। निम्बई उनके मामा का घर था। वंश-परिवार साहित्य से सम्पन्न था। सुखदेव मिश्र रीतिकालीन अच्छे कवि थे। सुखदेव मिश्र ने भी अपने पूर्वजों के पाण्डित्य की प्रशंसा की है। 20वीं सदी में स्व. गंगा सागर मिश्र, कवि फूलचन्द्र मिश्र 'चन्द्र' और प्राचार्य डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र आदि कई रचनाकार हुए हैं।

पं. शिवलाल मिश्र की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। परिवार में कमाने वाले वे अकेले थे। 1948 ई. में प्राइवेट तौर पर हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पूर्व ही डॉ. मिश्र का विवाह सम्पन्न हो गया। 1953 ई. में पिता दौलतपुर चले गये। 1956 ई. तक मिश्र जी दो सन्तानों के पिता भी हो गये। परिवार के पालन-पोषण का भार भी केवल उन पर था। साहसी पत्नी ने उनका बड़ा साथ दिया। मिश्र जी का लगाव अन्य से कम और साहित्य की ओर अधिक था। वे बार-बार संघर्ष झेलते रहे। वे एकान्त में अपनी तपस्या किया करते थे। प्राइवेट विद्यालय में काम और ट्यूशन के समय के उपरान्त उनका समय स्वाध्याय में जाता। 'स्वर्गता' काव्य में मिश्र जी ने अपनी जीवनी पर स्वयं प्रकाश डाला है। इसको शोधकाव्य

कहा जा सकता है। उनकी जीवनी संघर्ष की कहानी है। 46 वर्ष का उनका दाम्पत्य जीवन रहा जिसमें उन्होंने अपनी पत्नी से कभी उलाहना नहीं सुना था। किसी को कष्ट देते नहीं देखा था। वे जन्म से ही महीयशी थीं, ज्वलन्त बलिदान थीं। हलाहल-पान करती थीं। वे पत्नी को योगी, नेता, जपी, तपी से ऊपर मानते थे। विवाह के समय सिर उठाकर देखा और आकृति-प्रकृति का अध्ययन किया। होने वाली उनकी पत्नी ने जाकर सबसे बताया कि "लरिका तौ अच्छा है, मुला भुक्कु आइस बइठ टुकुर-टुकुर देखि रहा।" इस कथन पर किसी ने कहा यहाँ भुक्कु जैसा बैठा लड़का तुम्हारा दूल्हा है। सब लोग हँसने लगे। वे भाग खड़ी हुईं। मिश्र जी का विवाह ग्रामीण परिवेश में पर्दे के साथ हुआ था। मिश्र जी पत्नी को नहीं देख सके थे। केवल हाथ पकड़कर मंत्र आदि सुनते रहे। पाँव भी मिश्र जी के विधिवत् पूजे गये थे। पत्नी को पाँव की जूती कह कर विदा किया गया था। उनके परिवार और सम्बन्धी बहुत रोये थे। पत्नी भी रोती रहीं, विदाई में रोना शुभ माना जाता है। मिश्र जी का विवाह प्रदर्शन आज सा नहीं था। वापसी में मिश्र जी बैलगाड़ी पर और पत्नी पालकी में थी। मार्ग में एक विशाल समाधि के पास कुएं पर संयोग हुआ किन्तु बात नहीं। फिर भी दोनों निश्चिन्त थे।

मिश्र जी का परिवार अमर्यादित स्वार्थियों का था। अधिकांश परिवार ऐसे ही होते हैं। उनके पिता, माता, अग्रजा, अग्रज, अनुजा, सभी ने उनकी पत्नी को लूटा। कभी-कभी मिश्र जी भी कठोर हो जाया करते थे। बीमारी पर सब कहते थे कि यह मर जायेगी थोड़े दिन में। सब दहेज के चक्कर में थे। इसके उपरान्त भी उनकी पत्नी अजातशत्रु के समान भी जीवित रहीं, अहं और प्रमाद से वे मुक्त रहीं :

पति-पत्नी-प्रेम जीवन-व्याप्त तप है इससे
शीतलता प्राप्त होती, प्राण नहीं जलता है
यह शरीर टिन का बर्तन नहीं है जिसमें
जरा सी आँच से जीवन उबलता है।'

मिश्र जी के दाम्पत्य जीवन का प्रारम्भ पुरानी ग्रामीण भारतीय परम्परा के अनुसार हुआ। आज के दम्पतियों की भांति नहीं। सब कुछ सहज, मर्यादित और पर्दे के साथ, एक संयुक्त परिवार में उन्होंने सुहागरात का वर्णन स्वयं किया है:

मुझको बताया गया लो यह मिठाई और
बहू को खिलाओ भावी प्रेम को ठानते
यही है दिवस जिसमें दो अपरिचित और
अनजाने एक दूसरे को पहचानते।'

आगे मिश्र जी लिखते हैं -

छोसा-सा कमरा था, जिसमें तख्त पड़ा हुआ।
लालटेन जलती, तुम बैठी पसीने से तर
क्योंकि विकट गर्मी थी मई-उत्तरार्द्ध की
हाथ पंखा झलती, छुई-मुई विविध भाव पर
मैंने हाथ पकड़कर कहा, मिठाई खाओ
तुम छिटकी, खड़ी हो गई हाथ छुड़ाकर
थोड़ा-सा अनुनय किया पर तुम नहीं मानी
धूँघंट, धूँघलके में दर्शन भी थे दूभर।'

प्रारम्भ में एक संकीर्ण परिवार का जीवन मिश्र जी ने व्यतीत किया है। वे शैशव से हठी, क्रोधी और अदूरदर्शी थे, पर कालान्तर में बिल्कुल बदल गये। सहज और उदार हो गये। सम्भवतः यह सब सदपत्नी के साहचर्य से हो सका। मिश्र जी ने दाम्पत्य और पारिवारिक जीवन का बड़ा पावन चित्रण किया है। ऐसा कम लोग करते हैं। सुन्दर बिम्बों से उनकी जीवनी की झाकियाँ बनती चली जाती हैं।

1948 ई. का मिश्र जी की जीवनी में बहुत महत्व है। इसी वर्ष उनकी कलम उठी, इसी वर्ष ब्याह हुआ, इसी वर्ष वे हाई स्कूल पास हुए। 16 वर्ष के भी न हुए थे कि लोग निकम्मा कहने लगे थे। उनके ससुर बीमार रहते थे। क्षयरोगी थे। उनके सामने खून की कै या उल्टी के बाद मृत्यु हुई। तब क्षयरोगी के उपचार सम्पन्न नहीं हो पाते थे। ससुराल में शांति नहीं थी। झगड़े झंझट लगे रहते थे। सास विकलांग और नेत्रहीन होकर 1982 ई. तक जीवित रहीं। मिश्र जी की पत्नी के चार बहनें और एक भाई था। मिश्र जी को सास बहुत मानती थीं। उनके अवसान पर मिश्र जी दिल्ली में रहने के कारण समय पर न जा सके थे, जिसका पछतावा उनको बराबर बना रहता है।

1. 'स्वर्गता' पृ. 26

2. 'स्वर्गता' पृ. 26

उनका परिवार अनुकूल नहीं था। बिना पत्नी और उनसे पूछे दहेज के आभूषण और बर्तन उनके पिताजी ने बेच डाले। वे मिश्र जी को सदैव निकम्मा कहते थे। पत्नी को वे रात-दिन सताते थे। मिश्र जी को बहनें भी तंग करती थीं। एक दिन पति-पत्नी में भी विवाद छिड़ा। शोषित, अपामानित, प्रपीड़ित परिवार में यह स्वाभाविक भी है। पत्नी को मिश्र जी ने उनके मायके पहुँचा दिया। कुछ दिनों उपरान्त मिश्र जी पत्नी को सादर ले आए। मटियारा (ससुराल) की यात्राओं का उनके जीवन में निराला कवि-सा बहुत महत्व है।

मिश्र जी की पत्नी स्कूल में पढ़ने गयी थीं, पर पढ़ न सकीं थीं। इसके उपरान्त भी वे शिक्षा का महत्व समझती थीं। साइकिल चलाना, तैरना, लम्बालोय का खेल खेलना, सभी गृहकार्य, कढ़ाई-बुनाई सिलाई, पलंग बुनना, गाय दुहना, व्यावहारिक चिकित्सा तथा पाक-कला में माहिर थीं। इन्हीं गुणों के कारण मिश्र जी को उनको साथ रखना सदा आवश्यक लगा था। तद्वत पत्नियां जीवन में दुर्लभ होती हैं। काला कांकर के कुँवर सुरेश सिंह को भी इसी प्रकार की प्रकाशवती मिली थीं जिनकी प्रेरणा से उन्होंने 16 किताबें लिखी थीं। वे घर-गृहस्थी से उनको सदैव विरत रखती थीं। इस प्रसंग में एक और प्रसंग जुड़ जाता है — व्याकरण 'कैयट' की पत्नी स्वयं रस्सी बटकर तथा मेहनत-मजदूरी कर गृहस्थी का पालन किया करती थीं। उन्होंने 'कैयट' को व्याकरण लिखने के लिए चिन्तामुक्त कर रखा था। मिश्र जी ने पग-पग पर पत्नी की विराटता को स्वीकार किया है। पौष कृष्ण एक, सम्बत उन्नीस सौ नब्बे विक्रमी को मटियारा में पैदा हुई थीं। वे मिश्र जी से एक वर्ष छोटी थीं। ग्रामीण प्रकृति की गोद में पली थीं।

मिश्र जी के पिता जी तम्बाकू और भांग के पाटों में पिसते थे। वे सोचते थे कि मिश्र जी के दहेज का लाभ ले पायेंगे, बड़े भाई भी अपने लिए सोचते थे। मिश्र जी की दशा बहुत नाजुक थी। वे बेबस से रहे और लुटते रहे।

छोटी बहन के विवाह से कुछ पहले ही भाई अलग हो गये। छोटी बहन के विवाह में मिश्र जी ने जी-तोड़ मेहनत की, सब कुछ दे डाला, ऋण बाद तक चुकाया। पत्नी बीमार थीं; चिकित्सा की किसी को परवाह नहीं थी। उनको काम दूना करना पड़ता था। बड़ी बहन के यहाँ रहे। पत्नी पसेरियों आटा पीसती थीं। मनो धान कूटती थीं, गाड़ी-गाड़ी अनाज तौलती थीं। सब कुछ कर और सह कर पत्नी मिश्र जी के साथ सुखी थीं। मानसिक प्रताड़ना और बे-हिसाब श्रम से पत्नी थकने लगी थीं। पर किसी

से कहती न थीं। वे मिश्र जी की कठिनाइयों को समझती थीं। भाई के अलग होने से दुकान टूटने लगी।

गहने और बर्तन पिता बेच चुके थे। जो बचा था वह छोटी बहन के विवाह में चला गया था। मिश्र जी सर्वथा रिक्तहस्त थे। मात्र पत्नी का उनको सम्बल रहा। अन्त में 1953 से परिवार ने नाता तोड़ा और पति-पत्नी का परिवार स्वतंत्र रहकर तबाही में था। दोनों प्रसन्न थे। पत्नी गर्भवती हुई उनकी दुर्बलता और चिकित्सा का अभाव बढ़ने लगा।

पत्नी को मैके वालों ने बुलवा लिया। सास ने पत्नी को स्वस्थ और प्रसन्न किया। सूर्या या सूर्यकुमारी नाम की प्रथम संतान की उत्पत्ति पत्नी की 20 वर्ष की अवस्था हुई।

14-2-1954 ई. को उनको पुत्री उत्पन्न हुई और उन्होंने बी.ए. भी पास किया। अम्मा से ने ऋण लेकर मिश्र जी से बी.ए. का फार्म भरा था जिसकी अदायगी में अलमारी और तख्त बेचने पड़े थे। मिश्र जी अध्ययन और अध्यापन साथ-साथ करते रहे। वे धोती, कुर्ता, रबर की चप्पल, छोटे-छोटे बाल, कृशकाया, सुदृढ़ मन के साथ साधना में थे। वे खा-पीकर साढ़े पाँच प्रातः घर से कॉलेज को निकल जाते थे। तब तक पत्नी पूरा भोजन तैयार कर देती थीं। वे कपड़े साफ करती। कहीं हीनभाव नहीं था। वे एक लम्बी दूरी को पैदल ही तय करते थे। गृहस्थी छोटी और विपन्न थी। अरमान ऊँचे थे। वे अथक परिश्रम करते थे। 8 फरवरी 1956 ई. मटियारा (ससुराल) में पवन कुमार का जन्म हुआ। अब मिश्र जी का परिवार चार सदस्यों का हो गया। बढ़िया नौकरी की समस्या बनी रही। अतः परिवार कानपुर में ही रखा।

1961 ई. में जुड़वे बच्चे हुए, उसी दिन गत भी हो गये, मिश्र जी घर पर नहीं थे। इससे पूर्व 4 अप्रैल 1958 ई. गुड फ्राइडे, चैत्रपूर्णिमा हनुमान-जयन्ती के संयोग पर उनके द्वितीय पुत्र उदयशंकर का उदयपुर में जन्म हुआ था। तृतीय और कन्धि पुत्र विजयशंकर 8 अगस्त 1959 को कानपुर में पैदा हुए थे। परिवार में 6 सदस्य थे। पिता की मृत्यु 18 जुलाई 1963 को वहीं हुई। मिश्र जी मितव्ययी और स्वाभिमानी थे। सम्मान के विपरीत वे किसी से समझौता नहीं करते थे। इसी से उनकी गृहस्थी कहीं जम नहीं पाती थी। 1966 ई. में वे परिवार को दिल्ली ले आये। 28 वर्ष तक साथ-साथ गुजरे। शेष भी अब एकाकी गुजर रहे हैं। 25 मई 1994 को उनकी पत्नी मूलचंद हॉस्पिटल नई दिल्ली में दिवंगत हो गयीं। उनकी तेरही 6 जून को कानपुर में सम्पन्न हुई। उनकी संताने हैं - सूर्य कुमारी,

पवनकुमार, उदयशंकर, विजयशंकर। अब वे पत्नी के लिए बहुत दुखी रहते हैं। 20 मई 1994 ई. को उनको ब्रेनहेमरेज हुआ वे कोमा में रहती हुई 25 मई को दिवंगत हो गई। मिश्र जी ने बड़ी तत्परता से उनकी चिकित्सा करायी थी, पर कुछ हाथ न लगा। मिश्र जी विवाह के 50 वें वर्ष पर उत्सव मनाने वाले थे। मिश्र जी अब स्वयं मधुमेह से पीड़ित हैं उनका परिवारिक जीवन संकटाकीर्ण रहा है, परन्तु उन्होंने स्वाभिमान के विपरीत कुछ नहीं सहन किया है। गरीबी में भी वे परिवार से अलग नहीं होना चाहते थे। उनमें सदगृहस्थ के सभी गुण हैं।

शिक्षा, उपाधि सम्मान एवं पुरस्कार

शिक्षा

मिश्र जी की बाल्यावस्था पिता-श्री के चक्र के साथ चलती रही, जिससे उनकी व्यवस्थित शिक्षा न हो सकी। आर्थिक तंगी का प्रकोप उन पर बराबर बना रहा। प्रारम्भिक शिक्षा का क्रम इस प्रकार है —

अ, ब, और एक कक्षाएं टेढ़ी नीम प्राइमरी स्कूल, काशी, दो का ज्ञान स्वर्जित। तीन जवाहरनगर कानपुर के प्राइमरी स्कूल में, चार सरस्वती शिक्षा सदन कमला टॉवर क्षेत्र कानपुर में, पांच-छः एक वर्ष में ही श्री प्रताप हाई स्कूल प्रेमनगर कानपुर में, सात रामकृष्णनगर जी.टी. रोड़ कानपुर में मां कस्तूरबा हाई स्कूल में जो आठ में जाते ही रामबाग में स्थानांतरित हो गया। आठवें से संस्था-शिक्षा छूटी। न विद्यालय न ट्यूशन न अध्यापक। हाईस्कूल, इंटर, बी.ए. प्राइवेट, एम.ए. ही डी.ए.वी. कालेज कानपुर से व्यवस्थित रूप से किया। आश्चर्य होता है कि वे इतना कैसे पढ़ गये? अध्ययन का पूरा व्यय उन्होंने स्वयं उठाया। अव्यवस्था के कारण, 1948 ई. में हाईस्कूल 1951 ई. में इण्टर तथा 1954 में बी.ए. कर पाए। एम.ए. 1956 ई. में डी.ए.वी. कालेज कानपुर (तब आगरा विश्वविद्यालय) से किया। 1961 ई. में पीएच.डी. (तब आगरा विश्वविद्यालय) किया।

मिश्र जी के पिता पं. शिवलाल की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। फलतः वे मेधावी पुत्र की उन्नत शिक्षा-व्यवस्था न कर सके। इसी कारण छात्र रामप्रसाद मिश्र को अपनी आठवीं से लेकर स्नातक तक की शिक्षा व्यक्तिगत छात्र के रूप में जटिल संघर्षों के साथ पूरी करनी पड़ी। किसी प्रकार से उन्होंने एम.ए. हिन्दी विषय डी.ए.वी. कालेज कानपुर से संस्थागत छात्र के रूप में करने का संयोग मिला। फजलगंज (कानपुर) की एक

छोटी-सी कोठरी में रहकर वहाँ से 5 मील की दूरी पर स्थित डी.ए.वी. कालेज की प्रातःकालीन 7 बजे से आरंभ कक्षा में वे पैदल चलकर सम्मिलित होते थे। वे प्राइवेट कालेजों में काम और ट्यूशन करते थे। पुस्तकालयों में जाकर वे पुस्तकों और पत्रिकाओं का अवलोकन करते थे। एक क्षण का विश्राम नहीं लेते थे। एक दिन सड़क पर उनको चक्कर आ गया था, पर कुछ देर बैठे रहने पर ठीक हो गया था। तब आगरा वि.वि. से डी.ए.वी. कालेज सम्बद्ध था। 1956 ई. की एम.ए. हिन्दी की परीक्षा में डॉ. मिश्र वि.वि. में प्रथम श्रेणी में द्वितीय स्थान के साथ उत्तीर्ण हुए। एम.ए. पूर्वाह्न में अधिकतम अंक प्राप्त करने के कारण डॉ. मिश्र एक चर्चित छात्र हो गये थे। इसी कारण स्व. डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम', आ. कृष्ण शंकर शुक्ल एवं आचार्य सिद्धिनाथ मिश्र आदि उच्च कोटि के विद्वान गुरुओं की कृपा उन पर हुई। डॉ. मिश्र ने कठोर परिश्रम, गंभीर अध्ययन और प्रतिभा के कारण उक्त कृपा को फलीभूत किया। गुरुजनों को मिश्र जैसे छात्र पर गर्व था। कॉलेज के सभी लोग उनको सम्मान देते थे। इस प्रकार उनका छात्र-जीवन संघर्षमय और सम्मानजनक था।

1948 ई. में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पूर्व ही उनका विवाह हो गया था। उनकी शिक्षा पारिवारिक उत्तरदायित्व को साथ लेकर चलती रही। 1956 ई. तक उनको दो संताने प्राप्त हो गयीं। पत्नी ने उनका बहुत साथ दिया, नहीं तो वे शिक्षा पूरी न कर पाते। वे प्रायः पुस्तकालय-वाचनालय जाते-आते, दिन में स्वयं पढ़ते, सायं ट्यूशन इत्यादि करने जाते। उन दिनों उनको प्रायः 22 किलोमीटर पैदल चलना पड़ता। उनकी शिक्षा सामान्यतम् विद्यालयों में हुई। वह भी 8वीं कक्षा से टूट गयी। वे स्वयं गुरु स्वयं छात्र थे। अपना कमरा ही पाठशाला थी। अर्थाभाव में उनको पुस्तकें नहीं मिल पाती थीं, पर स्वाध्याय में उनकी गहरी रुचि थी। इसी प्रकार वे हाईस्कूल तथा एम.ए. पूर्व (हिन्दी) तक पढ़ते रहे। 1954 ई. में उन्होंने बी.ए. पास किया। मिश्र जी प्रतिभाशाली छात्र रहे। स्नातक होने पर वे कोचिंग केन्द्रों में पढ़ाकर स्वयं पढ़ते थे। मित्रों की प्रेरणा से उन्होंने एम.ए. (हिन्दी) किया। उनके मित्र रामकुमार शर्मा निशंक ने दौड़-धूप की और डी.ए.वी. कालेज कानपुर में 1954 ई. में एम.ए. (हिन्दी) में प्रवेश हुआ। प्रातः पढ़ने जाते थे। तब प्रथम श्रेणी लाने के लिए बहुत श्रम करना पड़ता था। मिश्र जी धोती, कुर्ता, रबर की चप्पल, छोटे-छोटे बाल, कृशकाया और दृढ़ मन के साथ साधना में रत रहे। विपन्नता से उनमें हीनता न थी। जटिलताओं से जूझते हुए मिश्र जी ने एम.ए. प्रथम वर्ष (हिन्दी में)

सर्वाधिक अंक प्राप्त किये थे, अंक मिले; धूम मच गयी थी। मिश्र जी की प्रतिष्ठा बढ़ गयी। गुरुओं उनका सम्मान बढ़ गया है। डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम', आचार्य कृष्णाशंकर शुक्ल, आचार्य सिद्धिनाथ मिश्र जैसे आचार्य गुरु मिले थे। मिश्र जी की शिक्षा के लिए उनकी पत्नी को बड़ी चिन्ता रहती थी। उनकी पत्नी को एक दिन स्वप्न भी हुआ कि तुम्हारा पति प्रथम श्रेणी में वि.वि. में द्वितीय स्थान प्राप्त करेगा।

उनकी अधिकांश शिक्षा गंगा के तट पर काशी और कानपुर में हुई। हिन्दी के साथ अंग्रेजी और संस्कृत साहित्य से उनका लगाव रहा है।

उपाधि

एम.ए. (हिन्दी) वर्ष 1956 ई. प्रथम श्रेणी। पीएच.डी. 1961 ई.। सारी उपधियाँ आगरा वि.वि. से संबद्ध थीं।

वल्लभ विद्यानगर आनंद गुजरात में पढ़ाते हुए उन्होंने 'खड़ी बोली कविता में विरह वर्णन' शीर्षक से पीएच.डी. उपाधि के लिए अधिकांश शोध कार्य सम्पन्न किया।

सम्मान एवं पुरस्कार

मिश्र जी एकान्त साधक हैं। सम्मान और पुरस्कार के लिए उन्होंने कुछ नहीं किया है। जो कुछ उनको मिला है वह सहज रूप से और नाम मात्र का मिला है। ख्यातिलब्ध साहित्य सेवी परिवार के सम्मान को उन्होंने अपनी प्रतिभा से बहुत ऊपर उठाया।

'विश्वकवि तुलसी और उनके काव्य' दिल्ली, इलाहाबाद, झांसी, इत्यादि में स्थित वि.वि. की ओर से सम्मानित तथा हिन्दी की परास्नातक कक्षाओं में संस्तुत हुआ। 'तुलसी के अध्ययन को नई दिशाएं' पर सरस्वती प्रतिष्ठान रायबरेली का सरस्वती सम्मान पुरस्कार 1988 ई. में प्राप्त हुआ तथा तुलसी पर रचित आलोचना ग्रंथों के कारण मानस संगम कानपुर का मानस संगम साहित्य पुरस्कार 1989 ई. में, 'तुलसी साहित्य सर्वोत्तम अंश' पर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ का आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पुरस्कार (अनुशंसा) 1981 ई. में प्राप्त हुआ।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार (अनुशंसा) दो बार तथा 'दृष्टि' (22 सर्ग) काव्य पर पुरस्कार मिले। 'दृष्टि' पर भाषा संगम, दुमका (झारखंड) तथा कवि सभा, दिल्ली के पुरस्कार मिले। बाल-साहित्य पर हिन्दी अकादमी दिल्ली एवं बाल कल्याण परिषद कानपुर

के पुरस्कार मिले। अंग्रेजी रचनाओं पर कुंती गोयल इंटरनेशनल अवार्ड (जोधपुर) प्राप्त हुआ। 21 मई 2003 को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (लखनऊ) के 'साहित्य-भूषण' सम्मान के समय अत्यधिक अस्वस्थ होने के कारण मंच में ही बैठे होने पर भी उठ न पाने पर प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने उन्हें सामने बुलाया तथा हाथ मिलाया। इस अवसर पर राज्यपाल स्व. डॉ. विष्णुकान्त शास्त्री एवं विधानसभा-अध्यक्ष श्री केशरीनाथ त्रिपाठी उन्हें उठाकर सामने ले गये। अर्से से वे कहीं भी ग्रंथ-प्रविष्टि नहीं करते।

व्यवसाय (ट्यूशन, अध्यापन एवं साहित्य-सेवा) मिश्र जी के मुख्य व्यवसाय शिक्षा जगत् के ही हैं।

इसी में उनकी रुचि भी रही। दूकान का कार्य तो कहने को उनका था। उनके अग्रज का उस पर पूर्ण आधिपत्य था। दूकान इतनी चलती थी कि परिवार का पोषण हो सकता था परन्तु किसी का ईमान साफ नहीं था। फलतः वह कुछ दिनों के उपरान्त टूट गयी। 1948 ई. में हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पूर्व मिश्र जी का विवाह हो गया था। 1956 ई. तक वे दो सन्तानों के पिता हो गये, पर आय का कोई साधन न बन सका था। परिवार पालना बहुत कठिन होता है। वे एकाकी हो गये थे।

आय के साधन के लिए मिश्र जी ने ट्यूशन का सहारा लिया। 1950 ई. में 17 वर्ष की आयु में मिश्र जी को 20/- का ट्यूशन मिला। डूबते को तिनके का सहारा मिला। पत्नी का मन खिल गया। मिश्र जी, जी तोड़ श्रम करते थे। अपने अध्ययन को भी वे चला रहे थे। इसी बीच नेताजी हायर सेकेण्डरी स्कूल फजल गंज कानपुर में उनको 30/- प्रतिमास पर काम लग गया। 1950 ई. में .50/- प्रतिमास कमा लेते थे। 1952 ई. में उन्होंने नेताजी स्कूल को छोड़ा जो उनको ठगता रहा। स्नातक होने पर कोचिंग कालेजों में कार्य करने लगे। ट्यूशन भी करते थे।

ग्रीष्मावकाश में दोनों कार्य बन्द हो जाने से तबाही रहती थी। वे अर्थार्जन और ज्ञानार्जन के लिए व्यग्र रहते थे। सवेरे कालेज, मध्याह्न ट्यूशन, शाम एक-एक घण्टे को दो प्राइवेट संस्थानों में जाना। वे लट्टू के समान नाचते रहते थे। कहीं स्थायी नौकरी की व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। वे अनेक जगह दोड़ते रहे। लेखन, उत्तम श्रेणियां सब थीं, पर सफलता नहीं मिल रही थी। विद्याभवन उदयपुर राजस्थान से साक्षात्कार पत्र मिला, सफलता भी मिली; मिश्र जी के जीवन का नूतन विहान आ गया। श्रम सार्थक हो गया, प्रतिभा फलवती हो गयी। पहले वे 123/- मासिक

ही कमा रहे थे। अब 235/- मिलेंगे; सभी प्रसन्न थे। स्टेशन पर लगभग 50 शिष्य हर्ष के साथ उनको छोड़ने आये थे। वे एकाकी उदयपुर जाकर कुछ दिन परिवार के सुख से वंचित रहे, परन्तु थोड़े दिन बाद आवास मिलते ही वे सपरिवार हो गये। 1 जनवरी 1957 ई. से डेढ़ वर्ष उदयपुर, तब वल्लभ विद्यानगर (गुजरात) गये। वे वहाँ भी लड़ते रहे; अन्त में त्यागपत्र देकर फिर कानपुर वापस चले आये। अपनी टेक के कारण वे टिक न पाते थे। कालाडेर (जयपुर) से साक्षात्कार-पत्र आया। सफलता भी मिली। सवा वर्ष वहाँ कार्यरत रहे, उत्कर्ष भी हुआ। किन्तु अन्त में वहाँ भी संघर्ष चला और मिश्र जी ने त्यागपत्र दिया। मिश्र जी व्यसनमुक्त और मितव्ययी थे, परन्तु स्वाभिमानी भी थे। वे कुछ दिनों तक बंदी विशाल कालेज फर्रुखाबाद में प्राध्यापक हिन्दी-विभागाध्यक्ष भी रहे। फिर चिड़ावा कालेज, चिड़ावा राजस्थान में लगे। वे सर्वत्र त्यागपत्र देते रहे। 23 जुलाई 1962 ई. में वे डी.ए.वी. कालेज नयी दिल्ली में नियुक्त होकर अवकाश-काल तक बने रहे। ऊपर देखा गया कि डी.ए.वी. कालेज दिल्ली आने के पूर्व मिश्र 6 वर्षों में 5 स्थानों में अध्यापन का कटु अनुभव प्राप्त कर लिया था। वेतन-विसंगति और प्राचार्यों की तानाशाही का सामुख्य उनको सर्वत्र करना पड़ा था। ऐसे भी प्राचार्य उनको मिले थे जो अध्यापकों को मजदूर समझते थे। वे कभी सम्मान नहीं देते थे। वेतन-व्यवस्था तब प्रबंध परिषद की ओर से लोग देते अल्प और दिखाते अधिक थे। बात-बात में नौकरी दाँव पर लग जाया करती थी। अच्छे लोगों के लिए ये दशायें बहुत पीड़ा पहुँचाती हैं। प्रबंधक आये दिन प्राचार्यों को खरी-खोटी सुनाया करते थे। वे असत्य और अनीति के सामने कभी नहीं झुकते थे। उसी से उनको अधिक त्याग-पत्र देने पड़े। उनको स्वाभिमान के साथ गरीबी में जीने का अभ्यास रहा है। उनका साहित्यिक जीवन सम्बद्ध कार्य करता रहा।

डॉ. मिश्र का लगाव साहित्य से विशेष था। अध्यापन-कार्य तो मात्र अर्थ के लिए था, परन्तु वे प्राप्त विषय को यथासमय, यथास्थान, उत्तम स्तर से प्रतिपादित करते थे। उनके अध्यापन की सराहना सभी करते थे। उनकी लम्बी शिष्य परम्परा आज भी देश में पतिष्ठित है। स्वाध्याय-से उनको बड़ा बल मिलता था। वे एकान्त में अपनी तपस्या किया करते थे। विद्यालय के समय के उपरान्त का समय स्वाध्याय में जाता था। रात्रि को वे नाम मात्र को ही सोते। साहित्यिक दलबन्दी, काफी हाउस और टी स्टाल की बतकच्चर, और विविध वादों-विवादों से वे दूर रहे हैं, इसी से वे इतना कार्य भी कर ले गये। उनकी रचनाओं में मौलिकता का बाहुल्य इसी कारण

से है। भारतीय दर्शन, धर्म एवं संस्कृति की अस्मिता उनकी कविताओं में भरी पड़ी हैं। उनकी दृष्टि शुद्ध मानवतावादी है। उनकी रचनाएं उनके स्वाध्याय, चिन्तन और प्रयोग के लिए साक्षी है। धर्म, योग, इतिहास, दर्शन, और साहित्य के सन्दर्भ में उनके पास वैश्विक स्तर की सामग्री मिलती है। उनकी साहित्यिक विराटता और प्रयोग आश्चर्य में डाल देते हैं।

इसके साथ विविध भाषाओं से और विचारधाराओं से उनका आधिकारिक संबंध रहा है। हिन्दी के साथ अंग्रेजी और संस्कृत साहित्य से उनका अधिक लगाव है। साहित्य-सेवा उनका व्रत है न कि वृत्ति। धन के लिए उन्होंने एक पंक्ति भी नहीं लिखी। इसी से उनको अर्थ का संकट बराबर रहा है। साहित्य में उन्होंने धन को अधिक लगाया और अल्प पाया है। एक लम्बी साहित्य सेवा करने का उनको अवसर मिला है। उनका प्रथम ग्रंथ 'पथ पर' (उपन्यास) 1955 ई. में प्रकाशित हुआ। तब वे आनन्द शंकर के नाम से लिखते और छपते थे। तब से आज तक वे अविरलगति साहित्य सेवा में निरत हैं। वे एकांतिक साहित्य साधक हैं। वे सभा-समितियों, नाना उत्सवों, विवाहादि संस्कारों, आजीविका सम्बद्ध गौणगतिविधियों तक में रुचि नहीं लेते हैं। यदि उनको कुछ दिन तक सुदीर्घ एकान्त न मिले तो बीमार पड़ जाते हैं। सम्भवतः वंश और शैशव के असाधारण परिवेश और घटनाचक्र ने उनके प्रतिभाशाली अहं को जटिल बना दिया है। इसी से उनको अनेक हानियाँ भी उठानी पड़ीं। वे 1948 ई. से अद्यवधि साहित्य सेवा में लगे हैं। 1980-81 ई. में वे क्षयरोग से ग्रसित हुए। 1983 ई. से मधुमेह ग्रस्त हुए तथा अब तो डाइलिसिस पर भी हैं, पर वे न झुके न टूटे।

वैसे मिश्र जी बड़े शांत और विनम्र स्वभाव के हैं, किन्तु अन्याय, शोषण और अनीति के समक्ष वे कभी न झुके न अपने स्वाभिमान के विपरीत उन्होंने कुछ सहा। गरीबी में भी उन्होंने उच्च पदों से त्यागपत्र दे दिया। उन्होंने तनिक भी भविष्य की चिन्ता न की। उनको आर्थिक संकटों को झेलने का लम्बा अभ्यास है। साहित्य समर्पित जीवन के एक साक्षात्कार में वे कहते हैं कि "मैं चाहे कविता लिखूँ या उपन्यास या निबंध या आलोचना या अन्य कुछ, मेरा उद्देश्य हिन्दी साहित्य में अधुनातन, बौद्धिकता अप्रतिहत मौलिकता एवं अनाहत तेजस्विता की प्रतिष्ठा करते रहना है। साहित्य मेरा व्रत है, वृत्ति नहीं। मैं साहित्य-योगी भी हूँ साहित्य भोगी भी और साहित्य-रोगी भी। अतः अनवरत अध्ययन एवं सुदीर्घ मनन से बच नहीं सकता। तादात्म्य, आस्वाद एवं लेखन मेरे वैश्विक जीवन के सिद्धांत हैं।" दिल्ली वि.वि. के हिन्दी विभागाध्यक्ष व प्रो. (अब स्वर्गीय) डॉ. विजयेन्द्र

स्नातक ने अपने एक पत्र में डॉ. मिश्र को लिखा था "आपकी साहित्यिक निष्ठा का मैं प्रशंसक रहा हूँ। विद्या को जो व्यक्ति व्यसन बना ले, वह साहित्य के साथ न्याय कर सकता है। जो विद्या को व्यापार क्रीतव्य पण्य या अर्थोपार्जन का व्यवसाय बना लेते हैं वे साहित्य-साधना से दूर ही रहते हैं।" आपका व्यवसाय कष्ट कष्टकों में है।

जितने कष्ट कष्टकों में है
जिसका जीवन सुमन खिला
गौरव-गंध उसे उतना ही
अत्र-तत्र सर्वत्र मिला।'

जीवन के विविध प्रसंग

मिश्र जी का जीवन संघर्ष, दुःख-सुख और कर्म से आवेष्टित है। बिन्दु और सिन्धु का समन्वय है। उनका जीवन ग्रह शिक्षा देता है कि सच्चे मन, पवित्र हृदय, खुले मस्तिष्क, मंगल की भावना और आस्तिकता के साथ किया गया कर्म कभी व्यर्थ नहीं जाता है। मनुष्य को चारों ओर देखकर चलते रहना चाहिए; उसको अपना प्राप्तव्य अवश्य मिलेगा। मानव कहीं रहे — उसको अपनी माटी का ध्यान रखना चाहिए। यदि वह साहित्यकार है तो साहित्य में भी उक्त बात आनी चाहिए। संघर्षों को धैर्य से झेलना चाहिए। इनसे व्यक्तित्व का विकास होता है। जो संघर्ष नहीं कर सकता वह कुछ नहीं कर सकता है। किसी की कृपा संघर्ष के उपरान्त ही हो सकती है। आलसी से सभी घृणा करते हैं।

अन्याय करना ही बुरा नहीं होता, बल्कि उसको सहन करना भी बुरा होता है। धर्म की भाषा में पाप होता है। मिश्र जी ने ऐसा कभी नहीं किया। इसी से प्रबंधकों और प्राचार्यों से उनकी कभी नहीं पटी। शोषण, अपमान और दलित भावना का उन्होंने सदैव चित्रण किया है। उनका मानवतावादी दृष्टिकोण बहुत उत्तम है। सामंती चेतना को उन्होंने कभी नहीं पसन्द किया। मिश्र जी तमाम मानवीय कमजोरियों से ऊपर उठे हुए व्यक्ति हैं। उन्होंने किसी सम्प्रदाय या दल का सहारा नहीं लिया। वे सत्य और न्याय के लिए एकाकी जूझते रहे। भाषा, साहित्य, संस्कृति, सभ्यता, परम्परा आदि को उन्होंने प्रसंगानुसार छोड़ा और ग्रहण किया है। कहीं जडता नहीं

है। उनकी लम्बी यात्रा में अनेक मोड़, उतार-चढ़ाव, कांटे और फूल हैं, बगल में जंगल, तालाब, बाग, पहाड़, खंड, खंडहर, महल, गांव और शहर हैं, शहराती और गवाँर लोग हैं। सबके साथ चलते हुए वे आगे बढ़ सकें हैं, परिवार के दलदल से निकलकर सुन्दर मैदान में आ सके हैं। वे लोगों की दृष्टि में अपने 16वें वर्ष में ही निकम्मे हो गये थे, परन्तु उन्होंने परिस्थितियों से संघर्ष करके नामजद्दी होसिल की। अनेक प्रतिकूलताओं को उन्होंने पराजित किया।

उन्होंने साहित्य सेवा को अपना मूल उद्देश्य बनाया। अन्य पक्षों को उन्होंने साधन के रूप में स्वीकार किया। ट्यूशन और अध्यापन के अतिरिक्त वे स्वाध्याय करते रहे। उनको किसी की दबावगीरी पसन्द नहीं रही है। वे रात्रि में अभी भी नाम मात्र को सोते हैं। उनकी साधना एकनिष्ठ है — तभी वे इतने अधिक ग्रंथ तैयार कर सके हैं। सब में शतप्रतिशत मौलिक चिन्तन और प्रयोग है। भारतीय दर्शन, धर्म एवं संस्कृति की अस्मिता है। शुद्धमानवतावादी, सत्यं शिवं, सुन्दरम् का शुभ सन्देश है। उनकी लोकमंगल और समन्वय की भावनाएं सराहनीय हैं। उनके गंभीर कार्य के लिये प्रबल साक्षी हैं। उनकी कृतियां उनकी रचनाओं से धर्म, योग, दर्शन, इतिहास, साहित्य, समाज और संस्कृति के साथ विश्व साहित्य के विविध विचारों, विविध धर्मों के धार्मिक ग्रंथों की विशेषताओं तथा विभिन्न भाषाओं (भारतीय-विदेशी) के श्रेष्ठ ग्रंथों की विशेष धाराओं का सुन्दर प्रवाह संपृक्त है।

अनेक शहरों में भटकते अपनी विद्या की कमाई पर जीते रहे हैं। उनका बाल्यकाल भटकाव का बाल्यकाल था जिसमें वे कुछ भी हो सकते थे। वे लगभग सात वर्ष के थे। उन्होंने देखा कि एक भीड़ चिल्लाती हुई (नारे लगाती हुई) चली आ रही है। बालक मिश्र भी चिल्लाने की नकल करते, हाथ उठाते-हिलाते भीड़ में सम्मिलित हो गये। लघु पंथ को पारकर वे राज पथ पर फिर चौराहे तक गये। तब वे बायें पथ पर सब के साथ हो लिये। एक फर्लांग की लम्बी दूरी तय की तक उनको ख्याल आया कि यह अपरिचित स्थान है, मैं कहीं खो न जाऊँ तब वे वापस हो लिए।

दूसरी बार एक समाज सुधारक का जुलूस जा रहा था। तब वे कक्षा अ या ब (एक से पहले) में थे। इस बार प्राथमिक पाठशाला तथा उनकी कक्षा के साथी और शिक्षक थे। सड़क से गलियों में जुलूस गया। लोग तेजी से बोल रहे थे।

(ख) एक विरल व्यक्तित्व

डॉ. रामप्रसाद मिश्र

प्रकाशक की ओर से दो शब्द

हिन्दी साहित्य के प्रकाश पुंज डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी से मैं विगत १५ वर्षों से जुड़ा हुआ हूँ और निरन्तर उनसे कुछ न कुछ अधिकारपूर्वक लेता ही रहता हूँ। उनके मित्रों, शुभेच्छुओं से भी जो आशीर्वाद स्वरूप भावनायें प्राप्त कर सका वह अपने पाठकों को बौद्धिक ज्ञान के लिए समर्पित कर रहा हूँ। कृपया अपनी प्रतिक्रिया हमें अवश्य प्रदान करें।

वृन्दावन त्रिपाठी 'रत्नेश'

भागवत प्रसाद 'नियाज'

मेरा डॉ. रामप्रसाद मिश्र से 5-6 वर्ष पुराना परिचय है। इतने कम समय में उनके व्यक्तित्व ने जितना मुझे प्रभावित किया है ऐसा सम्भवतः दददा (मैथिलीशरण गुप्त) को छोड़कर किसी ने नहीं किया। सर्वप्रथम यू.एस.एम. पत्रिका में मैंने उनका द्विवेदी युग से आज तक की साहित्यिक गतिविधियों से सम्बन्धित एक लेख पढ़ा। जिसमें उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं के प्रमुख साहित्यकारों का उल्लेख किया। पढ़कर मुझे लगा जैसे उन्होंने बाबू वृन्दावन लाला वर्मा के साथ पूरा न्याय नहीं किया। मैंने इस भावना को पत्र द्वारा उनके पास भेजा। मेरे प्रतिभाव का समाधान तो आया ही पर उससे बड़ी उपलब्धि एक स्नेही मित्र की प्राप्ति थी। मैंने उन्हें अपना थोड़ा परिचय दिया और आयु में बड़ा होने के कारण उन्होंने मुझे अपना अग्रज मान लिया। उनको कुछ दिन पूर्व लिखा पत्र मिला जो इस प्रकार है -

श्रद्धेय,

नमन! 13 का पत्र।

भविष्य अनिश्चित है। कृपा बनाए रहें। सादर, रामप्रसाद मिश्र।

आपकी सक्रियता देखकर हर्षित होता रहता हूँ। रोज जीता रोज मरता हूँ।

आज तक हम लोग नहीं मिले पर न मिले हुए भी रोज मिलते हैं। उनकी विद्वत्ता का परिचय मेरे मित्र भगवत शरण अग्रवाल से मिला। वे एक विद्वान् अध्येता, शिक्षाविद्, आलोचक, इतिहासकार, कवि, कहानीकार एवं उपन्यासकार हैं। वे अतीव मृदुभाषी हैं। यह बात उनके साहित्य में भी परिलक्षित होती है। अपनी संस्मरण कृति 'अतीत की झलकियाँ' उनके पास भेजी, कुछ दिनों बाद पत्र द्वारा उन्होंने समीक्षा भेजी जो कुछ दिनों बाद यू.एस.एम. पत्रिका में छपी। उसका एक अंश इस प्रकार है।

अतीत की झलकियाँ-वरिष्ठ कवि, श्रेष्ठतर, गजलकार हिन्दी-अंग्रेजी के प्रभावी लेखक श्री भागवत प्रसाद 'नियाज' (1918 ई. राठ जनपद हमीरपुर, उत्तर प्रदेश, निवास अहमदाबाद) का प्रभावी, प्रेरक एवं साहित्यतिहास दृष्टि से विशिष्टः लाभदायक ग्रंथ है जो संस्मरण को विधा के श्रेष्ठतम ग्रंथों में परिगणित किया जा सकता है। यह रचना मिश्र जी को अमर बनायेगी।

इतने लब्धप्रतिष्ठित साहित्यकार के मेरी कृति के सम्बन्ध में ये उद्गार उनके मन की उदारता एवं विनम्रता के द्योतक हैं।

उनके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू है आत्मीयता एवं सहृदयता। एक उदाहरण है। मुझे दो वर्ष पूर्व एक समारोह में हमें सम्मानित होना था। गाजियाबाद जाना था वहाँ मिश्र जी को भी सम्मानित होना था। मैंने गाजियाबाद पहुँचने की जानकारी मिश्र जी को दी। उन्होंने कहा आप उनके घर पर ठहरेंगे और कोई न कोई लेने के लिए स्टेशन पहुँच जायेगा। उस बीच गुजरात में दंगा भड़क उठा और मैं नहीं जा सका। मिश्र जी का आदमी स्टेशन जाकर वापस लौट गया। फोन पर मिश्र जी को वस्तुस्थिति से अवगत करा दिया। उन्होंने कहा, उचित ही किया जो नहीं आएँ। उनकी विनम्रता पर मेरी आँखें छलछला आयीं। मैं उनके इस सरल व्यक्तित्व को नमन् करता हूँ।

उनकी साहित्यिक साधना श्लाघनीय है। मैं उनके स्वस्थ जीवन और शतायु होने की ईश्वर से कामना करता हूँ।

FH/4, बी ब्लॉक सन पावन फ्लैट्स,
गुरुकुल रोड़, अहमदाबाद, 52

शुभकामना

डॉ. ओम प्रकाश सिंह

डॉ. राम प्रसाद मिश्र हिन्दी जगत की ऐसी शख्सियत हैं जिन्होंने अपनी जिन्दगी के कई आयाम देखे हैं। एक तो उनका शिक्षक या गुरुतर व्यक्तित्व जो उनकी कविताओं में विशेष रूप से उभरा है। दूसरे उनका व्यक्तित्व जो भारतीय जीवन मूल्यों की धार पर तराश कर निखारता है। तीसरे उनका साहित्यकार वैश्विक संस्कृति के नियामक दौर में उत्तर आधुनिकता के परिवेश और उदारीकरण की संधियों के बीच अपना सराहनीय स्थान सुरक्षित रखता है। इन तीनों सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की साधना का साधक सदैव अपने जीवन की संगतियों और विसंगतियों के मध्य अपनी अस्मिता के लिए बेचैन रहा और अपने लेखन को दायित्वबोध की धरती पर सर्जना के बीज बोने के अवसर देता रहा, यह अद्भुत क्षमता डॉ. मिश्र जैसे साहित्य मनीषी में दिखाई देती है।

ऐसे साहित्य साधक को इस अवसर पर नमन वन्दना करता हूँ और उनके दीर्घायु होने की कामना करता हूँ। प्रभु उनकी लेखनी को और शक्ति सामर्थ्य प्रदान करें।

259, साकेत नगर, लालगंज,
रायबरेली

एक कलमकार का सम्मान

जीवन और साहित्य का सगा संबंध होता है। दोनों को कभी अलग नहीं किया जा सकता। साहित्य के अनेक मोड़ जीवन के अनुरूप होते हैं तो जीवन के अनेक मोड़ साहित्य के समझने के लिए उसके जीवन परिवेश व समाज को समझना आवश्यक है।

अतः डॉ. राम प्रसाद मिश्र भी इसके अपवाद नहीं हो सकते। उनके कुछ जीवन प्रसंगों को यहाँ दे रहा हूँ।

डॉ. मिश्र का प्रथम उपन्यास 'पथ पर' 1955 में छपा था। तब आनन्द शंकर के नाम से लिखते थे और छपते थे। बाद में वे अपने इस नाम से लिखने लगे कोई छद्म नाम नहीं रखा।

मिश्र जी का जन्म 19 सितम्बर 1932 सोमवार को उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के निम्बई गाँव में हुआ। निम्बई उनके नाना का घर था। 4-5 वर्ष की अवस्था में बालक राम प्रसाद को निम्बई छोड़ देना पड़ा। वे अपने पिताजी के साथ निम्बई से कानपुर, इटावा, काशी, फिर कानपुर का चक्कर काटते रहे। धनोपार्जन के लिए मिश्रजी के पिता अनेक स्थान परिवर्तन करते रहे। कानपुर के प्रवास काल कुछ स्थायी रहा। एम.ए. हिन्दी विषय से करते समय वह कानपुर के फजलगंज में एक छोटी सी कोठरी में रहते थे। पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज नई दिल्ली में वे 1962 में नियुक्त हुए इससे पूर्व में अनेक स्थानों पर भटकते रहे। वे पाँच महाविद्यालयों में कार्य कर चुके थे और बड़ा कटु अनुभव प्राप्त किया था। मिश्र जी के ससुराल के भी अच्छे अनुभव हैं। उनको जीवन के हर मोड़ पर पत्नी से सम्बल मिलता रहा। वे 1966 में सपरिवार दिल्ली में बस गए।

साहित्य शिरोमणि मिश्र जी का जन्म एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे शांडिल्य गोत्रीय हिमकर के मिश्र हैं। कान्यकुब्ज ब्राह्मण शाखा में इस कुल का बड़ा महत्व है। मिश्र जी जाति-पाति नहीं मानते तथा कर्म पर विश्वास रखते हैं। मिश्र जी ने अपनी प्रतिभा के बल पर बहुत यश और सम्मान नहीं प्राप्त किया किन्तु विडम्बनावश उनकी गरिमा के अनुसार वह सम्मान प्राप्त हुआ जो मिलना चाहिए और उन्हें चापलूसी से अर्जित सम्मान की भूख भी नहीं है। मिश्रजी कभी किसी दलगत राजनीति में नहीं पड़े इसीलिए वह इतना कार्य कर सके। उनका दृष्टिकोण हमेशा मानवतावादी रहा। उनकी रचनायें उनके स्वाध्याय, चिन्तन और प्रयोग के लिए साक्षी हैं। धर्म, योग, इतिहास, दर्शन, साहित्य के सन्दर्भ में उनके पास वैश्विक स्तर की सामग्री मिलती है। उनके साहित्य सन्दर्भ और प्रयोग आश्चर्य में डाल देते हैं। उन्होंने साहित्य सेवा को अपना व्रत बनाया न कि वृत्ति। उनकी साहित्य साधना एकनिष्ठ है तभी वे इतने अधिक ग्रंथ तैयार कर सके। सब में उनका मौलिक चिन्तन और प्रयोग है। भारतीय दर्शन, धर्म, और संस्कृति की अस्मिता है। शुद्ध मानवतावादी सत्यं शिवम् सुन्दरम् का सन्देश है। उसकी लोकमंगल व समन्वय की भावना सराहनीय है। उनकी रचनाओं में धर्म, योग, दर्शन, इतिहास, साहित्य, समाज और संस्कृति के साथ विश्व साहित्य के विभिन्न विचारों, विभिन्न धर्मों के धार्मिक ग्रंथों की विशेष धाराओं का सुन्दर प्रवाह सम्पृक्त है।

मिश्र जी का बहुआयामी व्यक्तित्व अपना विशेष महत्व रखता है। उनके विचारों से प्रभावित होकर हम लोगों ने इस अंक को उन पर आधारित किया है ताकि हमारे सभी पाठकों को भी उनके बारे में अधिकाधिक जानकारी हो सके। मिश्र जी पर जिन विद्वानों के विचार प्रकाशनार्थ प्राप्त हुए उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

अनुज प्रताप सिंह

सन्देश

भूपति भवन पैलेस,

रामनगर, अमेठी सुलतानपुर (उत्तर प्रदेश) 227405

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि आप सुपर इंडिया पत्र का विशेषांक महान साहित्य मनीषी पं. राम प्रसाद मिश्र पर सम्पादित करने जा रहे हैं। पं. राम प्रसाद मिश्र ने हिन्दी साहित्य की सराहनीय सेवायें की हैं। साहित्य की प्रत्येक विधा में वे निपुण हैं उनकी रचनायें अत्यन्त उच्चकोटि की हैं। बाल साहित्य से लेकर कविता, उपन्यास, निबन्ध एवं हास्य-व्यंग्य प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने उल्लेखनीय योगदान दिया है। हिन्दी के साथ ही अंग्रेजी भाषा में भी उनकी उपलब्धि रही है।

मुझे विश्वास है कि पं. रामप्रसाद मिश्र जैसे मूर्धन्य विद्वान पर विशेषांक प्रकाशित करने से उदीयमान युवा रचना धर्मियों को मार्गदर्शन प्राप्त होगा और वे इससे लाभ उठायेंगे। मैं विशेषांक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

डॉ. संजय सिंह

मुझे यह जानकर आत्मिक प्रसन्नता हुई है कि मा. सुपर इंडिया ने डॉ. अनुज प्रताप सिंह के सम्पादन में सहजता और सरलता की प्रतिमूर्ति डॉ. राम प्रसाद मिश्र पर विशेषांक प्रकाशित करने का कल्याणकारी निर्णय लिया है। साहित्यानुरागियों को निश्चित ही इससे प्रेरणा मिलेगी। एक श्रेष्ठ कवि, उपन्यासकार, निबन्धकार, प्रखर आलोचक बहुभाषाविद् डॉ. मिश्र ने

अपनी तप तूलिका से मानव जीवन के धार्मिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक पक्षों के सत्य को उजागर करने में जो पुरजोर ताकत लगाई है उसे शब्दों में ही नहीं व्यक्त किया जा सकता। मैं विशेषांक की सफलता की कामना करता हूँ।

डॉ. सत्यकाम आर्य
रीडर भूगोल विभाग
चाणक्यपुरी, अमेठी, सुल्तानपुर

अभिनन्दन राम प्रसाद का, परम गुणी विद्वान,
उनसे ही मुझको मिला, सत-पथ का है गान।
योग क्षेम हों, स्वस्थ हों, करें जगत कल्याण,
स्नेह सदा मिलता रहें, करूँ सदैव प्रणाम।
प्रेरक बनें प्रबुद्ध जन, कर हिन्दी सम्मान,
हिन्दी के गौरव परम, गर्वित देश महान।

गोविन्द नारायण मिश्र
गढ़ी मानिकपुर, प्रतापगढ़

सृजन विपुल साहित्य का हुआ अवाद प्रशस्य।
संख्या प्रायः एक शत, शीर्ष वरेण्य अवश्य॥
लेख समीक्षा काव्य भी, हिन्दी का इतिहास।
प्रमाणिक कृतियां सभी प्रेरक ज्ञान प्रकाश॥
सरल शील सौजन्य निधि संयुत विरति उदार।
डॉक्टर रामप्रसाद जी मिश्र विबुध कृतिकार।
विद्वत मंडल शोभि जो वक्ता विशद प्रवीण।
उनको आशिष भव्य का नित यश लहैं नवीन॥

वैजनाथ प्रसाद शुक्ल 'भव्य'

ताज बने साहित्य के, हम को तुम पर नाज।
 मानव को नित दे रहे, जीने का अन्दाज।।
 जीने का अन्दाज, सुगम पथ हमें दिखावें।
 जनता की आवाज बन, सारा राष्ट्र जगावें।
 कहै इन्दु क्या आपसे, मिलते नहीं अल्फाज।
 कलम नहीं अंगार है, साहित्य जगत के ताज।

रामेश्वर प्रसाद, झाँसी, 284121

बलिहारी गुरु आपकी

डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

निश्चय ही डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त साहित्यकार, कवि, इतिहासकार, समीक्षक, कथाकार, एवं उदारवादी हैं। उन्होंने आलोचना के क्षेत्र में नए मानदण्ड स्थापित किए हैं। उन्होंने अंग्रेजी में भी हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा। उन्होंने नई शैली की लम्बी कवितायें भी लिखीं। 'मसीहा' उनका प्रसिद्ध उपन्यास है। 'स्वर्गता' उनकी प्रसिद्ध व मार्मिक काव्य कृति है। उन्होंने 'दो सौ अस्सी साहित्यकार' नामक ग्रंथ का भी लेखन किया है जिसमें कई स्थानों पर इस अकिंचन का भी जिक्र किया है। इसी प्रकार उन्होंने 'हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' नामक वृहद् ग्रंथ दो खंडों में लिखकर यश अर्जित किया। इस ग्रंथ में भी कई स्थानों पर मेरा उल्लेख किया।

रामचन्द्र शुक्ल से लेकर आज तक के साहित्य इतिहासकारों में से किसी ने भी बाल साहित्य की इतिहासपरक उपलब्धियों का उल्लेख अपने ग्रंथों में नहीं किया है। डॉ. मिश्र ने बालसाहित्य, नवगीत एवं हिन्दी गजल का इतिहासपरक आंकलन भी अपने ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। वे स्वयं भी एक सफल बालसाहित्यकार, हैं। वे इस रूप में भी पुरस्कृत व सम्मानित हो चुके हैं।

संयोग से वे मुझे शोध परीक्षक एवं गुरु गोविन्द के रूप में भी प्राप्त हुए। उन्होंने कानपुर विश्वविद्यालय में प्रस्तुत मेरे शोधग्रंथ 'हिन्दी गजल: उद्भव और विकास' पर एक शोध परीक्षक के स्तर से निम्न सम्मति व्यक्त की थी।

"हिन्दी गजल: उद्भव और विकास' डॉ. रोहिताश्व अस्थाना का स्तरीय एवं आकर्षक शोध प्रबन्ध है। डॉ. अस्थाना स्वयं एक सफल गजलकार हैं। अतः उनका निरूपण गहरा भी है, सरस भी। यह शोध प्रबंध एक आलोचना ग्रंथ भी है क्योंकि डॉ. अस्थाना ने जगह-जगह पर मौलिक आकलन भी किया है।"

अब तक कई साहित्यिक समारोहों में मुझे मिश्र जी का दर्शन लाभ मिल चुका है। वे मेरे शोध परीक्षक गुरु तो हैं ही उनसे पारिवारिक संबंध भी हैं। विनम्रता की प्रतिमूर्ति हैं। वे स्वास्थ्य रहते हुए शतायु हों। महात्मा कबीर के इस दोहे के माध्यम से मैं उन्हें अपनी प्रणति एवं शुभकामनायें अर्पित करता हूँ।

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागीं पाँव।

बलिहारी गुरु आपकी, जिन गोविन्द दियो बताय।।

निकट बावन चुंगी चौराहा,

हरदोई-1 (उ.प्र.)

डॉ. रामप्रसाद मिश्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. राधा कृष्ण शर्मा

1980 ई. के बाद डॉ. रामप्रसाद मिश्र से मेरा सम्पर्क हुआ। बौसी (बिहार) निवासी 'मनोज' पत्रिका के सम्पादक श्री प्राण मोहन 'प्राण' ने श्री मिश्र का परिचय दिया। पहली ही मुलाकाल में मिश्र जी ने मुझे बहुत प्रभावित किया। उन्होंने स्वागत भरा आतिथ्यसत्कार किया। वाणी में मधुरता थी, व्यवहार में नम्रता। मैं एक घण्टा वहाँ रहा। चलने लगा तो उन्होंने पुस्तकें व पत्रिकायें मुझे भेंट कीं। मिश्र जी से जब भी मिलता रहा अपनत्व का भाव मिला। उन्होंने हिन्दी भाषा का विस्तृत एवं गहरा अध्ययन किया है। वे कर्म की पूजा करते हैं और परिश्रम को सफलता की कुन्जी मानते हैं। वे फल की चिन्ता किये बिना लेखन व अध्ययनरत रहते हैं। आप विद्वता के सागर हैं और सागर की गंभीरता भी है। प्रायः हिन्दी की ऐसी कोई विधा नहीं बची जिसमें आपका लेखन न हो। साहित्य जगत में आपको बहुत लोकप्रियता प्राप्त है।

आपने लगभग 80 पुस्तकें लिखी हैं। इसमें से 'हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' बहुत प्रसिद्ध ग्रंथ है। हिन्दी भाषा और साहित्य पर तो आपका अधिकार है ही अंग्रेजी और संस्कृत की भी आपको अच्छी जानकारी

है। अंग्रेजी में आपकी चार पुस्तकें हैं। मिश्र जी प्रभावशाली वक्ता हैं। उसके उद्गारों को सुनने के लिए लोग लालायित रहते हैं। वे सात्विक विचार के व्यक्ति हैं, उनका व्यक्तित्व विराट कृतित्व विशाल है। मिश्र जी अलौकिक प्रतिभा के धनी हैं। सांस्कृतिक चेतना के साधक हैं। उसके जीवन में कोई आडम्बर नहीं है और करनी-कथनी में फर्क नहीं है।

मिश्र जी देश की गन्दी व संकुचित राजनीति व प्रचलित भ्रष्टाचार से चिंतित रहते हैं। इनका जीवन सादा व सात्विक है। इनका विचार उच्चकोटि का है, इनकी छाया में रहकर कोई भी अपना जीवन सफल बना सकता है। कुछ वर्षों पूर्व मिश्र जी की पत्नी का स्वर्गवास हो गया। वे दुखी रहने लगे। फिर भी उन्होंने बड़े धैर्य व साहस का परिचय दिया। अपनी लेखनी को कुण्ठित नहीं होने दिया। इन्होंने अपनी पत्नी की स्मृति में 'स्वर्गता' नाम से काव्य की रचना की।

मानव समाज में डॉ. रामप्रसाद मिश्र जैसे यशस्वी व्यक्तित्व की स्मृति स्थायी रूप से कायम रहेगी। ये अनुकरणीय व वन्दनीय व्यक्ति है। मैं इनके स्वस्थ दीर्घ एवं सुखमय जीवन की कामना करता हूँ।

मोहन नगर, छपरा (बिहार)

मेरे अपने डॉ. रामप्रसाद मिश्र

माणेराम अत्रश

कवि शिरोमणि श्री डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी से मैं 18-19 वर्षों से परिचित हूँ। उन पर 'सुपर इंडिया' एक विशेषांक प्रकाशित कर रहा है। यह हर्ष का विषय है।

हे सरस्वती के वरद पुत्र, क्या लिखूँ आपके बारे में?

इसकी कृतियाँ आंखों देखी व सत्यता की प्रतीक हैं। स्पष्टवादी होने के कारण आदि से ही बड़े राजनेताओं की आंखों का कांटा बने रहे। वे किसी जाति या धर्म के पक्षधर नहीं हैं। अपनी बात बड़ी सरलता व सहजता से कहते हैं। अपनी स्वर्गता पत्नी की याद में 1994 में काव्य 'स्वर्गता' लिख कर अपनी महानता का परिचय दिया है। इनका आचार-विचार व्यवहार अत्यंत सराहनीय है। ये मानवता के सच्चे पुजारी हैं। मैं इनके सुखमय जीवन व स्वास्थ्य की कामना करता हूँ।

पटपड़गंज, दिल्ली 91

ऐसे साहित्यकार को प्रणाम

डॉ. धर्मपाल मैनी

डॉ. रामप्रसाद मि जी की व्यापक प्रतिभा का परिचय उनकी वैविध्यपूर्ण साहित्यिक कृतियों से अनायास ही मिल जाता है। सांस्कृतिक चेतना से सम्पन्न महाकाव्यों का गहन गंभीर कवि न केवल हास्य-व्यंग्य की कृतियों का सृजन भी कर सकता है अपितु बालसाहित्य की सरस रोचक कथाओं से बालमन को भी आकर्षित कर सकता है। आलोचना और निबन्धों के माध्यम से जहाँ साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं से आत्मीयता का परिचय देता है वहाँ आंचलिक व सामाजिक उपन्यासों के माध्यम से साहित्य को समृद्ध करने से भी नहीं चूका। ऐसे साहित्यकार को मैं श्रद्धा सहित प्रणाम करता हूँ। प्रभु उन्हें शतायु करें।

166, सेक्टर 19, चंडीगढ़-19

हिन्दुत्व को अर्पित ब्रह्म कमल डॉ. रामप्रसाद मिश्र

पाण्डेय आशुतोष

भली भांति मुझे स्मरण है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के आयोजन में लगभग 15 वर्ष पूर्व डॉ. रामप्रसाद जी को देखा सुना, यह पहला मौका था। वे 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस पर पधारे थे। पं. श्रीधर शास्त्री ने उन्हें ससम्मान मंच पर बोलने के लिए आमंत्रित किया।

मैं जानता था 'हिन्दी दिवस' पर कितना सच-झूठ बोला जाता है। थोड़ा अन्यमनस्क था। जब प्रबुद्ध वर्ग की ओर से तालियां बजने लगीं तो मेरे कान खड़े हुए। मिश्र जी धारा प्रवाह भारत पर विदेशियों के अतिक्रमण और हमारी पराधीनता के सन्दर्भ में बोले जा रहे थे। सभा समाप्ति पर मैंने स्वयं आगे बढ़कर साधुवाद दिया। फिर तो आत्मीयता की डोर में बँध गये जो आज तक बंधे हैं।

मुझे एक और मधुर मिलन याद है। उन दिनों मैं अपने साले डॉ. सुभाषचन्द्र मिश्र के यहाँ लक्ष्मीबाई नगर में रुका था। 'पुरवैया' निकालने की धुन थी। दिल्ली में रहने वाले सभी भोजपुरिया लोगों से मिलना हो रहा था। अचानक मुझे याद आया डॉ. मिश्र से मिलकर इस विषय में राय

लूँ। इससे पूर्व डॉ. विद्या निवास मिश्र से मिल चुका था। फोन कर मैं एक दिन मिश्र जी के कालेज जा पहुँचा। उनके एक सहयोगी अध्यापक ने मेरा परिचय जान मुझे अध्यापक कक्ष में बैठाया। पहले आतिथ्य सत्कार किया फिर मिश्र जी को सूचित करने चले गये।

थोड़ी देर बाद हँसते हुए मिश्र जी मेरे गले मिले। मुझे लगा उन का स्वास्थ्य पहले जैसे दीपित नहीं है। हिन्दी साहित्य के इस अहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हिन्दुत्व के अपूर्व व्याख्याता, काव्य पुरोधा की निर्भीक वाणी सुनना अपनी मेधा को समृद्ध करना है। मैंने ऐसा साहित्यकार नहीं देखा जो अपने लेखन को प्रमाणित कर दे, जिसका हर तर्क अखंडित हो, श्री चक्रधर नलिन के एक प्रश्न पर डॉ. मिश्र ने उत्तर देते हुए कहा — 'देश, दिल्ली और अहम' (1965) की 'उरोज', 'पुरुष का यौवन-अनुभव', 'नारी का संभोग — अनुभव' एवं 'पांडुग्रंथि' खण्डकाव्य के कारण स्व. गुरुदत्त, प्रो. बलराज मधोक, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. रामदत्त भारद्वाज, इत्यादि असन्तुष्ट हुए। डॉ. नगेन्द्र से जमकर बहस हुई। 'संस्मरण, श्रुति-स्मरण और जन-संस्मरण' में इसका उल्लेख है।

श्री अजित कुमार ने 'देश दिल्ली और अहम' कविताओं में बीट और हंग्री की चर्चा की, किन्तु पंत, दिनकर, बच्चन ने सराहा भी। इन कविताओं में जीवन श्रोत यौवन के उल्लास का चित्रण है। उल्लंग काम ऋग्वेद, वृहदाण्यक उपनिषद्, छांदोग्य उपनिषद् (आत्मरति-आत्ममिथुन इत्यादि); रामायण, महाभारत तक में व्याप्त है क्योंकि स्वतंत्र एवं सशक्त राष्ट्र ही उल्लंग काम से निष्पन्न हो सकता है। परतन्त्र एवं क्षुद्र राष्ट्र गुह्य एवं क्षुद्र कामुकता में लीन होकर जनसंख्या-वृद्धि कर सकते हैं। वे सारे मूल्य-गोपन यौन के पाखण्ड में सीमित कर देते हैं।

कालिदास पर अश्लीलता का आरोप पुराना है। सूर बेहद अश्लील कहे जा सकते हैं। तुलसी तक लिखते हैं — "अहिरिन हाथ दँहेडि सगुन लेई आवति हो। उनरत जोबनु देखि नृपति मन भवति हो।" रवीन्द्र ने 'स्तन' शीर्षक कविता लिखी है। प्रसाद ने मनु-श्रद्धा संदर्भ में 'लद गयी पाकर पुरुष का नर्मनय उपचार' लिखा है। पंत ने 'क्या गुह्य क्षुद्र ही बना रहेगा नर-नारी का स्वर्गिक आकर्षण?' प्रश्न उठाया है अज्ञेय तो खैर भ्रूणवादी ही हैं। कोणार्क और खजुराहों पर भारत को गर्व है क्योंकि ये धर्म सुख को बिंबित करते हैं। मुझे गर्व है कि मैं अनुभूति-तस्कर नहीं हूँ, पाखण्डी नहीं हूँ तथा याज्ञवल्क्य, वाल्मीकि, कालिदास, सूरदास, रवीन्द्र इत्यादि का

सक्षम उत्तराधिकारी हूँ। मूर्खजन के परिहास की चिन्ता नहीं है। मटाधीशों के चमचों के प्रहार मेरे गौरव प्रमाणपत्र हैं।”

डॉ. मिश्र ने 19-2-2000 को एक पत्र लिखा

आत्मीय, नमन्। 03 का पत्र। स्टार न्यूज देखें और उनकी भाषा के विरोध में कार्य आरम्भ करें। हिन्दी गरीब की जोरु है, न रहे, इसके लिए पत्र लेख से आप आरम्भ करें। पर्यटक (लखनऊ) से सम्पर्क करें।

कानपुर मैं भी न पहुँच पाया। 68 का होने वाला हूँ। स्वास्थ्य कभी अच्छा नहीं रहा, पर खींच रहा हूँ। अपनत्व बनाये रहें।

हिन्दी रक्षा वाहिनी युग की प्रबल पुकार,
आशुतोष की कृपा की, करती है मनुहार,
हिन्दी माता पर विषद् कठिन पुत्र का कर्म,
तन-मन-धन अर्पित करें, यह सर्वोत्तम धर्म।

अभिन्न, रामप्रसाद मिश्र

ऐसे प्रज्ञा पुरुष को शत्-शत् नमन करता हूँ। वे शतायु हों।

पो. मलकौली, मंदिर 845105 पं. चम्पारण (बिहार)

एक विलक्षण व्यक्तित्व डॉ. राम प्रसाद मिश्र

स्व. सेठ बिशन स्वरूप गोयल 'पटवारी जी'

यह प्रकाशित पत्र श्री गोयल जी ने 1 फरवरी, 2003 को लिखा था। कुछ ही दिनों बाद श्री गोयल जी दिवंगत हो गए—सम्पादक।

डॉ. रामप्रसाद मिश्र मेरे सम्पर्क में आज से लगभग 15 वर्ष पूर्व आए। उन्होंने कोई लेख लिखा था जिस पर सरकार को कुछ आपत्ति थी। एफ.आई.आर. ओर वारंट निकल गया। वे थोड़ा चिंतित हो गए। वह बलराज मधोक के पास पहुँचे, मधोक ने उन्हें मेरे पास भेज दिया। पुलिस अधिकारी वाकिफ था।

मेरे कहने पर उसने केस रफा दफा कर दिया। इस कारण यह मुझसे बहुत प्रभावित हुए और आत्मिक संबंध बना लिया।

यह तो मात्र एक घटना थी। दर असल डॉ. साहब बहुत ही महान व योग्य हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि ये झूठ और मक्कारी जो इस

देश के नेताओं का सबसे बड़ा कवच है, उसको नंगा करने में कभी भी औपचारिकता नहीं करते। इसलिए इन्हें कवि सम्मेलनों, लेखकों में जो सम्मान मिलतना चाहिए नहीं मिला। उन्होंने ऐसा भी लिखा है जो गाँधी, नेहरू जैसे लोगों को नंगा करता है। इसके अतिरिक्त इन्होंने कई उपन्यास और आज की राजनीति पर अपने लेखों द्वारा काफी कटाक्ष किया है जो सरकार समर्थक पत्र छापते घबराते हैं। सही अर्थों में यदि डॉ. साहब जैसे मनुष्य देश में न होते तो यह देश अधूरा ही रहता।

विकल्प प्रकाश, 3314 बैंक स्ट्रीट
करोल बाग, नई दिल्ली-5

कविता संस्कृति की वाहिका बने

डॉ. रामप्रसाद मिश्र

डॉ. उमाशंकर शुक्ल 'उमेश' से ब्रेबाक बातचीत

प्रश्न : आप क्यों लिखते हैं, और किसके लिए लिखते हैं?

उत्तर : मैं इसलिए लिखता हूँ कि लिखे बिना रह नहीं सकता। लिखना मेरा जीवन है। मैं जो पढ़े और समझे उसके लिए लिखता हूँ।

प्रश्न : क्या आप समझते हैं कि आज के वैज्ञानिक और तकनीकी युग में कविता की आवश्यकता नहीं रह गयी है?

उत्तर : वैज्ञानिक और प्राविधिक युग में भी मनुष्य मूलतः मनुष्य ही है, सभ्यता का केचुल बदलता रहता है। मनुष्य कभी संवेदनहीन न तो हो सकता है और न ऐसा होना चाहता है। अतः प्राचीन आर्वाचीन दोनों प्रकार की कविता सर्वथा प्रभावहीन नहीं हो सकती। विज्ञान और प्राविधिकी इत्यादि विषय मनुष्य के मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं, कलायें और कविता लोगों के हृदय को प्रभावित करती हैं?

प्रश्न : कविता ने युगानुरूप परिवर्तन से अपने को गतिशील बनाए रखा है। क्या समझते हैं? आज भी कविता ऐसा कर सकती है?

उत्तर : गति, अगति और प्रगति का चित्र सदैव कहीं न कहीं या किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है। कविता भी इस त्रित् के अनुरूप ही चलती है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। कविता भी इससे मुक्त नहीं रह सकती, और उसे उस प्रकार मुक्त रहना भी नहीं चाहिए।

प्रश्न : कविता की घटती हुई लोकप्रियता के लिए आप किसे जिम्मेदार मानते हैं?

उत्तर : कविता की सर्वश्रेष्ठ परिभाषा आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' के रूप में की है। आचार्य ने छंद या अन्य किसी प्रकार का बन्धन न रखते हुए वाक्य शब्द का जो प्रयोग किया है, वह शाश्वत महत्व का है। छंद, गेयता, इत्यादि कविता के अवयव हैं। रस, भाव, विचार या संवेदन उसका प्राण है। कविता का गद्य होना उसका सशक्त होना भी है क्योंकि इससे उद्गार के आयाम मुक्त हो जाते हैं। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि छंद अथवा अन्य अनुशासनों में बद्ध कविता आशक्त है क्योंकि संसार के अधिकांश कवि उसी से सम्पृक्त हैं।

प्रश्न : क्या कविता का गद्य होना उसका सशक्त होना है?

उत्तर : कविता के संबंध में मुझे इतना ही कहना है कि वह चाहे छंद हो या छंद मुक्त, अस्मिता के बिना गौरव नहीं पा सकती। अतः कविता को संस्कृति की वाहिका बनाये रखना ही श्रेयष्कर है।

वरेण्य साहित्यकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र

डॉ. मिर्जा हसन नासिर

हिन्दी के अनन्य सेवी सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र का हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। उनके द्वारा रचित साहित्य का विपुल भण्डार है। वे इतने सरल एवं मृदुभाषी हैं कि कोई भी इनसे मिलने पर प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। उनका व्यक्तित्व व कृतित्व दोनों अविराम हैं। वे अनेक साहित्यिक व सांस्कृतिक संस्थाओं से जुड़े हुए हैं। उन्होंने 'हिन्दी साहित्य का वस्तु परक इतिहास' भी लिखा है। भविष्य में जब भी हिन्दी का साहित्य का इतिहास लिखा जायेगा, मिश्र जी का उल्लेख अनिवार्य रूप से होगा।

मिश्र जी से मेरा पत्र-सम्पर्क लगभग बीस वर्षों से चलता रहा है, उनकी एक विशेषता यह भी है कि कोई पुस्तक या पत्र प्राप्त होने पर गद्य अथवा पद्य में तत्काल उसका उत्तर देते थे। मुझे भी उनकी कुछ कृतियों पर प्रतिक्रिया भेजने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सन 1986 ई. में मैंने डॉ. पवन कुमार द्वारा लिखित पुस्तक डॉ. रामप्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताओं पर समीक्षा लिखी थी जो लखनऊ से प्रकाशित सा. 'चरित्र विकास' के 30 के दि. 86 अंक में छपी थी। समीक्षा प्रति जब मैंने उन्हें भेजी तो वे बड़े ही प्रसन्न हुए।

गत वर्ष सि. को अ.भा. साहित्यकार कल्याण मन्च रायबरेली द्वारा आयोजित सम्मान समारोह में मुझे सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जहाँ मुझे मुल्ला दाउद सम्मान प्राप्त होना था। वहाँ मुझे डॉ. मिश्र जी के दर्शन हुए। अस्वस्थ होते हुए भी मिश्र जी वहाँ दिल्ली से पधारे थे।

वहाँ अनेक साहित्यकार भी पधारे थे। बहुत देर तक उनसे चर्चा होती रही। मंच पर विराजमान डॉ. मिश्र जी व नवनीत डाइजेस्ट के सम्पादक डॉ. गिरिजा शंकर त्रिवेदी जी बड़े ध्यान से कवियों व शायरों को सुनते रहे। मेरी रचनाओं को भी सुना और दाद दी। वहाँ अनेक विद्वानों के दर्शन हुए जिनमें श्री गार्गी शरण, मिश्र 'मंगराल', आचार्य भगवत दुबे आदि प्रमुख रहे। यह समारोह मेरे लिए यादगार सिद्ध हुआ।

जी-02, लोरपुर रेजीडेन्सी

डॉ. बैजनाथ रोड़, न्यू हैदराबाद,

लखनऊ-7

शुभकामना

डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी का व्यक्तित्व बड़ा ही निराला व गरिमा से परिपूर्ण है। उनका स्वभाव सभी को आकर्षित करने वाला, मृदुता से ओत-प्रोत है। आपके कृतित्व एवं व्यक्तित्व का मूल्यांकन एक विशेषांक के माध्यम से मानस पटल पर लाने के लिए आप सभी सही मायने में डॉ. मिश्र को उपकृत्य कर रहे हैं। आपका यह प्रयास श्लाघनीय है।

साहित्य सुधा नित पान हित, देते राम प्रसाद।

दर्शन से मिट जाएगा, मन का कलुष विषाद।।

मन का कलुष विषाद, धन्य हो बन्धु हमारे।

पढ़ कर सुंदर भाव क्लेश मिटते हैं सारे।।

कर 'बादल' स्नान, ज्ञान सागर में नित्य।

जन-जन हृदय प्रकाश करै मिश्र साहित्य।।

डॉ. शिव करन सिंह 'बादल'
निदेशक यशोमती सेवा संस्थान
ग्राम धूरी खेड़ा पो. पाण्डेय,
रायबरेली

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ है कि आप बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र के कृतित्व व्यक्तित्व पर विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं। डॉ. मिश्र तपस्वी साधक व स्वतंत्र विचारक हैं। उनकी कविता कहानी, आलोचना, निबन्ध, हास्य-व्यंग्य, संस्मरण, जीवनी, धर्म, लघुकथा, बालसाहित्य आदि विद्याओं में 90 से अधिक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। वह हिन्दी के प्रख्यात समालोचक तथा साहित्येतिहाज्ञ के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अंग्रेजी में अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया जिसमें 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिटरेचर' उल्लेखनीय कृति है।

डॉ. मिश्र का दो खण्डों में 'हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसे उन्होंने चालीस वर्षों के अथक परिम के बाद लिखा है। यह उनकी अद्भुत रचना है। उनका संघ प्रकाशित 'कल्पांत' द्वार के अन्त कथा कलयुग के आरम्भ की संक्रातिकालीन महाभारत गाथा का असाधारण मौलिक ऐतिहासिक महाकाव्य है। हिन्दी महाकाव्यों की परम्परा में यह मील का पत्थर प्रमाणित होगा। उन पर अनेक शोध हुए तथा अनेक ग्रंथों की रचना हुई है। उन पर निष्पक्ष भाव से काम करने की आवश्यकता है। हाल ही में हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश ने उन्हें 'साहित्य भूषण' सम्मान से विभूषित किया है। मैं विशेषांक की सफलता की कामना करता हूँ।

चक्रधर नलिन

प्रभु टॉउन, रायबरेली

लगभग 15 वर्षों से मैं आचार्यप्रवर डॉ. रामप्रसाद, मिश्र के सानिध्य में आया, और उनका पारस स्पर्श पाकर गन्तव्य की ओर उन्मुख होने लगा। आज जब अभिनन्दन अपने अभिनन्दन ग्रंथ की सामग्री संचयन से लेकर सम्पादन-प्रकाशन की भूमिका में सक्रिय योग दे रहा है, तब डॉ. मिश्र अपने अभिनन्दन ग्रंथ की प्रति उपराम दिखाई पड़ते हैं। गद्य-पद्य की नाना विद्याओं में अहर्निश क्रियाशील डॉ. मिश्र का कृतित्व एवं व्यक्तित्व स्वर्णाक्षरों में अंकित होने योग्य है। मुझे प्रसन्नता है कि डॉ. मिश्र के रचना कर्म पर केन्द्रित 'सुपर इंडिया' के इस विशेषांक का संपादन डॉ. अनुर्ज प्रताप सिंह जैसे विद्वान कर रहे हैं। मुझे विश्वास है यह अंक बड़ा ही प्रेरणाप्रद होगा।

प्रकाश द्विवेदी

सेठवा, डॉ. मालीपुर

अम्बेदकर नगर-224159

नेताचरित्रम्

डॉ. महेश प्रताप नारायण अवस्थी

डॉ. राम प्रसाद मिश्र हिंदी साहित्य के जाज्यत्यमान नक्षत्र हैं। इन्होंने काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, बाल साहित्य और हास्य-व्यंग्य बहुत कुछ लिखा है। यह सही है कि उनकी ख्याति श्रेष्ठ कवि, समालोचक और इतिहासकार के रूप में ही अधिक है। अब तक 80 ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। यह एक बहुत बड़ी साहित्यिक उपलब्धि है।

निश्चय ही 'नेता चरित्रम्' हिंदी का विशाल व्यंग्य काव्य है, जिसके संबंध में श्री उमाशंकर मिश्र ने लिखा है सम्भवतः हिन्दी का ऐसा प्रथम व्यंग्य महाकाव्य है जिसे राजनीतिक-काव्य की श्रेणी में भी श्रेष्ठ माना जा सकता है। इस ग्रन्थ में विगत 50 वर्षों का लेखा-जोखा व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। वह भूमिका में अपने राष्ट्रप्रेम का परिचय इन शब्दों में देते हैं -

भारत मेरा मर्म है, भारत मेरा धर्म।

भारत मेरा कर्म है, भारत मेरा वर्म।।

वह हिन्दी के संबंध में अपनी अभिव्यक्ति देते हैं -

हिन्दी मेरी साँस है, हिन्दी ही उच्छ्वास।

हिन्दी मेरी आस है, हिन्दी ही उच्छ्वास।।

'नेता चरित्रम्' में कवि पहले नेता वन्दना करता है। आधुनिक युग में नेताओं को कुछ अधिक ही सम्मान देने की होड़ सी लगी हुई है। वन्दना की प्रथम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

तू धन्य धन्य नेता महान

पद वन्दन मानो लाभ खान

कवि जन गाते हैं कीर्तिगान

पाते हैं यश, और धन मान

इतिहासकार करते बखान

पद पदवी पाते बढ़ा शान

इसके बाद कवि नेतावाणी अंग्रेजी वन्दना करता है। वस्तुतः 'नेताचरित्रम्' का शुभारम्भ प्रथम सर्ग उद्भव-विकास से माना जाना चाहिए जहाँ कवि लिखता है -

जिस दिन जन्म हुआ नेता का धरती का घँसी अढ़ाई हाथ,
माता मूर्छित घंटे भर तक पिता पकड़ के बैठा माथ।

फिर आगे क्या होता है ?

पत्रकार कवि लेखक खीसैं खूब निपोरेंगे दिना रात।
हीरे सोना चाँदी कंकड़ रुपये डालर की बरसात।।

द्वितीय सर्ग में 'सत्ता बीज मंत्र' पर व्यंग्य किया गया है -

नेता ने बेटी-बेटों के किए धर्म निरपेक्ष विवाह।
बेटी ईसाई की ब्याही ज्येष्ठ पुत्र का किया निकाह।।
एक पुत्र सिख पुत्री लाया, एक फ्रेंच महिला गौरांग।
विश्वरूप परिवार बन गया, धर्म और मत अंग उपांग।।

तृतीय सर्ग भाषण का है। एक उदाहरण देखें -

भाषण है जीवन का सार

भाषण बिना अतुल मानव जीवन है भारी भार,
जन्म रुदन नेता का भाषण, प्रति पल में विस्तार,
चिंता भाषण हँसना भाषण, वही जीत और हार

चतुर्थ सर्ग में 'प्रजापति-राजपाल सम्मेलन', पंचम में 'विदेशों में देश सेवा', षष्ठ में 'सम्पूर्ण न्यायवाद', सप्तम में 'हिन्दू जागति' तथा अष्टम सर्ग में 'एकता सम्मेलन' का व्यंग्य विनोदी चित्रण है। नवम् अन्तिम सर्ग है। जिसमें 'स्वर्ण युग' का चित्रण है। यह चित्रण व्यंग्य के धारासार प्रवाह से नहीं बच सका। ऐसे उत्तम काव्य के लिए डॉ. मिश्र को कोटिशः नमन। इस ग्रन्थ की पेज संख्या 168 है तथा मूल्य 50 रुपये। इसे प्रकाशित किया है, उमाशंकर मिश्र, 68 तुराब नगर, गाजियाबाद ने।

(ग) परिचय विवरण

ले. आत्मा त्रिपाठी

1. नाम : डॉ. रामप्रसाद मिश्र
2. पिता का नाम : स्व. शिवलाल मिश्र
3. जन्मतिथि व जन्मस्थान : 19 सितंबर, 1932, निंबई, उन्नाव, उत्तर प्रदेश
मूलस्थान : दौलतपुर, रायबरेली, उत्तर प्रदेश
शिक्षा एवं संबंध : कानपुर
4. पता : H-41, विकास पुरी, नई दिल्ली
5. शिक्षा : एम.ए. पीएच. डी.
6. व्यवसाय : शिक्षण (पूर्व रीडर, हिन्दी विभाग) पी.जी.डी.ए.वी. कालेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली - 110065

उल्लेखनीय उपलब्धियां (पुरस्कार एवं सम्मान आदि)

1. 1983 उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान साहित्यिक निबंध : महावीर प्रसाद द्विवेदी
लखनऊ नए आयाम अनुशंसा पुरस्कार
2. 1986 उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान विश्व के सर्वश्रेष्ठ महावीर प्रसाद द्विवेदी
लखनऊ महाकाव्य अनुशंसा पुरस्कार
3. 16.4. सरस्वती प्रतिष्ठान, तुलसी के अध्ययन सरस्वती पुरस्कार
1988 रायबरेली की नई दिशाएं
4. 1988 उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान तुलसी साहित्य के रामचंद्र शुक्ल
लखनऊ सर्वोत्तम अंश अनुशंसा पुरस्कार
5. 31.12 मानस संगम, कानपुर समग्र तुलसी साहित्य मानस संगम साहित्य
1989 पर पुरस्कार
6. 1995 उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान दृष्टि (महाकाव्य) अनुशंसा पुरस्कार
लखनऊ
7. 1995- हिंदी अकादमी, दिल्ली सबसे प्यारा अपना बाल-साहित्य पुरस्कार
1996. देश

- | | | | | |
|------|----------------|--|--|-----------------------------|
| 8. | 1.11
1992 | साहित्यिक संस्था कृति
सतना | साहित्यिक क्षेत्र के
अमर स्रष्टा | मान-पत्र |
| 9. | 1.11
1992 | गीतम्, साहित्यिक संस्था
सतना | अप्रतिम साहित्येतिहाकार,
विविध आयामी आलोचक,
महाकवि | मान-पत्र |
| 101. | 14.5.
1993 | वातायन (पंजी, समाज
सेवी) एवं सांस्कृतिक
संस्था, चंदक स्मारोह
(बिजनौर) | साहित्यकार-सम्मान
चंदक समारोह | सम्मान पत्र |
| 11. | 29.8.
1993 | अवध पुष्पाञ्जलि (हिंदी)
मासिक), लखनऊ | पंचदशम् वर्ष प्रवेश
समारोह | मान-पत्र |
| 12. | 1993 | रायबरेली रचनात्मक संघ
रायबरेली | प्रथम जनपदीय
साहित्यकार सम्मान
समारोह | प्रशस्ति-पत्र |
| 13. | 20.5. | पुरालेखन केन्द्र,
मुरादाबाद | बौद्धिक-रस
(काव्य सिद्धांत) | अहिवरण सम्मान |
| 14. | महिला
1995 | प्रगति संस्थान,
बाँदा | हिंदी साहित्य में
अप्रतिम योगदान | साहित्य-शिरोमणि |
| 15. | 8.6.
1995 | अखिल भारतीय साहित्यकार
अभिनंदन समिति, मथुरा,
उत्तर प्रदेश | राष्ट्रभाषा सेवा हेतु | राष्ट्रभाषा-आचार्य |
| 16. | 2.2.
1996 | अखिल भारतीय
श्रीगीतामेला, कानपुर | संस्कृत सेवा हेतु
समभिनंदन पत्रम् | साहित्यश्री एवं
पुरस्कार |
| 17. | 2.2.
1996 | अर्मापुर पी.जी. कालेज,
कानपुर | साहित्य सेवा हेतु | स्मृति भेंट |
| 18. | 1996 | विशाल चिन्ट्रेन सोसायटी
नई दिल्ली | साहित्य सेवा हेतु | साहित्य सेवा सम्मान |
| 19. | 7.4.
1996 | बिहार हिंदी साहित्य
सम्मेलन पटना, बिहार | हिंदी साहित्य के प्रति
तप एवं सेवा हेतु | साहित्य-तपस्वी |
| 20. | 27.10.
1996 | युवा साहित्य मंडल,
गातिघाबाद | चतुर्थ अखिल भारतीय
हिंदी साहित्य सम्मेलन | कवि-शिरोमणि
तुलसी सम्मान |
| 21. | 30.11
1996 | गीतकार, साहित्यिक मंच
दिल्ली | साहित्य-सेवी | अलंकरण-पत्र |

22.	27.4. 1997	चिंतन साहित्य परिषद, मैनपुरी	उत्कृष्ट योगदान, हिन्दी सेवा	साहित्य-शिरोमणि सम्मान
23.	4.5. 1997	अखिल भारतीय नवेदित साहित्यकार परिषद, लखनऊ	हिंदी की अविस्मरणीय सेवा हेतु	सारस्वत सम्मान पत्र
24.	11.8. 1997	अंतराष्ट्रीय मानस विचार संस्थान, कानपुर	उत्कृष्ट बाल साहित्य हेतु	मानस-मणि
26.	21.3. 1998	नारायण वानिकी संस्था गाजियाबाद	पर्यावरण साहित्य हेतु	सम्मान-पत्र
27.	14.9. 2000	साहित्य मण्डल, श्रीनाथद्वारा	विशिष्ट हिंदी सेवा हेतु	हिन्दी भाषा भूषण
28.	24.11	आ.भा., हिन्दी सा.स. गाजियाबाद	हिंदी की अविस्मरणीय सेवा हेतु	शीर्ष-सम्मान २००१
29.	24.2. 2002	अनुरंजिका: कानपुर	हिंदी की अविस्मरणी हेतु सेवा	ऋषिकल्प
30.	11.2. 2003	चेतना साहित्य परिषद लखनऊ	हिंदी की अवि सेवा हेतु	चेतना-गौरव

दिल्ली, नोएडा, मैनपुरी, कानपुर, लखनऊ, बाराबंकी, जयपुर इत्यादि के अनेक सम्मानों का विवरण उपलब्ध नहीं क्योंकि सामग्री इतस्ततः उपहार में दी दी। सरस्वती साधना परिषद् मैनपुरी के एक सम्मान तथा, अनंतर, एक पुरस्कार का ध्यान नहीं।

अन्य उपलब्धियां

1. 15 अगस्त, 1995 को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के प्रेमचंद सभागार में लोकार्पण में 'वाह्नि-वीणा' (कृष्णमुरारी 'विकल') के लोकार्पण समारोह की अध्यक्षता, जिसके मुख्य अतिथि श्री अटल बिहारी बाजपेयी थे। (विरोधी दल नेता)
2. 5 दिसम्बर 1995 को राष्ट्रपति शंकर दयाल शर्मा द्वारा 'दृष्टि' के संदर्भ में आमंत्रण।
3. 23 मार्च 1997 को भीमराव अम्बेडकर कालेज, भुवनेश्वर में 'महाकाव्य' विषय पर विद्वत गोष्ठी हुई जिसके प्रथम उपनिवेश में भारतीय

महाकाव्यों रामायण, महाभारत (संस्कृत), वैदेही-विलास (उडिया) रामचरितमानस, कामायनी के साथ 'दृष्टि' पर प्रकाश डाला गया तथा द्वितीय उपवेशन में महाकाव्यों से पूर्व मंगलाचरण रूप 'दृष्टि' के कविलोक के होमर संबंधी अंश संगीतबद्ध कर सुनाए गये।

4. 5 जनवरी को 'दो सो अस्सी साहित्यकार' ग्रंथ श्री अटल बिहारी को भेंट (जो इस ग्रंथ के साहित्यकारों में समाविष्ट है)।
5. 4 मई 1998 को बौसी (बाँका, बिहारी) में 'डॉ. रामप्रसाद मिश्र साहित्य, संस्कृति एवं कला अकादमी' की स्थापना का निर्णय। जिसके संरक्षक बिहार सम्मेलन के प्राण स्व. महाकवि पं. रामदयाल पाण्डेय, अध्यक्ष, प्रो. मुचकुंद शर्मा एवं महामंत्री प्राण मोहन 'प्राण' थे।
6. 24 मार्च 1999 को प्रधानमंत्री वाजपेयी जी को 'हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' भेंट किया।

शोध-कार्य

1. भुवनेश्वर वि.वि. के प्रोफेसर डॉ. सुधांशु नायक के निर्देशन में "डॉ. रामप्रसाद मिश्र कृत महाकाव्य 'दृष्टि' में मानवतावाद का स्वरूप" पर पीएच. डी. शोधकार्य हो चुका है।
2. जबलपुर वि.वि. के डॉ. राजकुमार के निर्देशन में "हिन्दी की आंचलिक उपन्यास परम्परा और डॉ. रामप्रसाद मिश्र कृत 'जागता गांव' पर एम. फिल. शोधकार्य हो चुका है।
3. जबलपुर वि.वि. के डॉ. राजकुमार के निर्देशन में "डॉ. रामप्रसाद मिश्र कृत 'हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' में काल-नामकरण एवं काल-निर्धारण" विषय पर जबलपुर वि.वि. में एम.फिल. कार्य हो चुका है।

रचनात्मक परिचय

- (क) कविता, आलोचना, उपन्यास, निबन्ध, हास्य-व्यंग्य, बाल-साहित्य तथा अन्य विधाओं में लेखन।
- (ख) प्रकाशित साहित्य का विवरण:

कविता

1. बौद्धिकरस, 1964 ई. अनिल प्रकाशन मंदिर, 1494 गली पीपल, नई सड़क, दिल्ली-110006, पेज-148, मूल्य 2.50 रुपये।
2. देश, दिल्ली, और अहम! 1965 ई. अनिल प्रकाशन मंदिर, 1494 गली पीपल, नई सड़क दिल्ली-110006, पेज-96, मूल्य 4 रुपये।
3. पाण्डु-ग्रन्थि (खण्डकाव्य)। 1965 ई. अनिल प्रकाशन मंदिर, 1494 गली पीपल, नई सड़क, दिल्ली-110006. पेज-64, मूल्य 5 रुपये।
4. दृश्य जो न भूले, 1965 ई. अनिल प्रकाशन मंदिर, 1494 गली पीपल, नई सड़क, दिल्ली-110006, पेज-64 मूल्य 3 रुपये।
5. बहादुर शाल ज़फ़र, 1968 ई. अनिल प्रकाशन मंदिर, 1494 गली पीपल, नई सड़क, दिल्ली-110006, पेज-88, मूल्य 3 रुपये।
6. ध्योन के गान, 1974 ई. सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-110006, पेज-128, मूल्य 6 रुपये।
7. क्रांति के गीत, 1975 ई. बलराज प्रिन्टर्स, वेस्ट पटेल नगर, दिल्ली. 110008, पेज-36, मूल्य 1.50 रुपये।
8. मृत्युंजय जयप्रकाश, 1977 ई. प्रकाशन मंदिर, 3014 चखैवालान, दिल्ली-110006, पेज-32, मूल्य 4 रुपये।
9. सेतु', 1980 ई. प्रेम प्रकाशन मंदिर, 3012 बल्लीमारान, दिल्ली. 110006, पेज-66, मूल्य 18 रुपये।
10. हिन्दुओ, जागो! 1987 ई. देवदार प्रकाशन, 59 सुभाष पार्क एक्सटेंशन, दिल्ली-110032, पेज-96, मूल्य 9 रुपये।
11. जयभारत, जय भारती, प्रहरी, कृषक, श्रमिक जय, 1990 ई. देवदार प्रकाशन, 59 सुभाष पार्क एक्सटेंशन दिल्ली-110032, पेज-48, मूल्य. 12 रुपये।

1. इस संग्रह की अंतिम कविता 'तब, अब और आगे, को बेंगलूर. वि.वि. के एम.ए. में प्रस्तावित होने पर 'तब, अब और आगे' (जीवनदर्शनपरक महाकविता) के रूप में 1988 ई. में देवदार प्रकाशन 56 सुभाष पार्क एक्सटेंशन, दिल्ली-110032 द्वारा पुनः प्रकाशन हुआ पेज-32 मूल्य 3 रुपये।

12. सार्वभौम¹, 1994 ई. राकेश प्रकाशन, बाराबंकी, पेज-224, मूल्य 100 रुपये।
13. स्वर्गता (हिन्दी का प्रथम शोक-काव्य)², 1964 ई. राजकिशोरी प्रकाशन, 14 सहयोग अपार्टमेन्ट्स, मयूर विहार-1 दिल्ली-110091, पेज-100, मूल्य 20 रुपये।
14. नेताचरित्रम् (व्यंग्य-महाकाव्य), 1995 ई. युवा साहित्य मंडल, 69, तुराब नगर, गाजियाबाद-201009, पेज-168, मूल्य 75 रुपये।
15. दृष्टि (बाईस-सर्गीय महाकाव्य), 1995 ई. युवा साहित्य मंडल, 68, तुराब नगर, गाजियाबाद-201009, पेज-258, मूल्य 75 रुपये।
16. वेदायन (वैदिककाल — चित्रणपरक महाकाव्य) 1997 ई. राकेश प्रकाशन, बाराबंकी, पेज-144, मूल्य 80 रुपये।
17. रूपायन, 1999 ई. राकेश प्रकाशन, बाराबंकी (उत्तर प्रदेश) 7225001, पेज-79, मूल्य 65 रुपये।
18. मुहम्मद, 2001 ई. प्रसास प्रकाशन, नई दिल्ली-110002 पेज-141, मूल्य 50 रुपये।
19. कल्पान्त (15 बड़े सर्ग) 2003 इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, पेज-383, मूल्य 495 रुपये।
20. पुरुषोत्तम (38 सर्ग), 2003 मित्तम बुक एजेंसी, गोला मार्किट, दिल्ली. 110003।

उपन्यास

19. पथपर³, 1955 ई. भारती (भाषा) भवन, 3810 चखेवाला, दिल्ली. 110006, पेज-204 मूल्य 3.50 रुपये।
20. मिस्टर अटल, 1970 ई. राष्ट्रभाषा मंडल, 1892 चांदनी चौक, दिल्ली. 110006, पेज-91, मूल्य 3 रुपये।

1. इस संग्रह की 'इल और इला' कविता 'बौद्धिक रस' तथा 'अंधे का आत्मनिवेदन' कविता 'देश दिल्ली और अहम्' से अवतरित की गयी है।

2. एक मात्र ग्रंथ स्वयं प्रकाशित और उसमें पूर्ण विफलता।

3. लेखक का नाम आनन्दशंकर, जनसत्ता प्रकाशन, अहमदाबाद, पेज-171, मूल्य, 1 रुपया। 1960 ई. में पुनः प्रकाशन हुआ किन्तु 'कहां या क्यों?' रूप में जो 2001 ई. में पुनः निकला।

21. एक पथ दो पथिक (दो लघु-उपन्यास - 1. 'कला का छोर' 2. एक कलाकार) 1975 ई. प्रेम प्रकाशन मंदिर, 3012 बल्लीमारान, दिल्ली-110006, पेज-123, मूल्य 8 रुपये।
22. एक सड़ी हुई कौम, 1978 ई. शारदा प्रकाशन, महारौली, नई दिल्ली. 110030, पेज-186, मूल्य 15 रुपये।
23. जागता गांव, 1985 ई. प्रेम प्रकाशन मंदिर, 3012, बल्लीमारान, दिल्ली-110006 पेज-264, मूल्य 45 रुपये।
24. मसीहा, 1986 ई. हिन्दी प्रचारक संस्थान पो.बा. 110006, पिशाचमोचन, वाराणसी-221001, पेज-168, मूल्य 10 रुपये।
25. पिटा हुआ मोहरा, 1997 ई. जीवन ज्योति प्रकाशन, 3014 चर्खेवाला, दिल्ली-110006, पेज-195, मूल्य 150 रुपये।
26. पांडु-ग्रथि (उपन्यास), 1999 ई. आधुनिक प्रकाशन, मौजपुर, दिल्ली-110053, पेज-60 मूल्य 50 रुपये।
27. कुछ खोता कुछ पाता गांव (आंचलिक उपन्यास)¹, 2000 ई. इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 156-डी, कमला नगर, दिल्ली-110007, पेज 389 मूल्य 395 रुपये।
28. बीसवीं सदी (सामाजिक उपन्यास), 2001 ई. इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 156-डी कमलानगर, दिल्ली-110007, पेज-108, मूल्य 450 रुपये।

निबंध

29. दिल्लीनामा (ऐतिहासिक निबंध), 1982 ई. इतिहास शोध संस्थान, भूलभुलैया रोड, महारौली, नई दिल्ली-110030, पेज-108, मूल्य 17 रुपये।
30. काव्य में बौद्धिक रस और आलोचना में वस्तुवाद² (काव्यशास्त्रीय एवं आलोचनात्मक निबंध) 1985 ई., राधा प्रकाशन, 1528, आर्य समाज गली, बाजार सीताराम, दिल्ली-110006, पेज-99, मूल्य 40 रुपये।
31. विश्व के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य, 1986 ई. पल्लव प्रकाशन, मालीवाड़ा, दिल्ली-110007, पेज-184, मूल्य 75 रुपये।

1. 'जागता गाँव' का प्रवर्द्धित रूप।

2. विक्रम विश्वविद्यालय एम.ए. में संतुत हुआ।

32. भारत की एकता, 1986 ई. सस्ता साहित्य मंडल, एन-77 कनॉट सकर्स, नई दिल्ली-110001, पेज-108, मूल्य 30 रुपये।
33. आधुनिक साहित्य के विविध पक्ष, 1988 ई. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पेज-350 मूल्य-30 रुपये।
34. दलित साहित्य, 2003 ई. आधुनिक प्रकाशन, मौजपुर, दिल्ली-110053, पेज-288, मूल्य 300 रुपये।

हास्य व्यंग्य

35. जी हाँ, यह दिल्ली है, 1978 ई., दिनमान प्रकाशन, 3014, चखैवालान, दिल्ली-110006, पेज-99, मूल्य 12 रुपये।
36. मौख्यशास्त्र (ईडिऑटिक्स), 1979 ई., दिनमान प्रकाशन, दिल्ली-110006, पेज-136, मूल्य 25 रुपये।
37. कॉफी हॉउस, 1982 ई., साहित्य प्रचारक, 3011 बल्लीराम, दिल्ली-110006, पेज-124, मूल्य 18 रुपये।
38. मच्छर सभा: अध्यक्षीय भाषण, 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-151, मूल्य 60 रुपये।
39. मौख्य और साहित्य, 1995 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2723 कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-138, मूल्य 45 रुपये।
40. हास्य का इन्द्रधनुष, 2001 ई., स्नेह साहित्य सदन, 3072/9, प्रताप स्ट्रीट, गोला मार्किट, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002, पेज-192, मूल्य 200 रुपये।

1. प्रकाश्य 'हास्य सागर' एवं 'व्यंग्य सागर' में प्रायः सारे हास्य-व्यंग्य साहित्य को समाहित किया गया है।

बाल-साहित्य

41. कुछ प्रेरक और रोचक कथाएं, 1978 ई. दिनमान प्रकाशन, 3014, चर्खेवालान, दिल्ली-110006, पेज-110, मूल्य 10 रुपये।
42. तेरह प्रेरक बालकथाएं² 1989 ई. दिनमान प्रकाशन, चर्खेवालान, दिल्ली-110006, पेज-112, मूल्य 30 रुपये।
43. गोरिल्ले का ब्याह और अन्य रोचक बालकथाएं, 1989 ई. दिनमान प्रकाशन 3014 चर्खेवालान, दिल्ली-110006, पेज-112, मूल्य 30 रुपये।
44. भालू जी कनॉट प्लेस गए, 1992 ई., प्रेम प्रकाशन मंदिर, 3012 बल्लीमारान, दिल्ली-110006, पेज-28, मूल्य 10 रुपये।
45. सबसे प्यारा अपना देश (कविता संग्रह)³, 1989 ई. वैभवशाली, 20607-, नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032, पेज-24, मूल्य 25 रुपये।

कहानी, लघुकथाएं

46. भिखारी की मौत⁴, 1973 ई. शारदा प्रकाशन, महारौली, नई दिल्ली-110030, पेज-94, मूल्य 4 रुपये।
47. मिस्टर युसूफ का प्रेत (सात कहानियां, ग्यारह लघुकथाएं), 1994 ई., जीवन ज्योति प्रकाशन, 3012 चर्खेवालान, दिल्ली-110006, पेज-104, मूल्य 40 रुपये।

-
1. 10-41-42 संख्यागत पुस्तकें 'बालसागर' 1989 ई. प्रेम प्रकाशन मंदिर, 3012 बल्लीमारान, दिल्ली-110006, पेज-179, मूल्य 40 रुपये में समाविष्ट है।
 2. इसकी कई रचनाएं कुछ प्रेरक और रोचक कथाएं में भी है।
 3. 'सितारे (बालकविता संग्रह) 1995 ई. भागीरथ सेवा संस्थान, आर-10/144, नया राज नगर, गाजियाबाद, पेज-22, मूल्य 16.80 रुपये की नई कविताएं इसमें समाविष्ट है।
 4. 'मिस्टर युसूफ का प्रेत' में इसकी सात कहानियां समाविष्ट है।

संस्मरण

48. संस्मरण, श्रुतिसंस्मरण और जन-संस्मरण, 1990 ई., दिनमान प्रकाशन, 3014, चखैवालान, दिल्ली-110006, पेज-167, मूल्य 75 रुपये।
49. कंगाली के खजाने, 2001 ई., आधुनिक प्रकाशन, 4-बी/16, गुरुद्वारा मोहल्ला, पुरी गली नं.-7 मौजपुर (घोण्डा), दिल्ली-110053, पेज-232, मूल्य 225 रुपये।

जीवनी

50. रामः ऐतिहासिक जीवनचरित, 1998 ई., इतिहास शोध-संस्थान, भूल भुलैया रोड़, महारौली, नई दिल्ली-110030, पेज-203, मूल्य 200 रुपये।

रोचक-प्रेरक प्रकरण

जीवन एक रंग अनेक, 2003, विद्या मंदिर विहार, नई दिल्ली-110002, पेज-96, मूल्य 100 रुपये।

दैनंदिनी

51. योग के अद्भूत अनुभव, 1996 ई., प्रेम प्रकाशन, मंदिर, 3012 बल्लीमाराण, दिल्ली-110006, पेज-103, मूल्य 15 रुपये।

धर्म

52. हिंदू धर्म, 1972 ई., सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-11006, पेज-119, मूल्य 4 रुपये।
53. हिंदू केवल एक शब्द नहीं प्रतीक है, 1990 ई., विकल्प प्रकाशन, 3214 बैंक स्ट्रीट, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, पेज-75, मूल्य 10 रुपये।

राजनीति

54. कच्चा चिट्ठा, 1989 ई., विकल्प प्रकाशन, 3214 बैंक स्ट्रीट, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, पेज-93, मूल्य 30 रुपये।
55. शत्रुता, 1993 ई., विकल्प प्रकाशन, 3314, बैंक स्ट्रीट, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, पेज-114, मूल्य 100 रुपये।

अंग्रेजी

56. हिंदू धर्म: फेथ ऑफ फ्रीडम एंड वे आफ लाइफ¹, 1991 ई., विकल्प प्रकाशन, 3214 बैंक स्ट्रीट, करोल बाग, नई दिल्ली-110005, पेज-114, मूल्य 100 रुपये।
57. हिस्ट्री ऑफ हिंदी लिटरेचर² 1982 ई. एस.एस. पब्लिशर्स 9/5572, ओल्ड सीलमपुर, गांधी नगर, दिल्ली-110031, पेज-179, मूल्य 65 रुपये।
58. इंडिआज यूनिटी, कल्चर एंड कांट्रिब्यूशन, 2000 ई., इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 156-डी, कमला नगर, दिल्ली-110007, पेज-162, मूल्य-295 रुपये।
59. ऑफ लाइफ, ऑफ लाइफ, 2002 ई. इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 156-डी, कमला नगर, दिल्ली-110007, पेज-218, मूल्य 395 रुपये।

आलोचना

60. खड़ीबोली कविता में विरहवर्णन³, 1964 ई., सरस्वती पुस्तक सदन, मोती कटारा, आगरा, पेज-552, मूल्य-160 रुपये।
61. हिंदी साहित्य का नवीन इतिहास⁴, 1967 ई. साहित्य निकेतन, कानपुर-208001, पेज-376, मूल्य 9 रुपये।

1. हिन्दुइजम (द फेथ ऑफ द फ्यूचर), 1981 ई., एस.एस. पब्लिशर्स, 9/5572 ओल्ड सीलमपुर गांधीनगर, दिल्ली-110031, पेज-131, मूल्य 60 रुपये का पुनःप्रकाशन।
2. 'ऑउटलाइन्स ऑफ हिन्दी लिटरेचर' के रूप में पुनः प्रकाशन।
3. 'चार महाकवियों के विरह-काव्य', 1979 ई. भारतीय ग्रंथ निकेतन, 133 लाजपतराय मार्केट, दिल्ली-110006, पृष्ठ 183, मूल्य 35 रुपये एवं 'आधुनिक विरह-काव्य' 1983 ई. भारतीय ग्रंथ निकेतन 133, लाजपत राय मार्केट, दिल्ली-110006, पृष्ठ 160 मूल्य 40 रुपये (इसके दो अध्याय) दो ग्रंथों के रूपों में पुनःप्रकाशित।
4. विश्वकवि तुलसी और उनके प्रमुख काव्य, 1996 ई., विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पेज-214, मूल्य 20 रुपये। एवं

62. 'विश्वकवि तुलसी और उनके काव्य', 1973 ई., सूर्य प्रकाशन, नई दिल्ली-110006, पेज-296, मूल्य 30 रुपये।
63. 'विश्वकवि होमर और उनके काव्य', 1976 ई., सूर्य प्रकाशन, नई दिल्ली-110006, पेज-236, मूल्य 30 रुपये।
64. प्रसाद: आलोचनात्मक सर्वेक्षण³, 1979 ई., पल्लव प्रकाशन, मालीवाड़ा, दिल्ली-110006, पेज-304, मूल्य 60 रुपये।
65. तुलसी साहित्य के सर्वोत्तम अंश⁴ ई., जीवन ज्योति प्रकाशन, 3014, चखेवालान, दिल्ली-110006, पेज-282, मूल्य 125 रुपये।
66. आलोचना-सागर⁵ '1988 ई.', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पेज-1350, मूल्य 100 रुपये।
67. दो सौ अस्सी साहित्यकार, 1996 ई. सप्तसाहित्य भण्डार, 56 बी पॉकेट ए, फेज-2, अशोक विहार, दिल्ली-110052, पेज-520, मूल्य 450 रुपये।

-
1. ग्रंथ निकेतन, 2713 कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-196, मूल्य 65 रुपये की अधिकांश सामग्री इसी की है। यह प्रसिद्ध ग्रंथ अनेक वि.वि. के एम.ए. में संस्तुत रहा।
 2. 'विश्व के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य' में इलिअड और आडिसी निबंध ग्रंथ के हैं।
 3. 'प्रसाद: कवि', 1979 ई., पल्लव प्रकाशन, मालीवाड़ा, दिल्ली-110006, पेज-144, मूल्य-25 रुपये। 'प्रसाद गद्यकार' 1019 ई. पल्लव प्रकाशन मालीवाड़ा दिल्ली 110006, पेज-168, मूल्य 30 रुपये।
 4. 'प्रसाद और उनके प्रमुख ग्रंथ', 1966 ई. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पेज-187, मूल्य 30 रुपये। 'प्रसाद: एक अध्ययन', 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा, चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-154, मूल्य 45 रुपये। (ग्रंथ-चतुष्टय) इसी पर अधृत है।
 5. 'तुलसी: एक अध्ययन', 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-154, मूल्य 50 रुपये। एवं 'रामचरित्रमानस एक अध्ययन', 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-152, मूल्य 50 रुपये। (ग्रंथ दृश्य) कुछ नई सामग्री के साथ ग्रंथ पर आधृत है।

68. हिंदी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास' (दो खण्ड), 1997 ई. सत साहित्य भण्डार, 57-बी पॉकेट-ए, फेज-2, अशोक विहार, दिल्ली. 110052, पेज-1825, मूल्य 1100 रुपये (प्रत्येक खंड 1100 रुपये)।
69. तुलसी सर्वेक्षण, 2001 ई., इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 156-डी कमला नगर, दिल्ली-110007, पेज-625, मूल्य 695 रुपये।

-
1. 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल: व्यक्ति आलोचक, निबंधकार' 1986-87 ई. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पेज-60, मूल्य 6 रुपये (यह ग्रन्थ इससे पूर्व जोधपुर के एक प्रकाशन द्वारा प्रकाशित किया गया था, जो अनुपलब्ध है)। 'तुलसी, सूर और केशव: अधुनातन आकलन', 1989 ई., आधुनिक प्रकाशन, पुरी गली नं. 5 मौजपुर, दिल्ली-110053, पेज-175, मूल्य 90 रुपये (यह ग्रंथ जबलपुर वि.वि. के एम. ए. में संस्तुत हुआ) 'प्रसाद, निराला, और पंत: अधुनातन आकलन', 1989 ई., दिनमान प्रकाशन, 3014 बल्लीमारा, दिल्ली-110006, पेज-124, मूल्य 70 रुपये। 'ब्रजभाषा और अवधी के अधुनातन कवि', 1990 ई., राकेश प्रकाशन, बाराबंकी, पेज-104, मूल्य 50 रुपये। 'द्विवेदी युग और उसके महाकवि', 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713 कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-157, मूल्य 50 रुपये। 'रीतिकाल के महाकवि', 1991 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2813, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज. 176, मूल्य 55 रुपये। 'हिन्दीसेवी नेता, दार्शनिक योगी', 1992 ई., भारती ग्रंथ निकेतन, 2713 कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-158, मूल्य 50 रुपये। 'प्रमुख अधुनातन कवि' 1993 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-152, मूल्य 50 रुपये। 'प्रमुख आलोचक' 1993 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज-160, मूल्य 50 रुपये। 'प्रमुख संत कवि', 1995 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002, पेज 112 मूल्य 55 रुपये। 'भारतेन्दु युग के साहित्यकार', 1995 ई., भारतीय ग्रंथ निकेतन, 2713, कूचा चेलान, नई दिल्ली-110002 पेज-160, मूल्य-60 रुपये। शीर्षक द्वादश-ग्रंथ चालीस वर्षों से सुनियोजित, परिवर्तन एवं चौदह वर्षों के अनवरत लेखन तथा अपार व्यय के प्रतिफल इसी ग्रंथ की सामग्री प्रस्तुत करते हैं।

(घ) कुछ काव्यांजलियां

1. श्रद्धेय श्री रामप्रसाद मिश्र एक मूल्यांकन

— पण्डा दुर्गादत्त उपाध्याय 'दत्त'

श्रीरामप्रसादाभिद! भूसुर —

कुलसमुद्भूत! मिश्रोपनाम!

अज्ञानावृत्तिहतिकृतिभास्कर!

चिरकीर्तिधाम! बहुशः प्रणाम ॥1॥

छायावादोत्तर युग के हैं,

जीवन्त आप कवितास्रष्टा।

'बौद्धिकरस' के अभिनव भावक,

सूक्ष्मेक्षिकया युग के द्रष्टा ॥2॥

अंधों मूकों की क्लावों की,

अन्तः पीड़ा को स्वर देकर।

उनकी दुखती रग को छूकर,

औदार्य भावना किया मुखर ॥3॥

इस जीवन के औ जगती के,

नान रूपों का परिसर्पण।

प्रतिबिम्बित करता श्रीमदीय —

कविताओं का सुन्दर दर्पण ॥4॥

एकान्तयोग के हैं योगी,

एकान्तभोग के चिर भोगी।

एकान्तरोगरोगी, कह लें,

पर हैं न रज्य बज्यक ढोंगी ॥5॥

नाटक-निबन्ध कविता संस्कृति,

इतिहास कहानी उपन्यास।

लिखकर, सारस्वत-सेवा कर,

इस युग के हैं बन गये व्यास ॥6॥

हैं सफल धर्मधर्मी अनुपम,

हैं ध्यानयोग के भी ध्यानी।

मरुभूमि का वट वृक्ष

कटुसत्यसमुद्घाटक, निर्भय,

विद्वान्मण्डलमण्डन मानी ॥७॥

मन डिगा न पायी अद्यावधि,

जिनका, नृपनीति-वारनारी।

अक्षरब्रह्म की चर्या में

जो देवहैत के व्रतधारी ॥८॥

है जरामरण भयविनिमुक्त,

जिनका सारस्वत यशः काय।

जो आर्यसभ्यता के प्रेरक,

हैं संस्कृतिशाही-तन्तुवाय ॥९॥

अवचित कर, गुम्फित कर तथैव,

शब्दों की नयी प्रसूनाली।

अर्पित करता है 'दत्त' उन्हें,

शब्दों के उपवन का माली ॥१०॥

आयत ललाट, गाम्भीर्य-वलित परिशान्त दान्त,

आनन-पान्त अतिकान्त भारती-भा मण्डित।

मेचकित, चकितकर चिकुर-निकर, किञ्चित्, कुञ्चित,

उपनेत्र-मिलित हैं नेत्र, रूप अचपल पण्डित ॥'

2. रामप्रसादाष्टकम्

— अमृतलाल : शास्त्री^२

हिन्दुस्थानमही समस्ति चिदचिद्रत्नप्रसूरुर्वरा

नानातीर्थपवित्रिता मुनिवरैर्जुष्टा विशिष्टाकरा।

विद्वांसेऽपि पदे पदे सुरगुरोस्तुल्या अनेकेऽपि।

मिश्रस्तेषु विशिष्टतामधिगतो रामप्रसादोऽधुरा ॥१॥

ग्रन्था यस्य समस्त शास्त्रविषया विद्वत्समाजादृता —

यद्वैदुष्यनिदर्शनानि भुवने जानाति को नो बुधः।

तस्मादद्य विपश्चितां समिति भिः श्लाहयोऽभिनद्यस्तथाः

मिश्रः प्राज्ञशिरोमणिविजयते रामप्रसादः सुधौः ॥२॥

1. दुर्गा निकेतनम् विन्ध्याचल, (धानकूप) मीरजापुर उ.प्र. - 231307।

2. संस्कृत एवं जैन दर्शन के उद्भट विद्वान्।

शौचाचारविचार चारुचरितो विश्वम्भराविश्रूतो —
 विद्याबुद्धसमन्वितामितमतिः सज्ज्ञानवाराकरः ।
 लब्धानेकपुरस्कृतिः कृतिगतासामान्यवैशिष्ट्यतो —
 लोकख्यातगुणो मनीषिमहितो रामप्रसादो महान् ॥ 13 ॥

अश्रान्तं श्रुतसाधनारतमनाः शारत्रार्थपारङ्गने —
 यदग्रंथेषु नवीनता प्रतिपदं संदृश्यते सर्वतः ।
 तत् कुत्रापि विलोक्यते भुवि समो रामप्रसादेन नो
 श्लाघ्यानेक विशिष्टता श्रयतया मिश्रोअभिन्द्यो हृदा ॥ 14 ॥

विद्वद्वन्द्यपदारविन्दयुगलः शिष्यप्रशिष्यचितो —
 यत्साहित्यमपूर्वतामुपगतं नानाविधालङ् कृतम् ।
 नानोपाधिविभूषितः समितिभिः सन्मानितश्चासकृत्
 सत्यान्वेषिमनीषिमस्सतकमणी रामप्रसादोऽधुना ॥ 15 ॥

वक्ता लेखक उत्तमः कविवरः प्राध्यापकाग्रेसरः
 सतयासत्यविवेकमण्डितमतिः सन्मार्गसन्दर्शकः ।
 शोधग्रन्थकृतां प्रदर्शितपथो रामप्रसादः सुधीस्
 तत् स्याद्वाददृशा समिस्तु विदुषामेकोऽप्यनेकाश्रयः ॥ 16 ॥

यत्पुन्त्रः पवनाभिधः प्रतिभयाऽपूर्वोऽस्ति विद्योदधिः
 पाठान्तरमेव यस्स विषयः कण्डस्थितोजायते ।
 पौरस्त्यं विषयं स वेति विविधं पाश्चात्यामप्यञ्जसा
 तस्माच्चापि विशिष्टगौपदं रामप्रसादोऽस्त्यसौ ॥ 17 ॥

यावद्भाति दिवाकरो हिकरो मेरुश्च तारागणोऽ —
 वूपारः पवनशिशलोच्चयचयो नद्यश्च सन्मानवाः ।
 तावज्जीवतु सौख्यतोऽमलमना रामप्रसादः क्षितौ
 यस्मात् स्यादिह सन्ततं नवनवग्रंथप्रसूतिः परा ॥ 18 ॥

ब्राह्मीविद्यापीठम् लाडनूँ (राजस्थानम्)

3. आदरणीय डॉ. रामप्रसाद मिश्र

— (स्व.) शारदा प्रसाद भुशुंडि¹

जिनके दर्शन से मिले, दर्शक को आह्लाद।
डाक्टर राम प्रसाद वे, पावन राम प्रसाद॥

हिन्दी सेवा के लिये, इसमें हैं स्फूर्ति।
गौरव गरिमा ज्ञान में, ये प्रसाद की मूर्ति॥

अहंकार पाखण्ड मद, विगत दम्भ अभिमान।
कवि भावुक शिक्षक सरल, सरस हृदय विद्वान॥

इनकी कविता में मिले, यों असीम आनन्द।
घनानन्द रसखान ज्यों, सुना रहे हो छन्द॥

शब्द स्वयं ही बोलकर, करते अर्थ अनूप।
भाषा शैली भाव के, ये हैं स्वस्थ स्वरूप॥

गन्ने का रस व्यर्थ में, करता है बकवाद।
इनके भाषण में मिले, अंगूरों का स्वाद॥

जिनको राम प्रसाद में, मिला न कोई अर्थ।
उनका जीवन विश्व में, घिसे ब्लेड सा व्यर्थ॥

जब से राम प्रसाद से, दूर हो गया देश।
तब से विघटन बाज की, संख्या बढ़ी विशेष॥

इनको राम प्रसाद की, सिद्ध सिद्धियाँ आठ।
लगते हैं पच्चीस के, भले उमर हो साठ॥

1. 'हास्य-सम्राट' के रूप में समादृत।

4. रामप्रसाद

— गंगारत्न पाण्डेय

जो है प्रसाद मूर्तिमान ब्रह्मा राम का,
जिसको न मोह सत्य काम से विराम का,

जो सर्वहित समान भावना निरत सदा,
है शांति सुमन सर्वदा, सरूष यदा-कदा,

जो राष्ट्र के अतीत की विभूति का धनी,
चिन्ता जिसे स्वदेश के भविष्य की घनी,

साहित्य क्षेत्र का सुधी समर्थ सार्ववाह,
वाणी विमल, विचार सार-पूर्ण है प्रवाह,

जो सौम्य सुदर्शन सहज सरल स्वभाव है,
जिसमें न छल-प्रपंच, न किंचित दुराव है,

उस देश की विभूति का वन्दन-नमन करो,
सान्निध्य-लाभ प्राप्त करो, अनुगमन करो।

अपनी विनीत याचना: दयानिधे प्रभो!
दीर्घायु पूर्णकाम, यशस्वी उसे करो॥

शंकर सदन, एफ 246, राजाजीपुरम,
लखनऊ-226017

1. 'नचिकेता' महाकाव्य (हिंदी एवं अंग्रेजी में दोनों पृथक-पृथक) के यशस्वी प्रणेता।

5. शत शत अभिनन्दन है

— डॉ. सुमेर सिंह 'शेलेश'

मानवत्व की जहाँ प्रतिष्ठा,
उन्मेषक पोषक संस्कृति का,
नवल धवल हीरक-सा चमके,
अनुमायक वह रहा प्रकृति का।

वातायन हिन्दी के खोले,
जो सुरभित शीतल चन्दन है,
उसका शत शत अभिनन्दन है।

रस संवलिय काव्य नव रसयुक्त
वस्तुपरक है प्रखर समीक्षा।
प्राणत्व वह युग रचना का,
मन चाहे ले लूँ गुरुदीक्षा।

गीतों का नैवेद्य सजाए,
'गौतम्' का पुलकित जन जन है।

नीलकंठ-सा विष पी पीकर,
'तुलसी' भी है, 'राम' वही है।
वाणी का है अथक उपासक,
'पुरुषोत्तम' अभिराम वही है।

जो 'प्रसाद' के रूप रमा हो,
कोटि कोटि उसका वन्दन है
उसका शत शत अभिनन्दन है।

संस्थापक: गीतम् वाणी विहार,
सतना (म.प्र.)

6. अर्पित महान देवता को यह माला है

— प्रकाश द्विवेदी¹

जिनके पावन चरणों की छाया में रहकर कितने ही साधकों ने माँ मराल-वाहिनी की सेवा का व्रत लिया है, उन्हीं राष्ट्र और राष्ट्रभारती के गौरव परम पूज्य गुरुदेव डॉ. रामप्रसाद मिश्र के करांबुजों में सादर सभक्तिनिवेदितः

(1)

चतुर चितेरे हेरे कवि बहुतेरे मैने,
किन्तु गुरुदेव के समान नहीं पाते हैं।
रचनाएं इनकी उठायें जो सहज कोई,
उनकी विचित्रता पे बलि-बलि जाते हैं।
दीखती बहार अलंकार की अनोखी चोखी,
सकल पदावली में भाव चित्र आते हैं।
नाटक निबन्ध या प्रबंधकाव्य कोई ले लें,
तोड़ना कलम उसमें ही दिखलाते हैं।

(2)

प्रतिभा प्रखर हर अक्षर बता रहा है,
मौलिक नवीनता लता सी लहराती है।
आती जब लेखनी ललित कर कंज में है,
तब गुरु गरिमा गुनीली दिखाती है।
माँ सरस्वती के इन वरद सपूत की,
अकूत शक्ति आज हमसे न कूती जाती है।
अपने इन लाल पै निहाल हिंदी हो रही है,
तभी तो सुकृति पुंजमाल पहनाती है।

1. ब्रज एवं खड़ी बोली के कुशल कवि एवं विद्वान।

(3)

प्रतिभा प्रभा है चौमुखी न क्षेत्र छोड़ा कोई,
सबमें सफलता इन्होंने पूर्ण पायी है।
स्वर कढ़ा मुख से तो अमर सुकाव्य बना,
व्यजंन सुव्यजंजन में स्वयमेव आयी है
भाव के सु-सागर है नागर गुरुवर ये,
रस सुर सरिता इन्हीं में तो समायी है।
मति सकुचायी हो हँसायी न सभा में आज,
लेखनी पै लघु लेखनी उठायी है।

(4)

आशिष इन्हीं का पाके शिष्य इनका ही मैंने,
जैसे-तैसे आप यह छंद लिख डाला है।
काला तम उर का मिटा है गुरु की कृपा से,
इनका दिया हुआ ही इसमें उजाला है।
शिष्य मंडली में हमें ठौर जो इन्होंने दिया,
हमने 'प्रकाश' निज धर्म तो संभाला है।
गूँथी यह मन से सुमन से सीमित लघु,
अर्पित महान देवता को यह माला है।

मनोरमा प्रकाश निकेतन, साहित्य सदन,
सेठवा, मालीपुर फैजाबाद (उ०प्र०)

पिन-224159

7. आपकी कविता

— श्री माणिकचन्द्र कलिता¹

आपकी कविताएं क्या हैं?

अमूल्य कथन

या जीवन-दर्शन

इतिहास का संस्करण

या व्यक्ति सम्पत्ति की तरह

अपने आप में उसका संरक्षण

और लोगों में वितरण?

आपकी कविता की जो कथा

वही है सारे जमाने की व्यथा

सदियों से कभी न टूटने वाली प्रथा

संघर्ष विजेता वीरों की वीरगाथा

जीवन के सारे पहलुओं को

छू जाने वाली कथा।

आपकी रचना में है

भाषा का मधुर विन्यास

झरनों की तरह बहे जो

लगातार अपने भाव में प्रकाश

उजला करके मन का प्रकाश

सफल आपका प्रत्येक प्रयास

महसूस करे पाठक आपको

अपने दिल के आस-पास

आपकी रचनाओं में

जड़ कुछ भी नहीं

सब जीवित है

गंगा सिर्फ एक बहती वारिधारा नहीं

आपके हृदय में भी

प्लावित है।

आपने जो गंगा देखी है

वह वो गंगा नहीं जो

शिवजी की जटा से निकलती है

1. असम के प्रसिद्ध हिंदी कवि।

आपकी गंगा
आपके दिल की गहराइयों से
निकलती, उछल-कूद करती हुई
गंभीर चिन्तन की अविरल धारा है

जीवन का जो सच्चा सहारा है
जीवन का जो किनारा है।
अपकी अभिनवता से
जिसने जमाने को झकझोरा है
जहाँ जीवन की सारी दिशाओं का
एक अनोखा ब्योरा है
जिस दिल को छुआ एक बार
घायल करके ही छोड़ा है।

आपकी कविताओं में
अमोघ सच्चाई है
निकलुघ सफाई है
सागर की गहराई है
जहाँ डुबकी लगाने वाले
फिर से निकल नहीं पाते।

आपकी कविताएं
अग्रेजों के लिए
प्रगाढ़ आत्मसंतुष्टि
अनुजों के लिए
प्रेरणा की गति
बुद्धिजीवियों के लिए
चिंतन की नई अनुभूति।

मेरे लिए
मेरे छोटे से
इस दिमाग के लिए
यह एक पर्वत-समान संबल है।
प्ररेणा की
मेरे प्यासे मन के लिए
शीतल अविरल गंगा है भावना की ।

8. भाव पुष्प

— सुधाकर शर्मा 'सुधाकर'

कलित काव्य की व्यंजना और साधना व्यर्थ,
हुई समीक्षा यदि नहीं, तो उसके क्या अर्थ?

आप समीक्षक काव्य के काव्य कला मर्मज्ञ।
आलोचक साहित्य के अतुलनीय सर्वज्ञ॥

निहित हृदय में मुदित है, ऐसा कुछ विश्वास।
जिसके प्रति जो कुछ लिखा, वही बना इतिहास॥

परम मनीषी आप ही हैं श्री रामप्रसाद।
नहीं आप में है कहीं कटुता और प्रमाद॥

गुण से युत अवगुण रहित सज्ञान की खान।
भाव भरी अभिव्यक्ति का कैसे करूँ बखान॥

प्राण प्रतिष्ठित आपके, कवि जग में श्रीमान।
देकर आशीर्वाद निज, सदा दिया सम्मान॥

ज्ञापित कैसे मैं करूँ, निज कृतज्ञता तात।
आप सूर्य साहित्य के, शाश्वत् सद्योजात॥

भनत "सुधाकर" वस्तुतः सुललित सत्य प्रमेय।
व्यक्त करत पुनि सर्वथा शुद्ध कथ्य श्रद्धेय॥

जानत जग जस सकल गति, सौम्य सरल, सुविशेष।
करत गर्व महिमामये! धवल अमल अनिमेष॥

अनुपम संयम नियम के ससुविज्ञ संसार।
अभिनंदन वन्दन करत, कविकुल सकल सभार॥

शशि की ज्यों मंजुल कला, कलित ललित निःशंक।
त्यों लिखि दीन्हों आपके भाल भाग्य विधि अंक॥

संसृति शुचि साहित्य का चरम समन्वय सर्व।
 स्वतः कला लालित्य भरा अनुपम पावन पर्व॥
 सकल सन्निहित आप में मुदित विविध विधि बन्धु।
 राजत अस विश्वास के विशय, 'सुधाकर' सिन्धु॥
 बुधि, विवेक विश्वास की बही त्रिवेणी व्यग्र।
 अभिनव मौलिकता गहे, सुचिता सहित समग्र॥
 सौम्य, शीलता, सरलता ममता मंजु मनोज।
 शांति सदाशयता, सतत सुरभित शुभ्र सरोज॥
 अति प्रसन्नता अस्मिता अभिनव अन्तस ओज।
 भ्राजत मुदित सुनित्यतः मन मंदिर अम्बोज॥
 जयों जीवन हित जन्म को, प्रकृति देत निष्काम।
 त्यों भूषित सद्भाव है ज्योतिष जग अविराम॥
 मोहक मंजुल आपके मृदुल बोल अनमोल।
 देते है जो शर्करा, श्रवण पुटों में द्योल॥
 होता ऐसा आपका आकर्षण सत्संग।
 नित देता जो हृदय की वर्णातीत उमंग॥
 समय ठहर जाता विवश देख अडिग वर्चस्व।
 जैसे खींचत रास के रुकत आचनक अश्व॥
 मंगलमय महिमा भरी गति मति सर्व सुजान।
 नेह भरी नीतिज्ञता तनमन शुभ्र निदान॥

ग्रामीण अभियंत्रण सेवा, विकास भवन, उन्नाव

9. रामप्रसाद मिश्र के प्रति

- डॉ. ताराचन्द्र पाल 'वेकल'

आप सिद्ध, सुप्रसिद्ध, लेखक, यशवृत कवि हैं
 उत्साहों के भावयुक्त लेखनी पर अनगिन रवि हैं
 यथानाम गुण रामप्रसाद वाद से परे नियामक
 राष्ट्र काज के हेतु निरन्तर दृष्टिकोण ले व्यापक
 जिएं साहस्रों वर्ष हर्षमय यौवनमृत शुचि पीकर
 शान सहित सम्मान संजोएं आन सहित नित जीकर!

10. सादर स्मरण करेंगी

- स्व. डॉ. मेवासिंह चौहान

तुम तो हो, हे मिश्र! अतुल प्रतिभा के स्वामी!
 हुई शारदा धन्य पुत्र पा तुमसा नामी!
 तुम साहित्य सृजक हो निश्चय ही बहुआयामी,
 कथाकार कवि लेखक औ निबंधकार सुनामी!
 विश्ववाद और वस्तुवाद के तुम हो मात्र प्रवर्तक,
 बौद्धिकरस प्रणेता हो और प्रखर आलोचक!
 हे चिन्तक विद्वर! हे भारतीयता के पोषक!
 मानवीयता के रक्षक! हे समता के उदघोषक!
 शरद सुत! निसंदेह हो तुम सहानुभूति आगार!
 संवेदन साकार तुम! कवि-कुल कंठाहर!
 साहित्य सरोवर के तुम नव सरोज हो सुन्दर,
 गुणरस से हो मत्त करें! गुन! सद मधुकर!
 शब्द कुमुद विकसितर यह रसामोद से भर दी,
 ज्ञान दीप ज्योतितकर यह धरा ओज से भर दी!
 श्रद्धानत यह मेघ विमुक्त कर निज अश्रुजल,
 करता अनुभव गर्व पखर कर तव पद शतदल!

1. राष्ट्रीय कविता के यशस्वी प्रणेता।
2. बहुविधाकार, 'आदर्श कौमुदी' एवं 'भाव-वीधिका' से संपादक।

स्नेह-आशीर्बन्धन का पाकर मधुर प्रसाद,
पुत्र सरिस यह शिष्य पाये हर्ष अह्लाद!
आपकी सुकृतियों का वे जब जब अध्ययन करेंगी,
भावी पौढ़ियाँ सदा आपका सादर स्मरण करेंगी,

चन्दक (बिजनौर) 246721

श्री रामप्रसाद मिश्र के प्रति

11.

— मिर्जा हसन नासिर¹

कवि-विचारक-शिल्पकार, लेखक-रचनाकार।
हिन्दी का करते रहे, रामप्रसाद प्रसार॥
कला-भाव से सब सजें, रचे सुग्रंथ महान।
सृजनों में 'नासिर' सतत् मिश्र मान-सम्मान॥
बौद्धिकरस में डूबकर, आया और निखार।
देती एक नया मजा, हर रचना हर बार॥
'युवा सा मंडल ने लिखा, इन पर ग्रंथ अनूप।
जिससे जग जाहिर हुए, इनके मनहर रूप॥
राम प्रसाद को मिल गया, अब श्रीराम-प्रसाद।
जगमग होगा शीघ्र ही, नगर गाजियाबाद॥
इस अवसर पर दे रहे, सन्त सृजन आशीष।
'नासिर' की भी है दुआ, दे यश तुमको ईश॥

—161/205, ताजीखाना, मशकगंज,
लखनऊ - 226018

12. बधाई

— नरेन्द्र 'विजयभूषण'²

रामप्रसाद है मिश्र जहाँ, भला कैसे रहे वहाँ न्यून भलाई!
देहली में जहाँ ज्योति चले, तहाँ कैसे प्रकाश की हो कमताई!
आज 'प्रताप' सो पावस साठ से, पुष्ट माँ शारदा की अँगनाई।
बिम्ब सहस्त्र लसे प्रति स्तम्भ, बधाई तुम्हें शत कोटि बधाई॥

-
1. 'आधुनिक रहीम' के रूप में विख्यात कवि।
 2. विद्वान्-कवि, 'राष्ट्रधर्म' के पूर्व-संपादक।

13. साहित्य श्री डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी के प्रति

— श्री नागेन्द्र प्रताप सिंह¹

जिसने मानस को मानस में बसा लिया
 उस अदम्य ज्योति रूप के पावन दर्शन हुए
 खो गया मन इस नवल सत्संग में
 थे सुस्वर के सुमन गहन आकर्षण हुए।

हो गया चकोर मेरा हृदय तत्काल ही
 राममय चिरंतन पीयूष-रस पीते हुए
 मैं नहीं था, विश्व था बस एक राममय
 राम के प्रसाद से मन-कन प्रण भर लिए।

न मिला था यह अमिय रस पहले कभी
 जो रस राममय मिश्र लेकर के आ मिले
 सरस्वती स्वयं आ बसी जैसे रसना में
 भानु-सम विकीर्ण ज्ञान मुख पर खिले।

खो गया, खोया रहा अद्भुत ज्ञान-लोक में
 पूर्ण जीवन की अनुभूति पलभर में अमृत बनी
 वह गद्य ललित संगीतमय सरिता बना
 उन शब्दों ने बदला जीवन, अमरता तनी।

रामकथा के प्रताप, देखा प्रत्यक्ष आज,
 सरस्वती मइया मिश्र, जिभ्या रामायी है।

मुख फुटे गद्य बरसे जैसे वज्र जंग,
 परम सरस राम कथा, मिश्र ने सुनायी है।²

कहै 'नाग'³ शब्द वारि, टूटै कभी न धारि,
 रामनाम शीतलता, अंग अंग छायी है।

ज्ञानियों के वे ज्ञानी, राम कथा विज्ञानी,
 राम प्रसाद तुलसी जयन्ती मनायी है।।

1. सफल छंदकार (डॉ. मिश्र की षष्ठिपूर्ति पर आशुकविता)।
2. तुलसी-जयंती पर 5 अगस्त, 1992 के भाषण सुनने के तत्काल बाद रची गई पंक्तियाँ।
3. कवि का उपनाम जो वस्तुतः नामांश है।

14. अभिलाषा

— वीरेन्द्र कुमार मौर्य 'वीरू'

सहज भाव जागा अहम् मिट गया है,
मनः ज्याति फूटी सबेरा हुआ है।
सबल भाव से प्रेरणा मिल रही है,
तुम्हारे हृदय का मरम माँगता हूँ,
रहे आप दर्शक दिशा के हमारे,
अनुगामी बनने का दान माँगता हूँ।
बढ़ायेगी हमे आपकी भाव धारा,
'वीरू' को संकल्प घेरा हुआ है।
सहजभाव जागा अहम् मिट गया है,
मनः ज्योति फूटी सबेरा हुआ।

15. श्री रामप्रसाद मिश्र जी को समर्पित

— कुमारी एलिस डिक्रुज^१

हे गुरु श्री! हे पिताश्री! साठवीं
वर्षगांठ पर तुझे बधाई,
कुशल-क्षेम और शुभ-कामना
निज आँचल में भरकर लाई
मान बढ़े, सम्मान बढ़े हों दीर्घायु आप
दें आशीर्वाद पुत्री को भी
नत मस्तक मैं होकर आई।

कुष्ठ सेवाश्रम, सुन्दरपुर (रक्सौल)

-
1. कवि की आशुकविता।
 2. समादृत विकलांग कवयित्री।

16.

तुमसे रोशन है जहाँ इल्मो अदब का ऐ मिश्र!
मेहरे तांबा कि तुझे माहे मुनव्वर कहिए,
जिसमें खिलते हैं हसीं फिक्र के रंगीन कँवल
तुझको साहित्य का वह मानसरोवर कहिए।

— जलीस¹

17.

समर्पित किया है
हिन्दी सहित्य पर वर्चस्व,
बन गए हैं साहित्यिक उपवन के
वट वृक्ष।

जीवन के विभिन्न आयामों का
विभिन्न विधाओं में चित्रण,
यह तो अतीत के
महर्षियों का लक्षण।

इन पर अलोचना-समालोचना
प्रकाश प्रक्षेपण की

अभी मुझमें सामर्थ्य नहीं

बस, आज अपने को

धन्य अनुभव करते हैं

जब हुए आप जैसे

महर्षि के दर्शन।

— तेज नारायण²

1. वरिष्ठ शायर।

2. 'अगीत' - कवि के रूप में प्रसिद्ध।

18.

नतमस्तक हूँ श्रद्धा से,
स्वीकार करो वन्दन,
हिन्दी उपवन के चन्दन!
तुमको मेरा अभिनन्दन।
रामप्रसाद बिना जग में
सब कुछ सूना होगा,
कृपा कोर के लिए सर्वदा
मेरा स्वर बौना होगा।

— रामनाराण त्रिपाठा 'पर्यटक'

19.

सदमनीषी नीति नय निष्पाप।
संस्कृति की अस्मिता के ज्ञाप।
सामयिक संदर्भ के विज्ञाप।
क्रांतिदर्शी दूरदर्शी आप।।
प्रत्यक्षः दर्शित सदैव सहर्ष।
अनुकरण के योग्य तव उत्कर्ष।
वन्दनीय स्वयं बना आदर्श।
आपकी पा धन्य भारतवर्ष।

— सुधाकर शर्मा 'सुधाकर'

२००

'अध्यक्षीय भाषण' पढ़ा मिला हास्य का स्वाद।
धन्य हुई 'मच्छर सभा' जय हो रामप्रसाद।।

— काका हाथरसी

-
1. जाने माने कवि, पत्रकार, हिन्दीसेवी।
 2. महाकाव्यकार।
 3. प्रख्यात हास्यकवि। 'मच्छर-सभा: अध्यक्षीय भाषण' (1991 ई.) पर।

21.

सुधी समीक्षक, कवि कुशल, वक्ता रहित विवाद ।
 अंश मिश्र सुखदेव के श्रीयुत् रामप्रसाद ।।
 बढ़ाते हिन्दी का स्यन्दन ।
 'बन्धु' करतास है अभिनन्दन ।।

— शम्भुशरण द्विवेदी 'बन्धु'

22.

कार्य कुशल, वाणी मुर, मर्म नवल, नवनीत ।
 कविवर रामप्रसाद का वन्दन करे 'विनीत' ।।

— विनीत विक्रम बौद्ध

23.

शब्द-ब्रह्म के पारखी आप प्रकाश प्रणम्य हैं ।
 पा श्री रामप्रसाद मधु हुए हम सभी धन्य हैं ।

— स्व. रामनाथ गुप्त

24.

जाके ढिग जात परिजात हूँ लजात साँह
 जाके गूढ़ ज्ञान पै विवाद कौन करिहै?
 मन के महान ज्ञानदान में सुजान विप्र,
 शक्रहू को गुरु जाको धाय पाँय धरिहै ।
 'राम' के प्रसाद अवसाद जो विरोधियों के,
 जाहिं पाय मान अभिमानहू को गरिहै
 'अनिल' गुनत मन, सुनत अनेक गुन
 भारतीहू धाय जाकी आरती उत्तरिहै ।।

गौमती प्रसाद मिश्र 'अनिल'⁴
 (डूडी चिमला, बस्ती-272001)

-
1. 'हाइकु' — कार के रूप में समादृत ।
 2. वरिष्ठ कवि एवं स्फीत महाकाव्यकार ।
 3. स्वातंत्र्य सेनानी कवि ।
 4. कवि, लेखक, हिंदी सेवी ।

25. काव्यांजलि

— पं. सुधाकर शर्मा 'सुधाकर'

आचार्य शिक्षा — विद विनय की विज्ञता के ज्ञाप,
अमित विश्वस्तरीय विद्या, बुद्धि के विज्ञाप!
कर्म सद् सुविवेक मय, है नीत नय निष्पाप
छू चले ऊँचाइयाँ नीलाभ तक की आप॥1॥

जगत जननी भारती के, वरदपुत्र विशेष,
साधना सम्पन्न अनुपम ज्ञान के उन्मेष,
संस्कृति के आन रक्षक आत्मबल अनिमेष!
नित करेगा आप पर अति गर्व भारत देश॥2॥

आपके साहित्य में है, विश्व का विन्यास,
धन्य इस कर्त्तव्य के प्रति आपका विश्वास,
धन्य भावों की धरा है और हृदय प्रकाश,
धन्य शुभ्र सुभव्य अतिशय आपका इतिहास॥3॥

नीतिमय नीतिज्ञता के नयन के दृग बिन्दु!
यशः पूरित कीर्ति उज्ज्वल अस्मिता के इन्दु!
धन्य वह जननी जना, जिसने तुम्हें हे बन्धु,
धन्य जनक विशेष जिसके शौर्य के हो सिन्धु॥4॥

भव्य भारत भारती के प्राण प्रिय प्रविधान!
अनुपमेय! स्वयम् गिरा के तेज पुञ्ज प्रमाण!
मम हृदय ने मुदित गाया जो "सुधाकर" गान
परम आदरणीय रामप्रसाद मिश्र महान.....॥5॥

कीजिए मम गान की यह पक्तियाँ स्वीकार
पुनः निज अभयर्थना का लीजिए अधिकार
पल्लवित पुष्पित फलित साहित्य के संसार।
नमन करता आपको मैं मुदित बारम्बार॥6॥

चेतना में वन्दना की साधना अविकार,
है अलंकृत व्यञ्जना से सत्य का श्रृंगार
जन्म दिन पर काव्य अञ्जलि अस्तु सर्व प्रकार
है समर्पित आपको आदर्श के आधार॥7॥

26. सुधाकर शर्मा¹

वरिष्ठ सहायक
ग्रामीण अभियानत्रण सेवा
प्रखण्ड-लखनऊ

आदरणीय डॉ. साहब
सादर नमन्,

दिनांक 30-04-1991

आपका कृपा पत्र दिनांक 21-04-91 को प्राप्त हुआ। नलिन जी द्वारा प्रेषित एवं आप द्वारा विरचित तीनों ग्रंथ मैंने आद्योपान्त पढ़े, जिनमें, युग धम्र की सारगर्भित तथा पाण्डित्य पूर्ण वविचना वत है ही, साथ में उसके शाश्वत सिद्धांत के जिन मापदण्डों का मूल्यांकन किया गया है एवं उसकी गरिमा और महिमा के पक्ष में जिन आकाट्य तर्कों का समावेश है, वह चिन्तन को एक नया आयाम देते हैं।

वस्तुवाद की कसौटी, काव्यधारा को जिस नये धरातल पर ले जाकर जिन क्षितिजों का स्पर्श करती है, उसकी सत्ता और महत्ता की पृथक् पहचान कराने वाले आप विश्व साहित्य के पहले मनीषी हैं जो पाश्चात्य की अर्थहीन संस्कृति के वागजाल में न फँस कर, अपनी सनातन संस्कृति के वर्चस्व को दिग्-दिगान्त में प्रख्यापित व पुनर्प्रतिष्ठित करके, उसके धर्म-ध्वज को अनन्त में फहरा सकने की क्षमता से परिपूर्ण है।

अस्तु श्रद्धावनत हूँ आपके कालजयी कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर। प्रणम्य है आपका मनीषी चिन्तन! गद्य में गति नहीं रखता हूँ..... काव्य पंक्तियाँ मानस को झंकृत कर रही हैं।

तो लीजिए समर्पित वह भी आपकी सेवा में -

सौभ्य! आपका सरल सुमानस
भाव लिए निश्छल हैं।
आकर्षक व्यक्तित्व हृदय
हृद स्नेह भरा निर्मल है।

सुमति मञ्जु महिमा मण्डित है
मन अतिशय कोमल है।

विनय शीतला मुदित विभूषित
गरिमा पूर्ण विमल है।

करुणा पूरित मृदुल कृपांमृत
मोहक मुद मंगल है।
ज्ञान, विवेक, विशुद्ध प्राणमय
प्रज्ञा युक्त प्रबल है।

मम मानस में समलंकृत, छवि
जिनकी परम धवल है।
श्रीमद् रामप्रसाद वही
जिनका वर्चस्व अटल है।

27. कैरवार्क

कैरवार्क से दीप्त ज्यों है नक्षत्र अविवाद।
त्यों साहित्याकाश में दीपित 'रामप्रसाद'।
दीपित 'रामप्रसाद' विवाद रहित ये अक्षर।
समदर्शी इतने जैसे मोह आवृत अम्बर।
'कात्यायन' से कोटिक उर प्रवसे अर्तक से।
युग युग रह उजास ऊह निशि कैरवार्क से॥

— वीरेश कात्यायन¹

28. काव्य-कला निधि डॉ० रामप्रसाद मिश्र के प्रति

— सुबोध शारदानन्दन²

आप हैं कला निधान सर्वमान्य दिनमान,
भारतीयता, सुयश गौरव, प्रताप हैं।
ताप हैं निराशारूप आर्द्रता निमित्ति नित,
ऊर्जा दान करें अविराम चुप-चाप हैं
चाप हैं असीम केन्द्रयुज्ज सर्वथा नवीन,
बौद्धिक प्रवीण शोध हेतु परिमाण हैं।
माप हैं प्रमाणयुक्त विविध विधा प्रयुक्त,
दोष मुक्त सफल समीक्षक भी आप हैं।

-
1. वरिष्ठ कवि तथा प्रसिद्ध हिंदी सेवी।
 2. कवि तथा हिंदी सेवी। खड़ी बोली तथा अवधी छंद रचना में प्रवीण।

सेतु हौ पुरानिन ओ नई इन पीढ़िन मा,
 एक दुसरे ते कछु लेतु कछु देतु हौ।
 देतु हौ सदा सहाय नव उदित बिरवन,
 मुला बदले मा नहीं आपु कछु लेतु हौ।
 लेतु हौ आशीष भारती कइ भारतीयन कइ,
 हिन्दी-राष्ट्र भाषा नभ मइहाँ क्रन्ति केतु हौ।
 केतु हौ अलोचना के नव हिन्दू चेतना के,
 सार्वभौम एकता के हेतु आपु सेतु हौ।

जगदेव सहाय स्मारक पुस्तकालय
 14/765, इन्दिरा नगर, लखनऊ-16

29. जाति पाति के घोर विरोधी गुरुदेव डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी

तुम साहित्याकाश के रवि हो, पुंज प्रकाश।
 पुच्छल तारों से कभी डिगा नहीं विश्वास।।
 वे मरमर के महल हैं उनके तीव्र प्रकाश।
 तुम गलियों के दीप हो, पथिक जनों की आस।।
 वे पश्चिम की सभ्यता, भोगवाद के मूल।
 राष्ट्रवाद-परिकल्पना तुममें बसे समूल।।
 वे क्यारी में खिल रहे, हैं गुलाब के फूल।
 अपने बल पर ऊपजे, तुम धारा के कूल।।
 अंग्रेजी की धाक है, अंग्रेजी अवशेष।
 तुम हिन्दी शोषित हुए हो अपने ही देश।।
 वे मधुशाला गीत हैं, प्यालों के मकरंद।
 तुम लोह की लेखनी, लिखे निराला छंद।।
 वे पूर्वजतुतिवाद बन हैं गाँधी के गाल।
 तुम हंस फंदा चूमते भगत सिंह की ताल।।
 जीवन भर करते रहे, तुम हिंदी का ज्ञान।
 राष्ट्रभक्त! तुमको मिले, श्रद्धा औ सम्मान।।

अखिलेश द्विवेदी 'अकेला'

बी-1/9 पश्चिम विहार,

नई दिल्ली-110063

30. प्रेरक

श्रद्धेय सम्माननीय इतिहासाचार्य जी
 मधुकर-दृष्टि में पूज्य आचार्य जी
 आपने असाध्य को किया साध्य जी
 रोम-रोम समाये होके बाध्य जी
 धन्य हुआ करके आपका दर्शन जी
 भुंजगी युग के आप है चंदन जी
 राष्ट्रधर्म पर आपका हो लेखन जी
 राष्ट्रहित हेतु लिख मन-मंथन जी
 भारत में जयचंद, जिन्ना अनेक
 मातृभूमि हेतु अब कुछ करें नेक
 भ्रष्ट तत्वों को दें उखाड़ फेंक
 जन-जागरण का लगायें अब टेक
 आप जैसे महारथी कुछ करें अवश्य
 दूर हो जाये कुशासन का प्रलय
 भारतीयता की गूंजे एक लय
 भारत रहे सुखी और अजय
 मैं तो आपका सेवक-प्रदर्शक
 प्ररित होकर रहूँ सदा सतर्क
 राष्ट्रद्रोहियों का करूँ बेड़ा गर्क।

जवाहरलाल 'मधुकर' चेन्नै

(ड) पत्रों के दर्पण में

पत्र लेखन बहुत बड़ी कला है। हृदय की सच-सच अभिव्यक्ति का यह एक सशक्त माध्यम है। लेखक अपने विचार पाने वाले के सम्बन्ध में भी सहज रूप में प्रतिष्ठित हो गया है। प्रशासन्निगत, व्यक्तिगत, साहित्यिक, प्रेम-संबंधी, संग्राम संबंधी, यात्रा संबंधी, शैक्षणिक और सुचनात्मक पत्र विशेषरूप से प्रचलित हैं। मिश्र बहुत अच्छे पत्र लिखने वालों में से है। पत्रों में लिखी गयी उनकी कविताएं या उनके हृदय के उद्गारों को प्रकट करती हैं या प्रापक के कार्यों का मूल्यांकन करती है। इसी प्रकार अन्य लोगों के मिश्र जी के नाम लिखे गये पत्र भी हैं उनके लम्बे जलवन में बहुत अधिक पत्राचार हुए हैं। सब को एक मोटी पुस्तक में ही दिया जा सकता है नमूने के रूप में उनके लिए लिखे गये कुछ पत्र यहां प्रस्तुत हैं -

12/बी-6 के. जी. मार्ग

इलाहाबाद

15/5/1965 ई.

प्रिय रामप्रसाद मिश्र जी,

आप गलत पते पर लिखते हैं जिससे पत्र बहुत समय बाद मिलते हैं।

आपकी दोनों पुस्तकें 'बौद्धिकरस' तथा 'देश दिल्ली और अहम' मुझे बहुत पसन्द आयीं, इसलिए कि उनमें आपकी मौलिक प्रतिभा के दर्शन होते हैं। मुझे विश्वास है, कि आपकी देन माँ भारती के लिए उत्कृष्ट और आकर्षक साबित होगी और लोगों को उससे मनोरंजन के साथ नई दृष्टि भी मिलेगी।

बाधाई,

आपका

सुमित्रानन्दन पंत

रामधारी सिंह दिनकर
कुलपति

भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर - 6
6 अप्रैल 1965

प्रिय डॉ. मिश्र जी,

देश, दिल्ली और अहम' की प्रति मिली। नाम की विचित्रता से ग्रंथ पढ़ने की प्रेरणा मिली। कविताएं अच्छी हुई हैं।

बधाई,

आपका
दिनकर
(रामधारी सिंह दिनकर)

हरिवंशराय बच्चन,
एम.ए.पीएच.डी. (कैन्टब)

13 विलिंगटन क्रिसेंट, नई दिल्ली
21/3/65

सम्मान्य बंधु,

'बौद्धिकरस की प्रति मुझे समय से मिल गई थी।.... आपके स्वर में विशिष्टता है। आज के लिए यह छोटी उपलब्धि नहीं है जबकि हजारों लोग एक ही ढंग से लिख रहे हैं और किसी कथन को विशेषण विशेष के साथ लगाकर स्मरण करना कठिन हो गया है।.....

5/9/65

..... आपकी रचनाओं का पहला प्रभाव कुछ पर मौलिकता का पड़ता है। आप किसी के भी अनुकरण नहीं। न बड़ों के न छोटों के।

16/5/81

..... अब मैं 'सेतु' को ध्यानपूर्वक पढ़ चका हूँ..... विशेष प्रभावित हुआ हूँ सेतु की लम्बी कविता तब, अब होर आगे' से। सूमित्रानन्दनपंत की 'स्वर्णोदय (स्वर्ण धूलि) के बाद जीवन दर्शन पर इतनी लम्बी और सुगठित कविता शायद आपने ही लिखी है। जीवन-दर्शन आपका स्वस्थ समयोचित और उदार है।.....

'तब, अब और आगे', उच्च कोटि की रचना है जो आत्मविश्वास से लिखी गई है.....

जैनेन्द्र के पत्र से

डॉ. रामप्रसाद मिश्र के कथा के संग्रह की कहानियां तथाकथित नये ढर्रे की नहीं है। वे कुछ सोचने के लिए छोड़ भी जाती है, पढ़ने के साथ चुक नहीं जाती। उनमें प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाले यथार्थ की परतें खोजी तो गई हैं, पर ऐसे नहीं कि पाठक को कल्पना और रस के लिए अवकाश न रह जाए। शैली इनकी खुली है और मात्र परिपाटी का पालन कहीं नहीं है.....

जैनेन्द्र कुमार

1/9/3

डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम' के दो पत्रों से

ऊँ

J/60 आर्यनगर, कानपुर

5-8-3

प्रिय डॉ. रामप्रसाद जी मिश्र,

'विश्वकवि तुलसी और उनके काव्य' जैसा विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ लिखकर तुलसी समीक्ष साहित्य में आपने एक आकर ग्रंथ की न्यूनता को पूर्ण कर दिया है। एक ही ग्रंथ में इतनी अधिक सामग्री पाकर पाठक की जिज्ञासा तृप्ति लाभ करेगी। पाश्चात्य कवियों से तुलना करके आपने समीक्षा-सन्दर्भ से एक नवीन अध्याय की सृष्टि की है। भाषा परिमार्जित है। ऐसे उपयोगी ग्रंथ प्रणयन पर हार्दिक बधाई।....

आपका

मुंशीराम शर्मा

24/4/86

डॉ. मोहन अवस्थी

दिनांक : 24-24-1986

डी.फिल.डी.लिट्.

मध्याह्न

प्रोफेसर हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

8/4 बैंक रोड (विश्वविद्यालय आवास)

इलाहाबाद-211002

बंधुवर,

सप्रेम हिस्मरण।

आपका आत्मीयता भरा पत्र यथासमय मिला था और पहले 'विनोद' पुस्तक मंदिर' मेरे द्वारा प्रेषित 'विश्वकवि तुलसी ओर नके प्रमुश काव्य' पुस्तक भी प्राप्त हो गयी थी।

'नव रहस्यवाद' विषय पर प्रस्तुत एक शोध प्रबंध कानपुर विश्वविद्यालय में मेरे पास मूल्यांकनार्थ भेजा था। उस स्तरीय शोध प्रबन्ध में आपके ग्रंथों के अनेक सन्दर्भ दिये गये थे। इस तरह एक वर्ष पूर्व का आपका नाम मुझ तक पहुँचा। बाद में समादरणीय बन्धु पं. सिद्धिनाथ मिश्र से भेंट होने पर आपकी चर्चा हुई। 24/4/86 को श्री चक्रधर 'नलिन' का पत्र मिला जिसमें आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा है। यों तो साहित्यकारों के ग्रंथ स्वयं ही परिचय समर्थ होते हैं लेकिन सज्जनों द्वारा की गई प्रशस्ति से वह परिचय रसमय बन जाता है। मुझे उपर्युक्त लिखित ग्रंथ ने आपके व्यक्तित्व की जो अलक दी वह मिश्र जी की वाणी तथा चक्रधर जी के पत्र से रस संवलित हो गयी है।

तुलसीदास पर अनेक आलोचनात्मक ग्रंथ सामने आ चुके हैं। परन्तु इस पुस्तक में आपने जिस एक्स किरणी दृष्टि का परिचय दिया है वेसी पैनी दृष्टि अभी तक किसी पुस्तक में देखने को नहीं मिली। आपने तुलसी के काव्य मा तन्मय होकर मर्मोद्घाटन किया है। इसीलिए आपकी विश्वगत समीक्षा तुलसी को सही अर्थों में विश्वकवि के पद पर प्रतिष्ठित कर सकी है। मुझे विश्वास है कि समर्थ भाषा, मौलिक चिन्तन ओर विषय प्रतिपादन की गरिमामयी शैली के कारण यह ग्रंथ साहित्य साधकों के लिए निश्चय ही दृष्टि शोधक दिव्य अंजन सिद्ध होगा।

मैं इस उच्च कक्षाओं के लिए अवश्य संस्तुत करूँगा।

सद्भाव सहित,

आपका

डॉ. मोहन अवस्थी

डॉ. रामेश्वर शुक्ल अंचल पत्र से

प्रिय भाई,

जबलपुर

7/7/81

आपको नैसर्गिक काव्यशक्ति मिली है। जगह जगह पर हृदयानुभूति की सफल अभिव्यक्ति है.....

अंचल

डॉ० मुंशीराम शर्मा 'सोम' के पत्र से

9/60, आर्यनगर,

कानपुर-2/11/85

प्रिय डॉ. मिश्र जी,

पत्र मिला। 'प्रवृत्ति परक अध्ययन' भी आज ही पढ़कर समाप्त किया है। इस ग्रंथ से आपका विशाल अध्ययन, अध्ययन को आत्मसात करने और उसका तुलनात्मक दृष्टि से प्रयोग स्पष्ट हो रहा है। यह ग्रंथ भाषा, इतिहास तथा प्रवृत्तियों का विश्लेषण सभी दृष्टियों से अनुपम है। मेरी दृष्टि में ऐसा ग्रंथ अभी तक किसी ने नहीं लिखा।

आपने निर्ममतापूर्वक सभी विद्वानों के अभिमतों की परीक्षा की है और अपना युक्तियुक्त निर्णय दिया है। संभव है कि कुछ संबंध व्यक्तियों को खटके, पर उससे आपकी लेखनविधि उज्ज्वल ही होगी।.....

मुंशीराम शर्मा

डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' के पत्र से

प्रिय रामप्रसाद जी,

16/12/85

हिन्दी साहित्य का प्रवृत्ति परक इतिहास पढ़कर प्रसन्नता हुई। आपने उसमें साहित्य की नई प्रवृत्तियों का बहुत सुन्दा आकलन किया है..... आपका विवेचन निरपेक्ष और विवेकपूर्ण है। मेरी वाधइ स्वीकार करें।

आपका

शिवमंगल सिंह सुमन

(बहादुरशाह जफर संग्रह को दृष्टि में रखकर)

"रचनाएं आपके और आपके विकास के अनुरूप हैं। बहुत सी पंक्तियां मौलिक अनुभूति के चिन्तन की अभिव्यक्ति के रूप में बैठ गई हैं। (डॉ. रामप्रसाद मिश्र: व्यक्तित्व और कृतित्व पेज 9)

डाकखाना : मन्दार विद्यापीठ

जिला : बांका, बिहार-813104

दिनांक : 22-1-2001

सम्माननीय डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी,

सादर नमस्कार।

गजब की कृति* आप ने तैयार की है। कनौजिया समाज का एकदम नंगा चित्र ही आपने प्रस्तुत किया है।

अलौकिक लेखन कौशल है। मुझे तो शुरू से अन्त तक अदभुत लगा। पर यह नाम मुझे आकर्षक नहीं लगा।...

आशा है स्वस्थ हैं।

आपका

आनन्द शंकर माधवन

* 'कुछ खेता कुछ पाता गाँव' पर प्रतिक्रिया। डॉ. जीवन प्रकाश जोशी एवं श्री रामेश्वर दूबे ने 'कुछ खेता कुछ पाता गाँव' को हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठतम आचलिक उपन्यास माना है और आश्चर्य व्यक्त किया है कि इसे हिन्दी साहित्य में उचित स्थान क्यों नहीं मिला है।

डॉ. सुनील कुमार फुल्ल

आचार्य एवं अध्यक्ष

भाषा विभाग

संयोजक : राष्ट्रीय एकता :

भाषा संवाद

आधारभूत विज्ञान महाविद्यालय,

हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय

पालमपुर-176062

30 मार्च, 2001

आदरणीय डॉ. मिश्र जी,

सादर प्रणाम! इधर आपने पुस्तकालय में हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास (दो खण्ड) मंगवाकर देखा-पढ़ा। आपने निस्संदेह एक बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रंथ पाठकों-शोधकर्ताओं को भेंट किया है। आपको हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं। बाजार में अधिकांश साहित्येतिहास लाभ को ध्यान में रखकर लिखे जाते हैं।... जल्दी जल्दी में इसी कारण उनमें दृष्टि एवं गहराई का अभाव होता है।

डॉ. बच्चन सिंह के इतिहास के बारे में आपकी विनोदपूर्ण उक्ति 'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास' (दूसरे दर्जे का इतिहास) बड़ी स्टीक लगी..... और इतिहासकारों पर भी आपके कटाक्ष सही एवं प्रासंगिक है। गुलेरी के सन्दर्भ में टिप्पणियां अच्छी लगीं.... मेरा भी यही अभिमत रहा है। मैंने सन् 1984 के 'सारिका' के जुलाई अंक में यही मत प्रकट किया था और बड़ा बवाल उठा था।

मैं आपका इतिहास मननपूर्वक पढ़ रहा हूँ..... और भी प्रतिक्रिया भेजूँगा।

एक बार पुनः शत्-शत् प्रणाम!

शुभकामनाओं सहित,

आपका

सुशील कुमार फुल्ल

शकुन्तला निकेतन,
निराला नगर,
हुसैनगंज, पो. बाढ-803213
जिला : पटना (बिहार)
दिनांक : 27-7-2003

महाप्राण! महाकवि!!

सादर श्रद्धासहप्रणामा:!!!

आपकी बीमरी से चिन्ता बढ़ गई है। परम प्रभु से प्रार्थना है कि वे आपको शीघ्रारोग्य, सुस्वास्थ्य और सुदीर्घ शतवर्षों जीवन दें। आप हिन्दी साहित्य के शलाका पुरुष हैं। आपके वस्तुपरक इतिहास पर भारत सरकार को 'भारत रत्न' को सम्मान देना चाहिए। ऐसा साहित्येतिहास हिन्दी में आज तक लिखा नहीं गया। आपका स्वास्थ्य सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का स्वास्थ्य है।.....

मैं सम्प्रेति 'सीतायन' के सृजन यज्ञ में लगा हूँ। वाग्देवी की कृपा रही तो कुछ दिनों में यह पूर्ण हो जाएगा। 'याज्ञसेनी' और 'सीतायन' एक साथ प्रकाशित होंगे। 'याज्ञसेनी' दो वर्ष पूर्व ही रची गई है।.....

पत्रोत्तर की प्रतीक्षा में,

सादर, आपका,
मुचकुन्द शर्मा

हिमालय, ए1/1, मौरिस नगर,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली-110007

दिनांक : 26-4-2000

आदरणीय डॉ. मिश्र जी,

सादर प्रणाम।

आशा है आप सपरिवार स्वस्थ व प्रसन्न हैं।

हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास (दो खण्डों में) लिखकर आपने हिन्दी साहित्य की बड़ी सेवा करने के साथ ऐ अपना ऐसा कीर्तिमान भी स्थापित किया है जिसे युग-युग तक याद किया जायेगा।

सादर संस्नेह,

मुकुन्दन

उत्तरी 24 परगना (पश्चिम बंगाल)
वसंत पंचमी, 2004 ई.

महाप्राण, महाकवि!

वसंत पंचमी पर आपका हार्दिक अभिनन्दन। सरस्वती और सरस्वती-सपूत को सादर श्रद्धासह नमन।

वाग्देवी आपकी लेखनी को चिर जाग्रत और सतत गतिशील रखें। वे आपको शताधिक वर्ष की आयु प्रदान करें। वाद, विवाद और खेमों से अलग रहकर आप हिन्दी के शीर्षस्थ महाकवि और साहित्योतिहासकार बने हुए हैं। आपकी लेखनी से हिन्दी साहित्योतिहास को सच्चा न्याय मिला है। आप सम्प्रति हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ बहुविधाकार हैं। वैदुष्य और पाण्डित्य में आपने सबको पीछे छोड़ दिया है। आपकी 'दृष्टि' और आपके वस्तुपरक इतिहास को ज्ञानपीठ², व्यास और सरस्वती सम्मान – सब एक साथ मिलना चाहिए। आपने शाश्वत और अमर कालजयी साहित्य की सृष्टि की है। वाग्देवी से मैं सादर प्रार्थना करता हूँ कि वे आपको सुस्वास्थ्य दें, शताधिक वर्ष की आयु भी प्रदान करें।.....

सादर,

आपका,

मुचकुन्द शर्मा

1. राजनीतिज्ञास्यवेत्ता, सुकवि।

2. बनारसी दास (हिन्दी-संस्कृत कवि) ने 'दृष्टि' को नोबेल प्राइज, ज्ञानपीठ पुरस्कार इत्यादि के योग्य माना है।

शकुन्तला निकेतन,

निराला नगर,

हुसैनगंज, पो. बाढ़-803213

जिला : पटना (बिहार)

दिनांक : 18-2-2004

महाप्राण! महाकवि!!

सादर श्रद्धासह प्रणाम स्वीकारें।

आपका 30/01/04 का कृपा पत्र 11/2/04 को प्रवास से लौटने पर बाढ़ में मिला। मन प्राण नवोत्साह से भर गया। आपने मेरे साहित्यकार को बल, विश्वास और संबल दिया है। आपका साहित्येतिहास उपेक्षितों और भूले-बिसरे साहित्यकारों को भी सादर स्मरण करता है। परम प्रभु से प्रार्थना है कि वे आपके शीघ्रायोग्य और सुस्वास्थ्य दें। सम्प्रति आप हिन्दी के अकेले ऐसे बहुविधाकार हैं जो सभी विधाओं में अग्रिम पंक्ति में पंक्तेय हैं। आप हिन्दी के हिमालय हैं; काव्य की पावन गंगा हैं। आप से हिन्दी सर्वतो भावेन समृद्ध हुई है।

सादर,

आपका,

मुचकुन्द शर्मा

बाजार बेलीगंज

रायबरेली

17-11-2003

श्रद्धेय डॉ. साहब,

सादर नमन।

आपकी कालजपी कृति 'पुरुषोत्तम' भाई 'नलिन' जी द्वारा प्राप्त हुई इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। 'पुरुषोत्तम' में अपका अथक परिश्रम, शोध-दृष्टि एवं कथ्य को हृदयस्पर्शी और प्राणवान बनाने की शैली आकर्षक एवं भाषा सशक्त एवं प्रशंसनीय है।

साहित्य के संवर्धन में सतत लंगन आप जैसा समर्थ साधक ही भारतीयता के प्राण भगवान राम के सम्पूर्ण जीवन को एक नये अंदाज में प्रस्तुत कर सकता है। उक्त कृति की अभिव्यक्ति में नवीनता गहरी है, व्यापक है, तथा अनुभूति की व्यंजना सार्थक, कलात्मक, रोचक एवं मोहक है।

विश्वास है, हिन्दी साहित्य के सुधी समीक्षक इस पवित्र प्रयास की मुक्तकंठ से प्रशंसा करते हुए इसका समुचित मूल्यांकन करेंगे।

परमपिता परमात्मा से यही प्रार्थना है कि कर्त्तव्य के लिए पुकार होने पर आप सबके अग्रगामी बनें; पृथ्वी ओर आकाश से भी अधिक विराट बनें (प्रचर्षणिभ्यः पृतनाहवेषु प्रपृथिव्या रिरिचाथे दिवश्च - ऋग्वेद 1-109-6) शुभ कामनाएँ,

आपका भाई

चारुचन्द्र द्विवेदी

पुनश्च: इस समय मैं बीमारियों से इतना घिरा हूँ कि बोलने, लिखने, पढ़ने, आने-जाने में असमर्थ हूँ। अतः आज इतना ही - विश्वास है ऐसी ही कृपा बनाए रखेंगे - 'दुःखितः सुखितो वाऽपि सख्युर्नित्यं सखा गति'।

'पुरुषोत्तम' के लिए

जिह्वा में शिवजी बसे,

नयनों में घनश्याम,

रोम-रोम में नित बसे,

पुरुषोत्तम श्री राम।

— चारुचन्द्र द्विवेदी

कृष्ण मुरारी 'विकल'

ई-पाण्डेय का तालाब

सम्पादक

लखनऊ

चेतना-स्त्रोत

दिनांक : 15-1-04

परम श्रद्धेय डॉ० साहब,

सादर चरण स्पर्श।

आपका आशीर्वाद स्वरूप प्रदत्त "पुरुषोत्तम" महाकाव्य आदरेय 'राजेश' जी से हस्तगत कर गौरवन्वित हूँ।

प्राप्त होने के अगले दिन से पढ़ना प्रारंभ किया। अष्टम सर्ग 'विपर्षय' के उपरांत 'रंग में भंग' तक आते-आते मेरे एक अग्रज मित्र विद्वदमणि श्री राम आंधार लाला आ गये। बातें करते-करते मेरे हाथ से पुस्तक लेकर अवलोकने लगे। फिर 'विश्वामित्र' सर्ग पढ़ डाला और बोले आप पढ़ लें फिर मुझे अवश्य दीजिएगा। वस्तुतः वे इसे तत्काल आत्मसात् कर जाने हेतु इतने विकल थे मैंने जहा तक पढ़ा था, वहा चिह्न लगा कर पुस्तक उन्हें दी और स्वयं उनके बाद पढ़ लेने का मन बना लिया अभी वह पढ़ रहे हैं और हर मुलाकात में भाषा का विषय "पुरुषोत्तम" की भाषा की उच्चस्तरीयता एवं प्रवाह तथा छंद मुक्त होने के बावजूद छंद से भी आधि-क प्रवाहात्मकता तथा रसात्मकता ही होता है।

मेरी दृष्टि से बुद्धिजीवियों के लिए यह ग्रंथ प्रणीत आपसे सम्पूर्ण विश्व के लिए एक महान कार्य करा दिया है माँ शारदा ने। और मैं इस पाकर गदगद प्रहर्षित तो हूँ ही आपके अशीष से भाव विभोर भी हूँ।

कृपाकांक्षी,

कृष्ण मुरारी 'विकल'

बी-14 नयसी बस्ती,

बिजनौर, उत्तर प्रदेश

दिनांक : 24-3-04

मान्य बन्धुवर,

सादर वन्दे !

भी भोलानाथ त्यागी के हस्ते प्रेषित 'कल्पान्त' महाकाव्य प्राप्त हुआ। कृपा के लिए आभारी हूँ।

महाभारत पर आधारित आपका यह महाकाव्य अद्वितीय है। इसमें आपने महाभारत के विस्तृत कथानक को 15 सर्गों में समाहित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। महाकाव्य के प्रथम सर्ग में महाभारत के प्रमुख पात्रों के गुणों का उल्लेख करते हुए सभी के प्रति सम्मान सद्भावना व्यक्त की गई है। अंतिम सर्ग में बलराम, श्री कृष्ण तथा द्रोपदी सहित पाँचों पांडवों का अन्त मर्मस्पर्शी है।

महाकाव्य के अंतिम सर्ग 'प्रतिक्रिया' के आरम्भ में आपने 'युद्ध के संबंध में सूत्र रूप में महत् सत्य का उद्घाटन किया है।

'युद्ध जितना दीखता उतना ही नहीं होता,

उसका आदि दूरतम अतीत में अदृश्य होता,

तथा अंत अंतहीन भविष्य में प्रसरित।'

महाभारत पर समग्र रूप में लिखित 'कल्पना' जैसा महाकाव्य अब तक मेरे देखने में नहीं आया।

रामरुवरूप आर्य

कल्पान्त महाभारत का नव्योद्भावना

डॉ० रामप्रसाद मिश्र हिन्दी के धुरिकीर्तनीय काव्यकारों में परिगणनीय हैं। इनकी काव्य रचनाओं से हिन्दी का काव्य जगत समृद्ध तो हुआ ही है, काव्य लेखन की विभिन्न विधाओं को भी नई दिशा प्राप्त हुई है। डॉ० मिश्र की काव्य साधना का सातत्य प्रातिभा वैचक्षण्य की दृष्टि से भूयोभय नमस्य है। समीक्षकों द्वारा इनकी समता हिन्दी के कतिपय स्वनामधन्य कवियों से की जाती है, किन्तु वस्तुतः यह है कि यह अपने आप में विलक्षण और अनुपम हैं, अन्यतम और धन्यतम हैं। आज के कवि केवल काव्य लिखते हैं। उन्हें प्रायः अपने काव्य लेखन के धरातल का सही ज्ञान नहीं होता, किन्तु डॉ० मिश्र को अपने काव्य लेखन की सोद्देश्यता या रचना-भूमि का पूरा परिज्ञान रहता है।

कुशल काव्यकार डॉ० मिश्र की नवप्रकाशित महाकाव्य 'कल्पान्त' महाभारत की का पुनराख्यान मात्र नहीं है, वस्तुतः यह उसका पुनर्मूल्यांकन के साथ ही नव्योद्भावना भी है। इस महनीय महाकाव्य की व्यास रचित महाभारत की अन्तर्वस्तु के आस्वाद से भिन्न कुछ अन्य ही आस्वाद-रमणीयता हैं। ऐसी ही काव्यकृति से प्रख्यात ध्वनिकार अनन्दवर्द्धनाचार्य की 'प्रतीयमान पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति चाणीषु महाकविनाम' जैसी उक्ति अन्वर्थ होती है।

कविश्रेष्ठ डॉ० मिश्र के 'कल्पांत' के वर्ण्य का स्पष्टीकरण किया है। यह काव्यकृति, द्वापर के अन्त तथा कलियुग के आरम्भ की संक्रांतिकालीन महाभारत-गाथा का साधार, मौलिक और ऐतिहासिक महाकाव्य है। सचमुच, इस महाकाव्य को युगविशेष का महाकाव्य (पीरियड एपिक) कहना अर्थात् संगत होगा। इस महाकाव्य का पूरा रचना-प्रकल्प छान्दस दृष्टि से स्वच्छंद हैं। परन्तु, इस स्वच्छंदता में जो लयगत प्रवाह है, वह छंदोबद्धता में भी प्रायोदुर्लभ रहता है। इनकी काव्य भाषा सलंकार है, जो इनकी वंशवदा है और जिसे हन्होंने अपनी इच्छा से विभिन्न चारियों में नचाया है। किन्तु इसके तत्सम शब्दों की प्रयोगिक आग्रह की सहजता विशुद्ध हिन्दीविद् पाठकों को अवश्य ही असहज प्रतीत होगी, ऐसी सम्भावना भी असहज नहीं है। प्रस्तुत महाकाव्य 'कल्पान्त' चित्र (कथावस्तु) मनोरम है और उसका

फेम (भाषा) भी मनोज्ञ है, यद्यपि चित्र और फ्रेम के व्यतिरेकी समीक्षक कदाचित् इससे भिन्न विचार भी रख सकते हैं। फिर भी, इतना निश्चित है कि विषयवस्तु के अनुरूप 'कल्पान्त' की चित्रात्मक काव्यभाषा उच्छल और तरंगवती है। एक उदाहरण... प्रेक्षागृह में प्रवेश किया जो मोतियों की झालरों, वैदूर्य मणियों एवं सवर्ण खण्डों से जगमग-जगमग था। गांधारी, कुन्ती सजी-बजी दासियों के साथ आई सैविकाओं का हार-सा लग गया। चारों वर्णों के जन रणक्रीड़ा अवलोकन हेतु पधारे, जन-संकुल वातावरण। तरंगायित सागर-सा लगने लगा...। (हस्तिनापुर: 66) योजना कुल पन्द्रह प्रकरणों में पल्लवित है— प्रवेश, शान्तनु और भीष्म, कौरव और पाण्डव, हस्तिनापुर, घटनाचक्र तप्तस्वर्णाभा, स्वयंवर, इन्द्रपस्थ, राजसूययज्ञ, वनवास, विराट, नगर, युद्ध और शांति, युद्ध (एक) युद्धो एवं प्रतिक्रिया चिन्तनगत आन्त्रीक्षिकों का आक्षरक साक्ष्य है।

इन प्रकरणों की काव्यरस-सिक्त अवतारणा में कविवर किश्रजी ने महाभारत की पुराकथा को, वर्तमान युग के अनुकूल, प्रसांगिक बनाकर आधुनिक प्रवृत्तियों के प्रकाया में, महाभारतीय पात्रों को परखने की चेष्टा में प्रशंसनीय ग्रंथन कौशल का परिचय दिया है साथ ही मनोवैज्ञानिक आसंगों का यथा परम्पररित चर्वित चर्वण से बचाकर, उन्हें नवीन प्रतिपादन के योग्य बना दिया है। 'कल्पान्त' के प्रत्येक प्रसंग में कुछ न कुछ वैशिष्य है, जिसका वर्णन इस छोसी-सी समीक्षा में कदापि सम्भव नहीं है। पर इतना कहना अत्युक्ति नहीं कि हिन्दी साहित्य को इस महाकाव्य में निहित विश्व साहित्य की सिसृरा-शक्ति परिलक्षणीय है ओर इस काव्य सर्जना के द्वारा कविवरेण्य डॉ. मिश्र ने अपने को प्रज्ञाप्रौढ़ विद्वान कवि के साथ-साथ श्रेष्ठ कलाकार भी सिद्ध किया है। भूरिश साधुवाद।

डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव।

अध्याय 2

समग्र काव्य — रचना विवरण

कवि का दृष्टिकोण व्यावसायिक नहीं रहा है; न तो पाद्यक्रम से ही बद्ध रहा है। प्रकाशक बाजारू लेखक, पुरस्कार प्राप्त या सरकार से जुड़े हुए रचनाकारों को प्रथम वरीयता देते हैं। डॉ. मिश्र इनमें पीछे रहे हैं। फलतः उनको काव्य प्रकाशकों से कुछ नहीं मिल सका। यहाँ उनकी रचनाओं पर विचार किया जा रहा है —

प्रकाशित रचनाएँ

वैसे तो 'प्रताप' (कानपुर) में 1950 ई. से प्रकाशन आरंभ हुआ, किन्तु प्रथम ग्रंथ 'पथ पर' उपन्यास 1955 ई. में निकाला। 1964 ई. से उनकी कविताएँ पुस्तकाकार आने लगी —

1. बौद्धिक रस (संग्रह 1964 ई.)

यह कृति धर्मपत्नी राजकिशोरी जी को समर्पित है। यह उनकी 52 कविताओं का संग्रह है। यह संग्रह मौलिकता, चिन्तन तथा भावुकता की दृष्टि से उत्तम है। एक-एक कविता एक-एक निबन्ध के बराबर है। इसमें खड़ी बोली का सुन्दर और सहज रूप-विधान है। नवीन बौद्धिकता, विद्रोही भाव और अनेक दृष्टिकोण सामने रखते हैं। इसमें रस एवं विचारोत्तेजन का जो संगम हुआ है वह युग के अनुरूप है। पहली कविता, बौद्धिक रस शीर्षक से है। कवि ने शीर्षक को व्याख्यायित किया है। बौद्धिक रस वैज्ञानिक यंत्र की दुरुहता में अश्रुतपूर्ण संगीत है। यह सभ्यता और संस्कृति के नये रूप का गान है। यह रस का वैज्ञानिक उत्कर्ष है। युग चेतना का यह आदर है। वैज्ञानिक सत्य को शुद्ध सत्य माना गया है। कवि, दार्शनिक और वैज्ञानिक सत्य के खोजी हैं। कवि का व्यापक दृष्टिकोण अपना विशेष महत्व रखता है। इस ग्रंथ की पंक्त, बच्चन सहित अनेक मनीषियों ने प्रशंसा की। इसी संग्रह से कवि ने बौद्धिक रस का प्रवर्तन किया है। कालांतर में काव्य में बौद्धिकरस और आलोचना में वस्तुवाद

विवेचन ग्रंथ भी लिखा। इसमें उन्होंने आचार्यत्व को प्राप्त किया है। इसको डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) के एम.ए. के पाठ्यक्रम के लिए संस्तुत किया। इस रचना का आचार्यत्व की दृष्टि से विशेष महत्व है।

2. देश दिल्ली और अहम् (संग्रह 1965 ई.)

संग्रह की 'अंधे का आत्मनिवेदन' कविता में कवि 'ऋग्वेद' के नासदीय सूक्त, बाइबिल तथा अनेक ग्रंथों एवं व्यक्तियों के सन्दर्भों के साथ उदात्त गौरवशाली सृष्टि करता है। इसमें हीन-जीवन की व्यथा भी चित्रित है। जीवन से समझौता उस कविता का प्रतिपाद्य है। कवि ने दिल्ली के लाल किला के दीवाने खास में आनंदित 'दृष्टा' (प्रज्ञाचक्षु) को देखा था, वहीं के बिड़ला मंदिर में अन्य दृष्टा को लक्ष्मीनारायण के समृद्ध दर्शन करते देखा था। 'विनय पत्रिका' एवं 'उर्वशी' को पढ़ाते हुए विभिन्न एम. ए. हिन्दी के छात्रों को देखा।

एक प्रज्ञाचक्षु को पीएच.डी. एवं पराशोध कराया, कुल चार को एम.ए. में पढ़ाया। स्वभावतः पूरी कविता में एक गहरी संवेदनशीलता है।

इस संग्रह की अनेक कविताएं देश के जीवन का ऐसा गंभीर चित्र अंकित करती हैं कि उसे नूतन 'कैण्टरबरी टेल्स' कहा जा सकता है। अपनी अचूक ग्रहण शक्ति, अपने सार्थक चिन्तन एवं निश्चित शैली में कवि ने सब कुछ कहा है। बौद्धिक रस से कवि और आगे बढ़ सका है। देश, दिल्ली, अहम्, निराशावाद और क्रांति जैसी कविताओं में कवि की पूरी क्रांतिदर्शिता सामने आ सकी है। इस संग्रह में कुल 28 कविताएं हैं। अभिव्यक्ति की सम्पूर्णता इसमें सबसे अधिक सराहनीय है। दिनकर ने इसे सराहा था।

3. पाण्डु-ग्रन्थि (खण्ड काव्य 1965 ई.)

इसमें मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का उद्घाटन है। सारे क्रम सराहनीय हैं। प्रेम पूजा के बलिदानों से तो सारा पाश्चात्य साहित्य भरा है, परन्तु उसमें अधिकंश भावुकतापूर्ण है। इसमें मन की स्वाभाविक हलचल है। चित्रोपमता भी है। प्रेम, समर्पण, अध्यापक से प्रेम, मनोवैज्ञानिक जटिलता, यौन व्यभिचार, अन्तर्द्वन्द को प्रतीकों और बिम्बों से दिखाया गया है। इसमें सह स्वाभाविक स्खलन को दिखाया गया है। यह एक आकर्षक खण्डकाव्य है।

शीर्षक आत्मरति के लिए नार्सीसस कॉम्पलेक्स तथा मातृरति के लिए ओडीपस कॉम्पलेक्स आदि के सदृश महाभारत के पाण्डु के चरित्र के आधार पर रखा गया है। इसमें मनोवैज्ञानिक दुर्बलताएँ भी वर्णित हैं। प्रेम का उत्तप्त हाहाकार और चित्रण सहजता के साथ है। ऋग्वेद के यम-यमी संवाद के संदर्भ में समी-ग्रंथि या भ्रातृरति की चर्चा भी मिश्र जी ने की है। सारा काव्य एकदम मौलिक है बहुत वर्षों पश्चात उन्होंने 'पाण्डु ग्रंथि' शीर्षक उपन्यास भी लिखा।

4. दृश्य जो न भूले (संग्रह, 1965)

यह मात्र 10 कविताओं का संग्रह है। इसमें आत्मपरक कविताएँ हैं। आकार की दृष्टि से यह एक लघु संग्रह है। उसकी कविताएँ अनुभूतिपरक हैं। रूप की सुगन्ध भी है। मानवीय संवेदना से पूर्ण हैं। इसमें जिन्दगी के दर्द संजोये गये हैं। मानवता की पीड़ा है। निर्धन देश के बहुसंख्यक निवासियों की मूल पीड़ा को इसमें व्यक्त किया गया है। एक नौकरानी के माध्यम से यह 'निराला' की 'वह तोड़ती पत्थर', 'भिक्षुक' और 'विधवा' जैसी कविताओं की याद दिलाती है। अप्रिय सत्य के उद्घाटन की दृष्टि से भी ये दृश्य हिन्दी साहित्य में अपना विशेष स्थान रखते हैं। यह कवि की अनुभूतियों का एक सुन्दर गुच्छ है जिसमें रूप और सुगन्ध दोनों हैं। विश्व में शोषण, प्रपीड़न के अतिरिक्त प्रेम, दया और सहिष्णुता भी है। इनमें से किसी एक का एकान्त स्तवन वर्णन जीवन की समग्रता के साथ न्याय नहीं कर सकेगा।

सुख-दुःख, भोग-रोग, जीवन-मृत्यु आदि मिलकर ही जीवन बनते हैं। मानसिक प्रेम को कवि ने महत्व दिया है।

5. बहादुरशाह जफर (संग्रह, 1968 ई.)

यह संग्रह कवि ने अपने श्रद्धेय गुरुवर डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम' को सादर समर्पित किया है। इस संग्रह में कुल 15 रचनाएँ 87 पृष्ठों में हैं। संग्रह का नाम पहली कविता के नाम पर है। कवि का गुणग्राही व्यक्तित्व इसमें सामने आ गया है। मनुष्यों, देवी, वृद्धा, गूंगा, दर्पण, बादल, स्मृतियाँ, धूमकेतु, कचनार, अकेलापन, जवाहरलाल, लता मंगेशकर आदि पर खुल कर लिखा गया है। सब की विशेषताओं को दिखाया गया है। बहादुरशाह एक व्यक्ति नहीं एक बड़े इतिहास ग्रंथ का उपहास है। वह शायर, शासक और

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी है। उसमें इतिहास बोध है। बहादुरशाह जफर अपने और दिल्ली के इतिहास बोध हैं। बहादुरशाह जफर अपने और दिल्ली के इतिहास का स्मरण करता है। वह अपने आप में एक प्रतीक भी है। उसका साहित्य प्रेम अन्त में राष्ट्रप्रेम से भी जुड़ जाता है। उसने अन्तरात्मा की आवाज पर कार्य किया था। वह गद्दार नहीं था। परिस्थितियों का मारा अवश्य था। उसके पूर्वज हुमायूँ को भी देश छोड़ना पड़ा था। वह वापस आ सका था, परन्तु यह न आ सका। मुगल शासन का यह सबसे अभागा बादशाह था, पर उसका अपना सिद्धान्त था। उसमें राष्ट्रीयता की भावना भरी थी। 'हत्या का स्मरण' एक गंभीर मनोवैज्ञानिक कविता है। यह प्रौढ़ काव्य-संग्रह है। इसमें भाव-भाषा के सुन्दर प्रयोग हैं। बच्चन ने इसे पंसेद किया था।

6. ध्यान के गान (संग्रह, 1974 ई.)

इसमें कुल 75 कविताएँ हैं जो ध्यानानन्द को विवृत करती हैं। संग्रह स्वामी मुक्तानन्द परमहंस को समर्पित है। उन्हीं का ध्यान करते-करते कवि ने इसको तैयार किया है। परमहंस ने मुक्तकंठ से इसकी प्रशंसा की थी। जीवन की अनेक पिपासाएँ इससे शान्त होती हैं। इसमें यौगिक जीवन की कथा है। अनुभूतिपरक व्याख्या है। अध्यात्म जगत में इसका अपना महत्व बनता है। उपनिषदों के अनेक गूढ़ रहस्यों का इसमें उद्घाटन है। हिन्दी में इस प्रकार की कृतियाँ नाम मात्र की हैं। योग, ज्ञान, भक्ति, कर्म और साधना का समायोजन है। 'मेरे गुरु' कविता को विशेष रूप से देख जा सकता है (पेज 120-121)। ध्यान के गान से आशय है साधना का फल। यह कृति आध्यात्मिक है। भोगवादी भौतिक संसार में इस प्रकार की कृतियों का विशेष स्थान है। इसमें आध्यात्मिक रहस्यवाद भी है।

7. क्रांति के गीत (संग्रह 1977 ई.)

यह एक छोटी सी रचना है। 'देश दिल्ली और अहम्' की परम्परा में उसको रखा जा सकता है। इसके माध्यम से मिश्र जी ने तत्कालिक स्थिति (1975 ई.) का सजीव चित्रण किया है। सामयिक क्रांति कविता का मुख्य विषय है। इसके साथ स्थायी महत्व भी इनको प्राप्त है। प्रायः कवि राजनीति से दूर रहते हैं। पर सामयिक प्राणी होने के कारण इससे अछूते भी नहीं रह सकते हैं।

8. मृत्युञ्जय जयप्रकाश (संग्रह 1977 ई.)

यह एक लघु रचना है। कवि के क्रांतिकारी, राजनीतिक एवं राष्ट्रीय भाव हैं। जयप्रकाश ने समग्र क्रांति की घोषणा की और उनको सफलता भी मिली थी। उनसे देश को एक नयी दिशा मिली थी, लोगों ने दूसरी आजादी की घोषणा की थी। सब कुछ के वही प्राण थे। इसी से मिश्र जी ने उनको मृत्युञ्जय कहा है।

9. सेतु (संग्रह, 1980 ई.)

इस काव्य-संग्रह में विविधता विद्यमान है। प्रसिद्ध कविताएं हैं — सेतु, तोते के पंज, आदमी छोटा और बड़ा, इतिहास, नई फिल्म, भय, आत्मा, तब अब और आगे। बौद्धिकरस के उपरान्त यह अत्यंत प्रभावशाली संग्रह है। सेतुवाद युग की मांग है। सेतु दो कूलों को जोड़ता है। कवि स्वयं में एक सेतु होता है। कल, आज तथा फिर आने वाले को जोड़ता है। विरत को रत करता है। संग्रह की अंतिम कविताओं में आनन्दवाद है, जिसकी धारा औपनिषदिक काल से कामायनी तक चली आयी है। छायावादोत्तर काव्यों में इसका प्रमुख स्थान बनता है। कवि ने बहुत संत्रास झेला है। बौद्धिक वर्ग को लोकसंत्रास को बहुत झेलना पड़ा है कवि ने भी सब को स्वयं झेला है। कविताओं में इतिहासबोध है। उनमें अछूते विषयों को लिया है।

10. हिन्दुओ जागो (संग्रह 1987 ई.)

इसमें विश्व मानवतावाद एवं राष्ट्रवाद से ओत प्रोत कविताएं हैं। इसके अनेक अंश राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में समय-समय प्रकाशित तथा अनेक भारतीय भाषाओं में अनूदित भी हुए हैं। इसको लोगो ने अधुनातन भारत-भारती तथा राष्ट्र-काव्य कहा है। इसका प्रकाशन राष्ट्रीय हिन्दू जागरण मंच से हुआ है। यह छोटी रचना 15 पृष्ठ की है। पर उनका हिन्दूभाव विश्व मानवता से सम्बद्ध है। हिन्दू होना गर्व की बात है। कभी सभी मानव हिन्दू थे। आर्य, द्रविड़ अनेकानेक आदिवासी वर्ग इत्यादि हिन्दू हैं। हिन्दू धर्म मानवधर्म है। हिन्दू संस्कृति ही विश्व संस्कृति है। कुछ सामयिक सन्देश भी है। समसामयिक समस्याओं को इसमें प्रस्तुत किया गया है। हीनता का दमन करने वाला हिन्दू है।

यह बात दूसरी है कि आज हिन्दू विडम्बनाओं का शिकार है। बाह्य और अंतः संघर्षों का शिकार है। विज्ञान, कला, और सौन्दर्य, ज्ञान में हिन्दू अग्रणी रहे हैं। अनेक हिन्दू योद्धाओं को इसमें स्मरण किया गया है। मानवता हिन्दुत्व का पर्याय है। जागरण-गीत है। कविता छंदबद्ध एवं तुकान्त है।

11. तब, अब और आगे (महाकविता, 1977 ई.)

यह जीवनदर्शनपरक महाकविता है। इसमें कविता की मौलिक प्रतिभा उभरकर सामने आयी है। यह एक छोटी सी पुस्तिका मात्र 32 पेज की है, पर प्रभावशाली है। इसमें जीवनदर्शन के साथ-साथ प्रकृति प्रेम, पर्यावरण शुद्धि, पशु-पक्षी प्रेम, भाषा प्रवाह, शैली गांभीर्य में और शब्दशक्ति के सुन्दर उदाहरण हैं। छायावाद की अनेक लघु और महत्वपूर्ण कृतियों की कोटि में इसको रखा जा सकता है। अंग्रेजी की अनेक रचनाओं के यह समानान्तर है। स्वातंत्रोत्तर हिन्दी-कविता यह उत्तम उपलब्धि है। रचनाकार तो त्रिकालदर्शी होता है। आज के विश्वविद्यालयों में हिन्दी विषय के पाठ्यक्रम के लिए यह उत्तम काव्य है। इसको कवि बच्चन ने पंत की स्वर्णोदय (स्वर्णधूलि में) के समतुल्य और उपन्यासकार कैलाश 'कल्पित ने प्रसाद की आँसू' के समकक्ष (कई दृष्टियों से श्रेष्ठतर भी) माना है। डॉ. पवनकुमार ने वर्ड्सवर्थ कृत प्रिल्यूड एवं टिन्टर्न एबी से तुलना की है। अन्य अलोचकों ने भी इसकी प्रशंसा की है। यह एक सफल कृति है। प्रसिद्ध विद्वान डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति ने 'तब अब और आगे' कविता को बेंगलूर वि.वि. की एम.ए. कक्षा के पाठ्यक्रम लगाया। यह चौपदे छन्द में है। महाकविताओं की परम्परा में इसका स्थान बनता है। यह वास्तव में महाकविता है।

12. जय भारत जय भारतप्रहरी कृषक श्रमिक जय (संग्रह 1980 ई.)

इस संग्रह में अधुनातन राष्ट्रीय कविताएं हैं। राष्ट्र की खूब प्रशंसा की गयी है। इसकी भूमिका भी कविता में है। इसमें अपनी मातृभूमि की स्मरण करने तथा पश्चिमी हवा से बचने के लिए कहा गया है। इसमें कुल 24 तुकान्त (खड़ीबोली) रचनाएं हैं। इसके कुल 48 पेज हैं। रचनाक्रम व शीर्षक इस प्रकार हैं। 1. जय जय अनुलनीय भारत जय 2. वेद 3. उपनिषद 4. विश्वामित्र का राम दर्शन 5. शिव 6. मुझसे मेरा राम न छीनो 7. संकल्प 8. यह देश राम का है 9. राम चिंतन व्यक्ति तत्त्व और सार है 10. व्यास

मरुभूमि का वट वृक्ष

वन्दे परम् गुरुम् 11. पंतजलि 12. तुलसीदास के प्रति, 13. हे भारत प्रहरी नमस्कार 14. हे कृषक तुझे शत शत प्रणाम 15. नमन श्रमिक को, वह निर्माता 16. मेरा प्यारा उत्तर प्रदेश 17. मध्यप्रदेश 18. ओ हरियाण की वीरभूमि 19. नेता 20. सरदार पटेल 21. पं. गोविन्दवल्लभ पंत 22. रायबरेली 23. आचार्य द्विवेदी के प्रति 24. जय हिन्दी भारती नागरी।

13. नेताचरित्रम् (1994 ई. महाकाव्य)

यह हिन्दी का प्रथम व्यंग्य-महाकाव्य है। इसमें विलक्षण प्रयोग है। प्रगतिशीलता है। इसमें प्रथम पूज्य गणेश जी के स्थान पर यथार्थ रूप में नेता की वन्दना है। कविताक्रम इस प्रकार है — 1. नेतावन्दना 2. नेतावाणी 3. उद्भव विकास 4. सत्ता-बीजमंत्र 5. भाषण 6. प्रजापति राजपाल सम्मेलन 7. विदेशों में देश सेवा 8. सम्पूर्ण न्यायवाद 9. हिन्दूजागृति 10. एकता सम्मेलन 11. स्वर्णयुग। इस प्रकार ११ सर्गों का यह महाकाव्य है। आज के नेताओं की इसमें अच्छी खबर ली गयी है। हिन्दी में व्यंग्य काव्य और स्वतंत्र व्यंग्य की अच्छी परम्परा है। यह राजनीति काव्य है। 20वीं सदी की सबसे घातक समस्या साम्प्रदायिकता रही है, जिसको नेताओं से बराबर बल मिलता रहा है। सत्ता के लिए कुछ भी किया जा सकता है। इसी व्यंग्य में कवि की राष्ट्रभक्ति भी छिपी है। पर कवि दल विहीन चिन्तक के रूप में है। सभी व्यंग्य असरदार हैं। सबका अपना विशेष अर्थ है। रम्यता और मानवता का सर्वत्र ध्यान रखा गया है। कवि का प्रयोग अपने में सफल है। इसमें मौलिकता और विद्रोही स्वर है। डॉ. जीवन शुक्ल ने इसकी तुलना पोप कृत 'द रेप ऑफ लॉक' से की है।

14. सार्वभौम (संग्रह, 1994 ई.)

कवि का यह विशाल एवं प्रतिनिधि संग्रह है। इसमें मिश्र जी की छोटी, मझोली एवं बड़ी पचास मौलिक कविताएं हैं। इसका समर्पण राकेश प्रकाशन बाराबंकी के मौलिक एवं प्रसिद्ध कवि (अब स्व.) डॉ. त्रिभुवन नाथ शर्मा मधु को है। इसमें नयी पुरानी कविताएं हैं। कुछ तो अन्य संग्रहों की हैं। स्फुट संग्रहों में यह सबसे बड़ा (पेज 224) है। कविताओं को विविध खण्डों में सँजोया गया है — 1. युगायन 2. क्षणायन 3. विविधायन 4. रसायन 5. अस्मितायन। सार्वभौम का रस बौद्धिक दर्शन, बौद्धिक अद्वैतवाद, सिद्धान्त सांस्कृतिक प्रगतिवाद, अनुभूति रस विश्वानुभूति है। वैश्विक स्तर पर अभी

तक नाम मात्र के काव्य रचे गये हैं। परमात्मा, धर्म, मजहब, वाद, राष्ट्र भाषा आदि साधक हैं। साध्य है मानव का विश्वबोध। आज सीमाएं टूट रही हैं कोई कवि अंतिम नहीं हो सकता है। इसमें प्रचीनतम और नवीनतम रस एवं अंलकार, गीत एवं अगीत, प्रगति एवं प्रयोग इत्यादि में एक अखंड मानव अथवा अखण्ड जीवन के प्रतीक हैं। यह नितान्त मौलिक कविताओं का संग्रह है इसमें नये प्रतीक और बिम्ब है। संग्रह में मिश्र जी के लगभग 30 वर्षों के सृजन का सार है यह मिश्रजी का प्रतिनिधित्व करता है।

15. स्वर्गता (खण्डकाव्य, 1994 ई.)

यह धर्मपत्नी राजकिशोरी की स्मृति में है। उनकी अमर स्मृति में मिश्र जी की जीवनी भी आ गयी है। उनके मौलिक, पारिवारिक विचार व जीवन का चित्रण है। यह उनकी पारिवारिक दशा का यथार्थ दर्पण है। यह शोक-काव्य है। पत्नी की मृत्यु पर यह रचा गया है। पूरा काव्य इन शीर्षकों में विभाजित है - 1. राजकिशोरी 2. मटियारा 3. कानपुर 4. दिल्ली 5. विविध 6. क्षमा याचना 7. राजदर्शन। कुल 100 पेज में कथा खण्ड है। इससे सामाजिक दशा का भी पता चल जाता है। जीवनमूल्य सामने आ सके हैं। कवि की ईमानदारी सर्वत्र सुरक्षित है। स्पष्ट है - पत्नी दासी नहीं सहचारिणी है, सम्बल और प्रेरणा है। पारिवारिक छल, कपट और शोषण के इसमें यथार्थ चित्र हैं। इन सबके उपरान्त पत्नी ने कहीं असंतोष नहीं व्यक्त किया है। हिन्दी में इतने सहज संवेदनशील और यथार्थ शोककाव्य नाम मात्र के हैं।

16. दृष्टि (महाकाव्य, 1995 ई.)

यह हिन्दी का प्रथम विशाल मानवतावादी-नवरहस्यवादी महाकाव्य है। यह एक असाधारण और अपूर्व प्रयोग है। यह दांते कृत डिवाइन कॉमेडी से एकदम भिन्न है, जिसमें अधिक संख्या में नरकगामी व्यक्ति ही हैं चाहे वे होमर जैसे विश्वकवि हों, सुकरात जैसे ऋषि हों, प्लेटो जैसे दार्शनिक हों, अली जैसे खरीफा हों, जिसका आधार अन्धविश्वास है। दांते का स्वर्ग अंधविश्वास से दबा और शुद्धिलोक से पीछे है। किन्तु दृष्टि का स्वर्ग कर्मों का प्रतीक है। मिश्र जी का स्वर्ग विराट् मानवता और उज्ज्वल कर्मठता का सार्वभौमिक स्वर्ग है जिसका आधार वैज्ञानिक अद्वैतवाद है। दृष्टि युग और चिर को समेटने वाला महान दर्शनकाव्य 'डिवाइन कॉमेडी' और कामायनी के समकक्ष है। अध्यात्म और कर्म मार्ग का समन्वय है। सौन्दर्य

से सुख, प्रकृति से उल्लास और अध्यात्म से आनन्द का समन्वित अथवा पूर्ण जीवन-दर्शन ही असका प्रतिपाद्य है। इसका परिवेश प्राचीन-आधुनिक संस्कृतियाँ है। इसका नायक विश्वमानव है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई इत्यादि सब को एक दृष्टि से देखा गया है।

सर्वधर्मसमभाव की इसमें बहुत अच्छी संयोजना है। कथ्य, शिल्प एवं चिन्तन सब कुछ मौलिक है। इसमें अमूर्त भावों का सम्मूर्तन बहुत आकर्षक है। रसमयता इसकी प्राणशक्ति है। ज्ञानदायिनी सूक्तियों के इसमें सुन्दर प्रयोग हैं। अपनी अन्तः की हत्या राष्ट्र की हत्या है, अपने को समझने के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। अपनों को समझकर ही सबको समझाया जा सकता है। कवि की कुछ सूक्तियों को देखा जा सकता है।

“मनन का हनन राष्ट्र का हनन होता है” पेज 176 “स्वास्थ्य बिना सत्य का अनुशीलन सम्भव नहीं” पेज 193 “स्वयं में खोने का अर्थ सब पाना है” पेज 194।

यह वैश्विक मानवतावाद की भूमि पर रचा गया महाकाव्य है। इसमें जीवन के शाश्वत स्वर को पहचानने का प्रयास किया गया है। कवि ने अपने चिन्तन को महाकाव्य का रूप दिया है। इसमें भारतीय-अभारतीय चिन्तन और संस्कृतियों का समागम है। सभी ज्ञान-विज्ञान का उपयोग मानव समाज को समेटने का प्रयास है। इसके अध्ययन से मन, बुद्धि, मति, आशा, विश्वास, भाव और कल्पना का समन्वय है। सब का हेतु लोकमंगल है।

17. वेदायन (महाकाव्य, 1997 ई.)

यह हिन्दी का एकमात्र वेदपरक महाकाव्य है। इसमें वेद को ही सब धर्म का मूल सिद्ध किया गया है। 12 सर्गों का यह महाकाव्य है। क्रम व नाम इस प्रकार हैं — 1. वेदलोक अटन (प्रथम) 2. वेदलोक-अटन (द्वितीय) 3. वेदलोक अटन (तृतीय) 4. विश्वामित्र 5. विश्वपला 6. अपाला 7. बुध और इला 8. पुरुरवा 9. कश्यप 10. अगस्त्य 11. यमयमी 12. ऋषभदेव। कुल 144 पेजों का यह महाकाव्य है। इसमें थोड़े में बहुत कुछ कहा गया है। मूल्यों के गिरावट पर कवि को खेद है। उत्थान के लिए अतीत को दिखाया गया है। यथार्थ से कथानक को जोड़ा गया है। यह सार्वभौमिक साहित्य है। इसमें एक शाश्वत मानव तैयार किया गया है। चिरंतन प्रतीक ओर विम्ब हैं। वेदायन में मिश्र जी सत्यवादी या वस्तुवादी हैं। आर्य का उन्होंने आशय जड़तामुक्त मानव जाति से लगाया है। ऋ धातु से आर्य पद बना है। आर्य गतिशील, उदार और मानवतावादी थे। इसका प्रारम्भ मंगलाचरण से है। इसमें प्रगतिशील चिन्तन का उपयोग किया गया है।

वेदों की यात्रा अनन्त है, आदि अन्त उसके विराम हैं। भूत, भविष्य और वर्तमान उसकी 3 साँसे हैं। स्वर्ग अपवर्ग उसके लोक के दो नगर हैं। सांग रूपक से सृष्टि तथा सूक्ष्म तत्त्वों को वेदों का अंग बताया गया है। सब कुछ वेदों में है। शत-शत लोक, तीन काल, तीन गुण सबको इनमें देखा जा सकता है। सब कुछ है, देखने की आवश्यकता है। मानवता का तरुण रूप इनमें है। दिव्य दृष्टि की कल्पना है। परम तत्व को आश्रय से प्राणी अमर हो जाता है। अतीत का इसमें सुन्दर चित्रण है। करुणा और व्यंजना के सुन्दर प्रयोग हैं। घने अंधकार में हमने आलोक के देखा था। परमतत्व का ज्ञान होने पर सारा अंधकार या अज्ञान नष्ट हो जाता है।

सुन्दर बिम्ब विधान है। भाव और प्रकृति का इसमें सामंजस्य है। अच्छे गीत की कविता शत युगों की थाती जैसे — वैदिक छन्द। जीवन की पूर्णता आनन्द की संगति में हैं। मानव जब कुण्ठा से ग्रस्त हो जाता है, तो दुःख पाता है। भोग, योग एक दूसरे से मिले हैं। अन्योन्याश्रय में दोनों मुसकाते हैं अथवा जिसके जीवन में दोनों का समान मेला होता है उसका जीवन सफल होता है। वैदिक काल में जीवन पूर्णता का प्रेमी था, सर्वत्र पूर्णता थी। सब में आस्तिकता थी, आस्तिकता से संतोष और सुख की प्राप्ति होती है। प्रेमतत्व पर इसमें बहुत अधिक लिखा गया है। प्रेम विलास नहीं है। इतिहास को व्यक्ति और समाज का सच्चा साथी दिखाया गया है। उसका व्यापक रूप दिखाया गया है। गोधन वैदिक काल की महान सम्पदा है। प्रकृति बड़ी पवित्र थी। आर्य सोमपायी थे। वैदिक देवताओं की चर्चा है। श्रुति का गान सिन्धु के तट पर होता था। अन्य नदियों का भी उल्लेख है। नदियाँ जलमयी और रसमयी थीं। ऋग्वेद प्रकृति का प्रथम और श्रेष्ठ काव्य है। वह मानवता का यौवन-गान है। इसमें वैदिक समाज, संस्कृति, सभ्यता, चिन्तन, इतिहास और भूगोल का सुन्दर वर्णन है। सम्पन्नता और विपन्नता का वर्णन है। इसके साथ यह भी दिखाया गया है कि जहाँ उत्तम लोग रहते हैं वह राष्ट्र कभी नहीं मरता है। मकाकाव्य में धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष के अनेक उदाहरण हैं। आर्यों का शौर्य जड़ता का दाहक था।

यह 12 सर्गों का महाकाव्य है। महाकाव्य की सभी शर्तें पूरी हैं। उदात्त इसका केन्द्र ही है। इसमें महान चरित्रों से समाज का चित्रण है।

18. मुहम्मद (खण्डकाव्य, 2001 ई.)

यह 7 सर्गों का खण्डकाव्य है। सर्ग विवरण इस प्रकार है —

1. दुभाग्यजयी
2. पैगम्बर
3. मदीना
4. परिवार
5. कुरआन
6. प्रकीर्णक

7 परावर्त। यह ऐतिहासिक एवं चरित्रप्रधान काव्य है। इसमें इस्लाम की सहिष्णुता की भावना व्यक्त है। विश्ववाद और मानवतावाद है। अनेक सहिष्णुओं की चर्चा है। मुहम्मद साहब के जीवन के सभी पक्षों को इसमें दर्शाया गया है। सभी धर्मों में अनेक समानताएं हैं। सब को उदार दृष्टि से देखने की आवश्यकता है। कवि सबको स्पष्ट करने में सफल है। इसमें यथार्थ और मंगल को सबसे अधिक महत्व दिया गया है। कुछ निर्णय पाठकों के अधीन हैं। यह पैगम्बर मुहम्मद साहब पर रचित हिन्दी का प्रथम काव्य है। कवि की महानता का यह प्रतीक है। मुहम्मद साहब के योगदान को समक्ष किया गया है। अरबी संस्कृति, सभ्यता, इस्लाम और समाज का यह दर्पण बन गया है। कवि ने क्रांतिकारी अतीत को सामने कर दिया है।

19. कल्पांत (महाकाव्य, 2003)

यह महाभारत पर आधारित महाकाव्य है। द्वापर के अन्त तथा कलियुग के आरम्भ की संक्रांतिकालीन महाभारत गाथा का साधार, मौलिक एवं ऐतिहासिक महाकाव्य है। महाभारत में अनेक गीताएं हैं। जिनमें श्रीमद्भगवद्गीता विशेष प्रसिद्ध है। इस महाकाव्य में कृष्ण, अर्जुन, धृतराष्ट्र, गांधारी, कुन्ती, द्रौपदी, अश्वत्थामा और अभिमन्यु जैसे महाकाव्य नायक और नायिकाएं इतनी संख्या में हैं कि अन्यन दुर्लभ हैं। कवि ने सब के चरित्र को समेटने का प्रयास किया है। कल्पांत का आत्मभाग संक्षेप में कलात्मक ढंग से यथार्थवादी शैली में प्रस्तुत है। अपने ढंग का यह अकेला काव्य है। इसमें शांतनु से जनमेजय तक का वृत्त कसावट और प्रवाह के साथ प्रस्तुत है जिसमें यादवों का गृहयुद्ध और विनाश भी समाविष्ट है। इसमें कुछ भी निराधार नहीं है। इसको कवि ने 1973-2002 ई. के मध्य रचा तथा पुनः पुनः पढ़ता और संशोधित करता रहा है। रचना के पूर्व एवं रचना काल के मध्य कवि महाभारत पर अनवरत विचार करता रहा। फलतः कल्पान्त विश्व के वृहत्तम और श्रेष्ठतम महाकाव्य (महाभारत) के आद्यन्त अध्ययन एवं अनुशीलन से स्वाभावतः निष्पन्न है। इसी बीच कवि का 'विश्व के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य' शीर्षक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ जिसमें उन्होंने रामायण महाभारत, इलियड, ओडिसी, ऐनीड, शाहनामा एवं रामचरितमानस पर मौलिक शोध के साथ भारतीय दृष्टि से विवेचन, विश्लेषण और संश्लेषण किया है।

इसके कुल 15 खण्ड हैं 1. प्रवेश 2. शांतनु और भीष्म 3. कौरव और पाण्डव 4. हस्तिनापुर 5. घटनाचक्र 6. तप्तस्वर्णाभा 7. स्वयंवर 8. इन्द्रप्रस्थ 9. राजसूय यज्ञ 10. वनवास 11. विराटनगर 12. युद्ध और शांति 13. युद्ध (एक) 14. युद्ध (दो) 15. प्रतिक्रिया। महाभारत की पूर्व क्रिया एवं प्रतिक्रिया को इसमें दर्शाया गया है। युद्ध कलह, अहं और अतिरिक्त महत्वाकांक्षा के दुष्परिणामों को कहा गया है। घटना, चरित्र और इतिहास का इसमें समन्वय है अतीत को वर्तमान से भी जोड़ा गया है। महाभारत की कथा को शाश्वत प्रतीकात्मक लाक्षणिक और अतीत के यथार्थ जैसा भी दिखाया गया है।

20. रूपायन (संग्रह 1999)

सन् 1999 ई. में प्रकाशित 65 कविताओं का संग्रह 'रूपायन' अपने ढंग का अकेला रूपकाव्य है जिसके कवि ने निश्छलतापूर्वक उन सुंदरियों पर सृजन किया है जिनसे प्रभावित हुआ। डॉ. सुनील जोगी के अनुसार 'रूपायन' की कविताएं 'रूप' रंग सौन्दर्य एवं रहस्य से रससिक्त होकर हृदय में भाव की ऐसी सरिता बहाती हैं जिससे कोई भी समझने वाला व्यक्ति पढ़कर आत्मिक आनन्द प्राप्त कर सकता है। रूप एवं रहस्य का समन्वय रूपायन की प्रमुख विशेषता है।

21. पुरुषोत्तम (महाकाव्य 2003 ई.)

यह विश्वपुरुष राम पर आधारित 38 सर्गों का महाकाव्य है। उसके नायक एक ही हैं। यह अतुकान्त महाकाव्य है। इसमें विश्वपुरुष-भारतात्मा राम के जीवन को अधुनातन दृष्टि से विवृत किया गया है। वैदिक काल एवं आधुनिककाल, निर्गुण एवं सगुण, निराकार एवं साकार, ज्ञान एवं भक्ति, योग एवं कर्म, आदर्श एवं यथार्थ पुरुषार्थ से संयुक्त कर दिये गये हैं। इसमें सभी रसों, अलंकार, बिम्ब, मनोविज्ञान, दर्शन आदि से भी उच्च स्तरीय समाहार किया गया है। पूर्वी-पश्चिमी सभी दृष्टियों से यह अनूठा महाकाव्य है। रामायण, इलियड और रामचरितमानस आदि की श्रेणी में यह प्रतिष्ठित होगा। यह विश्व स्तर का है। इसमें प्राक्षेप्त अंशों को छोड़ दिया गया है। राम के वैदिक और औपनिषदिक रूपों को यहाँ प्रस्तुत किया गया है। मिश्र जी ने राम का स्वयं दर्शन किया है, लकीर के फकीर नहीं है। प्रभाव से अधिक मौलिकता है। सीता-परित्याग और शम्बूक-वध को कवि ने स्वीकार

नहीं किया है, क्योंकि अवैदिक है। वृत्त को ही वरीयता दी गयी है। वृत्त ही व्रत हो गया है। यहाँ राम का आदर्श है। रस, अलंकार, ध्वनि, रीति, वक्रोन्ति (विशेषतः प्रकरण-वक्रता), औचित्य, नव-प्रयोग सब को मिश्र जी ने यथार्थगत प्रगति में समाहित किया है। रामकालीन जीवन-यापन, धर्म, दर्शन, अभिव्यक्ति इत्यादि पर इसमें ध्यान दिया गया है। कवि अपने में सफल है। परम्परा और आधुनिकता का इसमें सुन्दर समावेश है।

कवि ने वैदिक और औपनिषदिक राम को महत्व दिया है। उन्होंने राम को उनके युग और परिवेश से निकाल कर अपने युग और परिवेश में न बांधते हुए भी चिर एवं युग के नियोजन का ध्यान रखकर रचा है। अन्य रचनाओं की तरह इसमें भी मिश्र जी के बौद्धिक अद्वैतवाद, प्रकृति के सजीव चित्र, शोषण के प्रति आक्रोश और नये प्रयोग हैं। छायावादोत्तर प्रमुख हिन्दी कवियों में कवि का महत्वपूर्ण स्थान बनता है। काव्य स्वर में विशिष्टता, सूक्ष्मता, मौलिकता एवं अभिव्यक्ति की प्रखरता है।

इस महाकाव्य की रचना संशोधन, परिवर्धन, परिवर्तन, काँट-छाँट, जोड़ा-जोड़ी, का कार्यकाल लगभग 1964-2002 ई. तक चलता रहा। इसकी मूल रचना 1964 ई. में आरंभ हुई। सीता-भूमि प्रवेश की कथा 1965 ई. में लिखी गयी थी। अनंतर ज्ञानवृद्धि पर इस प्रक्षिप्त कथा को चाहते हुए भी मिश्र जी नहीं छोड़ सके क्योंकि स्वर्गता पत्नी यही चाहती थीं। वाल्मीकि रामायण के प्रक्षेपों से बचने का इसमें सफल प्रयास है। इसमें राम का सार्वभौमिक रूप है। आज राम विश्व में पूजित हैं। वे मात्र अयोध्या के नहीं, बल्कि भू-मण्डल के हैं।

महाकाव्यों का सर्गों का विवरण इस प्रकार है —

- | | |
|------------------------------|-------------------------|
| 1. विश्वामित्र का आगमन | 2. ताटका प्रसंग, |
| 3. विश्वामित्र आश्रम | 4. प्रेमालोक, |
| 5. जनकपुर आगमन | 6. विवाह |
| 7. अभिषेक प्रस्ताव | 8. विपर्यय |
| 9. रंग में भंग | 10. वन गमन |
| 11. रथ और पथ | 12. तीन पथिक |
| 13. दशरथ का महाप्रमाण | 14. भरत का अयोध्या-आगमन |
| 15. भरत भारती | 16. चित्रकूट |
| 17. भरत का चित्रकूट प्रस्थान | 18. राम-भरत मिलन |
| 19. सभा | 20. दण्डकवन |

- | | |
|------------------------------|----------------------|
| 21. पंचवटी | 22. खरदूषण वध |
| 23. सीता-हरण | 24. दो पथिक |
| 25. सुग्रीव मैत्री | 26. वालि वध |
| 27. हनुमान् का लंका प्रस्थान | 28. महावीर हनुमान् |
| 29. विजयाभियान | 30. विभीषण आगमन |
| 31. कुम्भकर्ण वध | 32. मेघनाद वध |
| 33. रावण वध | 34. लंका से प्रस्थान |
| 35. रामराज्य | 36. सीता-निर्वासन |
| 37. यज्ञ | 38. सीता का भूमिलय। |

महाकवि की लम्बी और सघन काव्य यात्रा के दर्शन का अवसर मिला। इसमें महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य, मुक्तकाव्य, गीतिकाव्य से नई कविता तक की यात्रा आश्चर्यजनक लगती है मिश्र जी में नैसर्गिक काव्य-प्रतिभा है। उनकी काव्य यात्रा की बड़ी लम्बी कहानी है। 1950-1963 ई० के बीच कानपुर के प्रताप, विश्वमित्र और 'श्रमजीवी' बम्बई के धर्मयुग, आनंद शंकर चिड़ावा (राजस्थान) के राहुल में उनके गद्य पद्य का प्रचुर प्रकाश हुआ। इनमें रचयिता के नाम पर कहीं-कहीं आनंद शंकर मिश्र तो कहीं रामप्रसाद मिश्र लिखा है। वे छिपकर लिखते रहना चाहते थे। कानपुर में उनको लोग 'कविराज' भी कहते थे। उन्होंने समीक्षात्मक कविताएं भी लिखी हैं। उनके लेखन का अपना महत्व है। कवि की अपार मेधा लेकर उन्होंने जन्म लिया है। वे नैसर्गिक कवि हैं। देश, विदेश, अतीत, वर्तमान की सामग्री और शैली से मण्डित उनका अपना अलग काव्य-जगत है, जिससे प्रभावित होकर मैंने मात्र काव्य-पक्ष पर लिखने का संकल्प लिया। उनके भाव और कलापक्ष दोनों सराहनीय हैं।

अध्याय 3

विश्ववाद और मानवतावाद

उत्तम साहित्य आलेख ब्रह्माण्ड की अक्षय सम्पदा होता है। वह विश्व के मन-मन और कण-कण को छूता है। उसमें विश्व की हलचल होती है। आज साहित्य इस दृष्टि से बहुत महान है। विज्ञान ने अनेक सीमाओं को लाँघने की क्षमता मानव को दी है। वायुयान से मानव विश्व के एक किनारे से दूसरे किनारे तक थोड़े ही समय में जा सकता है। दूरदर्शन पर वह विश्व को अपने घर में बैठे-बैठे देख सकता है। अनेक जटिल समस्याओं का वह समाधान निकाल सकता है। अगम्य और अदृश्य को भी पर्दे पर देख सकता है। आज मूल्यांकन का दायरा भी बदल गया है। विश्व स्तर पर सब कुछ देखा परखा और मूल्यांकित किया जाता है। हिमालय, हिन्दमहासागर और सहारा रेगिस्तान को बड़े आराम से लाँघा जा सकता है। अतल की महाजलरशि में प्रविष्ट हो वहाँ के दृश्यों का साक्षात्कार किया जा रहा है। सब कुछ हस्तामलकवत् होता जा रहा है। ध्वनि, प्रकाश, वायु, विद्युत, और विविध शक्तियों का उपयोग हो रहा है। विश्व एक परिवार के रूप में बदल गया है। आगे के आविष्कार बहुत कुछ और दे सकते हैं।

उपर्युक्त सुविधाओं और सफलताओं के साथ-साथ अनेक खतरे भी अद्भूत हो गये हैं। परमाणु बमों से विश्व को नष्ट किया जा सकता है। प्रकृति नष्ट होती जा रही है, मानव मलबे के रूप में बदलता जा रहा है। आदमी खतरे में जीने के लिए विवश हो गया है। इस समस्याओं के निवारण के लिए मानवतावाद की अवधारणा बहुत आवश्यक है। इससे सब की सुरक्षा सम्भव है। भौतिक विकास से सुख-शांति नहीं आ सकती है। साहित्यकार, वैज्ञानिक, किसान, उद्योगपति, नेता और शासक को इसके संबंध में विशेष रूप से सतर्क रहना चाहिए। इस दृष्टि से डॉ. रामप्रसाद मिश्र का साहित्य बहुत सम्पन्न है। उन्होंने विश्ववाद और मानवतावाद पर विशेष प्रकाश डाला है। उनमें लोकमंगल और सर्वोदय की भावना है। आधुनिक काल के

नवजागरण में इन दोनों बिन्दुओं का बहुत महत्व है। मानवतावाद पर पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों ने पर्याप्त लिखा है। इस सन्दर्भ में बंगला के साहित्य में रवीन्द्रनाथ टैगोर और हिन्दी में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य को देखा जा सकता है। हमारे यहाँ मध्यकाल के सन्तों के साहित्य में इसके व्यापक रूप को देखा जा सकता है। टालस्टाय ने भी इस पर लिखा है। मिश्र जी ने इन्हीं भावनाओं से जुड़कर तुलसी, प्रसाद, निराला, प्रेमचन्द जैसे कवियों और कथाकारों की तुलना विश्व के रचनाकारों से की है। एक विश्व की महान् भावना के सन्दर्भ उनकी कविता में मिलते हैं।

देखता हूँ इन्द्र को औ वेन का सौन्दर्य
देखता हूँ जियस जुपिटर भीम वारिदनाद
देखता हूँ व्योम अंकित रक्त अक्षर दिव्य
आ रही है नवी के अक्षुण्ण क्षण की याद।।¹

जगतिक सांस्कृतिक एकता का भाव दिखाया गया है। 'मैं अकेला हूँ' कविता में विदेशी सन्दर्भ सर्वाधिक हैं इसमें ईव से मिलने के पहले आदम का अकेलापन, कालरिज के अकेलेपन की कल्पना, अलेक्जेंडर सैलकर्क इत्यादि का प्रयोग सराहनीय है। 'अंधे का आत्म निवेदन' शीर्षक की कविता में प्राज्ञाचक्षु का अन्तर्द्वन्द्व मिल्टन-सा विभ्रम, सूर सा कृष्ण भक्त, धृतराष्ट्र की करुणा और व्याकुलता, होमर, सूर, मिल्टन, रूदागी, बर्नलेफ़, जुरअत, भीम भोई, तहाहुसैन, हैलेन कीलर आदि के नाम से शांति प्राप्त करता है जो नेत्रविहीन होकर भी ख्याति प्राप्त कर सके। 'इल और इला' को आधुनिक रूप दिया है। सीमाओं को तोड़ा गया है। बुघ और इला के साहचर्य और नारी सुलभ अदम्य संयोगोरांत की उत्पन्न स्थिति का यथातथ्य वर्णन इस प्रकार है —

तब इला छिन्न हुई लता सी
गज द्वारा मथित
पंकिल ग्रीष्म की सरिता-सी
दीख पड़ी,

इस दशा को प्राणिमात्र में देखा जा सकता है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश की रचनाओं में भी इस प्रकार के वर्णन मिलते हैं। (दे. बेलि कृष्ण

रुक्मिणी री)। कवि ने संसार के महान् चरित्रों के स्वरूपों, गुणों और दोषों को दिखाया गया है। सार्वभौम रूप से प्राप्त समानताओं को मिश्र जी ने अधिक महत्व दिया है। सार्वभौमिक चरित्रों को उन्होंने बड़ी गम्भीरता से उकेरा है। अन्य रचनाकारों की पक्षपातपूर्ण रचनाओं पर उन्होंने अपना विरोधीमत भी दिया है। रचनाकार को निष्पक्ष और निर्वाधित होना चाहिए। कट्टरता व्यक्तित्व और कृतित्व को सीमित करती है। इस सन्दर्भ में उनके गद्य साहित्य को भी देखा जा सकता है। उन्होंने अपने ग्रंथ 'प्रसाद, निराला और पंत' में लिखा।

"प्रसाद प्रेमचन्द के सदृश मोहम्मदीयत-पक्षपाती नहीं थे, राहुल के सदृश हिन्दूधर्म-विरोधी नहीं थे।"¹

"जवाहरलाल नेहरू की बुद्ध-भक्ति, अशोक-भक्ति, कनिष्क भक्ति, हर्ष-भक्ति तो उन्हें शांति-रोग का आखेट ही बना गयी।"²

मिश्र जी को निराला का व्यापक सांस्कृतिक और दार्शनिक रूप सबसे अधिक पसंद आया है -

"प्रगति की आरम्भिक चकपकाहट में राहुल, यशपाल आदि साहित्यकार धर्म पर जो प्रहार कर गये हैं वे कालातीत और व्यर्थ-परिणामी सिद्ध हो चुके हैं। निराला प्रगति के लोक के गुलीवर हैं और राहुल, यशपाल इत्यादि लिलीपुटियंस। उसका दलित-संवेदन मार्मिक है, कोरा सैद्धान्तिक नहीं। अतः वह अधिक प्रभावी है। उसमें श्रेष्ठता है।"³

मिश्र जी ने तमाम परिभाषाओं को विस्मृतकर अपनी कविताओं की रचना की है। बाजार भाव को देखकर उन्होंने रचना नहीं की है। यश का लोभ भी उनमें कहीं नहीं रहा है, न पुरस्कार पाने की चाह ही रही है।

उन्होंने अपने विश्ववाद पर सर्वत्र बल दिया है इसके साथ उन्होंने मानवतावाद को सदा साथ रखा है। उन्होंने कल्पना जन्य नहीं, बल्कि, अनुभूत सत्य कहा है—

"प्रकाशक हैं आप
किन्तु अंधेरा फैलाते
वाणी के वितान में
अपनी अंधेर से।

1. पृ. 33,

2. पृ. 35

3. पृ. 67

करते हैं शिक्षा या
साहित्य का व्यापार.....
आपके कई खाते
लेखक को चर जाते
सरकारी अधिकारी
अपना श्वान-भाग पाते।
पाश्चात्य चतुरता से
लाम उठाना सीखा
ईमानदारी नहीं।¹

मिश्र जी ने विश्ववाद का आधार मानवतावाद को ही माना है। पूर्ण मानवता ही ईश्वरता है; मानव से पृथक ईश्वर की क्लिष्ट कल्पना निराधार हैं। इस सृष्टि में मानव से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है -

पृथक ईश्वर की क्लिष्ट कल्पना निराधार।

कुछ नहीं मानव से श्रेष्ठतर सृष्टि में।²

राम को उन्होंने पूर्ण-मानव कहा है। पूर्ण-मानव ही धर्म का रूप और तीर्थराज है आर्यों का साकार स्वप्न है। कवि ने अपनी कल्पना से भी आगे की वस्तु राम जी को कहा है। 'दृष्टि' में ऐतिहासिक विश्व के राजनैतिक पतन पर प्रकाश डाला गया है। डॉ. मिश्र की वृद्धा और शेक्सपीयर के रिचर्ड द्वितीय की वेदनाएं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से 'एक वर्ग की है'। किन्तु वृद्धा दर्पण नहीं तोड़ती है जब कि राजा दर्पण तोड़ देता है। एक व्यक्ति विवशतापूर्वक संधि करता है, किन्तु सहजतापूर्वक राजा में पतन भी हिंसक होता है।

उनकी अनेक कविताएं विश्ववादी हैं। वे संसार को लेकर चलते हैं वे अलोचना में भी विश्ववाद को स्वीकार करते हैं विश्व की मान्यताओं को लेकर वे चलते हैं। विश्ववाद से अभिप्राय है कविता को वैश्विक बनाना। निस्संदेह भावनाएं व्यापक या वैश्विक होती है। भावालोक में मानव एक हो जाता है। मिश्र जी ने भावात्मक एकता के साथ अन्य एकता को भी सब में देखा है।

उनकी कविता में मिश्र यूनान, येरुसलम, मक्का, मदीना, आदि के बड़े सार्थक उल्लेख हैं। वे भावों को देश-विदेश की सीमाओं में बांधकर

1. देश, दिल्ली और अहम (प्रकाशक कविता), पृ. 80

2. पुरुषोत्तम (विश्वामित्र आगमन)

नहीं, बल्कि विश्व के आलोक में देखते हैं। "मैं स्फिन्क्स हूँ" कविता एक और मिश्र की प्राचीन सभ्यता की याद दिलाती है, तो दूसरी ओर मानव में व्याप्त पाशविक प्रवृत्तियों की। यूनान पर लिखी गयी तुकांत कविता भी विश्ववादी है।² समग्र पाश्चात्य जगत् को यूनान की देन इस स्तर की है कि यूनान के बिना पश्चिम की कल्पना भी व्यर्थ है। यूनान का वर्तमान बहुत गौरवशाली है, किन्तु भूत इतना गौरवशाली रहा है कि वर्तमान उससे हटना नहीं चाहेगा। प्रचीनता-प्रेमियों को जियस आदि की यादें आर्येंगी। किन्तु यह काल का निष्ठुर चक्र है। अतः आज यूनान पर वाद-विवाद करना व्यर्थ है।

काल कुछ-का-कुछ कर सकता है।

मानवप्रेम सर्वोपरि है। 'नपुसंक के प्रति' कविता दर्शनीय है। कवि दुःख व्यक्त करता है। उसके भाव जगत हीनता और उपेक्षा का मार्मिक वर्णन है। मिश्र जी के वैज्ञानिक विश्लेषण बड़े काम के हैं -

"हाय तू समाधि है कराहते अरमानों की"

दृष्टि नहीं मिला सकता

अपनी प्रिया से तू!

और.....उससे भी अधिक स्वयं अपने से आह!³

आदमी भले इधर-उधर कुछ बोल जाय पर सब कुछ छल है, अपने प्रति सबसे अधिक। तर्क, भाषण आदि सब कुछ अपने को छलना है -

मानव सबसे अधिक

अपने को छलता है,

छल-छल कर जलता है,

पूर्व और पश्चिम में विश्व को बांटकर मन के अहम की पुष्टि हुई है। प्रकृति ने विश्व को बहुत बांटा है; मानवता ने जोड़ा है -

अमानिशा में दीपावली समारोह

करने वाला महान् मानव तो सदैव ही

"तमसो मा ज्योतिर्गमय" का मंत्र दृष्टा रहा

1. मैं स्फिन्क्स हूँ। (बौद्धिकरस)

2. सेतु

3. बौद्धिक रस, पृ. 13

पश्चिम है पूर्व का बुद्धिमान धर्मपुत्र जिसके भोले भाले पिता को छला है। पूर्व धर्म और पश्चिम विज्ञान है। दोनों को मनुष्यता जोड़ सकती है। इस जोड़ के उपरान्त ही विश्व का मंगल होगा —

इसलिए दूर नहीं वह पावन, शुभ्र दिवस
जब पूर्व-पश्चिम कहानी बन जाएंगे।
झांक रहा क्षितिज की कोर पर मानवत्व,
अब हम एक विश्व-मानव कहलाएंगे।

कवि का प्रवृत्त मानवतावादी दृष्टिकोण प्रचार-प्रसार व प्रदर्शन से दूर हटकर मानवता का स्वागत करता है। कविता में मनुष्यता की रक्षा सबसे अधिक होनी चाहिए। शास्त्र और काव्य का केन्द्र मानव ही होता है —

आकाशवाणी, गोष्ठी,
कवि सम्मेलन, पंच आदि,
शासन, सम्पत्ति, वाद के अनुचर हैं;
मैं तो स्वागत करूंगा भावी
मानवता का सहर्ष,

कवि की मानवता के प्रति अगाध श्रद्धा है। मनुष्यता सृष्टि की बहुत बड़ी धरोहर है, उसको पाना सर्वोच्च उपलब्धि है। आधुनिक कविता और सन्त साहित्य में इसकी बड़ी चर्चा है। कवि हर स्तर पर इसकी रक्षा करना चाहता है —

आदर-अनादर की चिंता नहीं मुझको,
पुरस्कार प्रतिभा का अपमान,
जिससे गंभीर अरुचि;
कविता अभिव्यक्ति की प्रवृत्ति के साथ-साथ
मानवता का मिशन है मेरे लिए, अर्पित मैं!

कवि ने ऊपर आज के साहित्यिक वातावरण और कविता की परिभाषा दे दी है। वह मानवता का मिशन चलाता है। उसका दर्शन मानवतावादी है। कवि ने अपने को भी मानवतावादी चरित्र में चित्रित किया है। इससे उसके मूल्यांकन का रास्ता भी साफ हो जाता है। ऐसे चरित्रों में उन्होंने लाल बहादुर शास्त्री का उदाहरण दिया है। शास्त्री जी

साधारणजन के प्रतीक थे। सेवाव्रती, मानवतावादी और राष्ट्रवादी थे। तुलनात्मक दृष्टि से शास्त्री जी को बहुत महान प्रमाणित किया गया है। महान राजनेताओं में श्रेष्ठ लिखा गया है। शास्त्री जी चरित्रवान, ईमानदार, आदर्श और राष्ट्रवादी तथा विकासवादी थे। वे आशावाद के प्रेरक थे -

महापुरुष मानवता

की छाती के पीपल.

लालबहादुर तुम

बढ़ते चलो, बढ़ते चलो,

पर महान बनने के फेर में मत पड़ना,

अपने लिए, मेरे लिए,

सारे भारत के लिए।¹

सीमा है सबसे प्रथम मानवता पहचान

सदा समझते हृदय हैं उसको जो मतिमान।²

मानवतावाद में कोई भेद नहीं रह जाता है। भविष्य युद्धों की विभीषिकाओं से इससे बचा जा सकता है।

इससे मानव का हृदय पवित्र हो जाता है। कवि ने मानव को उसके पूर्वजों की शपथ दी है। ज्ञान और कर्मयोग की शपथ दी है। ऋषियों, संतों, कवियों, राष्ट्र, तीर्थों, देवी-देवताओं, कला और संस्कृति, अयोध्या, काशी, मथुरा, वृन्दावन, बदरीविशाल, हिमालय, विन्ध्याचल, सिन्धु, गंगा, यमुना, कृष्णा, कावेरी और नर्मदा की शपथ दी है। यह सत्य है, कि ईश्वर सर्वव्यापक है, परन्तु मूर्ति में भी तो हिन्दुओं की आस्था है। यह मूर्ति और मन्दिर तोड़ने वालों को समझना चाहिए।

स्वर्गराज्य की कल्पना हमारी सबसे पुरानी है। उपनिषदों में अहंब्रह्मास्म कहा गया है। प्लटो एवं वर्ड्सवर्थ का 'विश्वात्मा' भाव हमारे यहाँ का है। विश्व हमारे व्यापक चिन्तन का ऋणी है। सबसे मूल रूप हमारे यहाँ है। विश्व के अनेक देशों की खोज हमारे पूर्वजों ने रामायण और महाभारत काव्य में कर ली थी। बुद्ध ने विश्व को अहिंसा और शांति का उपदेश दिया। हमारे यहाँ की विश्व-विभूतियाँ सराहनीय हैं। कहीं भी संकीर्णता नहीं है। सब कुछ प्राणीमात्र के लिए लिखा गया है -

1. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 10

2. पृ. 10-11

वाल्मीकि से काव्यपिता, आकाश व्यास से
कहाँ हुए हैं जगती में कवि कालिदास से?

तिरुवल्लुवर, कुमारव्यास हैं कला हास से
तुलसी, सूर रवीन्द्रनाथ भूतल प्रकाश से।

खुसरो ने भारत के, ब्राह्मण के गुण गाए
हिन्द और आसा के थे संबंध बताए

गणित और ज्योतिष, रसाल, शतरंज मिलाए
हिन्दू के उपहार समस्त धरा पर छाए।

हैं अद्वैतवाद सूफी-दर्शन पर छाया
पश्चिम पर जिसने विचार का ध्वज फहराया

मैक्समुलर, रोलाँ, थोरो, सबको ही भाया,
जग सब पावन लगा, लगी सुर-दुर्लभ काया।

यदि टूटा हिन्दू जग का दर्शन टूटेगा।

बर्बरता का वज्र संस्कृति पर छूटेगा।

घोर अन्धविश्वास कला की छवि लूटेगा।

मानवता का भाग्य आह! उस दिन फूटेगा।'

मिश्र जी ने उन सामान्यतम व्यक्तियों का चित्रण किया है जो शारीरिक दृष्टि से अयोग्य हैं। उनकी कविताओं में अंधे का आत्म निवेदन, गूंगे की अन्तर्व्यथा, नपुसंक के प्रति, कुरुपता, पागलपन, क्लोब आदि उपेक्षित वर्गों पर है। यथार्थवादियों ने संसार को अधिक देखा है इनको कम। क्लीब विधाता के व्यंग्य का आखेट है अतः वह व्यंग्य का पात्र न होकर सहानुभूति का पात्र है। कुरुपता का अपना दर्शन होता है। उसकी अपनी उपयोगिता है। रूप-सौन्दर्य पर कविताएं खूब लिखी गयी है। मिश्र जी की मनुष्यता बहुत व्यापक है। 'अंधे का आत्मनिवेदन' स्वाभाविक और मानवीयता से ओत प्रोत है। अभावग्रस्तता मजबूरी की आस्तिकता है। उसके दर्द को कवि ने समझा है। वह होमर, सूर, मिल्टन, बश्शार, रुदागी, बर्नलेफ जुरअत, भीम भोई, तहाहुसैन, हेलेन कील आदि के विवरणों में शांति पाता है। पर कटु सत्य को भी ढाला नहीं जा सकता है। 'गूंगे की अन्तर्व्यथा' मानव को ईश्वर प्रदत्तोपहार वाणी विहीन व्यक्ति के अन्तर का दर्द भरा उद्गार है। इस दर्द को गूंगा ही समझता है। मिश्रजी ने भी समझा है। लोगों के व्यंग्य

और उनको सहन करने की गूँगों की मजबूरियों को भी कहा गया है। 'नपुसक के प्रति' और 'क्लीब' कविताएँ भी इसी कोटि की हैं। जिंदगी सब को प्यारी है। हर दशा में जीना है। क्लीब की स्थिति नपुसक से भी बदतर है। वह आजीवन अन्तर्ज्वाला से पीड़ित रहता है। कुरूपता पर भी लम्बी कविता है। कोई बहुत बड़ा आघात ही पागल बनाता है। काण्ट, नीत्शे, पॉउण्ड, निराला, आदि के उदाहरण हैं। पागलों में भी अद्भुत विशेषताएँ होती हैं।

कवि हिन्दू जागरण से मानवता का जगाना चाहता है -

अतः जाग हिन्दू निजत्व से विश्व जगाना
बर्बरता से कला, संस्कृति, धर्म बचाना,
जड़ता से कर समर तुझे चेतन बन छाना
मानव में देवत्व, स्वर्ग जगती पर लाना।..
पूर्ण मानवता ईश्वरता है, मानव से
पृथक ईश्वर की क्लिष्ट कल्पना निराधार
कुछ नहीं मानव से श्रेष्ठतर सृष्टि में
हे पूर्ण, हे धर्म-बल रूप,.....

कवि ने विश्व को मानव से प्रेम करने को लिखा है। आपसी भेद-भाव मानवता के शत्रु हैं। मनुष्यता सबसे बड़ा धर्म है। उन्होंने तुलसीदास की वंदना इसीलिए विशेष से की है।

मानवता की सीमाओं को
दिखलाया अपने पात्रों में,
ब्रह्मत्व भर दिया महाकवे!
तुमने मानव के गात्रों में।

आज मानव क्षेत्र विश्व स्तर (सार्वभौम) का है। साहित्य में वैश्विक मानव का रूप आ रहा है। कवि ने सबको दृष्टि से देखा है। अज्ञेय की कविताओं में भी वैश्विक दृष्टि है, विराट भावना है। वैश्विक मानवतावाद पर ही बल देते हैं। 'सार्वभौम' की अनुभूति विश्वानुभूति है। संसार में अभी तक किसी भी भाषा के साहित्य में सहज विश्वानुभूति की विवृति नहीं हो पायी क्योंकि अपने-अपने विश्वभाग, महाद्वीप, धर्म, मजहब, वाद, भाषा इत्यादि एकमानवतावादी की प्रतीति नहीं होने दे रहे, एकविश्ववादिता जो स्थूल भिन्नताओं के मूल में सूक्ष्म एकता पर प्रत्यय कर सके। परमात्मा धर्म,

मजहब, वाद, राष्ट्र, भाषा आदि साधन हैं, साध्य है मानव का विश्वबोध जो किसी भी शताब्दी का काव्य दर्शन हो सकता है। अनेक प्रयास इस क्षेत्र में होते आ रहे हैं। रवीन्द्रनाथ ठाकुर के सफल प्रयास को सबसे पहले देखा जा सकता है। तुलसी, प्रसाद, प्रेमचन्द, अज्ञेय आदि के साहित्य को देखा जा सकता है। होमर, आदि पाश्चात्य कवियों से अधिक भारतीय कवियों में वैश्विक वैशिष्ट्य प्राप्त होते हैं। आज भी पश्चिमी देश पूर्वी देशों से संकुचित हैं। भौतिकता, स्वार्थ और व्यवसाय की घरेबन्दियों से जकड़े हुए हैं। आज भारत जैसी व्यापक वैश्विक दृष्टि की आवश्यकता है। अखण्ड मानवता की रक्षा विश्ववाद से हो सकती है। कवि ने उपमानों और बिम्बों के रूप में वैश्विक विभूतियों व वस्तुओं का प्रयोग किया है—

आइन्स्टाइन का झुर्रीदार चेहरा,
गूढ़ी-गूढ़ी आंखें,
तर-बतर पांखें,
अचानक बदल गई,

कवि ने माखनलाल चतुर्वेदी पर भी लिखा है। विश्व को व्यक्ति नहीं बलिदान चाहिए। ऐसे विचारों में लोकमंगल की भावना थी, उदारता थी। अपने को न्योछावर करने की तमन्ना थी। ऐसा करके उन्होंने सिद्धांतों का निर्माण किया है। कवि ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद का विरोध किया है, क्योंकि उसमें शोषण, दमन और शासन की भावना थी, न कि लोकमंगल की —

वह एक सिपाही था
कलम की, तलवार
शब्द की ललकार
जो न सकती थी हार,
जिसे बस जूझन से
मतलब था।¹

पूँजीवादी व्यवस्था ने विश्ववाद और मानवतावाद को नष्ट किया है। कवि को इसका खेद है —

रुग्ण हुई मानवता सारी
अन्तर त्रस्त हुए नर-नारी
श्रम छिन गया, बढ़ी बेकारी
क्या विकास तू ही बेजारी,

मरुभूमि का वट वृक्ष

आज भांति-भांति के संगठन विश्व स्तर पर बने हैं जिन्होंने मानवता का भार ले रखा है। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' भी ऐसा ही संगठन है, परंतु यथार्थ क्या है! उसको चलती हुई सदी भोग रही है। मानव चन्द्रमा पर पहुंच गया अर्थात् प्रगति की पराकाष्ठा पर पहुंच गया, पर उसके हृदय का पूर्ण विकास अभी तक नहीं हो सका है।

कवि ने विश्व की प्रतिमाओं के सम्मान को सवीकार किया है। उसने होमर पर कविता की है। प्रतिभा कहीं की हो; उसकी पूजा कवि ने की है। पाश्चात्य कविता के पिता, पश्चिम के प्रथम पुरुष, सभ्यता संस्कृति के भावुक विश्वकोषकार।

ईसा पूर्व 9वीं सदी है होमर प्रज्ञाचक्षु थे - विश्व के सर्वश्रेष्ठ पज्ञाचक्षु। ट्रॉय-युद्ध (1193-83 ई. पूर्व) पर इलियड माहाकाव्य रचा गया। उनकी तुलना वाल्मीकि से की गई है। 'ऋग्वेद' के उपरान्त का महान ग्रंथ।

कवि ने विश्व की विभूतियों पर प्रकाश डाला है। अंग्रेजी कवियों पर विशेष रूप से। ट्राय के युद्ध के अन्तर सागर में भटकते विजयी योद्धा ओडिसियस को देवी कैलिप्सो ने बन्दी बना लिया था। वह चिरप्रणयिनी बनना चाहती थी। इस पंथ-भ्रांत दयनीय बन्दी की दशा में योद्धा की व्यथा कथा 'सार्वभौम' पेज 129 से 136 तक है। वैश्विक मानसिकता को बड़ी सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया गया है। योद्धारूप, गृहप्रेम, सगे, संबंधी तथा मातृभूमि-प्रेम सराहनीय हैं। सुन्दर मानवीकरण के भी उदाहरण हैं। कवि ने यथाप्रसंग सबका स्मरण किया है। तुलसी के साथ होमर, शेक्सपीयर और फिरदौसी को भी स्मरण किया गया है। कवि का दृष्टिकोण व्यापक है। वह जाति, धर्म, सम्प्रदाय और भौगोलिक सीमाओं तक अटका नहीं है। कवि ने जिस क्षेत्र को लिया है - उसमें ब्रह्माण्ड को समेट लिया है। रूप और सौन्दर्य का वैश्विक या सार्वभौमिक रूप कवि ने प्रस्तुत किया है। वह लघुता से विराटता की ओर चला है। दृष्टि काव्य के मंगलाचरण में हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, यहूदी, ईसाई, महापुरुषों की वन्दना है। कवि प्रभु से प्रार्थना करता है कि हे! प्रभु सीमाएं तोड़ो! सार्वभौमिक एकता की बात की है। वाल्मीकि, व्यास, होमर, कालिदास सबको कवि ने प्रणाम किया है। आज सब कुछ इन्टरनेट पर आ रहा है। कवि की दृष्टि भी उसी स्तर की है। सीमाएं तोड़ दी गयी हैं। यूनान की सभ्यता और मानवता की सराहना की गयी है। मात्र अपने को श्रेष्ठ कहने से कुछ नहीं होगा। दूसरे की श्रेष्ठता को भी स्वीकार करना होगा। महान वह है जो अन्य को भी महान मानता है। देवता किसी को अछूत नहीं मानता है। कवि वह है जो सब कुछ को

हस्तामलक कर सके। कवि को शालीन, व्यापक, ईमानदार, और स्पष्ट होना चाहिए मिश्र जी में उक्त सभी गुण हैं। उनकी निष्पक्ष अनुभूति अपना विशेष महत्व रखती है। उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम सभी दिशाएं महान हैं। व्यापक दृष्टि चाहिए। भारत ने विश्व को शून्य, दशमलव प्रणाली, अंकगणित, ज्यामिति, आयुर्वेद, लोहा बनाने की कला, सौ पतवारों के नांव, विविध यान, सागर-व्यापार, वास्तुकला, स्तूप, लाटें, शिल्पकला, अष्टधातु-निर्माण, आभूषण आदि दिये हैं। हमें आज अपने संस्कारों को जगाने की आवश्यकता है -

संस्कार जगाओ जीवन के मथन से
उत्पन्न अमृत को प्राप्त कर लेने में
सक्षम, रुजनाशक, शक्ति ऊर्जा प्रदाता, ओ
मंगलमय सीमातीत बल-विक्रम देने में।

‘दृष्टि’ को विश्व-दर्शन का प्रथम महाकाव्य समझना चाहिए। यह दृष्टि ही नहीं दिव्यदृष्टि और अन्तर्दृष्टि भी है। पुराने मानकों को इसमें नकारा गया है। कवि की प्रतिभा और पाण्डित्य को स्वीकार किया गया है। ‘दृष्टि’ महाकाव्य में व्यापक विश्वबन्धुत्व भाव है। यह मानवतावादी और दार्शनिक महाकाव्य है। इसमें कुल 22 सर्ग हैं। अनेक लाकों की इसमें चर्चा है - अनुभूतिलोक, जीवनरहित लोक, जीवनमय लोक, वेद लोक (1, 2, 3), कवि लोक (1, 2, 3), कला लोक (1, 2) दर्शन लोक (1, 2), विज्ञान लोक (1, 2), इन्द्रलोक, ब्रह्मालोक, शिवलोक, शक्तिलोक, विष्णुलोक, और आनन्दलोक। मिश्र जी ने इन लोकों में समस्त धर्मों के ग्रंथों, महापुरुषों के साथ ही कविता, संगीत, दर्शन और विज्ञान आदि पर प्रकाश डाला है। विश्व-मानवता को भावात्मक भूमि पर जोड़ने का सफल प्रयास किया है। इसमें भारत के साथ सारा विश्व है अथवा सारे विश्व के साथ भारत है। काव्य विश्ववादी और मानवतावादी है। कवि महान उद्देश्य मंगलाचरण से ही सामने आने लागता है -

“राम! मुझे शक्ति दो,
कृष्ण अनुरक्ति दो,
मूसा! निषेध दो,
बुद्ध! दुःख वेध दो,

ईसा! प्रकाश दो,
मोहम्मद! विश्वास दो।
तुली! चिर-भक्ति दो,
वाणी! अभिव्यक्ति दो,
हे प्रभु! सीमाएं तोड़ो,
बिखरी कड़ियों को जोड़ो।

हिन्दी को वैश्विक रूप देने में यह सफल है। इसमें मानवतावाद है। यह इसका उद्देश्य है। इसकी भूमिका में भी मानवतावाद का उल्लेख है। कवि का मानवतावाद आज की राजनीति का मानवतावाद नहीं है। मानव की सार्वभौमिक एकता प्रतिष्ठित है। इसमें सार्वभौमिक साहित्य, कला, विज्ञान, दर्शन आदि की अद्यावधि उपलब्धियों का पर्यवेक्षण करते हुए उन्हें समस्त मानव समाज की साझी सम्पदा के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है। सर्वधर्मसमभाव का प्रतिपादन करते हुए भी धर्म प्रवर्तकों के लिए हार्दिक श्रद्धा व्यक्त की गयी है। यह स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया गया है कि सभी धर्मों के मूलभूत सिद्धांत और शिक्षाएं मानवता की भलाई के लिए हैं। सब में कोई तात्त्विक अन्तर नहीं है। मानव एकता की परिपुष्टि में ही कवि ने सृष्टि में जीवन के उद्भव और विकास को भी रेखांकित कर दिया है। उसका मूल उद्देश्य यह दिखाना है कि मानव इस विराट् विश्व का एक अभिन्न अंग है और उसका निर्माण भी उन्हीं मूलभूत तत्वों से हुआ है जिनसे पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि चराचर प्राणियों का हुआ है। अतः मानव-मानव का एक होना सहज और स्वाभाविक है। अतः मनुष्य को मनुष्य से अलग करने वाली जाति, सम्प्रदाय, भाषा, राष्ट्र आदि की दीवारें व्यर्थ हैं। जिसमें समन्वय की जितनी अधिक भावना होती है, वह उतना ही महान् होता है। मानव सृष्टि की अनुपम कृति इसी गुण के कारण है।

मानवएकतावाद केवल राजनैतिक सिद्धांत के रूप में सिमटकर रह गया है। उसे भावात्मक या रक्षात्मक भूमि की सार्वभौम व्यापकता प्राप्त नहीं हो पाई। दृष्टि इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है। इसमें भारत के साथ सारा विश्व संयुक्त है, विश्व के साथ सारा भारत संयुक्त है। मानवतावाद विश्व की महान् सम्पदा है। इस भाव से विश्व को एक सूत्र में बांधा जा सकता है। सारे भेद-भावों को भुलाया जा सकता है। विश्व-मानव किसी राष्ट्र या देश की सीमा में नहीं आता है। भेद तो निम्नता का प्रतीक है। 'दृष्टि' महाकाव्य में कवि ने इसका ध्यान रखा है। यह मौलिक और विश्वकाव्य है। कवि में वैश्विक दृष्टि आद्योपान्त है।

वैश्विक सौन्दर्य उसको सर्वत्र आकर्षित करता है। सभी पैगम्बर एक दूसरे के नये रूप तथा पूरक होते हैं न कि विरोधी। जब धर्म में जड़ता आ जाती है, तो उकसी शुद्धि के लिए पैगम्बर को आना पड़ता है। सभी पैगम्बर मानवतावादी थे। लोकमंगल की भावना सब में थी। न समझने वाले ही विरोध किया करते थे। बिना बलिदान के मानवता की रक्षा नहीं हो पाती है। बलि बल की जननी है किन्तु वे संकीर्णता के विरोधी हैं। दांते की ईसाईबद्धता से उनका विरोध है -

सत्य है, तुम्हारी अनेक निपत्तियां
तुझको आग्राह्य हैं, मेरा धर्म विश्व-धर्म
मेरा धर्म धर्मों को एक तंत्र मानता,
मेरा धर्म है, मानव मूल्यों का चिर वर्म।¹

इसी से कवि को शेक्सपीयर की निस्संग विश्वदृष्टि प्रिय है। वह उस जीवन-कवि को बार-बार प्रणाम करता है -

ओ जीवन-ज्वाला से प्रकाश ही लेने वाले,
सक्षम कलाकार, अतुल विह्वलकर, प्रणाम
ओ मानव-जाति की महान्तम् प्रतिभा के
अनुपम प्रतीक, ओ शेक्सपीयर, प्रणाम।...
और अब राष्ट्र-युग नहीं, ब्रह्माण्ड युग
आया है, विशदतम दृष्टि का खेला है;
मेरे लिए, ब्रह्माण्ड-युग का तू आदि-कवि
बन, तुझमें क्षमता है, अनुकूल बेला है।

आज सब कुछ इन्टरनेट से जुड़ना चाहता है और देश की सीमाएं आज के चिन्तन, विचार और कला को बांधने में अक्षम हो गयी हैं। आज की हिन्दी विश्व-भाषाओं में अपना स्थान बना चुकी है। अनेक विदेशी संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है। आज वैश्विक हिन्दी का स्वरूप भी सामने आ गया है—

मेरे पुत्र! हिन्दी अब उस स्थिति पर पहुंची
जिसमें ब्रह्माण्ड दृष्टि अभिव्यक्ति सम्भव है,
उसमें परम्परा भी है, नवीनता भी है

तेरे लिए एक चिरपुराचीन-चिरनव है¹।
 अतः तू दृष्टि में प्राचीन-अर्वाचीन,
 आस्था-तर्क-हृदय बुद्धि इत्यादि सार ले;
 नाना वाद विद्विलास के नाना अंग है।
 उनको, पूर्व-पश्चिम को, जी भर दुलार ले²।

आदमी की कमियों ने उसको सीमित कर दिया नहीं तो वह अखिल
 ब्रह्माण्ड के स्तर का था, लोकातीत था -

मेरे पुत्र, तेरा जन्म लोकातीत-जैसा था,
 उसकी कथाएं ही दृष्टि की मूल थीं,
 तेरे संस्कार दिन रिसते चले गये,
 इसी से लघुताएं चेतन को शूल थीं³।

वेदों से अधिक विश्ववाद और मानवतावाद अन्यत्र नहीं मिलता है।
 यह विश्व का आदिम दस्तावेज है। आज वेदों की प्रासंगिकता सर्वाधिक
 बनती है। कवि ने 'वेदायन' में वैदिक वाङ्मय, समाज, संस्कृति, सभ्यता
 और इतिहास पर बहुत बारीकी से प्रकाश डाला है। आज सार्वभौमिक
 साहित्य की आवश्यकता अधिक बन रही है। कवि मानव को एक और
 अखण्ड प्राणीरत्न मानता है। उसके ऐतिहासिक रूप बाह्य भंगिमाएं मात्र
 हैं। 'वेदायन' का नायक रहस्यमय शाश्वत मानव का एक रूप है, जो तब
 था, अब है और आगे भी रहेगा। वेद शाश्वत है। सब कुछ जीवन-मरण
 के बीच है। सम्पूर्ण साहित्य जीवन-गाथा ही तो है। इससे अपनी कहानी
 का वास्तविक ज्ञान हो जाता है। आर्य मानवतावादी और उदार थे। सर्वत्र
 (भारत, इराक, ईरान, यूनान, इटली, अन्यत्र) स्थानीय लोगों में मिल गये।
 उनको मिलाया और सभ्य बनाया। भारत वर्ष में 'ऋग्वेद' के इन्द्र, अग्नि,
 सूर्य, नदी, वन (वृक्ष), गो इत्यादि भी पूज्य हैं। द्रविड़ों के शिव, नागों के
 नाग, गंधर्वों के कंदर्प (काम) यक्षों, के कुबेर, काले आदिवासियों की काली
 और गोरे आदिवासियों की दूर्गा, प्रचण्डकर्मा आदिवासियों की चामुण्डा एवं
 छिन्नमस्ता, मत्स्यजीवियों के मत्स्य (अवतार) स्वयं को कच्छप-मूलक (काछी)
 बताने वाले भाइयों के कच्छप, कोल जाति के वराह (अवतार) तथा अन्य

1. दृष्टि, पृ. 92

2. दृष्टि, पृ. 95

2. दृष्टि, पृ. 233

शत तत्व भी आज जिसे हिन्दू धर्म कहते हैं यह आस्थाओं का समाहरण है। यह परवर्ती संकीर्णताओं, वादों आदि से नितान्त भिन्न है। इसका कारण आर्यों का महान् दृष्टिकोण है। आर्यों ने विश्व को समन्वयवाद, अद्वैतवाद, योग, अंकगणित (शून्य, दशमलव-संपन्न), काव्य (विशेषतः महाकाव्य) चतुरंग (शतरंग), पचीसी (दक्षिण अमरीका के देशों ने पचौली) इत्यादि शत-शत उपहार दिये हैं। शकर और नील, (शुगर, इंडिगो) इत्यादि तो दिये ही हैं —

अशन भिन्न, वसन भिन्न पर मानव एक है,
अशन-वसन साधन, साध्य जीवन महान् है
यह संसार सम्यक् सार है, संसरण नहीं
देव का काव्यः सर्ग-प्रलय का गान है।
मैं विश्व-आ-मित्र, परम्परा चलती है
और चलेगी क्योंकि उचित अवदान है
काम से, क्रोध से, बल से, चोरी तक से,
जीवन को आगे बढ़ाना कल्याण है।

अकाल में कुत्ते के मांस की चोरी में विश्वामित्र पकड़े जाते हैं।
व्याघ्र आश्चर्य में पड़ जाता है —

ऋषिवर! आप? आह मानव-मूल्य अब सब रीते.....
प्रत्यय नहीं होता है नेत्रों पर, स्वयं पर
व्यधाघर चोर वह जिसने सब नृप जीते।
श्वानमांस लुब्ध वह जिस पर मेनका रीझी,
कल्पित त्रिशंकु रूपक इत्यादि? मनचीते.....

मानवता की रक्षा के लिए ताटका का वध होता है।

मानवता की रक्षा हर दशा में की गयी है।

नरत्व मानवता का साधन, नारीत्व साध्य।

साध्य यदि पतित हुआ तो साधन-श्रेष्ठता व्यर्थ है। साधन की दुर्बलता श्रेष्ठ साध्य पाकर सुधर सकती है। सुधरना सम्भव है।

वालिबध को लेकर औचित्य अनौचित्य का जब प्रश्न उठाया गया तो हनुमान् जी ने रावण से उत्तर दिया—

न्याय ही मेरा देश है, न्याय ही मेरा
धर्म है, न्याय ही मेरी आत्मा है
मैं सत्य तथा न्याय को देश की
सीमा में बंदी नहीं बना सकता औ राम
किष्किंधा नगर की सीमा में भी नहीं प्रविष्ट हुए
राम राज्य के लिए नहीं धर्म के लिए

युद्ध करते हैं, राम किसी एक जाति, किसी एक देश के नही, निखिल मानवत्व, अखिल विश्व की विभूति है। विग्रहबद्ध ब्रह्म है।

कवि ने बहुत महत्वपूर्ण बातें सामने प्रस्तुत की है। अनेक विवादों और कलंको को उन्होंने मानवता को दुष्टि में रखकर समाप्त कर दिया है —

ये है लंकानरेश विभीषण जिन्होंने रक्त
संबंध को मानवता पर वारा
न्याय का पक्ष ग्रहण किया, इनका साहाय्य।
मेरा बल बन गया, मेरी जय बन गया।
राम, कृष्ण, मूसा, महावीर, बुद्ध, जर्थुस्त्र
कुंग फुत्से लाओ-त्से, ईसा, मुहम्मद, नानक,
सबका सम्मान क्योंकि अहं के भी साथ भी
ये अग्रग्रंता थे, और थे गुणखानक
इनको साथ रखकर ही मानव-एकता संभव
पावन गुणग्राहकता का लाभकर बानक
आओ है मानव-जाति! छिद्रान्वेषण त्यागो
और बनो एक, हो महानता के गानक।।

कवि ने सभी, धर्मों और दर्शनों में एकता के रहस्य को समझाया है। धर्म भाषा इत्यादि के भेद ने सबको एक दूसरे का शत्रु बना दिया है। गहराई से समझने पर सब एक है —

ऊँ का चन्द्र-बिन्दु अरब का चाँद-सितारा,
गंगा-जमजम, हज-परिक्रमा में समानता,
संगे-असवद को ईश्वर का कहा जाता है,
ब्रह्मवाद-प्रतिपादन में भी निकटता है।
हिन्दू-मुसलमान संघर्ष क्यों ठानता है?
मुहम्मद में मानवतावाद भी विद्यमान;
आह! न्यस्त-स्वार्थ इसे नहीं पहचानता!

मानवसृष्टि का सबसे महान प्राणी मनुष्यता को धारण करने के कारण ही है। मानव और उसका जीवन चिरन्तन है।

मानव से श्रेष्ठतर जगत में कुछ नहीं,
मानव चिरन्तन है, जीवन चिरन्तन है;

मानव ही सबको सुखी कर सकता है। मानवता का पुजारी कालातीत होता है। रहा है और रहेगा। राम, कृष्ण, गौतम, गांधी आदि ऐसे ही उदाहरण हैं इसी से उन्होंने कविता लिखी है कि मुझसे मेरा राम न छीनो। भारतीय अध्यात्म में मानवता और ब्रह्माण्ड की बातें सबसे अधिक है। इसी से कवि ने इसकी श्रेष्ठता को सहर्ष स्वीकार किया हैं उन्होंने कहा है कि हमारा अमरत्व अध्यात्म में है। विज्ञान अध्यात्म का विरोधी नहीं है।

मानवता पर हमारे यहाँ सबसे अधिक कहा गया है। इसी से मानव और उसका जीवन सबसे श्रेष्ठ है व्याध के उपदेश देने पर विश्वामित्र कहते हैं —

ओ अबोध! बोध तू दे रहा,
सर्वोपरि बोध है जीवन, जिजीविषा।

जीवन का एक पल भी सौ स्वर्गों से अधिक महत्वपूर्ण है। मैं जीवित रहकर मानव को हर दशा में जीवित रहने के लिए उपक्रम बताऊँगा। विकास की दिशाओं को दिखाऊँगा। प्रकृति के प्रकोप को स्वीकार कर उसमें समाधान प्रस्तुत करूँगा।

इस प्रकार मानव द्वारा विकसित सृष्टि का वर्णन है। वे कहते हैं — मंगल का संदेश दूँगा। हर दशा में मानव को विकास करना है, जीना है सब में संगति बैठानी होगी।

अटल विश्वास हो, जीवन पर, मानव पर
पावन धरती हो, उज्ज्वल आकाश हो!

मानव ने सभ्यता ज्ञान और विज्ञान का विस्तार कर जीवन को धन्य बनाया है। सभी ज्ञान-विज्ञान का हेतु है। मानव-मंगल। यदि वह न सध सका तो सब कुछ व्यर्थ है। आदर्श राज्य का रूप कवि ने सामने रखा है। वैभव-मंडित राज्य का वर्णन है। लता द्रव, दुग्ध, दधि, धृत, मधु से निर्मित सोमरस सात्विक एवं ऊर्जाप्रद पेय वर्णित है। याज्ञिक मानवता पूर्ण वातावरण सामने आता है।

यज्ञ की सुगन्ध से महमह पर्यावरण
कीट, मशक, मक्षिका, सिर धुन पछताने लगे
विजयी-विजित एक थे मुग्ध इस विकास में
मानवता के नव अध्याय बनाने लगे।

गौरवपूर्ण राज्य है। शक्ति शील का समन्वय है। मानव-मूल्यों की प्रतिष्ठा है। आश्रमों का विकसित रूप सामने आया है। अहिंसा का जीवन में महत्व बढ़ा है।

कवि ने व्यापक दृष्टि से विश्ववाद और मानवतावाद को कांक्षित किया है जिसमें लोकहित सर्वोपरि है। इसी लोकमंगल में मानवतावाद और विश्ववाद सार्थक होता है।

अध्याय 4

भारतीय संस्कृति की व्यापकतम विवृत्ति

आज तक के अन्वेषणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति ही विश्व की आदिम संस्कृति है। विश्व की प्रचीनतम पुस्तक 'ऋग्वेद' मात्र भारत के पास है। विविध खुदाइयों में प्राप्त सामग्रियों में हमारा इतिहास सबसे अधिक सुरक्षित है। आज हमारा देश विविध समस्याओं में पड़कर अनेक सन्दर्भों में परमुख पेशी हो गया है, किंतु इसका अतीत महान् है। साहित्य तथा अन्य विद्याओं के विविध प्रसंगों से हमारी संस्कृति की व्यापकतम विवृत्ति हुई है। यहाँ उनके काव्यों को ही माध्यम बनाकर कहा जा रहा है। मिश्रजी के आलोचना ग्रंथों, साहित्येतिहास-ग्रंथों और निबन्धों में भारतीय संस्कृति की विरासत को देखा जा सकता है। कवि ने अपने अतीत-वर्तमान और समान्तर साहित्य से बहुत कुछ लिया है। सबको आत्मसात् कर उन्होंने काव्य-रचना की है।

आज की विश्व संस्कृति भारतीय या हिन्दू संस्कृति का ही परिवर्तित आधुनिक रूप है। हमारा राष्ट्र सचमुच युगों से सारे विश्व का पथ प्रदर्शन करता आ रहा है, चाहे वह भौगोलिक, आकाशीय, गणीतिक, आयुर्वेदिक एवं युद्ध-संरचना, शरीर-विज्ञान, कृषि विज्ञान, भवन निर्माण, शिक्षा या राज्य संचालन इत्यादि क्यों न हो! इस सब में हमारी धर्म एवं अध्यात्म की भूमिका ठोस रही है। स्वयं भगवान के अवतार एवं भगवान के सन्तों भक्तों-आचार्यों के द्वारा राष्ट्रनिर्माण के विविध अंगों की पुष्टि, समाज-रचना एकता एवं समानता का अनुस्यूत तंतु पूरे विश्व में फैले हिन्दू में दृश्यमान होता है। संतों शास्त्रों एवं मन्दिरों के द्वारा हमारी उपासना पद्धति, जीवनशैली, समाज एवं राष्ट्र का निर्माण-पोषण-संवर्द्धन हम अनुभव कर सकते हैं।¹ 'कृष्णन्तो

1. डॉ. नारायण स्वरूपदास (प्रमुख स्वामी महाराज) के आशीर्वाद से राष्ट्रधर्म आश्विन कार्तिक 2057, अक्टूबर 2000 जेज 10।

मरुभूमि का वट-वृक्ष

विश्व-मार्यम्' हमारा प्रचीनतम् उद्घोष है। हमने गुणवत्ता के आधार पर सबको आकृष्ट किया था। न कि तलवार और तोप के। किसी का विनाश किये बिना हमने अपनी बातों को कहा है। हिन्दुओं सी उदारता अन्यत्र दुर्लभ है। उसी के आधार पर विश्व में हिन्दू संस्कृति का विकास हुआ था। आज उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों तथा नई बाजार व्यवस्था के प्रभावस्वरूप भारतीय समाज मूल्यों की हासशीलता तथा सांस्कृतिक प्रदूषण की चुनौतियों का सामना कर रहा है। हम विदेशों से अच्छी बातें ले सकते हैं, किन्तु उनकी विकृतियों के संदर्भ में स्वस्थ भारतीय चिन्तन परम्परा का अंगीकरण एवं विकास ही सही विकल्प तथा योग्य प्रत्युत्तर हो सकता है। हमारी सांस्कृतिक विरासत अत्यन्त समृद्ध है तथा ज्ञान की परम्परा जीवंत एवं सशक्त है। जीवन की सभी समस्याओं और चुनौतियों का समाधान इसमें निहित है। भारतीय संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्द्धन हमारा कर्तव्य तथा राष्ट्रधर्म है और इसी के द्वारा हमारी सांस्कृतिक अस्मिता तथा गौरव सुरक्षित रह सकता है।¹ विश्व की सभी संस्कृतियों के इतिहास को हम आज भी देख सकते हैं। वैदिक, शैव, वैष्णव और बौद्ध संस्कृति के वंसावशेष अद्यावधि विश्व भर में मिल रहे हैं। यहूदी, ईसाई और इस्लामी लोगों का तब पता नहीं था। यह बात दूसरी है कि कल के भारतीय ही आज के भारत के शत्रु हो गये हैं। जहाँ-जहाँ सूर्य की पूजा होती रही थी, या होती है वहाँ-वहाँ भारत का ही सब कुछ था। भाषा और भूगोल में आज भी अनेक चिह्न विद्यमान हैं। समाज की परम्पराओं और संस्कृतियों में भी भारतीयता को देखा जा सकता है। सब कुछ परिवर्तशील है, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं।

आधुनिक भारत को ऊँचा उठाने की आवश्यकता है। हमें अपने पुराने गौरव को पुनः प्राप्त करना है। अतीत का सहारा लेकर वर्तमान को उठाया जा सकता है। हमें गर्व होना चाहिए कि हम भारतीय हैं। हमारे देवी-देवता ही विश्वन्द्य देवी-देवता है। देवी-देवताओं की प्राचीन मूर्तियाँ विविध देशों में मिल रही हैं, वे सब तत्त्वतः भारतीय हैं। हमारी आध्यात्मिकता की वे अक्षय धरोहर हैं। इतिहास बताता है कि हम विदेशों में अल्पसंख्यक होते गये और अपनी पहचान खोते गये। देश-देश के भूखण्ड अलग होते गये। विविध जातियाँ बनती गयीं।

सृष्टि से आज तक के समाज की सबसे महत्वपूर्ण विरासत संस्कृतिक

1. डॉ. विष्णुकान्त शास्त्री (राज्यपाल हिमाचल प्रदेश), राष्ट्रधर्म अक्टूबर, 2000, पृ. 10।

ही है। हमारी संस्कृति मानव संस्कृति के रूप में विकसित हुई। ऋषियों से लेकर आज के वैज्ञानिक, औद्योगिक और राजनीतिक युग तक फैली हुई है। इस फैलाव में विपुल मिश्रण भी है। जिस प्रकार सागर के पानी को हाथ में उठाकर यह नहीं कहा जा सकता कि यह अमुक स्थान का ही है, उसी प्रकार भारतीय संस्कृति भी हैं, नाना जाति, धर्म, दर्शन, सभ्यता और संस्कृतियों का मेल समय-समय पर होता रहा है। अतः इसकी श्रेष्ठता में देश-विशेष नहीं, बल्कि मानव-विशेष की महत्ता समायी हुई है, हाँ यह बात अवश्य है कि इसकी संरक्षण का भार भारतीय लोगों पर अवश्य रहा है। “भारत आज जो कुछ भी है उसकी रचना में भारतीय जनता के प्रत्येक भाग का योगदान रहा है।”¹ जो कुछ भी यहाँ आया है, सब भारतीयता में समाहित हो गया है। आज कौन कितना आर्य, शच, हूण, पठान, मुगल और द्रविड़ है, कौन बता सकता है? कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इस प्रसंग पर बहुत सुन्दर कहा है।

हे मोर चित्र, पुण्य तीर्थ जागे रे धीरे,
 एई भारतेर महामानवेर सागर-तीरे।
 केह नाहि जाने, कर आहवाने, कत मानुषेर धारा,
 दुर्वार स्त्राते एलो काथा हते, समुद्रे हलो हारा।
 हेथार्य आर्य, हेथाय अनार्य, हेथाय द्रविड़ चीन,
 शक-हुण-दल, पठान-मोगल एक देहे हलो लीन।
 रणधारा वाहि, जयगान गाहि, उन्माद कलरवे
 भेदि मस पथ, गिरि-पर्वत पारा ऐसे छिलो सवे।
 तारा मोर माझे सवाई विराजे केहोन्हे-नहे दूर,
 आमार शोणिते रथे छे ध्वनित तारि विचित्र सूर।²

आज की हमारी भारतीय संस्कृति में न जाने कितनी पराजित और विजयी जातियों के संस्कार समाविष्ट हैं। देश के कोने-कोने का इसके विकास में योगदान है। राधा कुमुद मुखर्जी ने इस पक्षों पर बड़ा सुन्दर प्रकाश डाला है। तदनुसार मनुष्य पंजाब और शिवालिक की ऊँची भूमि पर विकसित हुआ होगा। सिन्धु की तराई में कृषि सभ्यता बनी होगी, सिन्धु के पठार में भारत की प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष आज भी मिलते हैं। इसी

1. संस्कृति के चार अध्याय : रामधारी सिंह दिनकर प्रस्तावना लेखक पं. जवाहरलाल नेहरू पृ. 11, संस्करण-2।

2. संस्कृति के चार अध्याय : रामधारी सिंह दिनकर पृ. 5 से प्राप्त।

भारतीय संस्कृति में नीग्रो, औष्ट्रिक, आर्य और द्रविड़ों की संस्कृतियाँ भी हैं, परन्तु जैसे पानी का नाम नदी के नाम पर पड़ता है वैसे ही संस्कृति, सभ्यता और इतिहास-भूगोल का नाम भी देश के आधार पर पड़ता है। 'दिनकर जी ने बताया है कि मौर्यों के पतन से लेकर गुप्तों के उत्थान तक का काल हिन्दुत्व के इतिहास का अत्यन्त महत्वपूर्ण काल गिना जाना चाहिए। सच पूछिये तो यही वह काल है जब आर्य बदलकर हिन्दू तथा ब्राह्मण धर्म परिवर्तित या परिपक्व होकर हिन्दुत्व हो जा है। 'रामायण' और 'महाभारत' के अन्तिम संस्करण इसी समय बने।'

आज की विश्वसंस्कृतियाँ अपने मूल से बहुत हद तक हट चुकी हैं। विश्व में एक नवसंस्कृति का स्वरूप आ गया है। सभी संस्कृतियाँ विश्व संस्कृति के रूप में सामने आना चाहती हैं। आर्य, यहूदी, ईसाई और मुसलमान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मिलना चाहते हैं। इसमें कुछ मिलेगा तो कुछ जायेगा भी। संस्कृतियों के मूल रूप का लोपीकरण होता चला जा रहा है। इस्लाम का आशय होता है 'शांति में प्रवेश करना' मुसलमान वह व्यक्ति है जो परमात्मा और मानव के साथ पूर्ण शांति का संबंध रखता हो, परन्तु व्यवहार में ठीक इसके विपरीत है। मुसलमान का दूसरा अर्थ होगा, जो मुसलमान (सम्पूर्ण) ईमान वाला हो। इस्लाम की कट्टरता का उत्तर इनसानियत ही दे सकती है। जो करुणा और दया पर आधारित हैं। इस्लाम की कट्टरता जो संकीर्णताओं से संचालित हो रही थी, उसको टर्की के अधिनायक कमाल पाशा ने तोड़ने का यत्न किया।

मध्य एशिया तथा दक्षिणी रूस में फैला बौद्ध धर्म हिंसा से पूर्ण हो गया। इस्लाम में सूफियाना मिजाज की इज्जत होने लगी। इसी समय भंयकर जातीय परिवर्तन भी हुए।

अपना देश तो हर्ष (647 ई.) के उपरान्त खण्डित होने लगा। आर्य या हिन्दू प्रभावी रूप से बाहर नहीं गये, न तो किसी देश विशेष को आर्यजगत ही बनाया। हाँ, अपना सन्देश अवश्य सब को सुनाया। विश्वविजय नहीं, बल्कि आत्मसंतोष की भावना अधिक रही है। इसके साथ वेधर्मी होने का भय भी था। सुरजनसिंह हाड़ा को अकबर ने जब काबुल के बाहर जाने के लिए कहा तब उनको 'बिरादरी में बने रहने के भय ने त्रस्त कर दिया और उन्होंने अपने बेटों को भेजा। भारतीयों के लिए विदेश-यात्रा कुछ दिनों पूर्व तक वर्जित रही, पर आज सब कुछ टूट रहा

है — जो नहीं टूट सकेगा, उसको इतिहास गाड़ देगा कि कोई देख न सके। इस अंतराल में संस्कृति-औदार्य के अनेक कार्य हुए हैं। अनेक रिश्ते बने हैं। सूफियों ने हिन्दू कहानियों से इस्लाम का सन्देश दिया है। भारतीय बौद्धों ने देश-देश की संस्कृतियों को अलग-अलग ग्रहण किया है। आर्य और द्रविड़ों ने सब कुछ देखा है। शैले ने मुगलकालीन वैभव को वित्रित किया। नीत्श वे 'मनुस्मृति' को बाईबिल से कई गुना श्रेष्ठ घोषित किया है। हमारे 'निरुक्त' और व्याकरण पर ही यूरोपीय ध्वनि-विज्ञान आधारित है। मैक्समूलर, हिटनी, कुडविक, विल्सन, वुडरफ, टाड, स्मिथ, एनी बेसेन्ट और ग्रियर्सन आदि ने हमें बार-बार सराहा है। ग्रिसर्यन ने तुलसी की रामायण को उत्तरी भारत में इंग्लैण्ड में बाइबिल से भी अधिक प्रतिष्ठित होना लिखा है। फादर कामिल बुल्के को तो लोगों ने वैष्णव तक कहा है। कहने का आशय यह है कि हम मानवीय औदार्य की ओर अग्रसर हो रहे हैं। एनी बेसेन्ट अपने को पूर्वजन्म का हिन्दू कहा करती थीं। वे पैदल ही तीर्थों में जाया करती थीं। विवेकानन्द ने विश्व को आकर्षित किया। उनके शिकागो के भाषण पर द न्यूयार्क हेराल्ड ने लिखा था कि 'धार्मिक संसद के सबसे महान व्यक्ति विवेकानन्द हैं। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने खुली दृष्टि से अतीत को देखा है।' परिवर्तन और विकास एक दूसरे के पूरक हैं। हमें आज मानवता की छाया में ही अपना सब कुछ देखना चाहिए। हमारा वाङ्मय ऋषियों और राजवंशों की कथाओं से परिपूर्ण है। सब के मूल में मानव-संरक्षण और अस्तित्व भाव विद्यमान है। हमें हिमालय-सी संस्कारों की उच्चता भी विरासत में मिली है। इसके साथ यह भी स्मरणीय है कि हमारा विकास भी दूसरों को अपना सहयोगी मानने से होगा।

आज की हिन्दी कविता कुछ अजनबी सी होती जा रही है। भारतीयता से वह कहीं दूर भी जाना चाहती है।

शायद वह वैश्विकता के लिए इसको बाधक समझती है। मिश्रजी में यह गलतफहमी नहीं है। वे अपनी माटी से जुड़े रहना चाहते हैं। अच्छाई कहीं से मिले, उसको वे ग्रहण कर लेते हैं। वे स्वयं वैश्विक भावना से जुड़े हैं, पर वे अपनी पहचान को बनाये रखना चाहते हैं। उन्होंने कवियों को विजातीय तत्वों से बचने और अपनी मिट्टी से जुड़कर रहने के लिए कहा है, क्योंकि, जो देश की पहचान को लेकर चलते हैं, वे ही देश के द्वारा स्मरण किये जाते हैं। विदेशों में तो मात्र शीत ऋतु है; अपने यहाँ

तो 3 प्रधान और 6 मुख्य ऋतुएं हैं। कवि की एक कविता इस प्रसंग को आगे बढ़ाती है -

ओ महाकवे! क्या कहें तुम्हें?
ऋषि? स्रष्टा? द्रष्टा? महाप्राण?
अपनी पवनतम वाणी से
तुम करते संस्कृति परित्राण।

मेरी संस्कृति के विश्वकोश
के निर्माता! जनकवि उदार!
ओ भाषा के सम्राट! राष्ट्र
के गर्व, भक्ति-पीयूष-धार।

अचरज होता तुम मानव थे
तन में था यह हो आस्थि-चाम!
ओ अमर संस्कृति के गायक
तुलसी! तुमको शत-शत प्रणाम।

कितने कृपालु तुम हम पर थे
जनवाणी में गायन गये,
सद्ज्ञान, भक्ति औ कविता के
सब रस देकर मन सरसाये।

मानवता की सीमाओं को
दिखालाया अपने पात्रों में,
ब्रह्मत्व भर दिया महाकवे!
तुमने मानव के गात्रों ये
वसुधा पर स्वर्ग उतार दिया
मेरे स्रष्टा, ओ आप्तकाम!
ओ अमर संस्कृति के गायक
तुलसी! तुमको शत-शत प्रणाम!

जीवन के प्रति पाश्चात्य असंवेदनशीलता व उदासीनता को कवि वीर हैक्टर की मृत्यु से (एकिलीज द्वारा अपने रथ से घिसटवाकर मरवाने) व

पूर्व की संवेदनशीलता का परिचय रावण की मृत्यु से रामद्वारा सर उतारने का उपक्रम प्रकट करता है — जिसमें शत्रुओं के विरुद्ध भी संस्कृतियों के आपसी वैचारिक स्तर की भिन्नता दिखायी गयी है। कवि का लगाव अपनी माटी से अधिक है —

ओ कवि! अपनी माटी भूला!
 पश्चिम के झूले में झूला
 लेकिन वहाँ कहाँ पुरवाई
 ओ घनघोर घटा सुखदायी
 वहाँ कहाँ कजरी की तानें
 वहाँ कहाँ विरहा के गानें
 वहाँ कहाँ कोयल की कूकें
 नहीं पपीहे की रस हूकें।
 उस बयार में क्या पायेगा?
 भीषण शीत मात्र खायेगा?
 कैक्टस ने बस खून निकाला
 ओ पहन गुंजों की माला।
 ले उधार गौरव से फूला
 ओ कवि! अपनी माटी भूला!

हमारी संस्कृति मिली-जुली संस्कृति है नाना जातियों, धर्मों और दर्शनों की संस्कृति है। इसकी सीमा बदलती रही है, भारतीय संस्कृति मुख्य रूप से आर्य, द्रविड़, गंधर्व, नाग और किन्नर जातियों की संस्कृति है। इस पर यहूदी, ईसाईयत और मोहम्मदीयत के प्रभाव समय-समय पर पड़ते रहे हैं। मध्यकालीन भारतीय संस्कृति पर मोहम्मदी या इस्लामी संस्कृति का प्रभाव अधिक पड़ा (अरब-तुर्क-पठान मुगलकालीन भारत) तो आधुनिक काल में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव पड़ रहा है। सबको मिलाकर ही इसके व्यापक रूप को पहचाना जा सकता है। आर्य, द्रविड़, और अनेकानेक जातियाँ यहाँ की मूल जातियाँ हैं। आर्य यहाँ कहीं से आये नहीं थे, बल्कि यहीं से चारों ओर गये थे। मिश्रजी की कविताओं में अपनी संस्कृति का व्यापक रूप है। वे इसके प्रति बहुत अधिक आस्थावान हैं।

अनेक प्रसंगों में वे भाव-विभोर हो गये हैं। अपने धर्म और संस्कृति पर होते हुए प्रहारों को वे सहन नहीं कर सके हैं। वे भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल स्वरूप को देखना चाहते हैं। इसकी विद्रूपता को वे देखकर

तिलमिला जाते हैं, व्यंग्य करने लगते हैं। उनमें अपनी संस्कृति, साहित्य, भाषा, दर्शन और धर्म के प्रति अपार निष्ठा है। रचनाएं यथासमय बोलती हैं। उनकी शुद्ध भावना शुद्ध अनुभूति को जन्म देती है, अनुभूति से कविता बनती है। मिश्रजी की कविताओं में सांस्कृतिक अनुभूतियों को देखा जा सकता है। उन्होंने अतीत और यथार्थ को एक साथ प्रकट किया है। पुराने प्रसंगों को नया रूप दिया है। नर को नारायण के समकक्ष प्रस्तुत किया है। संपूर्ण संस्कृतियों की रक्षा का भार नर पर ही रहता है। विश्वामित्र के लिए वे लिखते हैं। विश्वामित्र इसीलिए महान हुए कि उन्होंने धर्म को मानव रूप दिया। शक्ति को सात्विकता से परिपूर्ण किया, भारतीय संस्कृति को समर्थ किया -

जिसने धर्म को मानव-रूप दान किया, जो
शक्ति को सात्विकता से प्रपूर्ण करने में
सक्षम हुआ, जो सार्थक करता था संस्कृति को।
छलके जीवन घट में लहरे कदली-तोरण,
गूंजा शंखनाद और पृथिवी, दिगन्त, व्योम
में गूंजा एक स्वर, "विश्वामित्र की जय हो"

भारतीय संस्कृति धरती पर दिव्य संस्कृति है। 'पुरुषोत्तम' में रामायणकालीन संस्कृति हैं 'कल्पान्त' में महाभारतकालीन संस्कृति है दृष्टि में प्राचीन से अद्यावधि विश्व संस्कृति है। नेताचरित्र में 20वीं सदी की राजनीतिक संस्कृति है। 'पुरुषोत्तम' एवं 'कल्पान्त' ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महाकाव्य हैं।

भारत जब महान् देश है; द्रष्टा की आवश्यकता है। हमारा सब कुछ इतिहास और भूगोल के गर्त में दबा है। हम श्रेष्ठ हैं, पर इसको प्रमाणित करने के लिए श्रम और प्रतिभा की आवश्यकता है। कथन तो मात्र प्रत्यक्ष है। कवि ने धर्म, जाति और स्थान भेद को छोड़कर सभी विभूतियों को सराहा है। अपने उद्देश्यों को उन्होंने स्पष्ट किया है -

जड़ रुढ़ मार्क्सवाद, चिर-कालातीत गांधीवाद
इत्यादि से मुक्त, संयत, अस्मितावाद से
सम्पन्न प्रत्येक भारतीय भारतीयतावादी हो
आकाश गूंजे भारत-भारती नाद से।
साहित्य पश्चिम की अनुकृति बनकर न बिलाये

केवल कुंठा का ही नहीं, गीत आह्लाद का भी हो, समग्रजीवन की सम्यक् विवृत्ति बने साहित्य न बने प्रसारक विकृति-उन्माद का।¹

मिश्रजी ने मिश्रित संस्कृति और सभ्यता का वर्णन किया है।² इसाई, सिख, मुसलमान, हिन्दू, एक परिवार के विविध सदस्य हैं। घर ही विश्व बन गया है—

हिन्दू हैं हम पहले, आर्य-द्रविड़ पीछे हैं,
एक धर्म के अमृत से हम-सब सींचे हैं
हम सब एक विश्व की संस्कृति के टीके हैं
योग शक्ति संगीत-नृत्य में सब फीके हैं।³

उत्तर दक्षिण का कोई भेद नहीं है भारतीय अखंडित है, एक है यदि कुछ महत्व की चीजें उत्तर में हैं, तो कुछ दक्षिण में भी है। यदि अवतार उत्तर में हुए तो आचार्य दक्षिण में। इसी से उत्तरी भारत के महान तीर्थ बदरीनाथ का पुजारी दक्षिणात्य होता है। एक तीर्थ का जल दूसरे तीर्थ के देवता को चढ़ता है। उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम की सभी विभूतियां बन्दनीय हैं। हमने लोगों ने वर्ण-भेद को छोड़कर महानता की पूजा की है। वाल्मीकि से कौन घृणा करता है? क्षत्रिय राम, कृष्ण को सभी जातियाँ प्रणाम करती हैं। ब्राह्मण भी उनकी पूजा करते हैं। ऊँचे स्तर पर कुछ भेद नहीं है भेद निम्नता का द्योतक है। आज का जाति भेद तो मात्र नेताओं की ठगी है। हमारी संस्कृति तो साथ चलने, साथ खाने और साथ रहने की है। मनुष्यता हमारी संस्कृति की मूल थाती है। मानव को बांटकर कोई संस्कृति अस्तित्व में नहीं रह सकती है।

भारतीय संस्कृति मुख्यतः आस्तिक है। भारतीय संस्कृति का विकास विश्व के विविध देशों में अपने-अपने ढंग से हुआ है। जापान, बर्मा, मलेशिया, इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड, और मरिशस में आज भी रामलीलाएं होती हैं। हिन्दू, बौद्ध, जैन, मुसलमान, सब रामलीला में भाग लेते हैं। मुसलमान राम की चौकियाँ ढोते हैं। रामलीला के पात्र बनते हैं। राम दरबार को चढ़ावा चढ़ाते हैं। आज विश्व भर में राम, कृष्ण कथाएं सम्मानित हैं। हमारे महापुरुष

1. स्वर्गता, पृ. 54।

2. दे. "नेताचरित्रम्" की 'सत्ता-बीजमंत्र' सर्ग।

3. नेताचरित्रम् पृ. 112।

विश्व-पुरुष हैं। राम चिरंतन व्यक्ति तत्व और सार हैं। व्यास, पंतजलि और तुलसीदास पद लिखी गयी कविताएं अति प्रासंगिक हैं। तुलसीदास तो भारतीय संस्कृति के अमर गायक हैं -

मेरी संस्कृति के विश्वकोष के
निर्माता! जन-कवि उदार।
ओ भाषा के सम्राट् राष्ट्र के
गर्व! भक्ति पीयूष धारा!
अचरज होता तुम मानव थे
तन में था वह ही अस्थि-चाम!
ओ अमर संस्कृति के गायक
तुलसी! तुमको शत-शत प्रणाम।

महाकवि और महापुरुष तथा साहित्य आदि संस्कृति की थाती हैं। आज भारतीय संस्कृति का मूल रूप मिटता जा रहा है। अमरीका, जापान, रूस, इंग्लैण्ड, और जर्मनी, आदि हमारे आदर्श होते जा रहे हैं। हमारी संस्कृति के नाम पर कल कथा लिखा जायेगा? सब विवादास्पद हो गया है। अपने स्वार्थ के लिए लोग अपसंस्कृति को भी आदर्श मानते जा रहे हैं -

शराब को शास्त्रों में बुरा कहा गया
सुर या देवता इसे पीकर विजयी हुए
शराबी अकबर ने फतेपुर सीकरी बनवाया
शाहजहाँ ने ताजमहल।
शराब न पीने वाले औरंगजेब ने मन्दिर तोड़े
हिन्दू-मुसलमानों में फूट डाल दी
जिससे देश परतंत्र हुआ।

‘दृष्टि’ महाकाव्य में भारतीय संस्कृति विश्व की किसी संस्कृति से न्युन नहीं हैं। वैदिक संस्कृति, प्रकृति आश्रित संस्कृति, याज्ञिक संस्कृति, मध्यकाल और आधुनिक काल की संस्कृतियों पर हमें गर्व हैं। हमारा अतीत एबसे अधिक सम्पन्न है। इसी को कवि ने राष्ट्रीय संस्कृति के रूप में निरूपित किया है :

इस महान् दर्शन से आरम्भ होकर भी
भारत की संस्कृति, आह कितना अधिक भटकी है;

और, आज प्रचीन को विनष्ट करते हुए
नूतन के ज्ञानाभास में विस्मृत अटकी है।”

इसमें भारतीय संस्कृति की अतल की सम्पदा को प्रस्तुत किया है। डॉ० उमाशंकर शुक्ल उमेश के शब्दों में, “वे हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठित सहित्यकार, सुविज्ञ इतिहासकार, सुधी समीक्षक, प्रखर चिन्तक एवं भारतीय संस्कृति के संवाहक यशस्वी रचनाकार हैं।

वेद हमारी संस्कृति का मूल है। भारतीय संस्कृति के महत्तम निर्माताओं की कृतियाँ हैं — अगस्त्य, कश्यप, विश्वामित्र, भरद्वाज, पराशर, अत्रि और शाण्डिल्य तथा घोषा, अपाला, श्रद्धा, विश्ववारा, वाक् इन्द्राणी, सार्पाराज्ञी आदि ऋषिओं-ऋषिकाओं तथा मांधाता, दिवोदास सुदास, पुरवा, जैसे राजा अमर हैं। कवि की वैश्विक दृष्टि है उसका मानव भी विश्वमानव है। विश्वमानव में भारतीय मानव स्वतः समाहित है। तीर्थ, नदी, देवी-देवता आदि भी हमारी धर्मिक संस्कृति के अंग हैं।

गंगा भारत की नाड़ी, गंगा संस्कृति का जीवन।

गंगा बिना आर्यावर्त कल्पना असम्भव है।

भारतीय संस्कृति अति महान् है। यहाँ का धर्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन अद्भुत है। यहाँ मंत्र, संकल्प, अभिषेक, लोकगीत, संस्कारगीत, विवाहगीत आदि संस्कृति की पिटारियाँ हैं। यथाप्रसंग कवि ने सबको खोला है। वेदायन महाकाव्य में तत्त्वतः एवं वस्तुतः वैदिककाल को महाकाव्य में बांधा गया है। विजातीय प्रभावों से आज भारत की संस्कृति और सभ्यता का मूल रूप नष्ट हो रहा है। आर्थिक लोभ से सब चौपट हो रहा है। हमारी प्राचीनता मिटती जा रही है। आज उसको सुरक्षित रखने के लिए नये ढंग से उसे लाना आवश्यक है। ‘वेदायन’ में समग्र भारतीय संस्कृति एवं भारतीय मानव को साकार किया गया है। ‘वेदायन’ सांस्कृतिक महाकाव्य है। कवि की दीर्घ साधना का यह परिणाम है।

भारतीय नारी विवाह-बंधन में बंधकर आनंदित होती है। सुहागिनी होती है पूर्ण होती है — यह सांस्कृतिक बोध है, परम्परा स्वीकृति है—

मंत्रों के अर्थ में सोता तथा अनुजाएं
खो गयीं विश्व में एक पुरुष एक नारी
अर्थ है विवाह का, मंत्र कैवल्य का!
नारी का प्रेम नहीं तर्क वह आस्था है

नारी का प्रेम नहीं प्रश्न, वह उत्तर है,
नारी का प्रेम नहीं टीका, वह मंत्र है।¹
सप्तपदी सप्तपदी प्रोक्ति की ज्योति बनी,
नई जीवन-कविता सप्तपदी में सार्थक
मर्यादा हो गयी, गूंज उठे लक्ष कण्ठ

रामायण कालीन भारतीय संस्कृति एक पति-पत्नी की भी रही है। आज भी आदर्श है। पति-पत्नी प्रथम मिलन से अद्वैत हो जाते हैं। उनकी अनेक कविताएं वैश्विक दृष्टि से अपना विशेष महत्व रखती हैं। विश्वगुरु भारत आर्यों का आदि देश है। जग-ज्योति प्रदाता है; धर्म, संस्कृति, काव्य, कला, आदि का विधाता है। आदि ग्रंथ 'ऋग्वेद उपनिषद्' का यह उद्गाता हैं। यह ऋषियों का देश है। इसकी ऋषि संस्कृति की अपनी स्वस्थ परम्परा है। इसमें अनेक आचार्य हुए हैं। सबने अनेक संस्कृतियों का समन्वय किया है। प्राचीन और आधुनिक संस्कृतियों का समन्वय अपना विशेष महत्व रखता है। सांस्कृतिक सौन्दर्य के अनेक चित्रण मिश्रजी की कविताओं में हैं। कवि का 38 सर्गीय महाकाव्य 'पुरुषोत्तम' सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें विश्वपुरुष भारतात्मा श्रीराम के जीवन को अधुनातन दृष्टि से समलंकृत करके प्रस्तुत किया गया है। इसमें राक्षस-संस्कृति का विनाश राम के हाथों से कराया गया है। रसिक प्रसंगों को भी यहाँ ढंग से दिखाया गया है। 'पुरुषोत्तम' महाकाव्य के पांचवे सर्ग 'जनकपुर आगमन' में सीता को राम जनकपुर की वाटिका में दूसरी बार देखते हैं। सभी शृंगारिक भाव उत्पन्न होते हैं। पर मर्यादा के साथ सीता, सरोवर और वाटिका का सात्विक सौन्दर्य निरूपित है। लक्ष्मण और ऊर्मिला का वाटिका के सरोवर पर साक्षात्कार करा दिया है। यह अनुरागजन्य मर्यादित चित्रण है। इसमें मौलिकता और भारतीय संस्कृति है। 'वेदायन' में वैदिक संस्कृति को प्रस्तुत किया है। इन्द्र का महत्व इसीलिए है कि उन्होंने बल से शत्रुओं को मित्र बना लिया था। अबल की जीवन-गति मर जाती है।

आर्यों ने विजितों का विनाश नहीं किया; उनको गले से लगाया या अपनाया है। यदि आर्य शक्तिशाली न होते तो अपनी संस्कृति और सभ्यता का विकास न कर पाते। आर्यत्व गतिशील रहा है। भोगवादी संस्कृति का परिणाम पतनोन्मुखी दिखाया गया है। भारतीय संस्कृति की अमर गाथा कवि के मन में है, जिसको उसने यथास्थान व्यक्त किया है। अपनी बातों को

उन्होंने पात्रों और 'घटनाओं' के माध्यम से प्रस्तुत किया है। शास्त्र से अधिक उसने जीवन को महत्व दिया है। इसी से उसने अपने सांस्कृतिक बोध को विकसित किया है। कवि की प्रस्तुति का आधार व्यवहारिक अधिक है। उसमें अगाध भारतीयता समायी हुई है। हिन्दी में इस प्रकार की कविताएं कम देखने को मिलती हैं। इस संस्कृति के विकास में सबका योगदान है -

"वेद संस्कृति के बाहु तो भरद्वाज और,
याज्ञवल्क्य नेत्र हैं.... और राम आत्मा।"

हमारी संस्कृति में संस्कारों का प्रबल महत्व है। संस्कृत जातियों के 16 संस्कार होते हैं। जन्म याज्ञोपवीत, विवाह और मृत्यु के संस्कारों का अधिक महत्व है। वैदिक संस्कृति में इनके आदर्श रूप को देखा जा सकता है। कालान्तर में वासिष्ठी और विश्वामित्री परम्पराओं का विकास हुआ। हिन्दू संस्कृति इनके अनुसार है। इनके साथ इसमें राम की भी महत्ता है। आर्य संस्कृति में श्रम जीवन का प्राण है।

भारत की मूल्य संस्कृति आर्य संस्कृति ही है। श्रम संस्कार आचरण, ज्ञान, वैराग्य, और शील का इसमें बहुत अधिक महत्व है। राम भारतीय संस्कृति के रक्षक हैं। वे राज दण्ड और पलाशदण्ड में अंतर नहीं समझते हैं। राज्य छोड़ने और वनगमन का उनको दुख नहीं होता है। वे माता-पिता दोनों के आदेश को लेकर 14 वर्षों तक काननचारी का जीवन जीते हैं। वास्तव में वे पुरुषोत्तम राम हैं। शूपर्णखा के अनेक प्रलोभनों पर भी वे उसकी ओर आकर्षित नहीं होते हैं। वे एक पत्नी व्रती हैं, मर्यादावादी और नारी को सम्मान देने वाले हैं। परन्तु जब शूपर्णखा उनको भ्रष्ट करना चाहती है तो उसको दण्ड भी दिलाते हैं। संस्कृति की रक्षा करते हैं। यदि अपराध होता तो दण्ड भी मिलेगा सर्वत्र संतुलन बनाते चलते हैं -

तत्त्वों का सन्तुलन एवं संयमन ही आर्य,
संस्कृति का ध्येय था, प्रेय था, श्रेय था।²

भारतीय संस्कृति के अतिरिक्त यहूदी, ईसाई और इस्लाम की संस्कृतियों पर भी मिश्रजी ने प्रकाश डाला है। सब के मूल में बहुत एकता है। 'कल्पात' महाकाव्य में महाभारतकालीन संस्कृति का विस्तृत चित्रण है।

इस प्रकार कवि ने ऋग्वेद से लेकर अद्यतन काल तक की विश्व संस्कृतियों पर प्रकाश डाला है। उसने अनेक रहस्यों को विवृत किया है।

1. पुरुषोत्तम
2. पुरुषोत्तम

जीवन दर्शन

अनेक मनस्वी व्यक्तियों का अपना जीवन-दर्शन होता है। हर व्यक्ति उसका निर्वाह अनेक घटकों से करता है। साहित्य, समाज, परम्परा, आधुनिकता, कल्पना और यथार्थ को अनुभव करता है। भोगता और चिन्तन करता है। करणीय अकरणीय पर विचार करता है। इतिहास और वर्तमान को बार-बार तौलता है। जीवन-दर्शन से ही व्यक्ति की उच्चता और नीचता का पता चलता है। किसी का जीवन-दर्शन अपने हित में होता है तो किसी का दूसरे के। लोकमंगल जीवन दर्शन की बहुत बड़ी उपलब्धि है। उसका जीवन सबके जीवन में समा जाता है। या सबके लिए पूज्य हो जाता है। जो अपने को लोकार्पित कर देता है। लोक के मंगल में ही वह अपना मंगल प्रतिष्ठित देखता है। पर गुणों और अपने दोषों को देखता है। जो व्यक्ति स्वदर्शन के उपरान्त जीवन-दर्शन को बनाता है वह सदा पूज्य होता है, महान् होता है। मिश्रजी ने आत्मदर्शन पर बल दिया -

“नाटक नहीं देखता,

चलचित्र भी नहीं,

दूरदर्शन भी नहीं,

क्योंकि

मुझे अपने आप को देखना आता है”

व्यक्ति स्वयं का दर्पण स्वयं ही बनता है। संतों ने भी आत्म-दर्शन के लिए बार-बार कहा है। दुष्ट व्यक्ति सदा पर दोषों को देखते हैं। वे नारकीय होते हैं। मिश्रजी का जीवन-दर्शन उनकी कविताओं में झलकता है। उनकी कविताएं प्रायः प्रतिनिधि कविताएं हैं। उनके लिए रचित कुँवर विश्वदेव सिंह चौहान की कविताओं को देखा जा सकता है।

(1)

चिन्तन और मनन के के महर्षि
प्रज्ञा प्रतिभा के अधिनायक,

साहित्य और भाषा के माँझी
विद्या और विधि के प्रिय गायक।

(2)

गीतों को तुमने गीत दिए,
सत्त्व हो गया द्वन्द तुम्हारा,
संस्कृति और सरगम के अद्वय
तत्त्व नमन का गंध तुम्हारा।

(3)

तुलसी सूर कठिन केशव की
अभिव्यक्ति तुम्हारी कनकलता-सी,
पन्त-प्रसाद-निराला की
हर पंक्ति बना दी शांति ऋचा सी॥

(4)

धरती गगन और ऋतुओं के
दर्शन-पर्शन को मथ डाला,
कितने प्रिय, कितने अनुरागी,
जीवन और जगत लिख डाला॥

‘बौद्धिक रस’ संग्रह की कविताओं में उनका संघर्षशील व्यक्ति व्यंजित है। इनकी उच्चता कवि का ऊँचा स्थान बनाती है। ये मौलिकता, चिन्तन, तथा भावुकता की दृष्टि से असाधारण हैं। ये कालान्त की कविताओं के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। इनमें रस एवं विचारोत्तेजना का संगम है। कवि का जीवन-दर्शन युगबोध से ओतप्रोत है। कवि की मानसिकता का वर्णन है जो प्रतिभा की समाधि या विद्वान प्राध्यापक होता है। अन्ततः जीवन एक शाश्वत असंतोष है। जीवन देखने में बड़ा रंगीन और अन्ततः कुछ नहीं है। जीवन की सार्थकता कुछ देने में है। ‘टूटते कगार’ कविता में उन्होंने अपनी गाथा कह दी है। ‘जीवन का प्याला’ कविता में उन्होंने आज के व्यक्ति को परिभाषित किया है। आज का आदमी अपने जीवन को ही सबकुछ समझता है।

अज्ञान एवं अहं में डूबा रहता है। इसी से वह अपूर्ण या रीता रहता

है —

आज तक मैंने नहीं,
देखा अपने से
अधिक महान् व्यक्ति
इसीलिए, कभी-कभी ही
शिथिल हो पाती है
मेरी जीवन-अनुरक्ति।
मेरा महान् अहम्
यथा समय नीचे झुकता
यथा समय धरती पर
रहता, वही पूर्ण, है।

इसी प्रकार 'रूप' शीर्षक की कविता में कवि ने बड़ी निर्ममता से अपने को व्याख्यायित किया है। कहीं-कहीं सन्तों-सी फटकार है -

रूप सेमर का फूल,
रूप कर्दमात्मक सुमन,
बुद्धिहीनता के वन में,
जिसका विकास होता,
रूप शिरीष पुष्प, जो
सहन नहीं कर सकता
चिन्तन-पत्र का संभार,
उस पर प्रलेप और,
अलंकार ही छजते,
रूप बुद्धि को कभी,
नहीं पहचान सकता,²

'वस्त्र' शीर्षक की कविता में कवि ने वस्त्रकी परिभाषा और उपयोगिता के माध्यम से जीवन-दर्शन पर प्रकाश डाला है। वस्त्र तन और मन दोनों को ढकता है। वह तन, मन और आत्मा का स्थूल परिधान है। काम का व्याभिचार वस्त्र न होने पर अधिक होता है। कवि की परिभाषा अन्य से भिन्न है -

1. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 63

2. उपरिक्त, पृ. 68

वस्त्र कपास नहीं, लज्जा से बनता,
 वस्त्र कपास से नहीं, सज्जा से बनता,
 हम उसे शारीरिक समझते, पर मानसिक वह,
 ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

वस्त्र के वर्णों में रस का आवास है,
 वस्त्र एक कविता है,
 वस्त्र एक कला है,¹

इसी प्रकार उनकी 'नैतिकता' शीर्षक की कविता है। नैतिकता के आडम्बर में व्यक्तिगत जीवन का विकास बाधित हो जाता है। भारत इसका उदाहरण है। कवि ने इसको व्याख्यायित किया है —

नैतिकता सत्य की कारा का नाम है।

ऊपर से जीवन इसमें

अन्दर मुर्दनी छाया,

देख नहीं पाती यह

जीवन की गहराई।²

अवस्था के अनुसार जीवन-दर्शन रहता है। अतः इसका अवस्थाजन्य क्रमिक विकास होता है। सभी अवस्थाओं के अपने गुण-दोष होते हैं। 'अन्धे का आत्म निवेदन' कविता बहुत सारगर्भित है।

मैं प्रकाश देखता नहीं, अनुभव करता।

मेरे लिए सुन्दरता-असुन्दरता श्रुति का विषय।

जीवन का नाटक मेरे लिए श्रव्य काव्य, आह।

मेरी साँस है अभाव की कराह।

द्राय के युद्ध की जननी है मेरी शांति³

अनेक विवशताएं और विडम्बनाएं हैं — जिनको अन्धा भोगता है। फिर भी वह सब कुछ नियति का परिणाम मानकर जीता है। कविता कहती है कि तर्क से चाहे जो सिद्ध कर दिया जाता है, परन्तु यथार्थ को नकारा नहीं जा सकता हैं। सबसे सत्य वही है — जिसको लेकर प्राणी जीता है। मानव की अदम्य जिजीविषा होती है, कि हम सबके उपरान्त जीते रहें। मगर उसकी त्रासदी उसको सदा पकड़े रहती है।

1. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 81

2. उपरिवत, पृ. 82

3. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 84

‘मैं अकेला हूँ’ (बहादुरशाह जफर संग्रह) में आत्माभिव्यक्ति और रहस्यवाद है। कवि ने एकान्त में बहुत ढंग का कहा है। ‘वर्ड्सवर्थब्लिस’ भी एकान्त से जुड़ा है। कवि ने अपनी एकान्तिक साधना की चर्चा की है। कवि ने चिन्तन अध्यात्म और आस्तिकता का सहारा लिया है। पुनर्जन्म, स्वर्ग, नरक और मुक्ति का मनोवैज्ञानिक महत्व भी स्वीकार किया है। नियति, भाग्य, ईश्वर, और आशीर्वाद में उनकी आस्था है। जागृत, स्वप्न और सुसुप्ति इन जीव की तीनों अवस्थाओं को उन्होंने स्वीकार किया है। उनके जन्म से जुड़ी लम्बी घटना का वर्णन ‘देवी के दर्शन’ (बहादुरशाह जफर संग्रह) कविता में है। उनका जन्म जालपा देवी (उन्नाव) के दर्शन का फल बताया जाता है। काशी के एक महन्त ने उनको गोद लेना चाहा था। कवि ने अपरिसीम नीड़ रूप ईश्वर को माना है। ईश्वर मनुष्य का सबसे बड़ा आविष्कार है। जालपा देवी के प्रति विश्वास कवि का अपना आविष्कार है। वह उनके दर्शन के लिए व्याकुल रहता है। किंतु वह सन् 1965 ई. में दर्शन करने जा पाता है। उसको आस्था का सुख मिलता है। आत्मबोध उत्पन्न होता है। कविता का विषय स्वयं कवि भी हो सकता है। मैं शैली का प्रयोग है। मंदिर, गाँव, बाग और कुएं के सजीव बिम्ब तथा कवि का उनसे लगाव स्पष्ट है। आस्तिक स्मृतियाँ साकार हो जाती हैं। देवी वाङ्मय या शाक्त साहित्य स्मृति में घूमने लगता है। कवि का आत्मसंघर्ष है। धर्म, कर्म, काम, और मोक्ष की चर्चा है। व्यंजना और अमिधा में सब कुछ है। कवि की मानवी जीवन-दर्शन सामने आ गया है -

नास्तिक हो या आस्तिक,
मानव के लिए श्रद्धा,
आवश्यक है। मुझको.....¹

आस्था, वायु और इश्वर सी स्पष्ट है। कवि ने देश, इतिहास संस्कृति ज्ञान और स्थान के प्रति आस्था व्यक्त की है। इसके साथ तीर्थ की कमियों को कवि ने कहा है। यथार्थ बोध भी है। कवि की आस्था अतीत और वर्तमान दोनों में समान रूप में वह देवी से आशीर्वाद मांगता है। गूंगे की अन्तर्व्यंथा में सबकी (कवि की भी) अन्त पीड़ा है। सब विधि का व्यंग्य है। प्रकारान्तर से हमारी मान्यताएं प्रस्तुत हैं। मनोविकार व अनुभूति की अभिव्यक्ति है। जीवन-दर्शन के लिए अनुभूति और मर्म का बहुत अधिक महत्व होता है। कविता का दर्शन ही कवि का जीवन-दर्शन होता है। अंधे,

गूंगे, बहरे और लंगड़े की सही अभिव्यक्ति है। मिश्र जी ने "विकलांगता में रुचि ली है, मेरा जीवन एक अव्यक्त पहेली" जिसको निर्मम संसार बौरा कहता है। वह व्यक्ति जो तन की स्वच्छता से लेकर भोजन तथा वस्त्र आदि तक में पराश्रित हो-वह इन अपंगों तक भी बेकार है। गूंगा कहता है—

"जीवन में मुझसे भी,
बड़े दुखी विद्यमान,
हैं, यही मेरे दुख का
आश्वासन है... मैं कितना,
विवश, निरुपाय हूँ,"²

वह दर्पण कविता में जीवन-दर्शन को संकेत से कहा गया है। दर्पण जीवन का सबसे बड़ा महाकाव्य है। कविता के पात्र दशरथ (भारतीय) एवं सैंफो (प्राचीन यूनानी कवयित्री) हैं। विचित्र समन्वय और इतिहासबोध है। इतिहास, भूगोल, संस्कृति और सभ्यता का निरूपण है। दर्पण का व्यापक अर्थ लिया गया है। कवि का इतिहास बोध जीवन-दर्शन से समन्वित है। 'बादल (बहादुरशाहजफर) कविता में भी कवि का जीवन-दर्शन है। मानव-सा सबका चित्रण है। कवि ने जीवन के सुख-दुःख और विरोधाभासों को कहा है। सबके बीच से गुजरना जीवन-दर्शन है सबमें अपने को देखना या अपने में सबको देखना कवि की साधना है। मिश्र जी का जीवन-दर्शन वैश्विक आयाम को संजोये हुए है। उन्होंने व्यापक सन्दर्भों को स्पर्श किया है — 'सर्वश्रेष्ठ' वस्तु क्या कविता में उन्होंने दिखाया है कि जिसको जिस वस्तु की आवश्यकता होती है — उसको वही चीज अच्छी या श्रेष्ठ लगती है—

मानव रे, तेरा चिन्तन
कितना अधीर है!
तेरा सत्य सत्यनिधि का
चुल्लू भर नीर है।³

"उनके जीवन की यह विशेषता रही है कि वे कभी अनुभूति को शामिल नहीं होने देते। अनुभूति-सत्य को उररेने में उनकी कोई सानी नहीं है। वे अनुभूति तस्कर नहीं अनुभूति सर्जक हैं।"⁴

1. उपरिखत, पृ. 55

2. बहादुर शाह जफर, पृ. 56

3. डॉ. रामप्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताएं, पृ. 6

4. डॉ. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश' समीक्षा से।

“निश्चय ही व्यसन मुक्त जीवन” सरलता और सादगी, लंगन और परिश्रम ऐसे गुण हैं — जिनके सहारे मनुष्य उन्नति के शिखर तक पहुँच ही जाता है। ‘सादा जीवन’, उच्च विचार, अब एक सिद्धान्त नहीं प्रकट सच्चाई है जिसके साक्ष्य में प्रत्यक्ष खड़े हैं। महान् साहित्यकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी की जीवन गाथा केवल आदर्श ही नहीं मानव समाज के लिए एक धारणीय सन्देश है। राज किशोरी का चरित्र नारी समाज के लिए प्रकाश स्तम्भ है”¹।

परिवारिक जीवन में उन्होंने बहुत उतार चढ़ाव देखा। धैर्य से कार्य किया वे छले गये, पर उन्होंने किसी को छला नहीं। ‘स्वर्गता’ सर्गों के काव्य में उन्होंने अपनी व्यथा कथा कही है। उन्होंने पत्नी पर सदैव विश्वास किया। वे सदा पेसा उनके पास रखते थे। कोई बात उनसे नहीं छिपाते थे, सम्मान करते थे —

नारी सर्वोपरि सत्य

चिति का प्रकट नृत्य²

महानतम् पुरुष को स्त्री जन्म देती है। अतः नर नारी में समभाव होना चाहिए। स्त्री पुरुष को महान् बनाती है। ग्रामीण और शहरी जीवन के अनुभव बड़े सटीक हैं।

कवि ने जीवन को काव्य कला आदि से ऊपर माना है —

काव्य नहीं यह कवच है, झेल गया आघात,
जिजीविषा का प्राण है, विनिगीषा का गात,
जीवन से बढ़कर नहीं धर्म, कला औ काव्य,
जीवन सबसे खेलता, केवल यह संभाव्य,
अतः नहीं कोई कला, जीवन का उद्गार
लाभ उठायेगा वही जो करता सत्कार।³

तथाकथित बड़े लोग जिनके कारण खून की नदियाँ बहीं, अपार धन की हानि, हुई, देशबँटा, संस्कृति धर्म, परम्परा को क्षति पहुँची, उनसे वे सामान्य लोग अच्छे हैं, जो अपना कार्य करते और मजदूरी से पलते रहे, अवसर आने पर देश के लिए बलिदान होते रहे हैं। महानता ताज में नहीं, त्याग में होती है। वैषम्य में नहीं, साम्य में होती है। भारतीय कृषक में होती है।

1. गोमती प्रसाद मिश्र ‘अनिल’ की समीक्षा से।

2. स्वर्गता, पृ. 11

3. स्वर्गता, पृ. 1

दाम्पत्य जीवन को उन्होंने चिरन्तन नाता माना है। चाहे जो सत्य हो, पर इससे बड़ी शांति और संतोष मिलता है -

लेकिन हमारा तुम्हारा दाम्पत्य अडिग,

था - लगता रहता चिरन्तन यह नाता था।¹

स्वार्थपरता को मिश्रजी ने स्वीकार किया है -

नर हो या नारी, सभी स्वार्थग्रस्थ-दुर्बल हैं

बच्चे-पशु-पक्षी तक स्वार्थ ही साधते²

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

बधू-आगमन पर, चतुर्सी अनुशासन का,

प्रचलन परम्परावादियों में चलता है

इसके प्रवर्तक संयमवादी थे, ठीक थे,

संयम रहित काम जीवन - गौरव को छलता है

पति-पत्नी-प्रेम-जीवन व्याप्त तप है, इससे

शीतलता प्राप्त होती, प्राण नहीं जलता है

यह शरीर टीन का बर्तन नहीं हैं जिसमें

जरा-सी आँच पा जीवन उबलता है।³

समझौतावादी दृष्टि है। प्रेम को कवि ने बहुत महत्व दिया है।

समझौतावादी का आधार भी प्रेम ही है।

"प्रेम जहां सुख वहां तत्प"⁴

अपने पर हुए अन्यायों का कवि ने स्पष्ट उल्लेख किया है। उसने शोषण का सदैव विरोध किया। इसी से अनेक स्थानों पर उसको नौकरी करनी पड़ी। कवि ने पराजय को नहीं स्वीकार किया है -

मेरी संस्था में सभी करते थे अन्याय

क्योंकि ज्ञात था दल नहीं, एकाकी निरुपाय।

सदा आयकर अधिकतम् और अनुचित तक काट

हंसते भी, यह जानते विषय न ज्ञात सपाट।⁵

1. स्वर्गता, पृ. 21

2. स्वर्गता, पृ. 25

3. स्वर्गता, पृ. 23

4. स्वर्गता, पृ. 32

5. स्वर्गता, पृ. 55

संस्थागत शोषण के साथ-साथ कवि को घरेलू भाषण स्वार्थपरता और विविध अन्यायों को झेलना पड़ा है। यद्यपि कवि ने अपना स्वार्थ कभी नहीं साधा पर वह क्रोध और विरोध करता रहा। इसके उपरान्त भी पत्नी सब कुछ सहन करती रही। कवि ने नियतिवाद को अस्वीकार किया है। इसके साथ अपने जीवन के विकास में पत्नी के प्रेय को अस्वीकार किया है। के. श्रेय को स्वीकार किया है—

आह, मैं नियतिवादी नहीं, बुद्धिवादी हूँ,
आह, मेरा परिवार निपट स्वार्थवादी था,
यद्यपि मैंने कभी भी अपना स्वार्थ साधा नहीं,
सत्य पथ पर ही चला, दान अविषादी था।
फिर भी मैं काम-क्रोध विशेषतः घातक क्रोध,
का आखेट सदा रहा, भीषण प्रमादी था,
तुम प्रायः निर्दोष पावन चरिता रही,
तुम्हारे ही कारण जीवन सीमित-आह्लादी था।¹

हिन्दू शब्द को लेकर भी उन्होंने अपना मत प्रस्तुत किया है — हिन्दू साम्प्रदायिक नहीं भारतीयता का निर्माता है। सबसे खिलवाड़ करने वाले नेताओं पर कवि ने करारा वंग्य किया है, धिक्कारा भी है। कवि की दृष्टि वैश्विकता है। तदनुसार हमारा सब कुछ अभेदमय है। शूद्र, ब्रह्माण, क्षत्रिय और वैश्य का बटवारा अपना है, मध्य कालगत और आधुनिक कालगत है। प्राचीन काल में ऐसा नहीं था। योग्य की पूजा सदा हुई है। मनुष्यता सबसे बड़ी वस्तु है।² “कवि को हिन्दी हिन्दुस्तान तथा यहाँ के वासियों से प्यार है, लगाव है। राष्ट्रप्रेम उनके हृदय में भरा है। राष्ट्र की अस्मिता, सभ्यता, संस्कृति, संप्रभुता एकता अखण्डता से खिलवाड़ करने वाले देश के कर्णधारों के प्रति उनके हृदय में आक्रोश है और इसी आक्रोश की अभिव्यक्ति इस काव्य में है। इसकी एक-एक पंक्ति पूर्व अथवा तर्तमान किन्तु भ्रष्ट चरित्र नेताओं के गाल पर करारा तमाचा है। धर्मनिरपेक्षता तथा सम्प्रदायिकता की आड़ में घृणा, वैमनस्य, अलगाव तथा सौहार्द को क्षतिग्रस्त कर देश के विकास एवं प्रगति में बाधक नेताओं की उन्होंने जमकर खिंचाई की है।³ वास्तव में हम भारतीयों को आपस में लड़ मरने की रूपरेखा कौन तैयार

1. स्वर्गता, पृ. 62

2. दे. हिन्दू जागृति शीर्षक कविता, नेताचरित्रम्

3. समीक्षा — ‘नेताचरित्रम्’ — समीक्षक स्व. डॉ. मेघासिंह चौहान

कर रहे हैं? हिन्दुस्तान से हिन्दुओं की जड़ें उखाड़ फेंकने की साजिश कौन कर रहा है? मन्दिर-मस्जिद जैसे देश के कोने-कोने में अनेक विवाद खड़े करके हमें कौन लड़ा रहा है? इस सभी प्रश्नों का सशक्त उत्तर प्रस्तुत करता है काव्य नेताचरितम्।¹

मिश्र जी का जीवन-दर्शन सम्प्रदाय, जाति, दल और क्षेत्र से ऊपर का है। उन्होंने सबको समेटकर मानवीय दृष्टिकोण के साथ विश्व परिवार बनाने की बात की है। दलितोद्धार और अद्वैत का दर्शन उन्होंने, अपनी कविता के माध्यम से दिया है। वे निष्पक्ष हैं। चिन्तक के रूप में हमारे सामने आकर तद्वत बने रहते हैं -

मेरा कोई दल नहीं, ना ही वाद-विवाद,
मेरा भारत एक धन, उसका ही जयनाद।
भारत मेरा प्रण है, भारत मेरा गान,
भारत ही सन्देश है, भारत ही आह्वान।
भारत मेरा मर्म है, भारत मेरा धर्म,
भारत मेरा वर्म है, भारत मेरा कर्म।²
झुका नहीं, टूटा नहीं, सहे बहुत आघात,
अन्त समय तक करुंगा, भारत की ही बात।³

रामजन्मभूमि के मंदिर के गिराने पर कवि ने लिखा है -

राम की अयोध्या ने एक नेतृत्व दिया,
हिन्दुत्व आज हुआ गौरव से कांत है।
जिस-जिस ने जान पर खेल कर तोड़ा इसे,
या गिरा या मरा वह-वह संभ्रांत है।⁴

मिश्रजी हिन्दू मानसिकता के हैं। इस्लाम नाम पर कलह करने वालों का उन्होंने विरोध किया है। हिन्दू जागरण के लिए उनकी अनेक कविताएं हैं। वे कत्तई नहीं पसन्द करते कि लोग हमें काफिर कहें और उन्हें महान् कहें। हिन्दू कभी काफिर नहीं हो सकता है। राष्ट्रभक्त मुसलमानों की उन्होंने वन्दना भी की है। उन्होंने सबको ईश्वर की सन्तान माना है। कर्मवाद को

-
1. समीक्षा - 'नेताचरितम्' - समीक्षक - डॉ. एस. के. शुक्ला
 2. नेताचरित्रम् पृ. 5 (भूमिका)
 3. नेताचरित्रम् पृ. 6
 4. नेताचरित्रम् पृ. 106

उन्होंने मनोवैज्ञानिक महत्व दिया है। कर्म अच्छा है, तो उसका फल भी अच्छा होगा। कवि ने छूआ छूत की निन्दा की है। नारी जागरण की उन्होंने सराहना की है। वही जीवन सफल है जो बिना भेद-भाव का सबके साथ समन्वित होता है—

हिन्दू-मुसलिम-सिख-ईसाई एक मूल है
इनको अलग समझना सबसे बड़ी भूल है
इन्हें खपाने में असफलता विकट शूल है
धर्म तुम्हारा सागर, विस्तृत है, अकूल है।¹

उन्होंने हिन्दू की व्यापक परिभाषा दी है। हिन्दू वह है — जो बिछुड़े भाई को गले लगावे, जो खानपान में अन्तर के बावजूद एक हो, लौटे हुए लोगों से सम्बन्ध स्थापित करे तथा जिसमें सेवा भावना हो। हिन्दू धर्म मूर्तिपूजा का मानता है। इसके लिए उसकी अपनी कुर्बानियाँ हैं। इतिहास साक्षी है। कोई मूर्ति की पूजा नहीं करता तो यह उसका स्वाधिकार है। परन्तु जो मूर्तिपूजा करता है वह उसकी आस्था की बात है। सभी धर्म के लोग अपने प्रवर्तक की पूजा करते हैं। ईसा की मूर्ति पूजी जाती है। मुसलमान मजार की पूजा करते हैं। यह सब पूजा ही तो है, उन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था से दूर रहने को कहा है। कवि ने आर्यों को भारत का मूल निवासी माना है।² यह विदेशी इतिहासकारों की चाल है। अन्य देशों की भी चाल है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई सब भाई-भाई हैं, पर इतिहास हिन्दू की अगुवाई को स्पष्ट करता है। हिन्दुओं ने अधिकांश संस्कृत और कला की रचना की है, हिन्दु ने ही ईश की पहचान बतायी। हिन्दुओं की दुर्दशा पर मिश्र जी ने दुःख व्यक्त किया है — क्या भारत में ही अल्प संख्यक हैं? पर हमारे देश में तो बहुतसंख्यक हिन्दू ही दीन-हीन है। अल्प संख्यक तो पर्सनल लों में भी विशेषाधिकार प्राप्त है। हिन्दू आज कम पीड़ित नहीं है जबकि उनकी बहुत अधिक देन है, उनकी महानता स्वयं सिद्ध है —

हिन्दू से है हिन्द महासागर की गाथा
हिन्दू का है नाम हिमालय जग का माथा,
हिन्दू से है अतुलित गंगा पावन पाथा,
हिन्दू के समतुल्य कौन होगा? है? या था?³

1. नेताचरित्रम् पृ. 111

2. नेताचरित्रम् पृ. 116

3. नेताचरित्रम् पृ. 121

हिन्दुओं ने 'ऋग्वेद' की रचना की, उपनिषदों को रचा, गीता को व्यवहारिक रूप दिया। संस्कृत के महान् ग्रन्थों रामायण और महाभारत की रचना की -

थे राजेन्द्र चोल, शैलेन्द्र, विजय निर्माता,
बर्मा, कम्बोडिया और सिंहल यश गाता
ब्रह्मदेश, कम्बुज, यव, स्वर्ण, मलय रसरता,
हिन्द महासागर से है हिन्दू का नाता।¹

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के पुरुषार्थ पर भारत के सदृश किसी अन्य देश ने विचार नहीं किया है। हिन्दू होने का हमें गर्व होना चाहिए। हमें अपने इतिहास को बार-बार पढ़ना चाहिए। अपनी कुर्बानियों का स्मरण करना चाहिए। खाने और सोने से कुछ नहीं होता। पूरा देश कभी गुलाम नहीं रहा। हमें कोई नहीं मिटा सकता। फिर भी धर्मनाशक तत्वों के साथ छद्म हिन्दुओं से बराबर सावधान रहना चाहिए।

कवि को गोवध पर खेद है। संविधान में निषेध होने पर भी आज तक बन्द नहीं हो सका। मार्क्सवाद में कवि की आंशिक अनास्था है। साम्यवाद वहाँ क्यों नहीं आया जहाँ दक्षिण पंथी सरकारें हैं? आदमी कितना पिछड़ा है। सबसे अधिक समय को व्यक्ति नींद में खो देता है। कवि की आस्था सक्रियता में है भाषणबाजी और दिखावे में अनास्था है। पक्ष-विपक्ष दोनों नेताओं के प्रति असंतोष, विद्रोह और दुःख है। विदेशी तुष्टीकरण की नीतियों पर कवि को खेद है। आज की आर्थिक अव्यवस्था के लिए सभी नेता जिम्मेदार हैं। देश में गरीबी है, पर नेताओं के खाते विदेशों में चल रहे हैं। देश में मरते हुए लोग हैं, उसके साथ कुछ ऐसे भी लोग हैं - जिनके सामने पूंजी को रखने की समस्या है। देश दशा और पड़ोसी आक्रमणों से कवि को क्षोभ है। कवि ने व्यापकता से सोचने और चरित्र को बनाने के लिए लिखा है। हिन्दू सिख एकता का प्रतिफल देखें -

सिख भारत की बाँह, न इसको काटो,
सिख हिन्दू की छाँह, न इसको छाँटो,
सिख नानक की आन, न इसे बिगाड़ो,
सिख गोविन्द की शान, न इसे पिछाड़ो।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

हिन्दू-सिख तन-प्राण, अलग हों कैसे ?
भेदवादियो! व्यर्थ प्रलय क्यों ऐसे?¹

कवि सर्वत्र आस्तिक है। जब सम्पूर्ण आलम्बन असफल हो जाते हैं, तो परम तत्त्व साथ देता है। वह अनार्थों का नाथ है।

कवि के जीवन-दर्शन में समन्वय की भावना है। समन्वय भारतीय साहित्य की मौलिक विशेषता है। इसी में पूर्णत्व है। आज के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति का विकास चतुर्दिक हो -

यही एक संकल्प कि हम सब सैनिक होंगे
रहे हाथ में कलम, राइफल या कि हथौड़ा,
हसिया, हल की मूठ, सभी का लक्ष्य एक है।²

जय जवान जय किसान की भावना से ही भारत और भारती की उन्नति हो सकती है। अखण्डता और एकता का कवि को बराबर ध्यान है।

कवि का जीवन-दर्शन राममय है। उसका सब कुछ राममय है। भारत राममय है। यह देश राम का है, क्योंकि तीर्थस्थल यही बताते हैं। जैसे पंचवटी, रामेश्वरम, चित्रकूट, अयोध्या आदि, हमारे त्योहार भी यही कहते हैं। सब राममय है। होली, दीपावली, दशहरा सब के गीत राममय हैं। फाग राम के नाम से अधिक गयी जाती है। आज भी हमारे रघुबीर, अवध में होली खेलते हैं। लक्ष्मण और सीता की भी उसमें सहभागिता रहती है। कवि की आस्था देश, देश के देवता, महापुरुष, तीर्थ, व्रत, त्योहार, रचनाकार सब में है। यह देश राम का है। राम चिरंतन व्यक्ति, तत्व और सार है। पूर्वाग्रहस्त होकर उन पर विचार नहीं करना चाहिए। उनकी भक्ति सहज रूप से करनी चाहिए। राम विश्वनन्द्य हैं। इसी से उन पर विदेशी तक मुग्ध है। राम अजेय व्यक्तित्व हैं। उनको कभी नहीं भुलाया जा सकता। कवि ने व्यास की भी लम्बी वन्दना की है, क्योंकि उन्होंने जीवन और जगत के दर्शन को सर्व समक्ष किया है। 'तब, अब और आगे' (सर्वभौम) कविता में कवि कहता है -

मृत्यु की चिन्ता नहीं, मै, अमर, शाश्वत जीव,
प्रकट नश्वरता बनी है सृजन ऊर्जा मूल,

1. जयभारत जय भारत प्रहरी कृषक, श्रमिक, जय, पृ. 16
2. उपरिचित पृ. 12

जिऊँ तो अनुभूति का और दृष्टि का वरदान,
मरूँ तो नवता चिरंतनता सतत - अनुकूल।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

भारत में भारतीय होना अपराध है

इस अपराध का दण्ड

में पा रहा,

(सार्वभौम)

“कबीर का — सा जैसा अक्खड़पन, निरला, सा फक्कड़पन लिए यह सरस्वती पुत्र अकेले ही राह पर चलता रहा है, और अब हिन्दी का रथ 20वीं सदी के साठ के दशक के बाद के साठोत्तर ‘तीस-वर्षीय शून्य’ से उबारकर पुनः राजपथ पर चल निकला है। डॉ. रामप्रसाद मिश्र जैसे सुधी समालोचक इस रथ के कुशल सारथी हैं।¹

काव्य के माध्यम से उन्होंने देशी सीमाओं से निकलकर विश्वजनीन अस्मिता को स्वीकार किया है। भारतीयता को भी उन्होंने अपने जीवन-दर्शन से वैश्विक रूप दिया है। ‘इन शब्द चित्रों में अतीत की छाया है, वर्तमान का यथार्थ है और भविष्य के सुनहरे स्वप्न हैं। व्यक्ति को केवल परिवार समाज या देश से ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व से जोड़ने का; बूँद को समुद्र का अंग बनकर आपने अस्तित्व पर गौरवान्वित होने का सन्देश है। यह जीव का ब्रह्म में विलय नहीं है, ब्रह्म का अंग बनकर भी अपने अस्तित्व पर गौरव करने का प्रश्न है।”²

कवि का जीवन-दर्शन समाजवादी है। वह पूंजीवदी व्यवस्था का विरोधी है। कवि को दुख है कि पूंजीवाद अपना वर्चस्व कायम किये हुए है। वास्तविक हुकुमत इसी की है। स्वर्णिम अतीत को नष्ट करने का श्रेय इसी को है। पूंजीवाद ने सबको छल लिया है। मानव के सहज रूप को पूंजीवाद ने ही समाप्त किया है। कवि ने अपने खोये हुए अतीत पर बार-बार पश्चाताप किया है।³ कवि सहज प्राकृतिक जीवन की ओर लौटना चाहता है —

-
1. सार्वभौम की समीक्षा — नरेन्द्र। (पूर्व-संपादक ‘राष्ट्रधर्म’ लखनऊ)।
 2. डॉ. भगवत शरण अग्रवाल द्वारा लिखित ‘सार्वभौम’ की शाश्वतता शीर्षक समीक्षा पृ. 1 से।
 3. दे. सार्वभौम पृ. 42-43

कहाँ गये वन? वे कुस-काँस?
 कहाँ लताएं? मोहक वाँस?
 झाँसे में मानवता फाँस,
 तूने लूटा मुझे, विकास!'

आज का शहराती जीवन मानव को शीतलता और शांति नहीं दे पा रहा है।

माहन्-विभूतियों की विसंगति पर कवि ने पीड़ा प्रकट की है। सच्चाई को स्वीकार करने और उसको कहने की कवि में अपार मेधा है। दुनिया या समाज के दर्शन को भी उन्होंने कहा है। इस सन्दर्भ में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' शीर्षक कविता को देखा जा सकता है।² दुनिया का हर विशिष्ट मानव पागल, सनकी और असामान्य कहा गया है। निराला ने अपने जगत के दुख को मिलाकर काव्यरूप दिया है। उस जीवन को कवि नमस्कार करता है। जो सबके काम का होता है, जो सबको आकर्षित करता है। अनेक दुर्गणों से मुक्त लोगों को भी पवित्र कर देता है। असमर्थ को समर्थ बना देता है, जो आत्मा प्रेत, मन, प्राण, और बुद्धि का मन्दिर है। उस तन को नस्कार जिसने कला कविता दी, अजंता, खजुराहो, और कोणार्क भी दिये, पृथ्वी पर जिसने स्वर्ग को उतारा या पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाया उन सब को नमस्कार है।³ आँखें सबको जोड़ देती हैं। उनमें अद्वैतवादी गुण होते हैं। वे अन्तः की कथा कहती हैं। मानव मन को पहले भावना फिर शरीर से जोड़ती है। आनन्द देती है। वे बेतार का तार होती हैं। आँखें ही मानव को दृष्टा और स्रष्टा बनाती हैं।

प्रेम का जीवन में महत्व है। प्रेमतत्त्व बहुत बड़ा तत्त्व है। प्रेमतत्त्व के कारण ही परम तत्त्व का सृष्टि के रूप में विस्तार है। अपने गुणों को सृष्टि के घटकों में प्रतिष्ठित किया है। प्रेम, ही सबसे बड़ा, शाश्वत, सुन्दर और सत्य गुण है। आकाश, पृथ्वी, नदी, वन, पशु, पक्षी, नर, नारी और प्रकृति का सौन्दर्य उसको बार-बार आकर्षित करता है। नारी का सहज सुन्दर रूप प्रस्तुत है न कि वासना का। स्त्रैणता भी नहीं है। कवि का आस्तिक दर्शन सर्वत्र फैलता हुआ है। उसमें नारी के प्रति संवेदना है। वह

1. सार्वभौम पृ. 43

2. सार्वभौम पृ. 138

3. दे. सार्वभौम पृ. 145

4. सार्वभौम पृ. 43

लक्ष्मी, दुर्गा, और सरस्वती है। वह भोग्या नहीं पूज्या है। सब कुछ कहने के लिए कवि के पास पावन हृदय है। उसका जीवन-दर्शन मानवतावादी, सत्य, शिव, सुन्दरता और अभिव्यक्तिवादी है। उसकी कविता चमत्कार से दूर, हृदय और मन की अनुभूति तथा पवित्रता से उभरकर बनी है। मानवतावादी के साथ-साथ कवि शोषण विरोधी है। रुपये पर श्रम को खरीदने वाला मालिक कवि को प्रिय नहीं है। उसको श्रमिक प्रिय है।¹ वह पूँजीवादी व्यवस्था से वितृष्णा है, जो सब कुछ खरीदती है। आर्थिक वैषम्य का कवि विरोधी है। एक ओर श्रमिक घिसता है और दूसरी ओर पूँजीपति मोटा होता है, फिर भी हमारा नेता समाजवाद, साम्यवाद और रामराज्य का नारा देता है।

भारतीय संस्कृति व सभ्यता मिली-जुली है। मिजो, गंधर्व, किन्नर, नाग, कोल, किरात, भील, शबर, वानर, भल्ल, द्रविड़, ईरानी, शान, आर्य, शक, हूण, अरब, तुर्क, पठान, मुगल, पुर्तगाली, डच, फ्रेंच, अंग्रेज, इत्यादि से सम्बद्ध सभी देशवासी भारतीय हैं। कवि का सार्वभौमिक दृष्टिकोण है। दृष्टि ऊँची करने पर कहीं कोई भेद नहीं है। प्रमाण सभी प्रकार के हैं। राजा, ऋषि और रंक एक हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र का भेद स्थूल भेद हैं। कवि ने जातिवाद में आस्था नहीं व्यक्त की। सभी भारतीय हिन्दू हैं, यह अवश्य मानता है। हिन्दू शब्द सबको मिलाता है।

अन्याय के प्रति कवि में क्षोभ है। स्वयं अपने पर किये गये अन्याय उसको बार-बार उद्देलित करते हैं। कविता में मानव के समग्र जीवन की कहानियाँ प्राप्त हैं। कवि ने किसी प्रकार के शोषण का विरोध किया है। वह भेड़िये से प्रकाशकों और उनको पनापानेवाली पूँजीवादी व्यवस्था से भी क्षुब्ध है। वह किसी वाद के पीछे पागल नहीं है। दल, समूह और सम्प्रदाय के पीछे नहीं है। वह अन्धानुकरण करने कला और व्यक्तिवादी नहीं है। वह बकवादी और चापलूस भी नहीं है। कवि में विरोधों को झेलने और न्याय के साथ एकाकी चलने की क्षमता है। उसमें जिजीविषा है। तपेदिक का रोगी होते हुए भी उसका उत्साह कहीं कम नहीं हुआ है। सबके उपरान्त उसको पढ़ने-लिखने की धुन सदा रही है। अपने बल पर जीना सबसे बड़ी कला है। लम्बे-लम्बे आत्मकथन में कवि का जीवन-दर्शन सुरक्षित है। अनुभूतियों का महत्व है। कवि बार-बार अतीत, वर्तमान और भविष्य का आकलन करता है। गहन चिन्तन और अनुभूतियों में कवि प्रकृति के सौन्दर्य

में सबसे अधिक आनन्द पाता है। ऋतु विशेष कवि के जीवन को विशेष आनन्द देता है। कवि की सभी उलझने समाप्त हो जाती हैं। हृदय का रस और प्रकृति का रस एक है। भारतीय तीर्थ, देवी, देवता, संस्कृति, साहित्य, पर्व, संस्कार, लोकमान्यताओं, कला और संगीत के प्रति उसमें अपार आस्था है। गौरवपूर्ण इतिहास, घटना और पावन चरित्र के प्रति उसमें रुझान है। कवियों साहित्यों, भाषाओं, समाज, प्रकृति, पशु, पंछी, खेत, खलिहान, मजदूर, फूल और कोयल की कूक के प्रति उसमें हार्दिक सम्मान है। "पश्यतीति पशु" का बिम्ब बहुत सुन्दर है। पागुर करते साँड़, झांग भरा उसका मुँह आदि। आज का आदमी इतना व्यस्त हो गया है कि वह इन पशुओं के पास नहीं जा पाता है, पर जाना चाहता है —

ओ मनुज! कितना करेगा बुद्धि का व्याभिचार?
बुद्धि विरहित प्राणियों का नग्न शोषणआह?
तर्क मत कर अए ओ मस्तिस्क मेरे! देख,
इस समय अन्तःकरण है विकल रहा कराह,¹

आज मानव बुद्धिप्रधान हो गया है। उसका भावजगत् सूख गया है। पशु-पक्षी की पीड़ा उसके हृदय में नहीं है। यह क्रूरता है। मानव पर पशुओं का बहुत उपकार है। उनके प्रति उसे कृतज्ञता ज्ञापित करनी चाहिए। कवि का जीवन-दर्शन अहिंसावादी है उसने दया और संवेदना की ओर मानव को उन्मुख किया है। नियति, भाग्य, जीवन, मरण, सुख और दुख को उसने स्वीकार किया है। शैशव, बाल, युवा, प्रौढ़ और जरा अवस्थाओं तथा समय के बन्धन को कवि ने स्वीकार किया है, परन्तु उसी ने यह भी माना है कि पौरुष या कर्म से सबका सामना किया जा सकता है —

यदि रहे सामर्थ्य तो बार्द्धक्य को सब प्राप्त,
यदि रहे प्रतिभा, सभी सुख बनेंगे चिरदास,
यदि सृजन गतिशील तो सुख अन्यतम रसलास,
साधना यदि सजग तो है हस्तगत आकाश।²

कवि में उत्साह है, उसमें सबकुछ पाने का विश्वास है। महापुरुषत्व को पाया जा सकता है। मुहम्मद और गेटे बना जा सकता है। रूपवाद को कवि ने स्वीकार किया है। जगत् का मेला कवि निर्लिप्त भाव से देखता है। वह समान्य दशा में रहता है—

1. सार्वभौम पृ. 206

2. सार्वभौम पृ. 219

देखता मैं रहा मेला जगत् का निर्लिप्त,
 नहीं खोया, नहीं रोया, इसी से है हर्ष,
 और आगे अधिकतम निर्लिप्तता की प्राप्ति,
 करेगा मेरा अधिकतम आन्तरिक उत्कर्ष।¹

दिव्य जीवन से अमरता को प्राप्त किया जा सकता है। कवि में गानव जाति के प्रति आदर का भाव है। उसका जीवन दर्शन स्वावलम्बी है। स्वयं कवि ने अपने जीवन मार्ग को बनाया है। कवि अनुकरणवादी तथा इधर-उधर ताक-झाँक करने वाला नहीं है। वह 'एकला चलो' का समर्थक है। उसका आग्रह है कि आगे बढ़ो, पीछे न देखा कि कौन तुम्हारे साथ है या नहीं। कवि ने अपने को पिटा हुआ मोहरा कहा है।² वह स्वयं अनेक दुखों को सहता रहा। सबने साथ छोड़ दिया, पर कवि की जिजीविषा बनी हुई है—

पर ऐसा लगता है,
 झुका या टूटा नहीं,
 जीने की साध है,
 ज्योति भी कहीं-कहीं।³

कवि का जीवन-दर्शन समन्वयी है वह सम्पूर्ण धर्मों, दर्शनों और सम्प्रदायों तथा उनके प्रवर्तकों की वन्दना करता है। उदाहरण के लिए कवि के 'दृष्टि' महाकाव्य को देखा जा सकता है। 'दृष्टि' महाकाव्य का यात्री विनम्रता की साक्षात् प्रतिमूर्ति है। वह केवल गुणग्राही यात्री (कवि) है। प्रत्येक विराम पर वह किसी नये विषय पर चिन्तन करता है। उसका विश्लेषण करता है। सीमाओं को वह तोड़ता भी है। हर अच्छाई तथा अच्छे पुरुष को वह प्रणाम करता है। चरैवेति चरैवेति कवि के जीवन-दर्शन का मूलमंत्र है। इसी जीवन-दर्शन को लेकर व कार्य में सदैव निरत रहता है। उसके जीवन-दर्शन में प्रेरणा और चेतना तथा कभी-कभी दोनों सबके प्रति वह श्रद्धा सुमन अर्पित करता है। आशीर्वाद लेता है। वह आज के विघटित जीवन-मूल्यों को पुनः स्थापित करना चाहता है। सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, विनम्रता, करुणा, पवित्रता, सहिष्णुता, यम-नियम, एवं कर्तव्यपरायणता कवि में कूट-कूटकर भरी है। उदाहरण के लिए 'दृष्टि' महाकाव्य को देखा जा सकता है। अहेतुक

1. सार्वभौम पृ. 219

2. सार्वभौम पृ. 223-24 के आधार पर।

3. सार्वभौम पृ. 224

समाजवाद की घोषणा है। उसने विश्वमानव को प्रतिष्ठित किया है कामायनी के कवि के समान कवि भी इच्छा, ज्ञान और कर्म का समन्वय करता है इसके साथ उसने आनन्द पर बल दिया है। कर्म, भक्ति, ज्ञान, योग, कला आदि के समन्वय से आनन्द की प्राप्ति होती है। मनुष्य, अनन्त का यात्री है। अन्त में यह यात्रा-साधना सम्पन्न होकर असीम को सीमा में प्राप्त कर असीम आनन्द में परिपूर्ण होती है। कवि एकान्तप्रिय है। एकान्त में उसको सुख और शान्ति प्रदान करता है। उसको कोलाहल से अरुचि है एकान्त सृजन की ओर उन्मुख करता है। सब कुछ जानने की उसमें असीम जिज्ञासा है।

वह स्वयं एक प्रश्न और एक उत्तर है -

मैं भी एक प्रश्न हूँ, प्रश्न ही रहूँगा भी,
मैं भी एक उत्तर हूँ, उत्तर रह जाऊँगा,¹

मनुष्य के उन गुणों को कवि ने सबसे अधिक महत्व दिया है जिनके द्वारा वह अन्य लोगों से विशिष्ट हो पाता है। मनुष्यता का कवि ने सर्वत्र सम्मान किया है। उसमें सर्वधर्म-समन्वय की भावना है। वह राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, ईसा, मूसा, मुहम्मद, आदि सभी धार्मिक महापुरुषों को नमन करता है। मुक्तकंठ से प्रशंसा करता है। कवि महान गुणग्राही और समदर्शी है। निन्दा से परे, किसी की बुराई को नहीं देखना चाहता है। अच्छाई पर ही बल देता है। उसकी प्रशंसा करता है। ऐसा लगता है कि कवि बुराई को अच्छाई का पूरक मानता है। वह एकता और समानता का प्रबल समर्थक है -

"ओ जीवन-प्रकृतिगत भिन्नता में भी,
जो एकता विद्यमान है उसे जान ले,

कवि उपकारी, सहज, महानता का कृतज्ञ और सृजन का पक्षधर है क्योंकि यही जीवन को गति देते हैं। कवि की अतीत में आस्था है। सत्य का साधक और अनवरत गतिशील है। व्यक्ति, विराट और सर्वस्व का प्रतीक है, प्रत्येक दीपक का अपना महत्व है, भिन्नता को कवि विशेष महत्व देता है। भिन्नता प्रकृति की देन है। जीवन को कवि परिभाषित करता है -

एकान्त जीवन का सार समझाता है,
जीवन निरपेक्ष नहीं, जीवन सापेक्ष है,

उसने सदैव ही जीवन सँवारा है,
उसका तप ही महान् जीवन-परिवेश है।¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जहाँ नहीं जीवन की धारा, जहाँ जीवन नहीं,
एक तृणगुल्म नहीं, ऐसे ग्रह देखे नहीं,
इसलिए इच्छा जीवन-दर्शन की जागी थी,
फिर भी, वे समस्त प्राण अवरेखे थे।²

‘दृष्टि’ में विविध जीवन लोकों का वर्णन है। जीवन संघर्ष है। इसी में कवि की आस्था है —

इसी संघर्ष और पीटने-पिटने से,
जीवन की आशा का संचार होता था
जीवन संघर्ष है, पीटना-पिटना है,
भीषण जल प्लावन में भविष्य मुँह धोता था।³

जीवन का लम्बा अतीत है, रस और जीवन एक दूसरे को पर्यायवाची है। जीवन से जटिल जीवन का कारण होता है —

मैंने देखे थे सलिल से ऊपर आए हुए,
पर्वत और समतल और महत् तन प्राणी भी,
उनके विविध कृत्यों में नृत्य तन करता था,
आनन्दित होती थी, हृदय की वाणी भी।⁴

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

किन्तु जीवन का मूल कारण न देखा था,
कम देखते हैं मूल तरु के सौन्दर्य में;
अनुभूति प्रायः विभूति में खो जाती,
कभी-कभी ही रमती मूल सौकर्य में।⁵

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

1. दृष्टि पृ. 26

2. दृष्टि पृ. 26

3. दृष्टि पृ. 28

4. दृष्टि पृ. 33

5. दृष्टि पृ. 33

ओ मानव, मुझको चिरंतन बन जाने दे,
सीमा का वन्दी बनना मुझको न भाएगा,
और यदि बलपूर्वक इच्छा करूँ भी तो,
मेरे मुक्त को वन्दी बनना न आएगा।¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जो न दूर जा पाया, साधारण यात्री है,
आया और चला गया, विस्मृत हो जाता है,
बहुत दूर तक जो चला गया है यात्री वह,
उसका कीर्तिमान लख जग गौरव पाता है।²

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

ओ मेरे मानव, ओ चिर, ओ महत्तम यात्री,
सारी दूरियों को तू माप ले, जान ले,
तू किसी की दूरी को तय कर सकता है,
किन्तु तभी जब तू निज-रूप पहचान ले।³

कवि ने प्रेम को कैवल्य का लौकिक रूप माना है।⁴ कवि ने व्यापक जीवन-दर्शन को अपनाया है वास्तव में कवि को किसी घेरे बन्दी नहीं रहना चाहिए। कवि और कविता का क्षेत्र अखिल ब्रह्माण्ड तक है। चींटी से हाथी और अणु से पर्वत तक है। कवि-कर्म की काया अनन्त होती है —

तोड़ दे सीमाएं पश्चिम की पूर्व की,
तोड़ दे सीमाएं धर्म की, मर्म की,
जहाँ भी सीमा देख, उसको तोड़ता ही चल,
कर दे अनन्त तू काया कवि-कर्म की।⁵

आशा-निराशा, शैशव-यौवन-जरा, जन्म-मरण, इत्यादि शाश्वत जीवन के कुछ सोपान हैं —

जो जीवन-जेता हैं वे चिरता पाते हैं,
समता भाव से करते अमृत-विष-पान हैं।⁶

1. दृष्टि पृ. 38

2. दृष्टि पृ. 45

3. दृष्टि पृ. 45

4. दृष्टि पृ. 46

5. दृष्टि पृ. 81

6. दृष्टि पृ. 83

कवि ने कर्म को प्रधान माना है। कवि अपने कर्म से काव्य जगत की रचना करता है। यदि कवि न होता तो कितने योद्धा सचिव अन्यान्य, व्यक्ति संसार को प्राप्त ही न हो पाते, एक लोक कम होता। अनेक पुराने कवियों के साक्षात्कार कवि से हुए हैं।¹ उनके आधार पर भी उक्त मतों की पुष्टि होती है। नेह-प्रेम को स्वर्गीय तत्त्व माना है —

रूप की छाया तले नेह का गाँव है,
वसुधा में वह ही तो स्वर्ग कहलाता है,
और यह कहा जाना कितना उपयुक्त है,
प्राण-दीप नेह से ही जगमगाता है.....।²

कवि की लम्बी-लम्बी स्मृतियाँ उसके जीवन-दर्शन के अनेक रहस्यों को खोलती हैं। वे, प्रेम, सौन्दर्य, रूप रस और मनोजगत् के विविध रूपों को प्रस्तुत करती हैं। सापेक्षित गुणवत्ता को प्रस्तुत करता हुआ कवि ने अपने विचारों का औचित्य ठहराया है —

निस्संदेह जीव-जीव का भोजन होता है,
मुझे मांस-भक्षण से कोई आपत्ति नहीं,
किन्तु मनुज केवल एक जीव नहीं, एक चिन्तक है,
इसलिए भोजन शुद्धि व्यर्थ-उपपत्ति नहीं।³

कवि ने विज्ञान यथार्थ और भौतिकता के साथ-साथ ब्रह्म, परलोक, नियति, भाग्य, काल, माया, आत्मा, मुक्ति और शाश्वत परिवर्तन का मनोवैज्ञानिक मूल्य माना है। जीवन तो यायावर है —

आया वह यायावर चला भी गया,
आना और जाना भी विधि का विधान,
आना प्रकृति का एक उज्ज्वल संकेत है,
जाना भी शाश्वत की गति का सोपान है।⁴

कवि प्रगतिशील आस्तिक है। विविध देवों और लोकों की वह मानसिक यात्रा करता है। सबके साथ वह शक्ति को भी मानता है। जब सब का समायोजन होता है, तो क्षमानन्द की प्राप्ति होती है। अन्ततः वह

1. दृष्टि पृ. 102-104

2. दृष्टि पृ. 109

3. दृष्टि पृ. 157

4. दृष्टि पृ. 212

वैराग्य लोक में विश्राम करता है। वह शक्ति के आशीर्वाद को भी लेता है। कवि को सुखदेव मिश्र का आशीर्वाद प्राप्त है — जिन्होंने शृंगार से अध्यात्म तक की यात्रा की थी। उनका वंशज कवि है। उनके श्रेय को स्वीकार किया है — जिन्होंने अतीत से आशीर्वाद दिया था — "पुत्र तेरी काव्यकला निर्बन्ध हो, युग मात्र का नहीं, चिर का चितेरा हो, प्रतिभा के पुण्य में शाश्वत सुगन्ध हो। काल सीमा को भी लाँघने का आशीर्वाद दिया। प्रियतम एकान्त को कभी मत टुकराने को कहा। इसके उपरान्त उन्होंने कहा कि अपने को भी न भूलना —

मेरे पुत्र, साम्य ही तेरा सद्धर्म है,
किन्तु ब्राह्मणत्व का अर्थ बिसराना ना,
जग में जग रहना, एक पल को भी ना सोना,
मरु मरीचिका में कभी स्व को भरमाना ना।¹

अन्त में कवि आनन्दलोक में प्रवेश करता है। जहाँ न भक्ति है न ज्ञान है न कर्म है। परम शान्त है। मैं और तू नहीं है। कोई उद्देश्य और इच्छा नहीं है। इच्छा-ज्ञान क्रिया आनन्द में लीन थे, श्रेय ही आनन्द का दूसरा नाम है। आनन्दी धात्री है। और आनन्द धाम है, वह परम प्रकाशमय है। नक्षत्र आदि की वहाँ गति नहीं है। अन्ततः आनन्द में सब कुछ मिल जाता है। यात्रा जहाँ से प्रारम्भ होती है वहीं आकर रुक जाती है —

ओ मेरी दृष्टि आनन्दलोक तेरा था,
तेरा ही होगा, उसे पूरा निहार ले,
पूर्ण से पूर्ण की पूर्ण ही सृष्टि है,
पूर्ण के समक्ष तू निज को निखार ले
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

और अब मेरी दृष्टि मीलित थी, आनन्द,
का पावन उन्मीलन उसमें समाया था,
मैं अभी पहुँचाई नहीं पा सकता था,
इसलिए, आनन्द पाहुन बन आया था।²

कवि का जीवन-दर्शन व्यापक अभेद और अद्वैतवादी है। वह एक परमतत्व का खोजी है। कर्म, विचार चिन्तन और कल्पना में उसी की तलाश

1. दृष्टि पृ. 234

2. दृष्टि पृ. 258

करता है उसी परम तत्व का वह अंश है जो पूर्ण होना चाहता है। यही हर विवेकी प्राणी चाहता है। यही जीवन-दर्शन है और होना चाहिए—

ओ मेरे मानव, ओ चिर, ओ महत्तम यात्री,
सारी दूरियों को तू माप ले, जान ले,
तू किसी भी दूरी को तय कर सकता है,
किन्तु तभी जब तू निज-रूप पहचान ले¹

बिना आत्मज्ञान के कुछ भी महत्व नहीं प्राप्त होता है।

प्रेम को कवि ने जीवन में सबसे अधिक महत्व दिया है। प्रेम सबको जोड़ता है। प्रेम कस्तूरी की गंध है। सुन्दर, व्यापक और पवित्र है। कवि ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अर्थात् पूर्ण पुरुषार्थ की महत्व दिया है। इसके साथ जीवन और युद्ध के सत्य को स्वीकार किया है —

किन्तु युद्धरहित जीवन अनवरत आत्मघात,
जिसकी कल्पना मात्र से बेहद थकती हूँ,
युद्ध नर का शृंगार, युद्ध नारी की शोभा,
युद्ध में सभ्यता विस्तार तकती हूँ,
जीवन के सर्वोच्च सद्गुण अप्रतिम क्षमता,
युद्ध के बिना मैं कुछ कहती नहीं, बकती हूँ,²

शक्ति शील से मण्डित होकर ही शोभा को प्राप्त होती है। दूसरे को आतंकित करने में उसकी शोभा घटती है। शक्ति से मानव मूल्यों में विश्वास बढ़ता है। विलासिता से अनेक अवगुण आ जाते हैं। तामासिकता की वृद्धि हो जाती है —

शक्ति भी पूज्य जब शील की रक्षा करे
बढ़ाए मानवमूल्यों के प्रति विश्वास भी
लोकेषणा ख्याति-आखेटक बनाती है।
विलासिता ला देती शोक-उच्छ्वास भी,³

कवि ने राजा पुरुरवा का उदाहरण दिया है वह आतंक फैलाता है, आखेट करता है, अपने सौन्दर्य से नारियों के हृदय को मथ देता है। ऋषियों से वह कर वसूल करता है। सब की आय का वह षोडशांश (1/16) कर

1. दृष्टि पृ. 25

2. दृष्टि पृ. 63

3. वेदायन, पृ. 86

में लेता है। वेद दृष्टा ऋषि होने का भी वह अहंकार करता है। विलासी हो जाता है। ब्राह्मणों पर भी वह कर लगा देता है। लोगों ने ऐसे अन्याय को पहली बार स्वीकार किया। राजधानी का कुप्रभाव प्रजा पर भी प्रड़ता है। कवि का आदर्श है त्यागमय जीवन न कि भोगमय। एतदर्थ ऋषभदेव का उदाहरण लिया जा सकता है। आर्यों का जीवन-दर्शन सराहनीय है वह मर्यादित है जो मर्यादा से हटकर अपना जीवन जीता है उनका पतन कवि ने दिखाया है। अतः कवि का जीवन-दर्शन मर्यादावादी है और गतिशील है।

देखो गंगा की धारा गति का गान गाती है,
स्थिरता ही मृत्यु है और गति ही जीवन है।
गंगा यही उपदेश देती हुई जाती है।¹

राम ताडका को मारकर क्षुब्ध हो जाते हैं, विश्वामित्र कहते हैं -

जिसके जीवन में महत् उद्देश्य होता है वह,
कर्म करता है, कभी क्षोभ नहीं करता है,
अहिंसा साधन है, साधन है महान् जीवन,
जीवन में अहिंसा के अतिरिक्त और भी
बहुत कुछ वरेण्य है। अहिंसा के साधन को
साध्य प्रायः धूर्त व्यक्ति घोषित कर पूज्य बनने
का नाटक करते हैं, मानवत्वं मूल्य पर।
अतः मानव मूल्य सर्वोपरि है, साध्य है।

ताडका में एक जीवन बंधा था। आज वह मुक्त हो गया। उसको फल मिला। अहिंसा उपदेश से नहीं, बल्कि आचरण से प्रस्तुत होती है -

'तात इस जीवन में नश्वरता सुस्पष्ट,
'राम नश्वरता है स्रष्टा की लीला, उसे,
अनवश्वर में मिलकर अनवश्वर ही बनना है।
नश्वरता अनश्वरता का आरम्भिक प्रारूप।
प्रकृति की समग्र अमर शक्तियों का लघुरूप।
व्यष्टि - जीवन नश्वरता के ग्रीष्म में समाप्त,
होकर पुनः बरस पड़ता है, सविता की क्रीड़ा में।

उसकी समाप्ति एक अभास, सत्य नहीं।
 प्रत्येक जीवन है, अज, अनन्त, अजर-अमर,
 प्रत्येक जीवन है स्थाणु, अक्षर, अचंचल,
 प्रत्येक जीवन ब्रह्म-कवि की एक कविता है।'

कवि ने नियति, भाग्य और कर्म के साथ-साथ ज्योतिष के लोकमहत्त्व को भी स्वीकार किया है —

राजा दशरथ सूर्य, मंगल और राहु जब
 जन्मराशि पर आ जाते तब महान् संकट,
 आता है। राजा दशरथ के साथ ऐसा होने,
 पर रामवनवास और उनकी मृत्यु हुई।'

वृद्धावस्था में तृष्णाएं बढ़ती हैं। प्रत्येक जीवन एक अभिनय है। व्यक्ति को हर स्थिति के लिए तैयार रहना चाहिए। कैवल्य या मोक्ष की प्राप्ति जीवन का चरम लक्ष्य है, इसको पाने के माध्यम है — भक्ति, ज्ञान, उपासना, सेवा, मानवता, और सदाचार। जब भरत जी राम से अयोध्या वापस चलकर राजदण्ड ग्रहण करने के लिए कहते हैं तब राम उत्तर देते हैं —

‘मेरे लिए पलाश दण्ड तथा राजदण्ड
 एक है;.....’ भरत मे वनवास से दुखी
 नहीं हूँ। सुख-दुःख मेरे करतल में वन्दी
 हैं। मैं चिर सन्तुष्ट हूँ और मुझे गर्व है
 इस सहज संतोष को पिता का प्रण माता
 का आदेश सीता का पावन आवेश
 लक्ष्मण का अभिनव परिवेश प्राप्त है,
 यदि मन संतुष्ट है तो सब ठीक है,
 मैं संतुष्ट हूँ: कैसे स्वर्गस्थित पिता के
 प्रण को राजदण्ड से आहत करूँगा मैं?
 कैसे माता के आदेश को किरीट से कीट
 की तरह मसलूँगा? कैसे भीत अन्तः करण
 को सिंहासन पर स्थिर रख सकूँगा उसे
 चिर रखूँगा? मेरे इस सुदृढ़ जीवन के

अध्याय से इतिहास जगमगा उठेगा।
आर्य जाति गद्गद हो जायेगी, सूर्यवंश,
ज्योतिष हो उठेगा, रघु को प्रसन्नता होगी।¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जीवन न कोरा तप, न कोरा सुख न कोरा
सत, न कोरा रज, न कोरा तम, जीवन एक
मिश्रित तत्त्व है, शिवशंकर के त्रिशूल में
रज को उच्चतर स्थान प्राप्त हुआ,
इस जीवन में पूर्णता तभी आ सकती है
जब सत भी तपे, रज भी तपे, तम भी तपे,
तभी त्रिशूल दैहिक-दैहिक-भौतिक तापों
से प्रमुक्त कर शिव का सर्जन कर सकता है।²

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

पुरुषार्थ बाह्य उपकरणों से नहीं, प्राण
से जाज्वल्यमान् एवं परिपूर्ण होता
फिर, मेरा राग मेरी प्राणप्रिया में बंधा।³

कवि ने राम को पुरुषोत्तम तथा उनके कार्यों को आदर्श माना है।
राम का मर्यादावाद कवि पर छाया हुआ है। राम आदर्शवाद, सहज और
प्रकृतिजीवी हैं—

प्रकृति के विरुद्ध चलने पर धर्म का आतंक,
जीवन का रस रक्षित नहीं रख पाता है।⁴

कवि ने जीवन को सबसे ऊँचा स्थान दिया है। सही जीवन सबसे
बड़ी प्राप्ति है। मानव सभी प्राणियों में श्रेष्ठ प्राणी है। जीवन को आसक्ति
से रक्षित रखने का कवि ने प्रतिपादन किया है—

जीवन से बढ़कर कोई सुख नहीं, स्वर्ग नहीं
मानव से श्रेष्ठतर कोई भी प्राणी नहीं,
हाँ, जीवन को आसक्ति में परिणत करना उसकी
हत्या ही करनी है, यह स्वतः स्पष्ट है।⁵

-
1. पुरुषोत्तम, पृ. 236
 2. पुरुषोत्तम, पृ. 252
 3. पुरुषोत्तम, पृ. 262
 4. पुरुषोत्तम, पृ. 260
 5. पुरुषोत्तम, पृ. 320

सबसे बड़ी शक्ति इच्छाशक्ति होती है।¹

राम का जीवन दर्शन कवि को सबसे अधिक अनुकरणीय लगता है। सफलता राम की दासी है, क्योंकि राम धर्म के स्वरूप न्याय के पुंज और प्रकाश है।² संघर्ष जीवन का परीक्षक होता है।³ स्वयं राम भी रावण के शौर्य की प्रशंसा करते हैं।⁴ मंदोदरी का विलाप सुनकर राम के नेत्र अन्तुपूरित हो जाते हैं। वे रावण के परिवार के दुखों से दुखित हो जाते हैं। जाम्बवान् ने कहा है — "यह जीवन कर्मा का दर्पण है, यह कर्मों की कहानी है।"⁵

कवि ने स्वयं लिखा है कि "सत्य का शोध मेरे जीवन का एक मात्र लक्ष्य रहा है, जिसे मैंने साहित्य के माध्यम से व्यक्त किया है। मैंने इस कर्तव्य हेतु अध्ययन, अध्यापन, चिंतन-शोधन, लेखन-पुनर्लेखन के अतिरिक्त अन्य कार्य किये ही नहीं। सारा समय एवं सारी ऊर्जा इसी हेतु अर्पित है।⁶ कवि मनोवैज्ञानिक आस्तिक है। देवी, देवता सब की वह प्रार्थना करता है। इसके साथ मानवतावादी राष्ट्रवादी और हिन्दूवादी भी है। उसका तर्क है कि महाभारत के युद्ध से भले ही महान विनाश हुआ परन्तु उससे अपार प्रेरणा मिलती आ रही है। उससे न्याय के लिए युद्ध करने की प्रेरणा मिलती है। भारतीय संस्कृति की उसमें थाती मिलती है। कवि को भी उससे प्रेरणा मिलती है। कवि मोक्ष नहीं, विराट सत्य का उद्घाटन चाहता है। जीवन-सम्राट का उद्गाता होना चाहता है। वह मानव से श्रेष्ठ धरती पर किसी को नहीं मानता है। कवि मानवतावादी है। 'पुरुषोत्तम', 'दृष्टि', 'कल्पान्त', 'मुहम्मद', 'स्वर्गता' जैसे महाकाव्य या खण्डकाव्य हों अथवा 'सार्वभौम' जैसे कवितासंग्रह अथवा 'तब, अब' और आगे जैसी मध्यकविता, उसका मानवतावाद सर्वत्र व्यक्त है। कु. उमाकुमारी खत्री (हीराकुण्ड) ने भुवनेश्वर विश्वविद्यालय से डॉ. रामप्रसाद मिश्र कृत महाकाव्य दृष्टि में मानवतावाद का स्वरूप, विषय पर पीएच.डी. शोधकार्य ठीक किया ही है — मानव चिरन्तन है, जीवन चिरन्तन है। युग चिरन्तन-सागर के बिन्दु हैं, सभ्यता, संस्कृति के बाह्य परिवर्तन तरंगावर्तों के नर्तन मात्र हैं। एक का दर्शन ही महत्तम दर्शन है।

1. पुरुषोत्तम, पृ. 382

2. पुरुषोत्तम, पृ. 392

3. पुरुषोत्तम, पृ. 455

4. पुरुषोत्तम, पृ. 458

5. पुरुषोत्तम, पृ. 462

6. कल्पान्त, भूमिका, पृ. 81

भेद का दर्शन एक चापल्य है। उसके उपरान्त ही सत्य-दर्शन का पता चल पाता है, जैसे भीषण हलाहल के अनंतर ही अमृत मिल सकता है। ध्वंस से निर्माण, निर्माण से ध्वंस प्रकृति की क्रीडा है, परमात्मा की लीला है। सागर मंथन का रूपक इसको समझाता है। प्रलय से सृष्टि और सृष्टि से प्रलय का क्रम बनता है। जीवन के उद्भव और विकास की यही कथा है। नाश से निर्वाण अन्त से निर्वाण। अनृत से नृत की ओर जाने का यही आशय है। युद्ध करे पुरुष यही उसका पुरुषार्थ है। उसी से काम, अर्थ, धर्म की रक्षा होती है। नाश निर्माण पूर्णतः अन्योन्याश्रित है। 'महाभारत' इस शाश्वत सत्य का आख्याता है -

त्याग दे धरती धृति एवं क्षमा, त्याग दे
आकाश निज प्रकाश एवं ज्योति त्याग दे,
अग्नि निज ऊर्जा एवं दाहक शक्ति, त्याग दे
जल जीवन दान एवं शीतलता त्याग दे
पवन निज प्राणदान एवं प्रवाह किंतु
भीष्म राज्य त्याग प्रण एवं ब्रह्मचर्य त्याग
नहीं कर सकता निज अंतिम प्रश्वास तक!¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जो सब कुछ त्यागता वह सब कुछ पाता है,
त्याग ही जीवन में सर्वोपरि दाता है।
जो अपना स्वामी वो जगत का स्वामी है,
लोकेषणा से मुक्त व्यक्ति चिरनामी है।²

अनुशासन का जीवन में बहुत महत्व होता है वह वीर का तन-मन प्राण है और महिमा का प्रथम सोपान हैं जीवन के लिए गति आवश्यक है। ठहरा हुआ जीवन व्यर्थ है-

कुन्ती ने पुत्रों से कहा, गति ही जीवन
प्रतिपल हृदय की गति यह ही बताती है,
गति न हुई सफल तो दुर्गति आ जाती है।³

1. कल्पान्त, पृ. 36

2. कल्पान्त, पृ. 40

3. कल्पान्त, पृ. 102-110

कर्मठ व्यक्ति कुछ भी कर सकता है जिसके जीवन में अनुशासन, प्रशिक्षण और पराक्रम है। वह कुछ भी कर सकता है। पाण्डव इसके सटीक उदाहरण हैं—

कृष्ण के निर्देशन, अर्जुन के धनुष और भीम के पराक्रम पर प्रत्यय था खाण्डवप्रस्थ, को हम इंद्रप्रस्थ में परिणत करने में सफल होंगे! पुरुषार्थ अभिशाप को वरदान कर देता।¹

कवि के जीवन-दर्शन में सामन्ती ताकतों का विरोध है। कल्पान्त में कौरवों का विरोध है, इसलिए कि वे शोषक थे। कवि साम्यवाद चाहता है। विजय में भी पराजय बोध का संकेत है। महाभारत के व्यंग्य को कवि ने बड़े ढंग से कहा है। विविध परिस्थितियों में बदलते दर्शनों या विचारों के सुन्दर और सटीक उदाहरण हैं।

‘तब, अब और आगे’ कवि की जीवन-दर्शनपरक महा-कविता है। हिन्दुओं के स्वर्णिम गौरव पर उसको गर्व है। उनको प्रणाम जिन्होंने हिन्दू धर्म की रक्षा की है। राणाप्रताप, शिवाजी और गुरुगोविन्द सिंह आदि पर कवि को गर्व है। हमारे युग पुरुष हिन्दुत्व के उद्धारक रहे हैं। कवि हिन्दुओं का पुनरोत्थान चाहता है—

आह, हिन्दुओ मुर्दे जैसी निद्रा त्यागो,
बाहर-भीतर शत्रु, घिरे, तुम, अब तो जागो,
धर्म-शत्रुओं को पहचानो अरे अभागो!
छीनों निज अधिकार गिड़गिड़ाकर मत माँगो।²

राष्ट्रभक्ति, सुधारवाद, प्रगतिशील, राष्ट्रधर्म में कवि का विश्वास है। राष्ट्रभक्त मुसलमानों को कवि ने राष्ट्रप्राण भी कहा है। ईसाई षड्यंत्री होते हैं। कवि ने सब को ईश्वर का पुत्र तथा कर्मवादी माना है। कवि को विदेशी और विदेशी विवाह से घृणा है। हीनभावना, दासता, षड्यंत्रों और गुप्तचरों से घृणा है। उसने महान् ईसाइयों को महत्व दिया है वह छुआछूत का विरोधी और नारी जगत् का पक्षधर है। सभी जातियों को उसने एक माना है।

1. कल्पान्त, पृ. 131

2. हिन्दुओं जागो, पृ. 2

कवि का कथन है कि यहाँ कोई काफिर नहीं सभी मानवतावादी हैं — उसने विश्व की सभी जातियों को सम्मान दिया है। कवि ने माना है कि "हिन्दू वह जो विश्व मानव का सेवक हो" कवि पहले हिन्दू फिर आर्य और द्रविड़ है। हिन्दू धर्म सबसे व्यापक है कवि ने उत्तर-दक्षिण के भेद को नकारा है। सब धर्म का अपना अपना योगदान है। उत्तर में अवतार हुए हैं। जाति-पांति, उत्तर-दक्षिण की चर्चा का कवि विरोधी है। ये सब राजनीति प्रेरित है। नेताओं को महत्व न देकर उसने भारत को सर्वोपरि माना है। ईश्वर सर्वव्यापी है। कवि ने मूर्तिपूजा का समर्थन किया है, तर्क है कि यह व्यक्तिगत बात है। शव-पूजा से भी संतुष्टि मिलती है। पूंजीवादी इतिहासों व चरित्रों को कवि ने नकारा है। उसने आर्यों को यहाँ का मूलनिवासी माना है। भारत ने सब कुछ रचा है। हिन्दूओं और स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को कवि ने सम्मान दिया है। तदनुसार हिन्दू टूटने से संसार का विचार टूटेगा। अतः आज हिन्दू जागरण की आवश्यकता है —

अतः जाग हिन्दू! निजत्व विश्वत्व जगाना
बर्बरता से कला, संस्कृति धर्म बचाना,
जड़ता से कर समर, तुझे चेतन बन छाना
मानव में देवत्व, स्वर्ग जगती पर लाना।।¹

'हिन्दुओ जागो' रचना विश्वमानवतावाद एवं राष्ट्रवाद से ओत-प्रोत कविता है। इसको कुछ लोगों ने अधुनातन भारत-भारती एवं राष्ट्रकाव्य कहा है। कविता की अपनी पहचान है। इसमें अतीत से लेकर वर्तमान तक की गौरवपूर्ण गाथा की ओजस्वी अभिव्यक्ति है। कवि ने राष्ट्र को प्राथमिकता दी है। इसमें हिन्दू धर्म मानव धर्म के रूप में निरूपित है। इसमें विश्व संस्कृति की पहचान है। हिन्दू अपने घर में ही पराया होता जा रहा है। इसमें शाश्वत सन्देश है।

कवि के सारे काव्य यथार्थ पर आधारित हैं। पंत, डॉ. हरिवंशराय बच्चन, दिनकर, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, डॉ. रामदरश मिश्र, डॉ. भगवतीशरण मिश्र आदि ने कवि को सराहा है। स्व. पं. रामदयाल पांडेय, डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, प्रो. मुकुन्द शर्मा, डॉ. भगवतशरण अग्रवाल, श्री राजनाथ शर्मा इत्यादि ने इस यु का प्रमुख कवि माना है। डॉ. सुमेर सिंह 'शैलेश', डॉ. चक्रधर नलिन इत्यादि ने महाकवि माना है।

डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव ने सबसे अलग एक विशिष्ट एवं अप्रतिम कवि साबित किया है। कवि ने अनुभूति सच्चाई को सर्वत्र स्वीकार किया है। कविता में अनुभूति और मर्म का बहुत अधिक महत्व होता है। अंधे, बहरे, गूँगे, लँगड़े आदि के प्रति कवि में अपार संवेदना है। करहीन को देख कर गूँगा कहता है "जीवन में मुझसे भी अधिक दुखी विद्यमान हैं। यही मेरे दुख को आवश्यकता है। मैं कितना विवश निरुपाय हूँ।"

कवि व्यक्तिवादी दर्शन का महत्व मानता है। वह प्रगतिशील चिंतक भी है। जीवन को बार-बार कवि ने व्यक्त करने का प्रयास किया है। उसने अपने जीवन के महान स्वप्नों को लिखा है।

अध्याय 6

व्यंग्य

‘व्यंग्य’ अर्थाभिव्यक्ति के तीखे और असरदार माध्यम हैं। वे अपने अप्रत्यक्ष और विपरीत अर्थ से यथेष्ट की ओर संकेत करते हैं। इसके साथ वक्ता के आशय को भी स्पष्ट करते हैं। सभी साहित्यों और समाजों में व्यंग्य की स्वस्थ परम्परा मिलती है। ये समाज में अधिक आते हैं। व्यंग्य परिपक्व मस्तिष्क की उपज है। कहीं अमर्यादीत, तो कहीं अमर्यादीत व्यंग्य होते हैं। व्यंग्य के विकास में वक्ता-श्रोता की योग्यता आवश्यक है। व्यंग्य का एक देहाती नाम मजाक भी है। सम्बन्धियों के व्यंग्य प्रायः इसी कोटि के होते हैं। हास्य व्यंग्य सबसे खुले होते हैं। इनकी प्रस्तुती में अलंकारों का भी उपयोग किया जाता है। वक्रोक्ति, श्लेष और विरोधाभास का विशेष रूप से।

जो व्यक्ति या रचनाकार अपने जीवन में जितनी ही विसंगतियों को झेलता है — वह उतना ही अधिक व्यंग्य का प्रयोग करता है। व्यंग्य काव्य गुण है। शब्द इससे नये अर्थों को पाते हैं अर्थ नये और व्यापक रूपों को प्राप्त करते हैं। रस तेजी से साधारणीकरण की ओर बढ़ता है।

हास्य-व्यंग्य में ‘मौख्यशास्त्र’ जी हाँ यह दिल्ली है, कॉफी हॉऊस, मच्छर सभा: अध्यक्षीय भाषण, आदि महत्त्वपूर्ण रचनाएं हैं। अंतिम रचना पर काका हाथरसी जी के शब्द हैं —

अध्यक्षीय भाषण पढ़ा, मिला हास्य का स्वाद।

धन्य हुई मच्छर सभा, जय हो राम प्रसाद।।

विविध अवस्थाओं पर कवि के सार्थक व्यंग्य हैं। मिश्र जी पेशे से शिक्षक रहे हैं। फलतः शिक्षा व्यवस्था से उनका निकटतम सम्बन्ध रहा है। वर्तमान शिक्षा के प्रति उनके मन में कुण्ठा और आक्रोश है। तदर्थ उनके आक्रोश को कविता संग्रह ‘देश दिल्ली और अहम’ में देखा जा सकता है—

पब्लिक स्कूल भारत की,

बहुसंख्यक पब्लिक के

मुँह पर तमाचा है,
नाम में पब्लिक, किन्तु
पब्लिक से साठ कोस,
दूर सदा रहता है।¹

साहित्य के चूल्हे पर अपनी रोटी सेकने वाले तथा साहित्यकार का शोषण करने वाले प्रकाशकों पर उन्होंने व्यंग्य किया है। यह व्यंग्य उनके जीवन का यथार्थ है — “प्रकाशक हैं आप, किन्तु अँधेरा फैलाते..... करते हैं शिक्षा या साहित्य का व्यापार”। आगे उन्होंने कहा है। “आपके खाते कई खाते, लेखक को चर जाते” आदि। प्रकाशक एक शोषक के रूप में चित्रित है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कवि को व्यंग्य के लिए अपेक्षाकृत अधिक परिस्थितियाँ मिलती हैं इधर होते नैतिक पतन ने इसके लिए आधारित भूमि तैयार की है। मिश्र जी ने व्यंग्य का पर्याप्त प्रयोग किया है। नेता, प्रकाशक, स्कूल, एक स्त्री आदि कविताएं दर्शनीय हैं। ‘एक स्त्री’ में व्यक्त मनोवैज्ञानिक व्यंग्य के दर्शन हम अपने नित्य के जीवन में भी पाते हैं।² ‘एक स्त्री तुझे धिक्कार है’ पंक्ति से मिश्र जी ने मानव की संकुचित और उपेक्षित दृष्टि को प्रस्तुत किया है। मनुष्य पर व्यंग्य है — जो स्वयं तो मिलन सुख का इच्छुक है, पर वह दूसरे को वैसा सुख पाते नहीं देख सकता है। वह अपने को न देखकर दूसरे को देखता है। आज के आदमी को प्रेम करने का स्थान नहीं है, न समय है, न इच्छा है। मित्रता विस्तृत आक्रोश—सी एक कल्पना है, प्रेम सुविधाओं का अनुचर-युधिष्ठिर के श्वान-सा। त्याग गश प्राप्ति के गधे के तन पर अरगजा का लेपन है। देशप्रेम पदलोलुपता के तन पर कौशेय! सत्य व्यंग्य है। आक्रोश है। आज सब कुछ ढोंग है। छलने का तरीका प्रेम है। अपनी निरुद्देश्य जिन्दगी से कवि जिन्दा है। वह बाहर से भरा है और भीतर से खाली है। आदमी विरोधाभास में जी रहा है —

दर्द के गीत गाता मदिरा की छाँव में,
मुफलिसी की तानें भरता कामों के गाँव में,
वासना की निन्दा करता नारी के अंक में,
कमल की बातें सदा करता मैं पंक में,
दर्शन की बातें करता पागलपन में,
महल बनाता रहता विस्तृत पवन में।³

1. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 56

2. बौद्धिकरस, पृ. 23-25 के आधार पर

3. बौद्धिकरस, पृ. 46

कवि सम्मेलन पर व्यंग्य है — कविता की जड़ें खुद रही हैं। सम्मेलन की कविता शाश्वत कविता की खाद बन सकती है। यह काव्य का विज्ञापन हैं। नेताओं को अभिनेता, छली और बहुरंगा कहा है।⁴ इसी प्रकार महापुरुषों पर भी व्यंग्य है — जिस देश में महापुरुष अधिक होते हैं — वह देश नष्ट हो जाता है, यूनान मिट गया। आज के मानव को होटल युग का मानव कहा है। 'मैं सैनिक हूँ' कविता में सैनिक पर व्यंग्य है — वीरता व्यवसाय, वेतन, भोजन के बदले कुर्बानी है, बल वीरता का विक्रय है। ताजमहल पर व्यंग्य है —

मध्यकाल की विलासिता का महान् स्मारक,
एक पैसे रोज की मजदूरी की गाथा।
शक्ति की अमरता का ऐश्वर्यपूर्ण नाटक,
भीषण काम वासना की शाही तवारीख
ताजमहल जिसके नीचे गड़ी लाश,⁵

शाहजहाँ और औरंगजेब की क्रूरता तथा धर्माधता पर व्यंग्य है। शांति (बौद्धिकरस पृ. 41) पर व्यंग्य है। शांति कुछ नहीं, कहीं नहीं, मात्र इन्द्रजाल है।

'दिल्ली शीर्षक कविता में दिल्ली पर व्यंग्य है। आज की दिल्ली पर भी व्यंग्य है। प्रशासनिक भवनों पर वर्णन के साथ व्यंग्य है — संसद, राष्ट्रपति भवन, सचिवालय भवन, होटलों आदि। ये सब भारत की दरिद्रता के गाल पर तमाचा मारते हैं। समाजवाद की समाधि से। नैराश्य के जनक हैं। होटलों का यह स्वर्णयुग हैं। रूप के क्रय-विक्रय का बड़ा बाजार है—

यहाँ के जीवन के अधिपति हैं धूर्त शोषक,
पाखण्डी नेता,
सिद्धान्तहीन मूर्ख।
दिल्ली राष्ट्र के जीवन का प्रचण्ड उपहास!
मध्यकाल का यहाँ
तन बदला, मन नहीं।⁶

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

4. बौद्धिकरस,

5. बौद्धिकरस, पृ. 108

6. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 51

दिल्ली असमानता का तीर्थ
 दिल्ली, शोषकों का स्वर्ग,
 विलासिता का अपवर्ग,
 संस्कृति का त्रिशंकु,
 विशिष्टता रहित जीवन यहाँ की विशिष्टता।
 यहाँ तथाकथित स्वर्ग,
 और गणनातीत नरक
 एक साथ रहते हैं,
 धन्य यह समाजवाद!⁷

साँप और सौन्दर्य शीर्षक कविता में भी दिल्ली पर तीखा व्यंग्य है—

दिल्ली वह महानगर,
 जिसके शरीर तो है,
 पर आत्मा नहीं।
 कई आत्माएँ उसने
 उधार ले रखी हैं।⁸

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

रंगों की सज्जा को
 तन में उतारकर,
 प्रकृति ने उसे गढ़ा
 इसीलिए धर्म, कला,
 साहित्य आदि ने किया सम्मान इसका।
 आदम और ईव को,
 धरती पर लाने वाले,
 मानव-जीवन विधायक,
 शेषनाग, शिवाभरण, जाति, वर्ग,
 सुन्दरियों की वेणी,
 आदि-आदि तक इसका,
 विस्तृत प्रवेश है।⁹

7. उपरिवट, पृ. 51

8. उपरिवट पृ. 52

9. देश दिल्ली और अहम, पृ. 54, 55

दिल्ली के पब्लिक स्कूल मात्र नाम के हैं। इनके भवन समाजवाद की समाधि पर खड़े हैं। अंग्रेजी दासता की जीती जागती निशानी, हास्यास्पद कहानी है। पोशाक, व्यवस्था, रहन-सहन, बोल-बात, सब पर व्यंग्य है — जहाँ पर गाय की खाल ओढ़े भेड़िये बसते हैं —

भारत के प्रमुख व्यक्ति

भारत के प्रमुख शत्रु।¹⁰

इन स्कूलों में भारतीयता से विपरीत शिक्षा दी जाती है। ये हीनता की ग्रन्थियों को खोलते रहते हैं। शिष्टता की आड़ में आडम्बर जन्य स्फूर्ति करते, 'व्यक्तित्व' की लपेट में कृत्रिमता को 'इन्जेक्ट' करते, निर्धनता, सरलता से दूर रहना सिखाते। दिल्ली पब्लिक स्कूल की राजधानी है। सामाजवाद का नारा लगाने वाले अपने बच्चों को इन्हीं स्कूलों में पढ़ाते हैं। भारत के सामान्य बच्चों के साथ पढ़ाने में हीनता समझते हैं। दिल्ली के काफी हाउस पर भी व्यंग्य है —

कुण्ठित व्यक्तियों का अद्भुत संग्रहालय,

दिमागी कसरत का भड़कीला अखाड़ा,

शोषकों अर्द्धशोषकों के जीवन की सड़न का मरहम,

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

कॉफी हाँउस आधुनिक

सभ्यता के खोखलेपन का,

सबसे बड़ा विज्ञापन।¹¹

'रूप की ज्वाला' शीर्षक कविता में रूप की ज्वाला या उसके प्रभाव को कहा गया है। यह शिष्ट, परन्तु गम्भीर व्यंग्य है। मन मचलता है, जलने की इच्छा होती है। अपने आपको छलने का मन करता है। प्रेम हृदयजन्य होता है — जिसको बुद्धि बराबर नष्ट करना या दबाना चाहती है। कविता का मनोवैज्ञानिक पक्ष बड़ा सबल है। सत्य वही नहीं है, जो यथार्थ रूप में दिखायी पड़ता है या पदार्थ रूप में भोग्य होता है; सत्य वह भी है जो सूक्ष्म, अदृश्य और भीतर होने से दिखायी नहीं पड़ता है। यह सभी जानते हैं कि रूप के पीछे पागल होना मूर्खता है, परन्तु कौन बच पाता है? ऐसी मूर्खता करने का मन किसका नहीं करता है? यौवन में हर प्राणी एक बार रूप की ज्वाला में जलता या जलना चाहता है। पढ़ना चाहता

10. देश दिल्ली और अहम पृ. 56

11. देश दिल्ली और अहम पृ. 59

है — रूप के चरणों की, करों कोशिका-लिपि, शिरालिपि-अर्पित करना चाहता है अपनी मरमाती नियति, प्रचण्ड जीवन कविता को-जिससे मधुर यति मिले और मति को विश्राम मिले। कवि आगे कहता है —

किन्तु, आह मेरी बुद्धि
रूप को देखकर,
मुँह बनाती, हँसती,
तन मेरा रूप को,
काया मात्र मानता;
अभी तक नहीं मिला,
रूप, जो झुका पाए,
मेरी दृढ़ आत्मा, को;
इसी अशान्त शान्ति में,
जीवन बहता जाता।¹²

प्राकृतिक या नैसर्गिक सौन्दर्य सबसे उत्तम होता है। उसका आभाव ही कुरूपता है। मिश्र जी की कविता में इतिवृत्त, वर्णन, चित्र और बिम्ब हैं। सब में कवि समान है। इसके साथ आज के कृत्रिम सौन्दर्य को चुनौती भी है। आदमी सब कुछ करने के उपरान्त सनातन सत्य या नैसर्गिकता के ऊपर नहीं जा सका है। कवि ने स्वाभाविक व्यंग्यों से अपनी बातों को कहा है।

अनेक व्यावहारिक दृष्टान्त भी हैं।

उस मार्ग पर चलते,
देखी थी वह स्त्री,
जिसका तन सुन्दर था,
किन्तु आनन को प्रकृति
ने फीच डाला था,
उसने सावधानी से
प्रलेप पर सुरभित,
चूर्ण लगाकर की थी,
क्षतिपूर्ति फिर भी उसे,
प्रतिक्षण स्पष्ट थी,
अपनी कुरूपता।¹³

12. देश दिल्ली और अहम पृ. 62

13. देश दिल्ली और अहम पृ. 64 (कुरूपता कविता से)

आगे कवि ने आज के पुरस्कारों पर व्यंग्य किया है — जिनका मूल्य शेयर बाजार की भाँति लुढ़कता जा रहा है। आज के मिलते छली पुरस्कारों का वर्णन है। कवि की संवेदना प्रायः निष्ठावान रचनाकारों की संवेदना है। आज सही मूल्यांकन का अभाव है। पुरस्कार वास्तव में वित्त का पुत्र और राजनीति का एक दान हो गया है। इतने सामान्यजन ऊँचे पुरस्कार पा रहे हैं कि सारे मानक व्यर्थ होते जा रहे हैं। प्रतिभा, शक्ति आदि का यह अत्यन्त चतुर ग्राहक है। प्राचीन दासता का स्मारक है — जिसे अधुनिकता ने चमकदार रंगों से रंगने की चेष्टा की है। सभी स्तर के पुरस्कार प्रतिभा को कुंठित या कृतज्ञ करने का षड्यंत्र हो गये हैं। यह मानवीय क्षमता को क्रय करने का प्रयास है। इसी चक्कर में न जाने कितनी प्रतिभाएँ खरीदी और बेची जा रही हैं। लोक उपकृत हो रहे हैं। अनेक तुच्छ कृतियाँ एक षड्यंत्र के तहत प्रचार प्रसार में सामने आ रही हैं। भारतीय शासन तथा राज्यों के शासकों ने प्रतिभा, कला, पाण्डित्य आदि को अपनी ओर खींच लिया है — प्रोत्साहन की आड़ में।¹⁴ आगे कवि और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा है —

पुरस्कार लेने वाला प्रतिभा का विक्रेता,
प्राचीन दासता का सहयोगी, निकम्मा,
अपने आप से असन्तुष्ट क्षुद्र व्यक्ति,
क्षमता, शक्ति, रूप आदि प्रकृति के उपहार,
इनका व्यापार करना घोर नास्तविकता है;
एक बड़ी रिक्तता है।¹⁵

कवि का तीखा व्यंग्य है। बात सही है। आज प्रायः पक्षपात पूर्ण निर्णय हो रहे हैं। दल, जाति, सत्ता और राजनीति तथा ग्रुप का बोलबाला है। सर्वत्र गुरुडम है। आज के विज्ञान पर भी कवि ने गहरे व्यंग्य किये हैं। विज्ञान मानव के श्रम को छीनता, हृदयहीन करता और प्रकृति को प्रदूषित कर रहा है, पर उसका नाम है, विज्ञान। 'एक स्त्री' कविता में व्यक्त मनोवैज्ञानिक व्यंग्य के दर्शन हम अपने जीवन में कभी-न-कभी अवश्य करते हैं।

14. उपरिक्त पृ. 66

15. देश दिल्ली और अहम पृ. 66

एक स्त्री

युवती

हसीन

शोख

आती है मेरे पास रोज,

और मैं इकला।

उसे देख मेरा मन खिल उठता।

आँखें चतुर्थाश खुलती,

हृदय दब जाता है,

आदर भाव से,

मुख मौन तोड़ देता-

“प्रिये” और आँखें कहतीं

“स्वर्ग की देवी, रानी”

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

एक स्त्री,

युवती

हसीन

शोख,

आती है पड़ोसी के

घर कभी कभी

जो इकला आवारा है।

उसे देख मेरा मन धू धू कर जल उठता

आँखें दुगुनी होती

लाल-लाल

हृदय घृणा से भरता

मुख बड़बड़ा पड़ता

कुलटा, बदचलन, नीच।”

और आँखें कह देती-

“तुझे धिक्कार है।”¹⁶

“मिश्रजी ने आज के नेताओं पर व्यंग्यात्मक महाकाव्य ‘नेताचरित्रम्’ की रचना की है। इसमें उन्होंने नेताओं को खूब धोया है। नेता तन से

मानव मन से अबोध (पशु) स्वर से बकरा और क्रोध से सिंह। उसकी विशाल हाथी-सी काया है। कंगारू-सी गति है। इस पर आश्वासन की सदाबहार हरियाली छायी रहती है। उद्घाटन आदि कार्य का प्राण हैं। उसको पद पर सब कुछ मिलता है, फिर कुछ नहीं। उसमें बनतूपन होता है। वह भददी अंग्रेजी बोलकर अपना बड़प्पन दिखाता है।¹⁷ कवि ने व्यंग्य शैली में उसका उद्भव और विकास दिखाया है — सतयुग में हिरण्य-कश्यप, त्रेता में रावण, द्वापर में दुर्योधन, कलियुग में हिटलर-सा जन्मांक होता है। उसकी आयु गाली से बढ़ती है। लोग उसकी आवभगत करते हैं। उसको अपार धन मिलता है। उसके यहाँ असल-नकल का भेद नहीं रहता है। पण्डित उसकी कुण्डली का फल भी बताता है। विदेश-यात्रा, खूब मान, सम्मान, जनता-जनार्दन और दरिद्रनारायण कहा जायेगा, व्यक्तिगत, सुरक्षा पर अपार व्यय होगा, दलितोद्धारक, बँगले का सुख भोगी, मरने पर भी सम्मान मिलेगा, समाधि व स्मारक बनेगा, रचनाएं भी होंगी, नेता का ही जीवन सार्थक होगा। नेता ही अमर होता है। जन्मांक फल के माध्यम से आज के नेता के यथार्थ चरित्र पर व्यंग्यात्मक प्रकाश डाला गया है। तुष्टीकरण की नीति पर व्यंग्य है। प्रगतिशीलता का ढोंग किया जा रहा है —

नेता अभिनेता तथा अधिकारी सब मुग्ध।

दोहन करने में जुटे प्रगतिशीलता दुग्ध।¹⁸

आज पश्चिम का अनुकरण आँख मूंदकर हो रहा है। अंग्रेजी और उसके भक्तों पर व्यंग्य है। नेताओं पर सबसे अधिक व्यंग्य है। मूर्ख होते हुए बुद्धिमान तथा विपरीत होते हुए भी पक्ष के मान लिए जाते हैं। वे विदेश और कुर्सी के प्रति अधिक आस्थावान होते हैं। वे भाषण को जीवन का सार समझते हैं। उनके अधिकचरे ज्ञान और अहंकार पर व्यंग्य है। रिश्वत और भ्रष्टाचारों पर व्यंग्य है। दोहरे चरित्र, स्वार्थी चरित्र, धर्मनिरपेक्षता और मिथ्या घोषणाओं पर व्यंग्य है।

पुराण, महाभारत और पाश्चात्य जगत् के भी उदाहरण हैं। युद्ध और ध्वंस की दशाओं का भी वर्णन है। नेता पैगम्बर माने जाते हैं। शेष दुनिया गधों की है, जिसमें वही महान् है, जो उनको घाट की ओर हांक सके। नेता ऐसे ही महान् है। जिस प्रकार सब लोग अपने-अपने धन्य में लगे हैं,

17. नेताचरित्रम्, पृ. 10

18. नेताचरित्रम् पृ. 28

वैसे नेता भी। देश सेवा का भाव नहीं है। सभाओं संस्थाओं का वीभत्स वर्णन है। परिवार नियोजन पर भी व्यंग्य है। मुसलमानों ने इसको प्रायः नहीं माना है, वे कहते हैं — “हम तो अल्पसंख्यक हैं, हमें तो और बढ़ना है।” वे जनसंख्या नियंत्रण को इस्लाम के विरुद्ध मानते हैं।¹⁹ प्रजापति-राजपाल-सम्मेलन कविता में प्रजापति सांसद पर व्यंग्य है। गर्दभ की महानता का वर्णन है।²⁰ ‘सम्पूर्ण साम्यवाद’ कविता में भी नेता के दोहरे चरित्र पर व्यंग्य है —

“मुँह में राम बगल में छूरी”

गद्दी पास, राम से दूरी!

पहले हल्ला, बाद में अल्ला,

केवल अल्ला जपता झल्ला,²¹

इसी प्रकार अन्य व्यंग्य भी हैं —

प्रतिशील कौन? जो भारत को गाली दे!,

धर्मनिरपेक्ष कौन? जो हिंदुत्व को लतियाए!

इतिहासकार कौन? जो विदेशवादी हो!

महाकवि कौन? जो सरकार यश गाए।²²

स्वर्गयुग (नेताचरित्रम्) कविता में तथाकथित उन्नति की चर्चा है। नारे अखबार, सभा, घोषणा के दिखावों में स्वर्णयुग है। असलियत में तो देश भूखा, नंगा, तबाह और बर्बाद है। धूर्तों, नेताओं और शोषकों के लिए यह स्वर्णयुग है। जनता की गाढ़ी कमाई पर ऐश करने वालों के लिए स्वर्णयुग है। पूरी कविता में एक लम्बा व्यंग्य है, “कवि ने कटु व्यंग्यों का भी प्रयोग किया है और सहज सरल भाषा में ‘एकता-सम्मेलन’ सर्ग में तथाकथित देशप्रेमी कर्णधारों की भर्त्सना पूर्ण स्तुति भी बहुत विनोदपूर्ण शब्दों में गाई है। धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिकता जैसे शब्दों की आड़ में देश से खिलवाड़ करने वालों की जमकर खिंचाई की है।²³ “नेताचरित्रम्” हिन्दी का ऐसा प्रथम महाकाव्य है। जो व्यंग्य प्रधान शैली में लिखा गया है। यह सर्गों का

19. नेताचरित्रम्, पृ. 56 के आधार पर।

20. नेताचरित्रम्, पृ. 56 के आधार पर।

21. नेताचरित्रम्, पृ. 86

22. नेताचरित्रम्, पृ. 103

23. मासिक ‘अंजुरी’ रानीबाग दिल्ली, अगस्त-सितम्बर 1995 संयुक्तांक, पृ. 25

महाकाव्य है, प्रारम्भिक वन्दना (नेता) से लेकर अन्तिम छन्द तक इसमें व्यंग्य है। प्रारम्भ की वन्दना नेता की है —

तू धन्य-धन्य नेता महान्
पदवन्दन मानो लाभ-खान,
कविजन गाते हैं कीर्तिगान
पाते हैं धन, यश और मान
इतिहासकार करते बखान
पद पदवी पाते बढ़ा शान
जीवनी, संस्मरण की बहार
लेखों का जग फैला अपार
चरणों पर लेटे पत्रकार
यात्रा भत्ते पा बेशुमार
है खान-पान ही प्राणसार
क्षणभंगुर जीवन निराधार
अजस्वर लेखक गजस्वर नेता
स्वाभाविक पूजा ले, लेता
नेता जग की चौका खेता
जग पारिश्रमिक उसे देता
नवयुग-नरेश यश का क्रेता
जब तक पदस्थ ऋषि, अध्येता²⁴

नेता और अंग्रेजी पर समान व्यंग्य है। दोनों ठग हैं। आल्हा छन्द में कवि ने नेता का उद्भव और विकास का वर्णन किया है — शैली व्यंग्य विनोद की है —

जिस दिन जन्म हुआ नेता का धरती धँस गई ढाई हाथ
माता मूर्च्छित घंटे भर तक, पिता पकड़ के बैठा माथ
चलीं चार सौ बीस हवाएं, उठे प्रभंजन भी छत्तीस,
सागर मचल उठा तड़के ही, उठी शून्य के मन में टीस।²⁵

नेता का विकास युगक्रमवत् है — हिरण्यकश्यप, रावण, दुर्योधन, हिटलर। इसी बहाने आज के नेताओं के भोग-विलास को कह दिया है।

24. नेताचरित्रम्, पृ. 6

25. नेताचरित्रम्, पृ. 11

आज तो नेता का चरित्र अपने आप में व्यंग्य का मुख्य विषय हो गया है। इनका चरित्र सामन्तों से भी अधिक व्यर्थ हो गया है। इनके ऊपर किया जाने वाला व्यय किसी के काम नहीं आ रहा है। जनता की गाढ़ी कमाई नष्ट हो रही है। इनके जन्म से लेकर समाधि तक के खर्च व्यर्थ हैं। एक ओर देश विदेशी ऋणों से दबा जा रहा है, तो दूसरी ओर देश में आतंकवाद आ गया है, जनता भुखमरी का शिकार है। इसके उपरान्त नेताओं के खर्च और व्यवहार आसमान पर हैं। साधन के बल पर आदमी आज महान् होता जा रहा है। महापण्डित आज इनसे पीछे हो गया है। सारी उपलब्धियाँ, सम्मान और संसाधन नेताओं के लिए हैं इनका विदेशीपन बढ़ता जा रहा है। यह आधे मुगल और आधे अंग्रेज हैं। हिन्दू-भाव मरता जा रहा है। देश के नेताओं का खान-पान, रहन-सहन दर्शनीय है। हिन्दुओं के अन्धविश्वासों और दृष्टि संकोचों पर भी व्यंग्य है।* ये सर्वमांस-भक्षण और सुरापान करते हैं — हिन्दू नियति, भाग्य और मूर्ति या ईश्वर की कृपा के सहारे बैठा रहता है। वह नित्य किसी न किसी का शिकार हो जाता है। यह उसकी सज्जनता कही जाये या दुर्बलता?

**हिन्दू के बस अर्थ रह गये दासभाव, हीनत्व, और अमान,
अपने को हिन्दू कहने से बेहतर है विषपान।²⁶**

आज का हिन्दू गुमराह है। उसमें आत्मसम्मान और आत्मविश्वास नहीं है। ईसाइयत की वृद्धि हो रही है। भारतीयता दिखावा है। धोती-कुर्ता में ये विदेशी मछली, औरत और विदेशी शराब का सेवन करते हैं। इनकी देशभक्ति व्रत नहीं, वृत्ति है। इनमें अभिनव सामन्तवाद है। सादा जीवन उच्च विचार इनसे बहुत दूर है। मजबूरी का नाम महात्मा गांधी है। हमारे आदर्श बदल गये हैं। आज का नेता जनता को विविध वर्गों में बांट रहा है। सर्वनाश के दहन पर फाग गा रहा है। धर्मनिरपेक्षता और आरक्षण पर व्यंग्य है। जातिवादी राजनीति पर हिन्दुओं के धर्म को उपेक्षित किया जा रहा है। मुसलमानों और ईसाइयों के धर्मों को प्रोत्साहित किया जा रहा है। किसी सीमा तक धूम्रपान-निषेध हो गया, पर गोवध-निषेध नहीं हो सका। व्यवस्था पर व्यंग्य है। देश की बुजदिली पर व्यंग्य है। हम सब जगह मारे जा रहे हैं, पर हमारे देश में सभी सुरक्षित हैं प्रगतिशीलता, साम्यवाद और समाजवाद पर व्यंग्य है। कुछ कटु व्यंग्य भी हैं। अंग्रेजी परस्ती पर व्यंग्य है। वर्ग संघर्ष, मिथ्या वंशवाद, अंग्रेजी और अंग्रेजियत, आर्थिक उदारीकरण, सस्ती

लोकप्रियता, विदेशी नीति, विश्वमानव बनने का लोभ, दोहरे व्यक्तित्व, देश के शोषण नेताओं के सभी अवगुणों को खूब दिखाया गया है। लोकतंत्र की लचर व्यवस्था और गदहेपन को विस्तार से लिखा गया है। लोकतंत्र गदहातंत्र हो गया है। अल्पसंख्यक राजनीति पर व्यंग्य है। लोग व्यवस्था के नाम पर अपनी रोटी सेक रहे हैं। तुलसी को ब्राह्मणवादी, साम्प्रदायिक कहते हैं। ऐसे लोग देशरत्न हैं।

बड़े नेताओं पर भी व्यंग्य है, नेहरू, अम्बेडकर आदि। नेहरू ने श्यामाप्रसाद मुखर्जी के मरण का समाचार रेडियो से रुकवाया था। अटल जी को पाकिस्तानी समझौते की विफलता पर, मैत्री राग पर व्यंग्य है। नेताओं की अवसरवादिता पर व्यंग्य है। सीधी लड़ाई से गांधी जी भी बचना चाहते थे। रामजन्मभूमि के सन्दर्भों को भी नेताओं ने अपने अनुसार उठाया और दबाया है। राम को लोगों ने भुलाया है। हिन्दुत्व और वैष्णववाद का दोहन किया है। इसमें दल नहीं स्वार्थ आड़े हैं। व्यंग्य में पौराणिक और सामाजिक सन्दर्भों से भी जुड़ी राजनीति पर व्यंग्य है —

**राजनीति का सार है, मत्स्य न्याय, यह मंत्र
पल भर जो न भुला सके, पाता सत्ता तंत्र।²⁷**

अच्छा गायक वह जो विदेशी राग में गाये। लोकप्रिय कवि वह जो पाकिस्तानी गजल को अलापे। मानवतावादी वह जो देश के घुसपैठियों को गले लगाये। रामजन्मभूमि का ढाँचा जिस उन्माद से गिराया गया, उस पर कवि ने व्यंग्य किया है। यह धर्मनिरपेक्षता नहीं भूला है। भारतीय संस्कृति की क्षति है। घुमन्तू नेताओं पर व्यंग्य है —

**देश-विदेश घूमने में रत नेता सारे
नहीं कहीं कोई जो चोरों को ललकारे
हिन्दू हत्यारों को आगे बढ़ धिक्कारे,
देश, जाति, संस्कृति पर अपना जीवन वारे।²⁸**

एकता सम्मेलनों पर व्यंग्य है²⁹ — जिनसे अनेकता ही उत्पन्न होती है। एकता तो दिखावा और छल है। एकता के नाम पर नेता पर नेता लोग जनता को बराबर लड़ाते रहे हैं। जातिवाद पैदा करते रहे हैं। सभी

27. नेताचरित्रम्, पृ. 102

28. नेताचरित्रम्, पृ. 120

29. नेताचरित्रम्, पृ. 126

दलों के नेताओं पर व्यंग्य है। राष्ट्रीय एकता के नारों से देश टूट गया। अब भी टूट रहा है। नेता लोग विश्व के दबाव और दल के समीकरण की ताक में बराबर रहते हैं। प्रान्त-प्रान्त की विसंगतियाँ हैं। सब अपनी-अपनी डफली और अपनी-अपनी तान में मस्त हैं। धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीय एकता, ओर हिन्दी पर भी व्यंग्य है बात बिल्कुल सच है। भाषायी प्रसंगों पर व्यंग्य है। आकाशवाणी दूरदर्शन का कोई मान नहीं है। कवि-सम्मेलन कोरे मनोरंजन पर केन्द्रित हैं, सरकारी आंकड़ों पर व्यंग्य है। अनेक विसंगतियों पर कवि के तीखे व्यंग्य हैं। अल्पसंख्यक के नाम पर आज जो कुछ हो रहा है, उस पर व्यंग्य है। समाचार-पत्र, साहित्यिक-प्रचार, संचार के माध्यमों पर व्यंग्य है। साहित्यिक पुरस्कारों पर व्यंग्य है। आज अनेक कवि भाट और व्यापारी हो गये हैं। थोथे राष्ट्रवाद और सरकारी कार्यों पर व्यंग्य हैं। बड़े नेताओं को प्रसन्न करने के लिए राष्ट्र का अपार धन व्यर्थ में बहाया जा रहा है। दोषी व्यवस्था को सच माना जा रहा है। सब पर व्यंग्य है। 'सार्वभौम' काव्य में भी समुचित व्यंग्य है। विदेशीपन और नेताओं से कवि को घृणा है। इतिहास, संस्कृति, सभ्यता, धर्म और दर्शन पर प्रकाश डालते हुए इनकी कमियों पर व्यंग्य किया गया है। राजनीतिक व्यंग्य सबसे अधिक है। व्यवस्था को लेकर कवि ने खूब लताड़ा है। विसंगतियों पर बार बार व्यंग्य है। इसमें औद्योगिक नीतियों, शोषणों आर्थिक विषमताओं और विदेशी व्यापार नीतियों पर व्यंग्य है। औद्योगीकरण की अंधता से संस्कृति नष्ट होती जा रही है। बीसवीं शताब्दी पर व्यंग्य है। कबीर से आगे बढ़कर कवि ने सभी कठमुल्लों पर व्यंग्य किया है। उनके सिद्धान्तों एवं आचरणों के खोखलेपन की झाँकी दी गई है। बड़े आदमी कहे जाने वाले लोगों पर गहरा व्यंग्य है। उनके रूप स्वभाव पर विशेष रूप से व्यंग्य है —

एक दिन गाँव में एक बड़मनई आया
 इम्पाला कार पर
 कद-छह फुट तीन इंच,
 तौंद का घेरा इक्यासी इंच, वजन एक विंटल तीन किलो,
 नस्ल मिली-जुली,
 चेहरे पर दस प्रतिशत आर्य तत्त्व
 पचास प्रतिशत हूण तत्त्व,
 चालीस प्रतिशत मंगोल तत्त्व,
 आपस में भिड़ रहे

मत्थे पर पत्थर लगने का बड़ा निशान,
मुँह पर चाकू के तीन कटों के निशान,
निशान बन फहरते,
लम्बोतरा मुँह, अपेक्षाकृत छोटी लाल-लाल आँखें,
श्वास से गुहराती
बीच बीच में भीषण डकारें ले लेते।³⁰

पूँजीवादी व्यवस्था पर व्यंग्य एवं भ्रष्टाचार का निदर्शन है। इसी प्रकार ऊपर के बडमनई की पत्नी का भी बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। सर्वत्र मिश्रण, फूहड़पन का फैशन, दिखावा और पूँजी का उन्माद है। कवि ने सबको नंगा किया है। नेताओं पर सबसे अधिक व्यंग्य है। ड्राइवर और अधिकारियों पर व्यंग्य है। मंत्री और अधिकारी ही अब क्षेत्र के राजा हो गये हैं। आज भी चारणों, खुशामदियों, राजाओं और मुखियों की कमी नहीं है। गत का अवशेष बड़ा बेकार है। व्यंग्य का पात्र है।

ड्राइवर लोगों को बता रहा था,
हमारे मालिक पहले ट्रक चलाते थे,
“फिर
‘बार्ड’ एरिया में गये और करोड़पति बने,”³¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

गधे हैं वे जो मेहनत के बल पर जीते हैं,
घास खाई, बोझ ढोया और बस चल बसे,³²

आज के स्वार्थी भक्तों पर व्यंग्य है। जो अपने स्वार्थ को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं —

कौशल किशोर खड़ा है। हाथ जोड़े,
आँखे मूँदे,
बुदबुदाते, “हे प्रभु, मेरा फर्स्ट क्लास आ जाए।
आई. ए. एस.
लेकिन

30. सार्वभौम, पृ. 19

31. सार्वभौम, पृ. 22

32. सार्वभौम, पृ. 22

प्रभु को तो स्वयं वनवास करना पड़ा
वालि वध.....

उसने बलात् मन को प्रशान्त किया।

मस्तक झुका दिया और बाहर निकला।³³

प्रभु की निन्दा करते हैं। आज गांधीवाद की हत्या, दुर्दशा और दुरुपयोग हो रहा है। वे लोग जो हँस-हँसकर सजा काट चुके थे — वही आज देश के शोषक, गांधी चिन्तन के विरोधी और तानाशाह हो गये हैं। आज के पर्यावरण विनाश पर कवि ने दुःख व्यक्त किया है। न पुराना रह गया, न नया उससे आगे जा सका।

कहाँ गया मेरा आकाश,

जिसमें था देवों का वास?

तूने लूटा मुझे, विकास!

ओ रे पूँजीवाद के दास!

तूने छले श्वास-प्रश्वास

तूने ध्वस्त किए उच्छ्वास

ओ विज्ञान! बना तू फाश

बांधे कला, काव्य के हास,

पूँजीवाद प्रकृति को ग्रास,

बना हुआ तेरा उल्लास।³⁴

बौद्धिक या तर्क के आधार पर सभी धर्म या समाज के लोग समान हैं, पर व्यवहार में एक दूसरे के खून के प्यासे हैं। करुणा का प्रतीक ईसाई धर्म है। संसार का खून पीता रहा। शांति, (सलाम) का प्रतीक इस्लाम खून-खच्चर करता रहा। एकता और उदारता का प्रतीक हिन्दूधर्म आपस में ही लड़ता मरता रहा।

“हत्या करो” जग बोले,

हम हैं धर्म विश्वासी

मानवता तो दासी।³⁵

33. सार्वभौम, पृ. 35

34. सार्वभौम, पृ. 42

35. सार्वभौम, पृ. 46

आज की राजनीतिक अवस्था पर कवि ने गहरा व्यंग्य किया है।³⁶ राजनीति की शांति भ्रांति है और कुछ नहीं, इसमें न रचनाधर्मिता है न लोकमंगल की छाया। यह शोषित की भाषा और शोषण की काया है —

मुझे स्वयं आश्चर्य क्यों नहीं अचेत हूँ मैं?
हँस पड़ी दासी, तो क्या तुम्हें चेत है?³⁷

प्रसंग कैकेयी के कोप के पूर्व का, मथुरा के कुचक्र के प्रभाव का। कवि ने संभावना व्यक्त की है कि राम-सीता की भी निन्दा करेंगे। ऐसे लोगों पर उसने व्यंग्य किया है।³⁸

कवि को व्यंग्य-विधान में पूर्ण सफलता मिली है। व्यंग्य मर्यादित, धारदार और प्रचलित हैं। इनको समझने में देर नहीं लगती हैं। प्रभाव की दृष्टि से ये तेज और स्थायी हैं। आज की कविताओं में ऐसे व्यंग्यकार कम हैं। वर्तमान विकृतियों पर व्यंग्य करने वाले कई कवि हैं, परन्तु अतीत और वर्तमान सब पर व्यंग्य करने वाले तो नाम मात्र को हैं। सभी क्षेत्रों में कवि के व्यंग्य सफल हैं।

36. देखिये, दृष्टि, पृ. 196-67

37. पुरुषोत्तम, पृ. 96

38. पुरुषोत्तम, सर्ग—12

क्रान्तिदर्शिता

डॉ. मिश्र को क्रान्तिदर्शिता विरासत में मिली थी। उनके पिता स्व. शिवलाल मिश्र (1900-1963 ई.) प्रगतिशील विचारों के थे। सौतेली बहन भैरवी का विवाह पाठक ब्राह्मण के साथ करने पर वे वंशबहिष्कृत किये गये थे। उन्होंने बड़ी ठोकरें खायीं। पाठक कम मर्यादा वाले माने जाते हैं। कान्यकुब्जों में सम्बन्ध अब भी बचाये जाते हैं। पाठक, उपाध्याय और चौबे (चर्तुवेदी) लोगों से विशेष रूप से; जोशी और भट्ट तो ब्राह्मणइत्तर से समझे जाते हैं। संयोग से मिश्र जी अपने ननिहाल निम्बई (उन्नाव) और कालान्तर में राम प्रसाद मिश्र भी वहीं उत्पन्न हुए थे। दौलतपुर (रायबरेली) वंश-स्थल पैतृक स्थल है। निम्बई जन्म-स्थल है।

कवि तो प्रकृत्या क्रान्तिदर्शी होता है। मिश्र जी शोषण और उत्पीड़न का सदैव विरोध करते रहे हैं। चाहे कोई क्षेत्र संग्रह हो, सामाजिक, राजनैतिक और बौद्धिक। 'देश दिल्ली और अहम' की कविताओं को देखा जा सकता है (पृष्ठ 20 तथा अन्य)। कवि ने अनेक स्थानों पर शोषण का विरोध किया है। वे शोषण विहीन समाज चाहते हैं। साम्राज्यवाद, सामन्तवाद के हर पक्ष से उनको घृणा है। 'बौद्धिक रस' काव्य संग्रह से लेकर क्रान्ति के गीत एव मृत्युंजय जय प्रकाश संग्रहों तक की कविताएं इसी प्रकार की हैं। कवि ने महापुरुषों के ऊपर जो कविताएं रची हैं, उन सब में क्रान्तिदर्शिता है। उनका रुझान ऐसे लोगों में अधिक है जो स्वयं क्रान्तिदर्शी हैं। उन्होंने प्रतिभा का विकास दरिद्रता, कुण्ठा और अभाव आदि में होना माना है। इसको सभी लोग स्वीकार नहीं करते हैं पर यह गलत भी नहीं है इस सन्दर्भ में उनके साहित्यिक निबन्धों को देखा जा सकता है। उनका 'संघर्ष और साहित्य' निबन्ध समाज और प्रजातंत्र की मान्यताओं के निकट है। प्रायः महापुरुष संघर्षजेता रहें हैं भारतीय-यूरोपीय, प्राचीन-आधुनिक सब कुछ प्रतिभाशाली लोग सम्पन्न घरानों में भी हुए हैं, किन्तु उनकी कथा भी वंकिम है।

भारतीय समाज में व्याप्त असमानता, पाखण्ड, शोषण, प्रपीड़न एवं अत्याचार, पर क्रियाएं हैं। 'देश दिल्ली और अहम' कविता संग्रह में आक्रोश व्यंग्य, कुण्ठा तथा परिवर्तन की चाह स्थल स्थल पर मिलती है। उन्होंने भोगे हुए यथार्थ को अधिक महत्व दिया है। पाश्चात्य चातुर्य, पूँजीवादी प्रकाशक नेता और समाज के बड़े लोगों के खिलाफ उन्होंने लिखा है। उनमें प्रगतिवादी और प्रयोगवादी संस्कार हैं। अनेक बातों को उन्होंने लीक से हटकर प्रस्तुत किया है। 'बौद्धिक रस' संग्रह की कविता 'वासना के प्रति' में उन्होंने अपने विचारों को व्यक्त किया है। श्वास-सी वासना, प्राणी की जीवन संगिनी, उष्ण और शीतल दोनों है। नग्न सत्य तेजोमय, ऊपरी आडम्बर को नष्ट करने वाली, सृष्टि की संचालिका, प्रेम उसका शिशु है, त्याग अबोध दास है, शक्ति और ऊर्जा देने वाली, जीवन को सक्रिय करने वाली, उसका अवसान ही जरायु का विधान है। 'मेरे पशु जागो' कविता में उन्होंने कहा है कि जीवन के विकास के लिए छिपे अंगुणों को जगाना भी आवश्यक है, आदमी चालाकी में सब कुछ छिपाये रहता है। इसके साथ वह भोगता भी है, उनकी कविताओं में शोषण का चित्रण है। आदमी खचड़े में जुते हुए खच्चर-सा है, वह फँसा है। फिर भी चालक चाबुक चलाता है। आदमी चाहे जिस दशा में हो, परन्तु शोषक उसको क्षमा नहीं करता है। कवि ने ऐसे शोषकों का विरोध किया है। विरोधाभास के प्रसंगों में भी क्रान्तिदर्शिता है। कवि की क्रान्तिदर्शिता सराहनीय है। साठोत्तरी हिन्दी कविता में कवि का ऊँचा स्थान बनता है। बौद्धिकता और क्रान्तिदर्शिता का कवि के काव्यों में अद्भुत समन्वय है। अतः 'बौद्धिक रस' के कृती मिश्र जी सच्चे अर्थों में क्रान्तिदर्शी हैं। उन्होंने बहुत कुछ तोड़ा और बहुत कुछ बनाया है। यह कवि का मौलिक गुण होता है। उसमें कितने ध्वंस और मौलिकता है। निर्माण छिपे रहते हैं। आधुनिकता में सबसे अधिक तोड़ने की प्रक्रिया चली है। स्वातंत्र्यभाव इस काल की प्रमुख पहचान है। इसी में क्रान्तिशीलता है, और जो कविता गुलामी, रूढ़ि और बन्धन से मुक्त हो पाती है, वही सच्ची कविता होती है, बागी कविता होती है, नैतिक कविता होती है।

इच्छा है तोड़ दूँ
काव्य में रूढ़ि की
जड़ता, पाखण्ड की
शत-शत शृंखलाएँ।¹

पंत, प्रसाद, निराला, अज्ञेय, मुक्तिबोध, धूमिल आदि ने भी ऐसा ही किया है। साठोत्तरी कविताओं में तो विशेष रूप से नकारने की प्रवृत्ति है। मौलिक होने का यह उत्तम उपक्रम है। तोड़ना ही जोड़ना है। कभी-कभी जोड़ने के लिए भी ऐसा किया जाता है। इधर लोक से हटकर बहुत बहुत लोगों ने बहुत कुछ कहा है। कविता के नये आयाम नित्य प्रति आ रहे हैं। साठ (1960 ई.) के आसपास लोगों का मोहभंग होने लगा है। रामराज्य, आदर्शवाद और लोकतंत्र से जनता ऊब जाती है। उसको निरर्थक पंचवर्षीय योजनाएं आकर्षित नहीं कर पाती हैं। कविता सबका हिसाब रखती है। ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी कहीं घटित होता है, वह कविता में अवश्य घटित होता है। कवि-हृदय सृष्टि का सबसे बड़ा संवेदनशील निकाय होता है। मिश्र जी भी युगीन धारा के अनुरूप अपना मन बनाते हैं —

सत्य की खोज में
चिंता किसी की नहीं
करूँगा कभी और
सदियों की गुलामी में,
निर्मित नैतिकता की
अनैतिक परिभाषा को
टोकर लगाऊँगा;
शक्ति के समता के
अखण्ड मानवता के
गीत गाऊँगा।²

कवि अपनी योजनाओं, सिद्धान्तों और विचारों को प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में अदभुत क्षमता है। आज विचार-कविताएं अधिक सम्मानित हो रही हैं क्रान्तिधर्मिता आगे बढ़ रही है। जीवन को जीवन की तरह देखने की इमानदारी बढ़ रही है। यथार्थबोध इतिहास और कल्पना पर हावी होता जा रहा है। शिल्प पर भाव और विचार चढ़ते जा रहे हैं। कविता में सब कुछ प्रस्तुत करने की क्षमता है। कवि बहुत कुछ अग्रकथन-सा कह जाता है —

पतन की प्रेरणा अश्लीलता है, उससे दूर,
रहूँगा, प्रवृत्ति की

उपेक्षा करूँगी नहीं।
 जीवन को जीवन के रूप में देखूँगी।
 स्वस्थ कल्पना प्राथमिक जीवन
 कोरी कल्पना नहीं प्रत्यक्ष है।
 प्राथमिक सत्य है, जिससे
 परिचय किया है, मैंने;
 आकाश गंगा में गीतों का युग गया,
 विश्व बन रहा नया,
 पुत्र पुराने का,
 किन्तु नवजीवनमय,
 उसी की अगवानी में कर रहा भारत मैं।³

कवि विद्रोही स्वर है। वह किसी भी स्तर पर शोषण को स्वीकार नहीं करता है, चाहे वह पीड़न सम्बन्धी हो या विचार सम्बन्धी। कवि अक्खड़ है। वह टूटना चाहता है, टूटने से अधिक वह गलत को तोड़ना चाहता है —

समझौता नहीं मैं कर सकता शोषण से,
 प्रपीड़न, असमानता से
 किसी भी मूल्य पर,
 झुक नहीं सकता मैं,
 भले ही टूट जाऊँ
 यद्यपि, टूटने से अधिक
 तोड़ना चाहता हूँ।

इतिहासबोध के साथ यथार्थ चित्रण है। यह भी कल इतिहास हो जाएगा। देश को इतिहास के चक्र में नहीं पीसना चाहिए। जड़ता दूर करनी चाहिए। कमियाँ दोनों में है। आज भी हम मध्यकालीन जड़ता से ग्रस्त हैं। इसके साथ आज की कल्पित उपलब्धियाँ दिखावटी या थोथी हैं। सरकार की जाली योजनाएं देश को लेकर डूब रही हैं। देश विकास से अलग-थलग पड़ता जा रहा है —

भारत मध्यकाल और आधुनिक काल की,
 चक्की में पिस रहा है।

मध्यकाल उसे जड़ीभूत किये पड़ा और
आधुनिक काल बना
दुर्वह मृग मरीचिका।⁴

आज भी हम प्राचीनता के खण्डहर में नवीनता का दर्शन कर रहे हैं जिससे कोई लाभ नहीं, उसको छोड़ देना चाहिए। अतीत से मोह भंग होना चाहिए। जो मूल्य अपना अर्थ खो बैठे हैं, उनको लिये रहना मूर्खता है -

पुरातन मूल्यों के खण्डहर में पड़े
देख रहे हम रॉकेट
आधुनिक काल का।⁵

क्रांति आमूल परिवर्तन कर देती है। प्रलय और सृष्टि का वह सम्मिलित रूप है -

क्रांति आमूल परिवर्तन का नाम है;
जिस तरह प्रलय के बाद नूतन सृष्टि होती,
उसी तरह क्रांति के बाद बदल जाता विश्व,
राष्ट्र, व्यक्ति और पुरातनता
के चिथड़े उड़ जाते।⁶

जब आमूल-चूल राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन दीख पड़े तब समझो कि क्रांति हुई। क्रांति से लाभ होते हैं शोषण समाप्त हो जाता है, रुढ़ियां नष्ट हो जाती हैं। बचते हैं आत्मबल, मन समता आदि। जनता के तन, मन में परिवर्तन होता है। विश्व, राष्ट्र और व्यक्ति के दुर्वह बुढ़ापे का अन्त हो जाता है। व्यक्ति पूजा का अन्त हो जाता है -

क्रांति जीवन की तरुणाई को कहते है!
क्रांति मानवता की जवानी का नाम है!
जहाँ नहीं यथासमय क्रांति, वहाँ मृत्यु है!⁷

4. देश दिल्ली और अहम, पृ. 12

5. देश दिल्ली और अहम, पृ. 13

6. देश दिल्ली और अहम, पृ. 66

7. देश दिल्ली और अहम, पृ. 67

अपना देश क्रांति नहीं चाहता, इसी से दरिद्र है। यहाँ व्यक्तिपूजा चलती है, क्रांति का आशय यहां ठीक से नहीं समझा गया। यहाँ क्रांति का आशय राजनीतिक परिवर्तन समझा गया। यह मात्र बुद्धिहीनता है। बिना सही क्रांति के जो वस्तु प्राप्त हो, वह दया हो सकती है। क्रांति भीख मांगने से मरना अच्छा समझती है। क्रांति परिवर्तन कराती नहीं, करती है। क्रांति के अनेक गुण कहे गये हैं। कवि का क्रांति रूप दर्शनीय है -

क्रांति अधिकार है, किसी का दान नहीं;
क्रांति राष्ट्र करते हैं, कोई 'महान' नहीं;
क्रांति हलाहल है, मादक मधुपान नहीं;
भारत! क्या तुझमें है क्रांति का प्रकाश कहीं?⁸

क्रांति अनायास नहीं आती है; जब शोषण और उत्पीड़न होता है, तब क्रांति आती है। शोषण चाहे सामाजिक हो या आर्थिक, उससे मिश्र जी को घृणा है -

जब एक-एक शोषक,
जब एक-एक भोगी,
जब प्रत्येक पाखण्डी,
कर दिया जायेगा,
धराशायी और लाशें
कुत्तों, चीलो, गीधों,
से नहीं जायेंगी खाई।
केवल तभी आयेगी,
राष्ट्र में तरुणाई,
पीले दशानन पर,
झलकेगी अरुणाई।⁹

'तब, अब और आगे' कविता में कवि ने अपने ढंग से गत, वर्तमान और भविष्य पर विचार किया है। उसने किसी का अनुकरण नहीं किया है। तीनों कालों पर अपने ढंग से विचार किया है। कवि क्रांतिदर्शी और त्रिकालदर्शी होता है, कथाकार, और ज्योतिषी होता है। हमारा देश महान् आस्तिक देश था। पृथ्वी और देवलोक उसके लिए सब प्रत्यक्ष थे हमारा

8. देश दिल्ली और अहम, पृ. 68.

9. देश दिल्ली और अहम, पृ. 20

आध्यात्मिक पक्ष बड़ा सबल था। फिर कवि ने आज के अद्भुत बदलाव को चित्रित और वर्णित किया है। सब उल्टा-पल्टा हो गया है। खराबियों का पुनरागमन अधिक हुआ है। बुराइयों की परम्परा सबल होती है। मनुष्य का अपना एक महत्व है। समष्टि और व्यष्टि का समन्वय है। मानव व्यर्थ नहीं है — वह महाप्रलय का अंश या अंग है —

मनुष्य-जीवन एक शाश्वत अपरितोष, विकास;
आदि हो या अन्त हो, हैं जुड़े सारे छोर;
चिर महत्त्वाकांक्षा का अपरिसीम प्रसार;
है समष्टि विशाल सागर, व्यष्टि एक हिलोर।¹⁰

कवि रूढ़ियों से ऊपर है, परम्परा रूढ़ि नहीं, बन्धन नहीं, एक निर्देशन है। उसमें मौलिकता को जोड़ा जा सकता है। सब में प्रवाह आवश्यक है। जड़ता सड़न उत्पन्न करती है। हिन्दू, सिख, ईसाई, मुसलमान सब श्रेष्ठ हैं; यदि मानवता के रक्षक हैं तो। कवि ने संकोच को छोड़कर मुक्त कण्ठ से सब की प्रशंसा की है। सिखों को हिन्दुओं की बाँह कहकर उनका विरोध न करने को कहा है। उन्होंने सरकारी रीति-नीति का विरोध किया है (दे. सार्वभौम)।

कवि काव्यशास्त्र के क्षेत्र में भी क्रांतिदर्शी है। उसने 'बौद्धिकरस' की स्थापना की है — "अधुनातन कविता के नए आयाम होने चाहिए-पर्यावरण-संरक्षा (जो समग्र जीवन को विनाश से बचाने के लिए अपरिहार्य है), बौद्धिक भावुकता की उन्मुक्त प्रतिष्ठा (जो कविता को कालातीत रूढ़ियों एवं गद्यात्मक विचारों से बचा सके)।"¹¹ "कवि ने क्रांतिदर्शी माखनलाल की प्रशंसा की है। वह ऐसा फूल था जो कभी नहीं मुरझाता। सदैव लड़ने वाले माखनलाल चतुर्वेदी थे। आज मूल धर्मों, से लोग अपरिचित होकर कुछ का कुछ समझते हैं। उन पर कवि ने व्यंग्य किया है। कवि ने क्रांत वन्दना की है। अहेतुक सब के लिए लड़नवाले कहीं भी भ्रम में नहीं है — उसकी दृष्टि सर्वत्र खुली है। उसने झूठी प्रशंसा को व्यर्थ बताया है। दहेज की भी कवि ने निन्दा की है। इससे नारी-शोषण होता है।¹² कवि ने नारी चेतना की सराहना की है। वह क्रांतिदर्शी आशावादी है। वह अमर जीवन में विश्वास करनेवाला है। मिश्रजी के काव्यों में भी क्रांतिदर्शिता

10. डॉ. राम प्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताएं, पृ. 166

11. सार्वभौम, (भूमिका पृ. 1)

12. सार्वभौम, (पृ. 39)

है। महाकाव्यों के मानक कवि के अपने हैं। बिना नायक का 'दृष्टि' महाकाव्य है। कवयः क्रांतिदर्शिनः 'दृष्टि' की एकाग्रता ही कवि को महान और क्रांतिदर्शी बनाती है। साहित्य शास्त्रियों ने महाकाव्य के विविध लक्षण दिये हैं — सर्ग बन्ध महाकाव्यों..... आदि भी कहा है। आज के महाकाव्य उस परम्परा के अनुसार नहीं लिखे जा रहे हैं। इनमें नकारे की भावना है। 'कामायनी' ने किसी-वेदायन् और 'दृष्टि' ऐसे ही महाकाव्य हैं। 'दृष्टि' महाकाव्य परिभाषाओं का अतिक्रमण कर जाता है। इसमें दृष्टि की उदात्तता महाकाव्यत्व को गरिमा प्रदान करती है। इसकी दृष्टि सम्पूर्ण 'दृष्टि' है — जो अनादि से लेकर अन्त तक फैली हुई है। पाश्चात्य सिद्धांतों का भी इसमें पालन नहीं किया गया है। इसमें समय एक है, अनन्तकाल और स्थान एक है। अखिल ब्रह्माण्ड और कार्य एक है। चरैवेति अनादि काल से चलता आ रहा है। इसका नायक है विश्व मानव — जो जन्म और मृत्यु की सीमा में आबद्ध नहीं है। 'दृष्टि' महाकाव्य अपने ढंग का अकेला महाकाव्य है। यह अध्यात्म की ओर उन्मुख हैं। इसमें आनन्दलोक की यात्रा 22 सर्गों में की गयी है। कवि स्वयं यात्री है। पाठक भी उसी के साथ हो जाते हैं। यह 'कामायनी' के स्तर का महाकाव्य है। यह स्थूल से अधिक सूक्ष्म हैं। प्राचीन मान्यताओं के अनुसार कवि ने काव्य का ढाँचा नहीं तैयार किया है, अपने ढंग से किया है।

कवि ने सबसे सुन्दर पृथ्वी को माना है। पर पृथ्वी के साथ किये गये अत्याचारों पर उसको चिन्ता भी है। उसने पैगम्बरों की क्रांतिधर्मिता को स्वीकार किया है। हर धर्म के नेताओं ने क्रांति की है। बिना कुर्बानी के नवीन युग का आगमन नहीं होता है। अपने हिन्दू धर्म नियामको के साथ इस्लाम तथा ईसाईमत के नेताओं की क्रांति या श्रमिक क्रांति को कवि ने बिना संकोच स्वीकार किया है। हजरत इब्राहीम के लिए कवि के भाव दर्शनीय है —

ओ नूतन, युग वाहक, ओ विभु के वार्तावह,

पैगम्बरों में पूज्य, पैगम्बर - पूर्वज ओ,

ओ विद्रोही युग नेता संघर्षों की,

ज्वाला में पलने वाली ज्योति की सज-धज ओ.....¹³

कवि ने इब्राहीम के श्रेय को स्वीकार किया है। इसी से यहूदी, ईसाई, और मुसलमान उनको पूज्य मानते हैं। वह अनन्तशक्ति को जगाने वाले

थे। हर क्रांति का स्वरूप अन्त में तैयार होता है। पावन बलि ही ईश्वर और युग को स्वीकार होती है। वह लाभ-हानि को नहीं; मांगलिक भविष्य देखती है —

कवि ने अतीत और वर्तमान का समन्वय किया है, पर क्रांतिदर्शिता के साथ। दोनों का महत्व अपनी-अपनी जगह विद्यमान है। दोनों अन्योन्याश्रित भी हैं कहीं बेमेल खिचड़ी नहीं तैयार की गयी है। ईसा पर रचित अपने ऐतिहासिक उपन्यास 'मसीहा' में भी इसी पद्धति को ग्रहण किया गया है। कवि सत्यवादी या वस्तुवादी है; मनोरंजनवादी या रोचकतावादी नहीं। वह सहज मार्ग पर चलता है और बराबर चलता रहता है। वह अपनी चाल से चलता है — यही क्रांतिधर्मिता है। 'आर्य' शब्द 'ऋ' धातु मूलक है — जिसका अर्थ है गतिशील या जड़ता-मुक्त। कवि ने आर्यों के प्रगतिशील चरित्र को दिखाया है। जो आदर्श से हटे हैं उनका विनाश भी दिखाया है। कहीं सत्य पर पर्दा नहीं डाला गया है। इसके साथ आदर्शों का मूल्यांकन भी किया गया है। रूढ़ियाँ आदर्श नहीं हैं —

मानव जीवन को आवश्यकता से
अधिक आध्यात्मिक रंग देना इस नग्न सत्य
की दुर्बल प्रतिक्रिया मात्र है कि जीवन का
प्रत्यक्ष व्यर्थ है, जीवन अनर्थ है।
स्वर्ग, अपवर्ग, ईश्वर, आत्मा, धर्म इत्यादि,
दुर्बलता के परिणाम। कहते-कहते क्षणभर
के लिए रुके ऋषि तब सहसा, चुप हुए।¹⁴

दशरथ को राम ने आदर्श पिता माना है। अनेक लोगों ने उनकी निन्दा की है —

.....जीवन की सीमाएं
इतनी स्पष्ट हैं कि सुख की उपेक्षा करना
कल्पित आनन्द के पीछे आत्महत्या करना ।
ऐश्वर्य जीवन का सर्वोपरि ध्येय है,
शक्ति स्वयं ही महानतम उपमेय है"¹⁵

14. पुरुषोत्तम, पृ. 238

15. पुरुषोत्तम, पृ. 250

कवि ने अहिंसा की क्रांतिकारी परिभाषा दी है, हाथ पर हाथ रखना अहिंसा नहीं। अहिंसा कर्म से नहीं, परिणाम, से स्पष्ट होती है। कायरता हिंसा से भी अधिक भयावह होती है। पापी का वध उचित है, उसका वध जितना शीघ्र हो सके, लोक के लिए मंगलकारी होगा। यदि एक व्यक्ति के वध से सैकड़ों व्यक्ति रक्षित हों, तो उसके वध से बढ़कर कोई अहिंसा नहीं। एक राष्ट्र के विनाश से यदि विश्व रक्षित हो, तो उस राष्ट्र का दमन पावनतम अहिंसा है। दुष्ट को क्षमा करना क्षमा के प्रति निर्मम अन्याय करना है। यदि उद्देश्य महान् है, तो युद्ध यज्ञ बन जाता है। यदि राम अत्याचार से धरा को मुक्त करने के लिए बालि का वध करते हैं, तो कार्य धर्म सम्मत है। अत्याचारी को ईश्वर के नाम पर रक्षित रखना ईश्वर का सबसे बड़ा परिहास है। कवि ने सिखों को इसीलिए महत्व दिया है कि वे क्रांतिकारी, भारतीयता के संरक्षक, संस्कृति के रक्षक और स्वाभिमानी रहे हैं। कवि ने विज्ञान को चुनौती देकर आध्यात्मिक क्रांति की बातें की हैं। राम का क्रांतिकारी रूप वर्णित है। इसी प्रकार विश्वामित्र को उन्होंने मात्र ऋषि न मानकर महान् योद्धा बताया है। उनका इतिहास दिया है। विश्वामित्र अपने कार्य के लिए राम को साधक बनाते हैं। तब रावण का राज्य अयोध्या के आसपास तक छाया हुआ था। विश्वामित्र महान् तेजस्वी ऋषि थे।

कवि ने रूढ़ियों को चुनौती दी है। काव्य, महाकाव्य के शिल्प पर भी कवि के अपने विचार हैं। कवि ने स्वतंत्र मन से सोचा और लिखा है।

काव्य में बौद्धिकरस और जीवन दर्शन में बौद्धिक अद्वैतवाद

शृंगार, वीर, करुण, रौद्र, अद्भुत, भयानक, हास्य, और वीभत्स को भारतीय काव्यशास्त्र के जनक, नाट्यशास्त्र के प्रणेता महामुनि भरत ने नाटक के आठ रसों के रूप में मान्यता दी, परन्तु बौद्ध एवं जैन प्रभाव के कारण निर्वेद या वैराग्य का महत्त्व बढ़ चला था। अतः महान आचार्य ने 'भी' के साथ शान्त (शान्तोडपि) को रस माना। निर्वेद की अवैदिकता तो नाम से ही स्पष्ट है। इस प्रकार नव रस की स्थापना हो गयी।

जब 'बौद्धिक रस' शीर्षक से कविता का संग्रह 1964 ई. में प्रकाशित हुआ, तब समीक्षकों में बौद्धिकरस की चर्चा भी चल पड़ी। साहित्यशास्त्र का यह 11वां रस है। पहले ऊपर लिखित 9 रस ही थे, सूरदास इत्यादि के प्रभाववश मध्यकाल में वात्सल्य रस की स्थापना 10वें रस के रूप में की गई। आचार्यों ने इसको मान्यता भी दी। पहले भी आचार्य विश्वनाथ ने इसको मान्यता दी थी। डॉ. मिश्र ने इसके सम्बन्ध में 'काव्य में बौद्धिक रस और आलोचना में वस्तुवाद' शीर्षक निबन्ध-संग्रह में इस पर विस्तार से विचार किया है, जिस पर विद्वानों की सहमति और असहमति है। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने इस ग्रंथ को विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के एम.ए. में संस्तुत किया है। बौद्धिकरस को मिश्र जी ने नए अधुनातन रस के रूप में प्रतिष्ठित किया है। बौद्धिकरस मिश्र जी के जीवन-दर्शन बौद्धिक-अद्वैतवाद का काव्यशास्त्रीय प्रतिफलन है। उनके शब्दों में "सम्प्रति, अद्वैतवाद, का वही अर्थ मान्य नहीं रहा जो "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" से आरम्भ होकर "जीवो ब्रह्मैव नायरः" तक जाता था, अब अद्वैतवाद एक विराट शक्ति एवं एक विराट ऊर्जा, एक विराट ईश्वर, एक विराट ईश्वर जो सर्वत्र व्याप्त है, से प्रत्येक तत्त्व का, प्रत्येक वस्तु का सम्बन्ध जोड़ने वाला महान् दर्शन है।"

प्रतिभा काव्य का अनिवार्य गुण है। नैसर्गिकी प्रतिभा से सच्ची कविता व्यक्त होती है। सभी कवि नहीं हो सकते हैं। आस्तिकों ने इसको दैवी सम्पदा माना है। कार्लाइल आदि विचारकों ने इसको जन्मजात गुण माना है। उन्हीं के शब्दों में — “कविता ईश्वर प्रदत्त उपहार है”, किन्तु मिश्र जी ने कविता को संघर्षजात माना है। कविता संघर्ष की ज्वाला में कुन्दन बन जाती है। प्रतिभाशाली व्यक्ति सामान्य नहीं हो सकता है। वह असामान्य ही होता है।² कविता दरिद्रता, कुण्ठा, अभाव आदि में पलती है। प्रतिभा और सुख का सम्बन्ध नहीं होता है।³

आज का जीवन इतना उलझ गया है कि वह बिना बुद्धि के नहीं रह सकता है। सहज हृदय, निश्छल मन आज व्यर्थ है। आधुनिक विश्व के निर्माण में बौद्धिकता का बहुत बड़ा हाथ है, किन्तु बुद्धि बिना भाव के गौरवहीन हो जाती है। अतः बौद्धिक रस की स्थापना आज की प्रबल आवश्यकता है। इस दृष्टि से मिश्र जी के बौद्धिक रस का महत्त्व बढ़ जाता है। कविता कहीं न कहीं अहम् को अभिव्यक्त करती है। प्रतिभा और कविता के सम्बन्ध पर मिश्र जी का तर्क दर्शनीय है “प्रतिभाशाली व्यक्ति यदि बाह्यतः समर्थ होता है, तो शासक बनता है। यदि वह बाह्यतः असमर्थ होता है, तो कवि बनता है।”⁴ इसके अनेक अपवाद भी मिलते हैं। कविता प्रतिभा से जन्म पाती है और प्रतिभा से जीवन पाती है। कविता मानव की पशुता और उदारता को सर्व समक्ष करती है। मनुष्य में भी पशुता होती है; कम या अधिक। “मैं स्फिंक्स हूँ” (बौद्धिक रस पृ. 105) शीर्षक की कविता में स्फिंक्स का मुँह मनुष्य का और शरीर शेर का है। भाव हुआ है कि मनुष्य में पशुता अवश्य विद्यमान है, और उससे उसका पशुत्व सदा के लिए छीना नहीं जा सकता। बौद्धिक अद्वैत दोनों में सम्बन्ध बनाता है। इसी प्रकार नर-नारी के बीच अद्वैत की बातें भी हैं ‘इल और इला’ कविता को देखा जा सकता है। प्राचीनता और आधुनिकता में भी ऐक्य दिखाया गया है। अद्वैत का व्यापक अर्थ लिया गया है। ‘अपनी-अपनी’ शीर्षक (बौद्धिकरस) में प्लेटफार्म, संसार या जीवन का प्रतीक है। गाड़ी गति या लय या यात्रा के प्रतीक रूप में है। निश्चिन्त युवक, गंभीर प्रौढ़ और प्रशान्त वृद्ध जीवन के तीन सोपानों के सूचक हैं — जिनमें से प्रत्येक की क्रिया, प्रतिक्रिया का चित्रण है। दार्शनिक दृष्टि से कविता उपनिषदों से जुड़ी हुई है। और काण्ट और स्पेन्सर के अज्ञेयवाद को भी व्यक्त करती है। ‘टूटते कगार’

2. दे. बौद्धिकरस, पृ. 68-69

3. दे. बौद्धिकरस, पृ. 69-70

4. दे. बौद्धिकरस, पृ. 95

(बौद्धिकरस) कविता में रहस्यात्मक प्रकृति का चित्रण है। इसमें भी अद्वैत दर्शन है। वर्डस्वर्थ और पंत (नौका विहार) ने भी ऐसा ही कहा है। “शाश्वत जीवन नौका विहार, चिर जन्म-मरण के आरपार”। कवि निराला ने भी ‘तुम और मैं कविता में इसी प्रकार का प्रयोग किया है —

“तुम तुंग हिमालय शृंग और मैं चंचल गति सुर सरिता।

तुम विमल हृदय उच्छ्वास और मैं कांतिकामिनी कविता।।

हर रचनाकार का अपना जीवन-दर्शन होता है। सब को उसकी रचनाओं में देखा भी जा सकता है। मिश्र जी वैज्ञानिक-अद्वैतवादी हैं। वे जड़-चेतन, उच्च, निम्न, नर-नारी सुख-दुःख, हानि-लाभ, आस्तिकता नास्तिकता, इत्यादि में एक सूक्ष्म का साक्षात्कार करते हैं।⁵

मिश्र जी अपने काव्य में बौद्धिकरसवाद से सेतुवाद तक चलते हैं। वह धर्म, परम्परा, परमात्मा, स्वर्ग-नरक को मस्तिष्क की भंगिमाएं मानते हैं। कुण्ठा, विकृति, संत्रास, अपरिचय का भी समावेश है। बौद्धिकता विराट् एवं यथार्थ जीवनवाद की अनुभूति है; शुष्क दार्शनिकता की नहीं है। इसी से मिश्र जी की रचनाओं में जीवनवादी दृष्टिकोण आ सका है। वे अद्वैतवादी हैं। आस्था-अनास्था, प्राचीन-अर्वाचीन, रस-अलंकार, प्रगति-प्रयोग आदि का संयोग ही अद्वैतवाद है। यही जीवन की व्यापकता है। समग्रता है। सेतुवाद इसी दर्शन का परिणाम है। यह समन्वयवाद का पर्याय न होकर अधुनातन अद्वैतवाद का पर्यायवाची है। सेतुवाद उनके काव्य का दूसरा सिद्धान्त है। भाव और कलापक्ष से भी यह सम्बद्ध हैं। मिश्र जी नवीनता का भी स्वागत करते हैं। प्राचीन-नवीन अन्योन्याश्रित हैं। इनमें वैर नहीं, आत्मीयता है। विकास जीवन का चरम लक्ष्य है। विरोध से विकास रुक जाता है, परन्तु मिश्र जी का विकास अन्धानुकरण या अपने को नष्ट कर देना नहीं है। आर्थिक विकास तभी तक उपयुक्त है, जब तक वह सांस्कृतिक गौरव एवं मौलिक चिन्तन के विरोध में नहीं है। मिश्र जी विचारक-कवि हैं। उनके दार्शनिक विचार भी हैं। वे अद्वैतवाद को मानते हैं। वे बुद्धिहीन-भावुकता और भावहीन बौद्धिकता को कोरा प्रलाप या विचार-व्याभिचार, मानते हैं।

मिश्र जी ने बौद्धिकरस को स्वयं व्याख्यायित किया है —

बौद्धिकरसः वैज्ञानिक यंत्र दुरुहता में,

अश्रुतपूर्व संगीत,

सभ्यता के, संस्कृति के नूतनतम रूप का गान है।⁶

5. मान्यता प्राप्त कविताएं पृ. 69-81 दर्शनीय।

6. बौद्धिकरस, पृ. 9

सभी रस बौद्धिकरस के वैज्ञानिक रूप हैं। बिना बुद्धि के रस का स्वाद नहीं मिल सकता है। विषय तो यह साहित्य शास्त्र का है, पर कवि ने बड़े तर्क के साथ कविता में पस्तुत किया है। बौद्धिकरस युगचेतना का आधार है। आगे चलकर हिन्दी में बौद्धिक रचनाएं खूब हुईं नयी कविता, अकविता, साठोत्तरी कविता, बीट कविता, गद्य कविता, नवगीत, अगीत, अकालगीत, नुक्कड़ कविता, युयुत्सावादी कविता आदि को देखा जा सकता है। मिश्र जी मार्क्स और गान्धीवाद से मुक्त हैं। मानवतावाद से वे अवश्य जुड़े हुए हैं। वे बौद्धिकरस के अन्वेषक हैं — स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य में बौद्धिक रस के अन्वेषक, मौख्यशास्त्र के प्रणेता डॉ. रामप्रसाद मिश्र हिन्दी आलोचना के वस्तुवादी विश्लेषक, महाकवि, मूर्धन्य समीक्षक तथा बहुआयामी प्रतिभा के प्रतीक हैं। यदि उन्हें साहित्य-सम्राट की संज्ञा दी जाये तो कदाचित् अत्युक्ति न होगी। किन्तु दुर्भाग्य इस देश का जहाँ ऐसी प्रतिभाएं उपेक्षित हैं। जिन्हें ने कोई उपयुक्त पद प्राप्त है और न ही समुचित प्रतिष्ठा। किन्तु किसी के आँखें मूँद लेने से सूर्योदय रुकता कहाँ है? फिर भी आज के विकृत समाज की सच्चाई यही है — “गली-गली गोरस बिकै; मदिरा पैठ निकाय”⁷

मिश्र जी ने स्वयं लिखा है —

मेरा ध्येय रहा, भारतीय बौद्धिकरस को जानें
भाव-विचार-अव्यय पूर्ण जीवन पाएं
प्रत्येक कर्मध्वज, नेता, कवि, लेखक, अन्य को
वस्तुवादी दृष्टि से परखें, अस्मिता गाएं,
किन्तु ये विचार रुढ़िग्रस्त, मठवादी, दलवादी
व्यस्त-स्वार्थवादी तत्वों को क्यों, कैसे भाएं?
मानव को मूढ़ बना स्वयं को पुजवाने वाले,
सदा चाहते हैं लोग खीसों निपोरते आएँ,⁸

उन पर एक कविता देखें जो आपरिचित कवि ने रची है —

आपकी कविताएं क्या हैं?

अमूल्य कथन

या जीवन-दर्शन,

7. 'स्वर्गता' की समीक्षा पृ. 13, समीक्षक — गोमती प्रसाद मिश्र 'अनिल'

8. स्वर्गता पृ. 54

इतिहास का संस्करण
या व्यक्ति सम्पत्ति की तरह
अपने आप में उसका संरक्षण
और लोगों में वितरण?

आपकी कविता की है जो कथा,
वही है सारे जमाने की व्यथा
सदियों कभी न टूटने वाली प्रथा
संघर्ष विजेता वीरों की वीरगाथा
जीवन के सारे पहलुओं को
छू जाने वाली कथा,

आपकी रचना में है
भाषा का मधुर विन्यास
झरनों की तरह बहे जो
लगातार अनायास
डाले अपने भाव में प्रकाश
उजला करके मन का आकाश
सफल आपका प्रत्येक प्रयास
महसूस करे पाठक आपको
अपने दिल के आस-पास

आपकी रचनाओं में
जड़ कुछ भी नहीं
सब जीवित हैं।
गंगा सिर्फ एक बहती वारिधारा नहीं
आपके हृदय में भी
प्लावित है,
आपने जो गंगा देखी है
वह वो गंगा नहीं जो
शिवजी की जटा से निकली है
आपकी गंगा तो
आपके दिल की गहराइयों से
निकलती, उछलकूद करती हुई
गंभीर चिंतन की अविरल धारा है

जीवन का जो सच्चा सहारा है
जीवन का जो किनारा है।
आपकी अभिनवता से
जिसने जमाने को झकझोरा है
जहां जीवन की सारी दिशाओं का
एक अनोखा ब्योरा है
जिस दिल को छुआ एक बार
घायल करके ही छोड़ा है,

आपकी कविताओं में
अमोघ सच्चाई है
निकलुष सफाई है
सागर की गहराई है
जहाँ डुबकी लगाने वाले
फिर से निकल नहीं पाते,

आपकी कविताएं
अंग्रेजों के लिए
प्रगाढ़ आत्मसंतुष्टि,
अनुजों के लिए
प्रेरणा की गति,
बुद्धिजीवियों के लिए
चिन्तन की नई अनुभूति,
मेरे लिए
मेरे छोटे से
इस दिमाग के लिए,
एक पर्वत-समान संबल है
प्रेरणा की
मेरे मन के लिए
शीतल अविरल गंगा है भावना की,⁹

अब मिश्र जी द्वारा पतंजलि की स्तुति का अंश -

हटाकर मानस रोग
दूरकर स्थूल-भोग

9. श्री माणिक चंद्र कलित (असमिया एवं हिन्दी कवि) इण्डियन बैंक, तिनसुकिया (असम)।

एक का ही ध्यान

एक का ही मान

एक में अवसान

एकामृत का पान

मानव! पतञ्जलि-पीयूष पा शांत हो

पूर्ण निश्चिन्त हो,¹⁰

बौद्धिक भावुकता की उन्मुक्त प्रतिष्ठा उनकी रचनाओं में है। आचार्य मम्मट ने भी काव्य का आधार बौद्धिक ही माना है। सच यह है कि बुद्धि और भावना के संयोग से भाव की सृष्टि होती है। "डॉ. मिश्र हिन्दी काव्य में बौद्धिक रस के प्रणेता हैं, स्थापक हैं। परन्तु वास्तव में उनका यह बौद्धिक रस आज के विश्व में मानव मूल्यों के तीव्र हास की प्रतिक्रिया स्वरूप उनके मन की करुण वेदना से उद्भूत विचारधारा है।¹¹ डॉ. मिश्र का कवि-हृदय सुकुमार, सुरेश भावनाओं से उद्भूत कोमल कल्पनाओं के शब्द रंगों से भरपूर है; परन्तु प्रत्येक कदम पर भ्रष्टाचार, अनाचार, अधर्म, अत्याचार और अनधिकार कार्यकलापों को दृश्यमान देख और जिसे हम साधारण भाषा में पाप कहते हैं, उसे फलता-फूलता देख, कवि का हृदय इतना रोया है कि करुणा का जल सूखकर, रेत की नदी जैसा बन गया है और उसी से उद्भूत हुआ है बौद्धिक रस। काव्य के माध्यम से केवल हृदय को ही नहीं, मस्तिष्क को झकझोर, नग्न यथार्थ का दर्शन कराने वाला बौद्धिक रस। सोचो, सोचो सोचो, और स्वयं को बदलो का आह्वान।¹² "किन्तु बौद्धिक रस के प्रणेता डॉ. मिश्र का अन्तर्मन उस शाश्वत सौन्दर्य चेतना से अलिप्त नहीं है जिसके अभाव में कवि, कवि न रहकर, विचारक मात्र रह जाता है। जहाँ बौद्धिकता के स्थान पर प्रकृति के विभिन्न रूपों के नयनाभिराम दृश्य कवि के हृदय को वाणी का आशीर्वाद और अभिव्यक्ति की शक्ति देते दिखाई पड़ते हैं। कवि का यह रूप रसायन खण्ड में उजागर हुआ है। इस खण्ड की सोलहों रचनाएं डॉ० मिश्र के कोमल भावों को आशा एवं आस्थावादी तैवरों को, विभिन्न रंगों में स्थापित करती सीधे हृदय में उतर जाती हैं। कुछ उदाहरण देखिए¹³ —

10. जयभारत, जयभारत-प्रहरी कृषक, श्रमिक जय पृ. 25

11. डॉ. भगवतशरण अग्रवाल, 'सार्वभौम की शाश्वतता' शीर्षक समीक्षा से।

12. डॉ. भगवतशरण अग्रवाल, 'सार्वभौम की शाश्वतता' शीर्षक समीक्षा से।

13. सार्वभौम (भूमिका)

1. टेसू के रंग लिए, सरसों के ढंग लिए
मादक उमंग लिए, मतवारी होरी आयी।
2. मौन अमलताश अमलता शक्ति से कहता
मैं उसकी जीवन्त सुरभि लहर में बहता,
स्नात्, शीतल, शाश्वत।
3. पुरवैया आ गई।
अँचरा उड़ा गई, हियरा बहका गई,“
अँधियारी लहकी उजियारी भा गई।

सार्वभौम का रस बौद्धिक रस है, दर्शन बौद्धिक अद्वैतवाद, सिद्धान्त सांस्कृतिक प्रगतिवाद, अनुभूति विश्वानुभूति¹⁴

संयुक्त राष्ट्रसंघः सारा विश्व एक है
मानवता एक है
हासविलास एक
अश्रु उच्छ्वास एक
एकता की ही टेक
अद्वैत का विवेक।
मानव चन्द्र पर पहुँचा; प्रगति की पराकाष्ठा
यंत्र मानव की गति
कम्प्यूटर प्रतीक मति
यांत्रिकी की उन्नति
रोग-अल्पमृत्यु क्षति
दैन्य दरिद्र्य यति
मानव है प्रज्ञापति¹⁵

आज का मानव बौद्धिक स्तर पर खूब विकास कर रहा है। उन्नति के पथ पर जा रहा है। अद्वैतवाद की बातें हैं। सभी अपने हैं सबको मिलाना चाहते हैं। एकता के नाम पर तमाम विप्लव हुए। यहूदी, ईसाई, मुसलमान शांति और धर्म, विकास और सुधार के नाम पर अपनी सत्ता, जाति और धर्म का विस्तार करते रहे हैं। हिटलर ने यहूदी मरवाये, ईसा के नाम पर ईसाई विजय पाते रहे। सब अपने को पूर्ण कहते हैं। हिन्दू भी शुद्धिवाद

14. सार्वभौम (भूमिका)

15. सार्वभौम, पृ. 44

से प्रभावित हैं। सांप्रदायिक दंगे इसी से तो होते हैं। व्यवहार के स्तर पर सब में भेद है। इसलिए केवल बौद्धिक पर्याप्त नहीं रस भी अप्रतिवार्य है। कामायनी में भी बौद्धिकवाद है। इड़ा बुद्धि का प्रतीक है। बौद्धिकता जड़ता नहीं है। सारस्वत प्रदेश की सभ्यता यंत्रयुग की सभ्यता है। देव सभ्यता में एक प्रकार की सामन्तवादी दृष्टि मिलती है। वहाँ विकास-मर्यादाहीन हो जाता है। मिश्रजी का बौद्धिक रस उससे कुछ भिन्न है।

‘दृष्टि’ महाकाव्य का मूल रस बौद्धिकरस है जो अन्य सभी रसों को अपने में आत्मसात् कर लेता है। 22 सर्ग के इस विशिष्ट महाकाव्य में कवि की दृष्टि अनुभूति-लोक से आनन्द-लोक तक भ्रमण करती रहती है। लोकाटन की इस पद्धति में कवि ने जिन विविधताओं की अनुभूति की है, उन्हें वस्तुतः एक माना तथा विभिन्नता और एकता में कोई अन्तर नहीं देखा है —

जीवन का बाह्य भिन्न, आभ्यन्तर एक है,
बाह्य-आभ्यन्तर में संगति बैठानी है।”

कवि ने भिन्नता को प्रकृति की देन मानकर अनेकता में एकता की दृढ़ता दिखायी है। तैंतीस कोटि देवताओं का उदाहरण देकर उन्होंने आस्था में अनन्तता देखी तथा संख्या की वृद्धि में एकता की वृद्धि की बात कही है। इस संसार में एक ही सत्य है — ‘एकोडहं बहुस्याम’ वाली उक्ति में एकत्व और बहुल्य के भेद का निराकरण करते हुए कवि ने प्रथम सर्ग में कहा है —

“एक था, एक था, एक का मेला था।

मेला एक का नहीं, अनेक का होता है, यह साधारण दृष्टि है, लेकिन सम्पूर्ण ‘दृष्टि’ में सर्वत्र एक ही विद्यमान है —

“एक था अनेक में, अनेक में एक था,
एक था सब में, सब में भी एक व्याप्त था।”

इसी एकत्व सिद्धान्त को साधारण करके कवि ने सम्पूर्ण काव्य को ऐसा दार्शनिक रूप प्रदान किया है कि वह पाठकों में स्वतः उदात्त भाव जागृत कर लेता है एवं लेखक नहीं, बल्कि पाठक भी स्वयं को इस महाकाव्य का नायक अनुभव करने लगता है। इस रसानुभूति में कवि काव्य और आस्वादक सब एक हो गये हैं —

एक का बोध हो, एक का शोध हो;
एक ही हास हो, एक उल्लास हो;
एक स्वच्छन्द हो, एक आनन्द हो?

क्योंकि कवि के अनुसार "एक से, तेरा बस एक से नाता है।" इसलिए कवि एकत्व की शुभ-कामना करता है —

कोलाहल में मैं एक सामान्य मानव हूँ,
किन्तु एकान्त में स्रष्टा बन जाता हूँ।"

कवि की दृष्टि समग्रता में निबद्ध है। यह स्थान और काल को अपने में समाहित कर लेती है। 'दृष्टि' में एक ओर वेद-लोक का वर्णन है, तो दूसरी ओर पैगम्बर-लोक का भी। एक ओर वाल्मीकी, व्यास, कालिदास आदि का वर्णन है, तो दूसरी ओर होमर, वर्जिल और दान्ते का, कल्हण, फिरदौसी, भर्तृहरि, कबीर, तिरुवल्लवर, सादी, ली ताई पो, मिल्टन, गेटे, ब्राउनिंग, वर्डस्वर्थ, गालिब, रवीन्द्रनाथ आदि के वर्णन में कवि ने देश और काव्य को एक कर दिया है। तो दूसरी ओर प्राच्य और पाश्चात्य एवं प्राचीन और आधुनिक कलाकार दार्शनिक, वैज्ञानिक आदि का वर्णन कर कवि ने अपनी 'दृष्टि' को सम्पूर्णता प्रदान की है। कवि के शब्दों में —

"अहं और इदं एक पूर्ण के दो नाम,
इनका दो होना ही जीवन है, लीला है।"

इसलिए कवि ने वैज्ञानिक अनुभूति को भी पूर्णता से भिन्न नहीं देखा है। उन्होंने 20वें सर्ग शक्तिलोक में अपने पूर्वज सुखदेव मिश्र, पितामह शम्भुरत्न मिश्र, पिता शिवलाल मिश्र आदि का भी स्मरण किया है। प्रसाद के 'आँसू' काव्य में व्यक्तिक पीड़ा विश्व पीड़ा में परिणत हो गयी है, तो 'दृष्टि' की विश्वदृष्टि, आत्मदृष्टि में अन्तर नहीं रखती। उन्होंने काल और मानव को माना है —

"काल एक है, मानव एक है वर्तमान
अथवा भविष्यत् अथवा भूत कल्पनाएं हैं।"

आज कल का भूत होगा, भूत कभी वर्तमान था, भविष्य भी वर्तमान और भूत हो जाता है। अन्ततः सब एक है। उन्होंने कला, विज्ञान, और अध्यात्मिकता में भी कोई अन्तर नहीं देखा है —

"अरे विज्ञान तू कला से प्रेम कर
अन्यथा जीवन भार नहीं ढो पायेगा।

द्वादश सर्ग में कवि ने योगी और कलाकार सीमा और अनन्तता, तप, युद्ध और शान्ति में भी कोई अन्तर नहीं देखा है —

“सीमा अनन्तता तत्त्वत एक है” (अष्टम सर्ग)

“सत्य का साधक/युद्ध में शान्ति में भेद
नहीं मानता।” (पन्द्रहवाँ सर्ग)

प्रेम कैवल्य का लौकिक स्वरूप है।” (पंचम सर्ग)

इस महाकाव्य में कवि ने “यात्रा अनन्त है, अनन्तता जीवन में है, जीवन अनन्त का दूसरा नाम है।” कहकर औपनिषदिक उक्ति ‘चरैवेति’ को जीवन का लक्ष्य माना एवं आगे बढ़ने को ही स्वर्ग बतलाया गया है। उनके अनुसार आगे बढ़ना साधन नहीं, बल्कि साध्य है —

“यात्रा जब स्वयं एक आनन्द बन जाती

तब वह अपना लक्ष्य अपने में पाती है”

अतः ‘चरैवेति’ या साधारण भाषा में परिवर्तन ही जीवन का लक्ष्य है, रुक जाना मौत के बराबर है —

“परिवर्तन जीवन को जीवन बनाता है,

परिवर्तनहीन को जड़ कहा जाता है।” (शिवलोक)

इस प्रकार कला विज्ञान और दार्शनिकता से परिपूर्ण ‘दृष्टि’ महाकाव्य विधा में एक नूतन प्रयोग है। इसमें कवि ने अनेक नूतन परिभाषाएं दी हैं — जो उनके द्रष्टव्य भाव को प्रमाणित करती हैं —

“जीवन निरपेक्ष नहीं, जीवन सापेक्ष है।” (जीवनमय लोक)

“रस और जीवन तो पर्यायवाची हैं” (जीवनमय लोक)

“प्रेम तन-सुख नहीं, विलय मन-क्षेम का।” (वेदलोक-2)

जीवन एक दुःख है, जन्म से अन्त तक

एक सघन यातना ही उस पर छाई है।” (दर्शन लोक-2)

“मनन का हनन राष्ट्र का हनन होता है।”

(दृष्टि, विज्ञान लोक-1)

तन की दृष्टि दृष्टि को सीमित कर देती है -

मन की दृष्टि से क्षितिज व्यापक हो जाता है

प्राण की दृष्टि क्षितिज को अनन्त कर देती है।

(दृष्टि, विज्ञान लोक-2)

कवि ने अनेक आप्त वाक्यों का प्रयोग किया है। सम्पूर्ण 'दृष्टि' महाकाव्य में बौद्धिकता का प्राधान्य होते हुए भी रसात्मकता की कमी नहीं है। उदाहरण के तौर पर षष्ठ सर्ग के उषा वर्णन को लिया जा सकता है -

“फागुन का सवेरा फाग गाता ही आता था,
प्राची की लाली में रंग भी खेला था;
हरी-हरी वनस्पति, भरी-भरी ज्योति थी,
चारो ओर लगा हुआ रंग का मेला था।”

“इस प्रकार सभी दृष्टियों से 'दृष्टि' एक अनुपम महाकाव्य है, कवि ने इस काव्य में मानव जाति के इतिहास, धर्म, दर्शन, कला, काव्य, विज्ञान, आदि को बौद्धिक रस में रूपायित करने के साथ-साथ वेद, बाइबिल, कुरान, आदि के दर्शनों का भी वर्णन किया है। किन्तु समग्र काव्य पढ़ने के बाद कहीं भी कवि की पांडित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति या अपना लक्ष्य प्रतिपादन करने का प्रयास दृष्टिगत नहीं होता। कवि ने अनेक शास्त्रों और ग्रन्थों का गहन अनुशीलन एवं अध्ययन किया अवश्य है, किन्तु इस अध्ययन के सार को अपने में इतना आत्मसात् कर लिया है, कि यह महाकाव्य एक स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्ति जैसी लगता है। इसलिए यह महान-बौद्धिक काव्य अत्यन्त रसयुक्त बन गया है। इससे कवि की 'दृष्टि' पूर्णता को प्राप्त हुई है।¹⁶

बौद्धिकता आधुनिक युग में विशेष रूप से आयी। ज्यों का त्यों लोगो ने इसको स्वीकार नहीं किया। प्रारम्भ में ब्रह्म समाज और आर्य समाज के आन्दोलन बौद्धिक चेतना के प्रतीक थे। अतएव काव्य में भी बुद्धिवाद का प्रवेश हुआ। कविता के भावपक्ष और कलापक्ष दोनों में बुद्धिवाद का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। धार्मिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में बुद्धिवादी की कसौटियां मिलेंगी। इन पर किसी तथ्य को कस कर ही स्वीकार किया गया है। अपने बुद्धिवादी दृष्टिकोण के साथ ही कवि ने अंधविश्वासों, रूढ़ियों एवं कुरीतियों की आलोचना की है। अतीत का केवल वही रूप उसे ग्राह्य है - जो शंकामुक्त है। जिस बात की संभावना पर तनिक भी संदेह हुआ है, उसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया है। इसलिए कवि के वरेण्य चरित्र बौद्धिकता की कसौटी पर खरे उतरते हैं। मातृभूमि प्रेम, राष्ट्र प्रेम और स्वदेश गौरव, मानवतावादी तथा बुद्धिवादी प्रवृत्ति इस युग

की कविता का प्राण बनी। अब कविता का उद्देश्य केवल मनोरंजन न रहा, और उसमें मानव-जीवन की सामान्य भावनाओं का समावेश भी होने लगा।¹⁷ 'दृष्टि' महाकाव्य एक सांस्कृतिक महाकाव्य है। इसमें बौद्धिक रस की प्रधानता है। कवि ने पारम्परिक रसों की ओर विशेष ध्यान दिया है। 'दृष्टि' के सम्बन्ध में साहित्यमहोपाध्याय चक्रधर 'नलिन' ने उचित ही कहा है कि "समीक्ष्य काव्य वस्तुतः संस्कृतिकपरक महाकाव्य है, किन्तु मूलतः एक दार्शनिक महाकाव्य है वास्तविक नायक विश्वमानव है तथा सात्त्विक नायक बौद्धिक-अद्वैतवाद है। इसमें सकल भारतीय दर्शन ही नहीं, समस्त विश्व संयुक्त है। कवि निश्चित ही मानव-एकतावाद को भावात्मक भूमि की सार्वभौमिक व्यापकता प्रदान करने में सफल हुआ है — जिससे यह मौलिकता निष्पन्न बौद्धिक चिन्तन प्रधान कृति हो गयी है।¹⁸ लोक-परलोक में कवि की जैसी मनोवैज्ञानिक आस्था है; वैसी ही जीवन और मुक्ति में थी।

"या मेरे अल्लाह, तू सबका आका है,
कोई भी तुझमें शरीक नहीं, एक है;
तू जो भी चाहे वही पल में कर सकता है,
लेकिन तू करता वही जो होता नेक है।"

(दृष्टि, पृ. 77)

कवि ईश्वर से ही ईश्वरीय गुणों की याचना करता है। मुहम्मद साहब के आदर्शों को भी वह सम्मान देता है। उसने महान् कवि कर्म का स्मरण किया है। आज की कविता प्रपंचों में उलझ गयी है। वाल्मीकी का कवि वंदन करता है। कविता को वह राजनीति, अर्थ और आडम्बर से परे की वस्तु मानता है। हमारा स्वर्णिम साहित्य मुक्त भाव से लिखा गया है। "क्या भारत में कविताकला सदैव के लिए अर्थ-राजनीति व्यूह में खो गई है।

व्यक्तित्व कृत्रिमता में कृतित्व चल बसा?

अरे अश्रु भरे भाव, वाणी शिथिल हो गयी।

(दृष्टि, पृ. 86)

कवि ने सभी कलाओं को स्वीकार किया है। सौन्दर्य को माना है कलावाद सौन्दर्यवाद का प्रभाव है। चित्रकला, संगीतकला, काव्यकला, और मूर्तिकला के विविध रूपों को कवि ने स्वीकार किया है। कवि ने अद्वैतवाद

17. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ. जयकिशन प्रसाद जायसवाल पृ. 559

18. सम्मेलन याचिका (त्रैमासिक) हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग भाग.81, संख्या 4, पृ. 137

को माना है; परन्तु भौतिक सत्ता को व्यर्थ नहीं माना है। अकाल में आश्रम खाली हो जाते हैं। अन्न जल का भी अपना महत्व है —

आश्रम वीरान था, अन्न जल अभाव में
शिष्य सब भाग गये जीवन की खोज में
विश्वामित्र को उनका पलायन अच्छा लगा,
क्योंकि वे न अशन बने महाकाल भोज में
सूखे जलाशय, सूखे खेत, सूखे सब तरु
चोर लुटेरे विफल मरे निज धौज में
सारी सौंज व्यर्थ, अन्न वाला ही सर्वोपरि
उन्हें पा दरिद्रतम भी गाता भोज में।¹⁹

जीवन-दर्शन में बौद्धिक रस का सबसे अधिक उपयोग होता है।
जीवन का अद्वैत-दर्शन कवि द्वारा सर्वत्र स्वीकार किया गया है —

पति-पत्नी प्रथम मिलन में अद्वैत हो जाते;
यदि स्थूल अन्त भी एक का हो जाये,
तो उससे सूक्ष्म अद्वैत वियलित न हो,
अपनी परीक्षा दे सफलतर हो जाये,
ऐसा अद्वैत प्रणय प्रणव का घोष है।²⁰

जीवन के अन्य प्रसंग में भी कवि ने अद्वैतवाद का प्रतिपादन किया है। इस संदर्भ में चित्रकूट में राम-भरत के मिलन का दृश्य दर्शनीय है —

उस समय वहाँ न थे धनुष, न थे तूणीर,
न शर, न पट, न चीर, न अश्रु न पुलक,
न आनन्द, न भरत, न राम, उस समय
वहाँ केवल शुद्धतम, पावनतम प्रेम था।
उस समय वहाँ न था आकाश, न पृथिवी,
न पवन, न पर्वत, न जल, न सत, न रज,
न तम, न ज्योति, उस समय वहाँ केवल,
पावनतम प्रेम था। उस समय वहाँ न था
भूत, भविष्य और वर्तमान, न जीवन

19. वेदायन, पृ. 57

20. पुरुषोत्तम, पृ. 76

की औपचारिकता, न आदर, न मान,
न भाव, न विचार, न आचार, न ज्ञान,
इस समय वहाँ केवल पावनतम प्रेम था।²¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

पुर गये सारे घाव, खो गये हाव-भाव,
रो गए सारे चाव, अनुभूति-लोक में,
खो गई दिशाएं चार ब्रह्माण्डों में
चार युग एक क्षण में और उस समय
मिट गया संख्या का अस्तित्व यद्यपि वहाँ
पर भी एक दृष्टि थी दृश्य में अदृश्यमान।²²

कवि ने जीवन दर्शनपरक कविताओं में इस शीर्षक पर विशेष प्रकाश डाला है।²³ राम को भी कवि ने अद्वैत स्वरूप माना है। राम-सीता में भी अद्वैत है। आन्तरिक रूप से दोनों एक हैं। प्रकृति और जीवन के बीच भी कवि ने अद्वैत भाव को स्थापित किया है। दोनों में अन्योन्याश्रित संबंध बताया है। उसी में सहजता है। उसी से जुड़कर समग्र बनता है।²⁴ दो विरोधी तत्वों के द्वन्द्व का अभाव ही समरसता है। मानसिक क्रियाओं में सामंजस्य का स्थापित होना अनिवार्य है। समाज परुष और प्रकृति की समरसता है। एक तत्व ही सबके भीतर है। पूर्ण अद्वैतता समरसता के बाद ही आती है। भौतिकता में विषमता है। अध्यात्म से ही समरसता आ सकती है। इसी से आनन्द की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार मिश्र जी के काव्यों में बौद्धिक रस की सम्यक् स्थापना है। उसका औचित्य भी सिद्ध हो जाता है। इसके साथ जीवन में बौद्धिक अद्वैतवाद सम्बद्ध प्रसंग भी उनके वाक्यों में भरे पड़े हैं। कवि अपनी स्थापना में सफल है।

21. पुरुषोत्तम, पृ. 230

22. पुरुषोत्तम, पृ. 233

23. दर्शनीय — 'तब, अब और आगे'

24. वेदायन, सर्ग के आधार पर।

इतिहासबोध

उत्तम काव्य में लालित्य एवं यथार्थ सब कुछ होता है। साहित्य या कविता का आशय गायन, नर्तन और वादन तथा मनोरंजन से संबंधित सामग्री से ही नहीं है, बल्कि इतिहास, भूगोल, दर्शन, चिन्तन, युग चेतना आदि से जुड़ी सामग्री से भी होता है। कविता से अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों को देखा जा सकता है। डॉ. मिश्र की कविताओं में जीवन्त ऐतिहासिकता है। इतिहास मात्र घटना, चरित्र, तिथि और काल-बोध ही नहीं करता बल्कि वह अतीत और वर्तमान के दर्शन से भविष्य का निर्माण भी करता है। हर व्यक्ति इतिहास में समाना चाहता है, यदि भारतीय इतिहास चरित्र प्रधान है तो पाश्चात्य इतिहास घटना प्रधान, मिश्र जी ने दोनों को सम्मान दिया है। उनका इतिहासबोध भूमण्डलीय है। इतिहास सबको माँजता है। काल से जोड़कर वह सबका मूल्यांकन करता है। सूक्ष्म और स्थूल सब उसके घेरे में आ जाते हैं। इतिहास एक प्रकार की आलोचना भी है। इधर आलोचनात्मक इतिहास अधिक प्रसंद किये जा रहे हैं। दिन, तिथि और सन् की सूचना देना ही इतिहास का कार्य नहीं है, उसमें युग, साहित्य, भाषा, शासन और महान् व्यक्तियों की आलोचना या समीक्षा भी होती है। इतिहासकार बहुत सीमा तक समीक्षक भी होता है।

कविता में इतिहासबोध का होना उसकी गुणवत्ता है। साहित्य समाज का दर्पण इतिहास और कालबोध के कारण ही होता है। कवि अनिवार्य रूप से सामाजिक प्राणी होता है। उसकी कविता व्यक्ति और समाज की अभिव्यक्ति के उत्तरदायित्वों को लेकर चलती है। मिश्र जी का इतिहास बोध बड़ा व्यापक और गंभीर है। उन्होंने व्यावहारिक रूप से विश्व को देखा नहीं है, पर कविता की दृष्टि से उन्होंने सबको देखा है। कविताओं में प्राप्त सन्दर्भ इस कथन को प्रमाणित करते हैं। चरित्रों को उन्होंने विशेष रूप से दृष्टान्त और तुलना के लिए प्रस्तुत किया है। इस प्रकार, उन्होंने विश्व को एक स्थान पर प्रस्तुत कर दिया है।

इसके साथ-अतीत, वर्तमान और भविष्य पर भी उन्होंने पर्याप्त प्रकाश डाला है। अतीत के प्रति उनमें अपार रुचि है। वर्तमान को उन्होंने यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। भविष्य को उन्होंने संकेत रूप में प्रस्तुत किया है। 'बहादुरशाह ज़फर' काव्य-संग्रह में पहली कविता 'बहादुर शाह ज़फर' अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है। ज़फर स्मरण करता है-मुगलों के वैभव और अपने पतन को।

'पुरुषोत्तम' महाकाव्य में रामायणकालीन इतिहास है। 'कल्पान्त' में महाभारतकालीन इतिहास है। 'नेताचरित्रम्' में आज का चलता हुआ इतिहास है। 20वीं सदी का भारत है। आज के पतित राजनैतिक काल का इतिहास है। 'दृष्टि' ऐतिहासिक विश्व का चित्रण भी है। कवि का इतिहासबोध खुला और व्यापक है, गहरा और यथार्थ है। इसका नायक विश्व का नायक है। 'नेताचरित्रम्' में व्यंग्य शैली में कटु सत्य को कहा गया है। कुत्ब भारतीय दासता का प्रथम स्मारक है जिसने, गुलामों के इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय तुर्कों के अत्याचार, सैयदों, लोदियों, मुगलों, अंग्रेजों और कांग्रेसियों की सारी हरकतें देखी है। बहुत से बच्चे-पोते मर गये, किन्तु इसका दीर्घ जीवन विचलित नहीं हुआ -

धरती की छाती चीरकर निकली हुई

ज्वालामुखी की लपट;

थोड़ा-सा भूमि पर शेष स्वर्लोक में,

रात्रि में रक्तदीप देखकर लगता मानो,

शेष के अस्त्र प्रहार से व्योम-वक्ष,

सहसा विदीर्ण हुआ।¹

दिल्ली करुणा की कहानी कह रही है। कुतुबमीनार के शिल्प में अब भी प्रचीन गुप्त कालीन आदि दिखाई पड़ते हैं। कुतब ने इनसे बहुत कुछ उधार ले रखा है। सामने अलाउद्दीन की उद्दीप्त महत्वाकांक्षा खण्डहर अलाई मीनार है। पीछे अलाई दरवाजा श्रद्धा-सा सुदृढ़, सुन्दर स्मारक है। बगल में अपने युग के सिकन्दर (सिककों पर सिकंदर सानी) का स्वप्न देखकर मरने वाला खिलजी, रुस्तम का मरा, हुआ मकबरा। क्षणभंगुरता का निगूढ़ इतिहास है। अन्य शासकों के भी निशान हैं। मध्यकाल की अनुपम स्मृति है। ताज का पितामह कुतब सीधा खड़ा जी रहा है। मुगलों का ऐश्वर्य विलास, राजकीय अहम् का एक महान प्रतीक, युग, जीवन की उपेक्षा का

1. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 31

प्रमाण-पत्र लालकिला साढे तीन सौ वर्षों (1648 ई. में बना) का अधिकांश इतिहास की पुस्तक है। ऐतिहासिक मुहल्लों के भी वर्णन हैं। इन खण्डहरों में अस्थायी शासन, नीति, जनता की उपेक्षा और दासता आदि की कहानियां टूटी नहीं हैं। शाहजहाँ बादशाह मात्र नहीं, कलाकार भी था। अंग्रेजी शासन की अव्यवस्था और बादशाहों की मादक कथाएं हैं। विलासिता मध्यकालीन जीवन का ध्येय थी, परन्तु आज सब कुछ बदल गया है। नहर-ए-बहिश्त का प्रवाह परिवर्तन के मरु में खो गया है — फिर भी आज की दिल्ली मुगल वातावरण से मुक्त नहीं है। सबके साथ दिल्ली समाधियों की भी नगरी है। इतिहास के सभी पक्षों को प्रस्तुत किया गया है। इतिहासबोध के साथ-साथ कलाबोध, चरित्रबोध भी है। समीक्षा, विवेचना, वर्णन, चित्रण और व्यंग्य है। यथार्थ या वर्तमान पीछे से कम विचित्र नहीं है। लेखक का इतिहास और संस्कृतिबोध बड़ा विराट् है। अतीत के गौरव का उसको अक्षरशः ज्ञान है। अपने सम्पन्न अतीत को देखने के लिए उसने बार-बार कहा है। हमें अतीत से ऊर्जा लेने के लिए उन्होंने कहा है। वे अतीत रस के मर्मी हैं। जयशंकर प्रसाद और दिनकर जी इतिहासमर्मी और अतीत के प्रेमी थे। मिश्र जी का इतिहास अध्ययन साहित्य की दृष्टि से सम्बद्ध है। प्रायः इतिहासकार पूर्वाग्रहग्रस्त होते हैं। इधर इतिहास से सम्बन्धित अनेक नये तथ्य सामने आ रहे हैं। परम्परा का इतिहास ही अधिक है। समर्थ का ही इतिहास लिखा जाता रहा है। ऐसे लोग नाम मात्र के होते हैं। अधिकांश जनमानस अछूता ही रह गया है। इधर जनता का भी इतिहास लिखा जाने लगा है। व्यक्ति और समाज की स्वतंत्रता इधर की महान् उपलब्धि है। हमारे इतिहास में भयंकर त्रुटियां हैं — जिनकी ओर मिश्र जी ने संकेत किया है। छोटा आदमी वही कार्य करता है तो सजा पाता है। और जब वही कार्य बड़ा आदमी कराता है, तो उसका कुछ नहीं होता। वृद्ध अशोक ने युवती तिष्यरक्षिता से विवाह कर लिया था। बिल्कुल विषम विवाह था। वे कुणाल के पिता भी थे। इसी कोटि के अनेक उदाहरण हैं, पर सब विशेषता की कोटि में ही हैं। इसलिए कि वे शासक थे। अशोक महान् कहा गया। अकबर विलासी और स्वेच्छाचारी था। उसने शहजादियों का विवाह नहीं किया इसलिए कि उसके समान महान् सम्बन्धी थे ही नहीं। स्वयं नित्य रंगरेलियाँ मनाता था। यह कहाँ का न्याय है? क्या मुगल इतिहास में इस दमन पर कुछ लिखा गया है? इतिहास में तो अकबर महान् है। अतः इतिहास प्रभावशाली व्यक्तियों की गाथा है। कानून असमर्थ के लिए है। देशी-विदेशी इतिहासों में ये बातें हैं। इलियट ने भी इतिहास की खामियों

को लिखा है। इतिहास की अनेक निस्सारताएं हैं। ऐतिहासिक कविताओं में 'बहादुरशाह जफर' सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है। जफर का द्वन्द्व, उसकी विवशता, दयनीयता तथा परवशता को मार्मिकता के साथ कहा है। उसको त्रासदी का नायक बनाया गया है। अथवा वह त्रासदी का मानवीकरण था। जफर द्वारा लालकिले के गौरव को याद करना, दिल्ली के गौरवपूर्ण दिनों को याद करना, वर्तमान पर आँसू बहाना, सब कुछ बड़ा मार्मिक है। बड़ों का पतन भी बड़ा होता है। बड़ों की यादें बड़ी होती हैं। जफर बार-बार अतीत को याद करता है। उसकी असहायता का बड़ा मार्मिक चित्रण है। मुगल वंश विश्व के गौरवमय वंशों में था। उसका पतन दर्द भरा हुआ है। अंग्रेजी दुष्टनीति पर पर्याप्त लिखा गया है। शोषण, स्वतंत्रता संग्राम के सेनापतियों को दी गयी यातनाएं मार्मिकता के साथ चित्रित हैं। अंग्रेज-न्यायप्रियता का नाटक करते थे पर यथार्थ में वे स्वयं अन्याय करते थे। 'जवाहरलाल' शीर्षक से इसी संग्रह में एक कविता है। नेहरू के दुर्बल-सबल पक्षों को उभारा गया है। वे प्रकृत्या राजनीतिज्ञ न होकर देशभक्त और साहित्यकार थे। कूटनीति से वे दूर थे — जिससे पाकिस्तान व चीन से अपमानित हुए थे। वे अच्छे अंग्रेजी गद्यकार थे। सुविख्यात लेखिका पर्लबक ने कहा था — "नेहरू का राजनीति में प्रवेश साहित्य के लिए महान् क्षति थी।"

मिश्र जी का इतिहास बोध गहन एवं विस्तृत है, विश्व स्तर का है। उन्होंने डेविड, यूनान की विश्व इतिहास को देन, गौतम बुद्ध आदि के सम्बन्ध में भी लिखा है। इतिहास के घटनाचक्रों, राजा-महाराजाओं, और रानियों तक केन्द्रित था। सूक्ष्म इतिहास सामाजिक जीवन की बारीकियों को पकड़कर चलता है। कवि, उपन्यासकार आदि जीवन के वे सूक्ष्म इतिहासकार बन जाते हैं। जो स्थूल इतिहासकारों को सामग्री प्रदान करते हैं। यूनान का ईसाई धर्म की आँधी के पतन हो गया। यह स्थूल सत्य है। सूक्ष्म सत्य है कि वह अपनी देन को देकर शान के साथ समाप्त होकर भावना में जीवित है। अच्छाइयाँ कभी मर नहीं सकती हैं। जायसी ने भी कहा है कि "कोउ न रहा जग रही कहानी।" धर्म जातीय संघर्ष का परिणाम नहीं, बल्कि जनभावना का परिणाम है। बुद्ध इसलिए महान् है, कि उन्होंने मानव जाति में हिंसा के स्थान पर अहिंसा का समावेश किया। उन्होंने महाभारत के दुष्परिणामों को सामने रखा है, परन्तु उन पर भी आरोप लगे हैं। मिश्र जी ने अनेक इतिहास पुरुषों पर अपने ढंग से लिखा है। 1975-1977 ई. के आपातकाल पर भी उन्होंने लिखा है। यह समसामयिक बोध है। इसी

सन्दर्भ में 'सेतु' की 'डेविड की मृत्यु' कविता भी दर्शनीय है। उनके गद्य साहित्य में भी इतिहास बोध है। उन्होंने अपनी कविताओं में इतिहास के रस को छिलके को नहीं, सूक्ष्म को, स्थूल को नहीं समेटा है। यदि उनकी कविता में एक ओर यूनान के दर्शन होते हैं, तो दूसरी ओर सभी देशों के। यदि वे एक ओर भारत के प्राचीन जीवन का स्पर्श करते हैं, तो दूसरी ओर मध्ययुगीन जीवन का भी, आज का जीवन भी है, यही नहीं आधुनिक और अत्याधुनिक जीवन का भी चित्रण किया है। कविताओं में अतीत रस को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। मिश्र जी ने अपने उपन्यासों (मिस्टर अटल, एक पथ दो पथिक, एक सड़ी हुई कौम) नाटक, (कॉफी हाउस) कहानी संग्रह (भिखारी की मौत), निबन्ध संग्रहों (दिल्ली नामा) इत्यादि तथा व्यंग्य ग्रन्थों जी हाँ, यह दिल्ली है, मौख्य शास्त्र इत्यादि में भी पर्याप्त इतिहास-चित्रण किया है -

**अधुनातन निज राष्ट्र का हास्यपूर्ण इतिहास,
प्रस्तुत कर मुझको हुआ तोष और उल्लास।²**

कवि का इतिहासबोध घटना और तिथियों का संग्रह नहीं है। कवि ने व्यापक दृष्टि से सबको प्रस्तुत किया है। अतीत और वर्तमान को उसने मिला दिया है। वर्तमान में अतीत भी मिला होता है। आज हम जिन इतिहासों को पढ़ते हैं, वे पराजयवादी हैं। हम यहाँ के मूल निवासी हैं। यहाँ का सब कुछ हमारा है। आज हमको विदेशी मिथ्या आडम्बरों के तोड़ देना चाहिए। 712 ई. में सिंध के पतन तक मुसलमान यहाँ फटक नहीं सके थे। महमूद गजनवी कालिंजर संधि के लिए मजबूर हुआ था। इसलिए उसने खजुराहो का स्पर्श नहीं किया था। चन्देल राजाओं के पराक्रम का फल था। सोमनाथ के मन्दिर में गो-सेना का जुआ हुआ था। कोणार्क नरसिंह देव तृतीय द्वारा म्लेच्छों को तीन बार हराने का परणाम था। हमारे अवशेष अपनी महानता की कहानी कहते हैं। हमें आज मौलिकता के साथ कार्य करने की आवश्यकता है। सिकन्दर भी यहाँ से विफल-सा लौटा था। कालिंजर के राजा भारतीचंद्र ने शेरशाह सूरी का वध किया था। समिधा थी बारूद और घृत शोणित ताजा। हैदर अली और निजाम मराठों से हारे थे। मराठे दिल्ली तक छा गये थे। राणा प्रताप, शिवाजी और लक्ष्मीबाई का स्वातंत्र्यप्रेम सराहनीय है। बिस्मिल अशफाकुल्लात, भगत सिंह, अब्दुल हमीद इत्यादि शहीद और दयानन्द, तिलक, सुभाष, तारापुरवाला, मानेकशॉ

आदि की कवि ने सराहना की है। राम, कृष्ण और अर्जुन को कवि ने अपना नेता बनाने को कहा है। चन्द्रगुप्त, चाणक्य और चंद्रगुप्त विक्रमादित्य हमारे आदर्श हैं। पुष्यमित्र का पौरुष अमर है। समुद्रगुप्त और चंद्रगुप्त विक्रमादित्य का यश अमर है। वास्तव में वे हमारे नेता हैं, न कि टके-टके पर बिकने वाले। इनको हमें दृष्टि से ओझल न करके अपने स्वर्णिम इतिहास का अनुकरण करना चाहिए। आज के नेताओं पर इतिहास सदा थूकेगा —

थूक रहा इतिहास और आगे थूकेगा

गर्दभ-भाषण इनके काल स्वयं फूँकेगा?

कवि इनको ठुकराने से कैसे चूकेगा?

क्या बबूल के दूँठों पर कोकिल कूकेगा?³

कवि ने अपने अनुसार इतिहास को प्रस्तुत किया है। अतीत और वर्तमान को एक साथ मिलाकर उसने प्रस्तुत किया है। यह बात अच्छी है। प्राचीनता के साथ नवीनता भी मिल जाती है। अतीत और महान् विभूतियों को उनके कार्यों के साथ कवि ने बड़े सम्मान के साथ स्मरण किया है। कालिदास का भारत संवेदन सम्पन्न था। एक मृगशावक के प्रति जो संवेदना थी अब वह कहाँ है? वह प्रकृति, पुरुष और समाज अब नहीं है। अब हिमालय देवतात्मा नहीं, संग्राम का स्थल हो गया है। उस पर विनाश के दृश्य, हवाई अड्डे, हेलीपैड, तोपें, राकेट, आदि के अड्डे बन गये हैं। नदियों पर मानव नियंत्रण हो गया है। वन, पशु, पंक्षी सब मानव के अधीन हैं। मनोरंजन के पात्र हैं। कालिदास ने जो आकाश देखा था वह बहुत भिन्न था —

कालिदास तुमने जो आकाश देखा था।

वह बहुत भिन्न था।

आकाश गंगा में स्नान करती देवांगनाएं,

आकाश मार्ग से जा संदेशक मेघ

(संतप्तों का जीवन) और

उड़ते हुए हंस, वक इत्यादि-इत्यादि।⁴

आज सब प्रदूषण युक्त हो गया है। सहजता चली गयी है। इतिहास विपरीत हो गया है। कवि ने अपने युग की समीक्षा की है —

3. नेताचरित्रम्, पृ. 120

4. सार्वभौम, पृ. 31-32

मुझे अपना युग लगा लघु व्यक्ति युग, यह ठीक
किन्तु मानव जाति के प्रति मूल आदरभाव,
कभी भी विचलित नहीं हो सका, इसका गर्व;
कर न पाया अंत इसका कभी कोई भाव।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

मानता हूँ, रहा मेरा युग महत्ताहीन,
धर्म, दर्शन, वाङ्मय औ राजनीति समान,
रूप से सामान्यतर ही रहे, प्रतिभा उच्च -
तम नहीं दीखी कि जिस पर हो सके अभिमान।⁵

कवि युग में नहीं बंधा है, पर उसका अनुगृहीत है। युग एक तरंग
है, समय ही सब कुछ है -

समय शाश्वत और चिरनिर्लिप्त और महान्,
वह उदधि, प्रत्येक युग है मात्र एक तरंग,
मैं नहीं युग में बंधा हूँ, किन्तु अनुगृहीत,
क्योंकि उसका तनय, उसके प्रति नही रसभंग।⁶

युग समय शरीर का एक रोम मात्र है। कवि ने सुनहले अतीत को बड़े गर्व से स्मरण किया है। महापुरुषों के प्रति उसकी विनयावनत भक्ति भावपूर्ण श्रद्धानिवेदन की अभिव्यक्ति है। इतिहास के विविध रूप हैं। 'दृष्टि' महाकाव्य में 'वेद' से लेकर आज तक के काल पर प्रकाश डाला गया है। 1968-1985 ई. का काल अनेक परिवर्तनों की अपेक्षा करता रहा है, यद्यपि वस्तुतः ढाई तीन वर्ष लगे थे तथापि तत्त्वतः सत्ताइस माने जायेंगे। प्रतीकार्थ हैं, महान कार्य ही स्वर्ग है। विश्व-मानव को साकार करना ही 'दृष्टि' का बीज मंत्र है। 20वीं (ई.) सदी में दो विश्वयुद्धों तथा पहले लीग ऑफ नेशंस और बाद में संयुक्त राष्ट्र संघ, सोविएट यूनियन (अविद्यमान) तथा साम्यवाद आदि ने एकमानववाद या समतावाद को व्यापक सिद्धांत बना दिया है। परन्तु प्रतिक्रियावादी ताकतों ने इस सदी को सबसे अधिक लड़ाया है। इस प्रसंग पर कवि ने 'दृष्टि' महाकाव्य में बहुत अच्छा और बहुत अधिक कहा है।

5. सार्वभौम, पृ. 220

6. सार्वभौम, पृ. 221

आदिम इतिहास की चर्चा है जब धीरे-धीरे सारे ग्रह नक्षत्र बन रहे थे। अद्भुत पुरातात्विक समझ है। विराट यात्रा है —

प्रत्येक युग की अपनी निजी दृष्टि हो सकती है,
प्रत्येक युग का अपना निजी रस होता है;
किन्तु दृष्टि संयुक्त रहती अतीत से,
एक रस भूमि, नर नवबीज बोता है।⁷

वेदलोक (दृष्टि) में वैदिक काल का वर्णन है। कवि ने इतिहास को अपना सच्चा मित्र बनाया है —

इतिहास तू मेरा सर्वोत्तम साथी है,
तेरा संस्पर्श एक कुहक बन जाता है;
अए ऐन्द्रजालिक, अभिभूत कर लेता है,
दृष्टि-चलचित्र, श्रुतिमित्र बन आता है।⁸

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

इतिहास मैं तेरी छाया में पला हुआ,
तेरे रसदान ने दृष्टि को ढाला है,
तेरी सुरभि ने मेरा जीवन महकाया है,
मेरे सृष्टि-कण्ठ में तेरी जयमाला है
ओ जीवन, इतिहास को सहेज, प्यार कर,
उससे विहीन तू जारज कहलाएगा;
तेरी कहानी बहुत छोटी हो जाएगी,
जिज्ञासा-असन्तोष मर्म दहलाएगा।⁹

भारत का इतिहास कवि को बार-बार आकर्षित करता है। उसको दुःख है, कि भारत अब विज्ञान की कथा पाश्चात्य लोगों के मुख से सुन रहा है। वह अपनी अपार धनराशि जो अतीत के गर्त में है — उसकी ओर नहीं देख रहा है। ज्ञान-विज्ञान में हम बहुत आगे थे। सूर्यवंश या रघुवंश अपने गोत्र को देखें, मंत्रों को समझें, अभिषेक और संकल्प मंत्रों को देखें, तो स्वर्णिम जाग्रत अतीत मिलेगा। 'वेदायन' में कवि ने अपने आदिम इतिहास को प्रस्तुत किया है। "ऋग्वेद' से प्राचीन कोई पुस्तक नहीं है। 'ऋग्वेद' मानव-पुस्तकालय का प्रथम ग्रन्थ है।"¹⁰

7. 'दृष्टि', पृ. 221

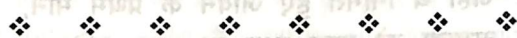
8. 'दृष्टि', पृ. 53

9. 'दृष्टि', पृ. 56

10. मैक्समूलर

वेदो हरे वाक्?

वेदो अखिलो धर्ममूलम्



"अतुलित महिमा वेद की तुलसी लिए विचार।

जो निंदित निंदित भयो विदित बुद्ध अवतार।।"¹¹

"वेद मार्गियों में आ पहुँचा

यह निर्वेद कहाँ से?"¹²

ऊँ...

तस्य वाचकः प्रणवः¹³

कवि ने आदिम इतिहास को 'वेदायन' में रखा है। वैदिक युग को आज के प्रसंग में उसने प्रस्तुत किया है। भूत, वर्तमान और भविष्य हमारी सीमाओं के द्योतक मात्र हैं। हमारा वैदिक वाङ्मय पूर्व और पश्चात तक का हिसाब रखता है। हमारा इतिहास सबसे सम्पन्न है। (1) नासदीय सूक्त में जल से सृष्टि का सिद्धान्त बाइबिल ने ग्रहण किया, थेलीज ने ग्रहण किया। पुरुषः सूक्त की वर्णाश्रम प्रणाली को 'द रिपब्लिक' ने कवि का इतिहासबोध बहुत व्यापक है। इसमें चरित्र की प्रधानता है। भारतीय इतिहास चरित्र प्रधान है भी। इला, बुध, पुरुरवा, विश्वामित्र, कश्यप, अगस्त्य आदि ऐतिहासिक चरित्रों को उसने अपना पात्र बनाया है। उसमें इतिहास और दर्शन को सन्निविष्ट किया है। आर्यावर्त और आर्यों के समाज का सुन्दर इतिहास है। वैदिक काल कवि को बार-बार आकर्षित करता है। वही तो मानव इतिहास का प्रस्थान-बिन्दु है।

'पुरुषोत्तम' महाकाव्य में सूर्यवंशी राम का वर्णन है। यह भक्ति, चरित्र, यश, दर्शन और संस्कृति का तो महाकाव्य है ही-इसके साथ ऐतिहासिक महाकाव्य भी है। इसमें राम का इतिहास है। इसमें रामायण कालीन समाज है। राम, सीता, विश्वामित्र, जनक, रावण आदि ऐतिहासिक पात्र हैं। उस समय की संस्कृति और सभ्यता है। तदयुगीन परिवेश है। इसकी भाषा आज की खड़ी बोली हिन्दी है। इसमें आदि इतिहास को भी प्रस्तुत किया गया है -

11. दोहावली - तुलसीदास

12. द्वापर - मैथिलीशरण गुप्त

13. योग शास्त्र - पतंजलि

जाओ हे प्रेरक कार्य, जाओ हे वेद-आर्य,
 उस सप्त सैन्धव के पावन प्रदेश में
 जहाँ थे निर्मित हुए जीवन के प्रथम मान,
 सभ्यता को प्राप्त हुआ था प्रथम परिधान,
 संस्कृति ने किया था प्रथम बार सोमपान,
 गूँजा था शून्य में पावनतम सामगान,
 जागी थी धरती और उमगा था धरती का
 पुत्र उत्साह से, श्रद्धा से, आस्था से!
 पार करते अनेक सरिताएं, नाना नगर,
 जब तुम्हे दिखाई दें धरती के मेरुदण्ड,
 पर्वतों के पर्वत, देवता हिमालय के...¹⁴

कवि ने महानता का सर्वत्र सम्मान किया है। उसने मुहम्मद साहब पर खण्डकाव्य लिखा है। उनका समय 570-632 ई. का है। उनका जीवन संघर्षों एवं सफलताओं का समाहार है। उनका संघर्ष, परिश्रम एवं मितव्ययिता का सन्देश आज भी उतना ही प्रेरक है जितना उनके समय में था।

‘कल्यान्त’ महाकाव्य में द्वापर के अन्तिम चरण की कथा है। इसमें सभी महाभारत के पात्र हैं। यह पूर्णतया सफल ऐतिहासिक काव्य है। इसका कथानक बड़ा सबल है। द्वापर के अन्त तथा कलियुग के आरम्भ की संक्रांति कालीन महाभारत गाथा है। कथा का अधार भी वही है। इसमें दो कालों के मध्य का इतिहास है। कृष्ण, भीम, अर्जुन, जनमेजय इत्यादि निर्णायक ऐतिहासिक पुरुष थे, जिन्होंने भारत को विराट् राष्ट्र बनाया। इसमें शान्तनु से जनमेजय तक के इतिहास को सही रूप से प्रस्तुत किया गया है। इसमें वर्णित युग की वेशभूषा, भाषा-शैली, साधन-प्रसाधन सब है। इस प्रकार सांस्कृतिक इतिहास भी सामने आ गया है। हम देखते हैं कि कवि में विराट् इतिहासबोध है — ‘वेदायन’ में पूर्ववैदिक काल, ‘पुरुषोत्तम’ में रामायण काल, ‘कल्यान्त’ में महाभारत काल और ‘मुहम्मद’ में इस्लामी इतिहास की प्रस्तुति है। ‘दृष्टि’ महाकाव्य में प्रकारान्तर से समग्र मानवता का इतिहास-सार है, तो ‘नेताचरित्रम्’ में 20वीं सदी विवेचित है। इसमें स्वतंत्र भारत का इतिहास व्यंग्य शैली में विशेष रूप से उकेरा गया है। मुक्त कविताओं में भी उन्होंने इतिहास पर प्रकाश डाला है। इतिहास के वास्तविक गुणों को उन्होंने कहा है।

आर्यों को देश भारत कवि को बार-बार आकर्षित करता है। सुन्दर फसलें थी। सुन्दर जौ की बालें झूमती थीं। वह जीवन संघर्षपूर्ण था। यव द्वीप (जावा) नामकरण जौ के आधार पर ही हुआ है। निर्मल प्रकृति थी। कवि का इतिहासबोध सराहनीय है। व्यक्ति और समाज का सच्चा साथी इतिहास ही होता है। इसमें सब कुछ रहता है। उससे कुछ भी छिपाया नहीं जा सकता है। वह प्रेरणा-स्रोत होता है। व्यक्ति और समाज की कहानी का वह आदर्श रूप होता है। उसकी सच्चाइयों की खोज करनी चाहिए। भारत के सच्चे इतिहास को जानने के लिए उसके समस्त वाङ्मयों का अनुशीलन आवश्यक है। इतिहास-लेखन की दृष्टि देशी होनी चाहिए, विदेशी विद्वानों के कथन की परीक्षा की ओर भी कवि ने संकेत किया है। आज हम अपने को समझने के लिए सभी प्रकार से समर्थ हैं। श्रम और साहस की आवश्यकता है। कवि की इतिहास-दृष्टि भारतीय है। यह इतिहास-बोध के साथ भी न्याय है।

अध्याय 10

राष्ट्रबोध

आधुनिक भारत की सबसे बड़ी उपलब्धि है 'राष्ट्रवाद'। राष्ट्रवाद का जो स्वरूप आधुनिक भारत में विकसित हुआ, वह कभी न था। 19वीं शताब्दी में यूरोप जागा, 20वीं शताब्दी में भारत जागा। परिणामतः वह सदियों की गुलामी से मुक्त हुआ। महाराज हर्षवर्द्धन के उपरान्त उत्तर भारत की राजनीतिक दशा बिगड़ने लगी थी। जिस मातृभूमि को 'अथर्ववेद' में माता और अपने को मानव ने उसका पुत्र माना था, उसकी रक्षा में निर्बल होने लगा। आपसी तालमेल के अभाव में मातृभूमि की विपुल सन्तानें पराजित होने लगी, और मातृभूमि पराधीन हो गयी। हम निरर्थक सन्तान से सदियों तक जीते रहे। नाम मात्र के मातृभक्त इसके लिए अपनी बलि देते रहे। उन्हीं की प्रेरणा से आधुनिक भूमिपुत्रों को माँ को स्वतंत्र कराने का अवसर मिला।

आधुनिक हिन्दी के प्रारंभिक काल भारतेन्दु काल को इसीलिए नवजागरण काल भी कहा गया है। स्वातंत्र्य की भावना काल कहना संगत होगा। इस स्वातंत्र्य काल के प्रथम उत्थान (भारतेन्दु काल) में 3 प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से सामने आती हैं — 1. कृष्णभक्ति 2. राजभक्ति 3. राष्ट्रभक्ति या देशभक्ति आगे चलकर सबसे अधिक राष्ट्रभक्ति का विकास हुआ। स्वतंत्रता आन्दोलन से इसको सबसे अधिक बल मिला है। उपर्युक्त तीनों प्रवृत्तियों को हम भारतेन्दु और उनके मण्डल के साहित्य में देख सकते हैं।

स्वतंत्रता मिलने के उपरान्त भी राष्ट्रवाद की गरिमा है। इसकी रक्षा देश का कर्तव्य हो गया है। डॉ. रामप्रसाद मिश्र की रचनाओं में राष्ट्रवाद के विविध रूप चित्रित हैं। उनकी कविता में राष्ट्रीय संस्कृति और प्रकृति का स्वर भरा हुआ है। इनमें परम्परा दर्शन और प्राचीनता है। सब का उन्होंने मूल्यांकन किया है। आज की राष्ट्रीयता पर प्रकाश डाला गया है। आज नया-साम्राज्यवाद आ गया है। इस दशा में क्या यह राष्ट्र सुरक्षित रह सकेगा? समय का चक्र इसको भी नष्ट कर देगा। अर्थदास बनता हुआ

आज का देश कभी गौरव को नहीं प्राप्त कर सकेगा। आज हमारी देन संकुचित होती जा रही हैं। बुराइयाँ बढ़ती जा रही हैं। "क्या पाया, क्या खोया वाक्य?" बार-बार सामने आता है। देश को इतिहास और भूगोल ने बहुत आलसी बना दिया है। शैशव रहित शिशुता, ऊर्जा रहित कैशोर्य, वार्द्धक्य-सा यौवन है -

शव-सा बुढ़ापा लिये
भारत है 'जी' रहा!
किन्तु काम से अधिक
सोचना है हमको
कर्मठता चिन्तन की
योग्यतम दासी है!

आज देश संकटों से आवृत है। प्रतिक्रिया राष्ट्र का तन है, प्रलय राष्ट्र का मन है; अनुकरण राष्ट्र की बुद्धि है। इस विचित्र नींव पर स्थित होकर हम नये समाजवाद का दर्शन दे रहे हैं। आज देश अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ नहीं है; आश्रित या आर्थिक दास है। हमारी विकास की योजनाएं व्यर्थ लग रही हैं। सब कुछ हवा में है। शासन व्यावस्था कुछ नहीं, मात्र एक सभ्य व्यय है। उस के समाजवाद को लेकर हम अपने को कब तक छलते रहेंगे? धोखा देते रहेंगे। कविता जब लिखी गयी थी, तब से तो आज तक समाजवाद का और अधिक नाश हो गया है। आज आजादी की जो बेकारी हो रही है, इसके पीछे विविध कारण हैं - कवि अपना तर्क देता है -

आह, हमें आजादी मुफ्त में मिल गई!
हमारी कुर्बानी का
स्तर साधारण था,
इसलिए, आजादी बदली विलास में,
शोषण में, नीचता में,
और अब भारत के
इतिहास में चलता
भ्रष्टाचार-युग²

1. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 15

2. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 18

हम हर तरह से कमजोर हो गये। एक लम्बी गुलामी ने हमें नाकाम कर दिया है —

हमारी सारी नस्ल हो चुकी कमजोर
पचीसों पीढ़ियों की लम्बी गुलामी में,
शताब्दियों के दुर्बल आहार में,
मानव के अनुपयुक्त तुच्छ आवास में,
हीनताजन्य दर्शन, कला विलास में।³

आज हमारा मन, जीवन, साँस अनुकरण विश्वास, व्यक्ति-सा विकास, रोदन-सा हो रहा है। आज हमारे राष्ट्र का भविष्य नहीं दीखता है। आज हम सोचते खूब हैं, हवा में योजनाएँ बनाते हैं, पर अभी तक राष्ट्र की कोई ठोस नींव नहीं पड़ सकी। राष्ट्र अपनी पहचान को खोता जा रहा है। धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, वेशभूषा, भाषा आदि उसके अपने नहीं रहते जा रहे हैं। जीवन सिद्धान्तविहीन हो गया है। वह कभी भी नष्ट हो सकता है। हमारा सब कुछ चला जा रहा है; पर हम सो रहे हैं। आज का काव्य संक्रांति का काव्य है। पहले दूसरों से खतरा अधिक था, किन्तु अब अपने लोगों से अधिक है। हमारी ग्राम्य सभ्यता नष्ट होती जा रही है। यह गाँवों का समूह राष्ट्र अपना एक मूल्य रूप खोता जा रहा है।

यहाँ निराशा को ही सब कुछ समझा जाता रहा है। निराशावाद को ही लोगों ने दर्शन, धरती, तन और जीवन मान लिया है। आशावाद को कल्पना, आकाश, रूप और मन मान लिया है। आशावाद और महत्त्वाकांक्षा को कोई स्थान है। शोषण सब को नष्ट करता जा रहा है। निराशावाद का मानवीकरण किया गया है। निराशा के गुण, कर्म और स्वभाव का वर्णन है। इसके सामने सभी चेतना और सक्रियता व्यर्थ है। नैराश्य सब को शिथिल कर देता है, विमुख कर देता है। सक्रिय और क्रांतिकारी लोगों को देशद्रोही कहता है। महानता से घृणा करता है, क्योंकि उसने भारत से छल किया है, समता और सुख के झूठे आश्वासन में राष्ट्र को उलझाकर रखता है — मुझे स्वयं अपने-आप से घृणा है, क्योंकि

शोषण असमानता की
हत्या के प्रयास में
मैं क्यों न मारा गया!

इन स्थितियों में जीना कायरता है,
जीवन का अपमान,
प्रतिक्षण विषपान!
इच्छा होती है उलट दूँ सारे जग को
परशुराम की तरह
निकाल दूँ मानवता को
सागर से नूतन भूखण्ड,
जिसमें हो एक विश्व,
एक मानव; स्वस्थ
सरल, समान मानवता!⁴

निराशा के बीच से ही आशा उत्पन्न है। कुछ भी करने के लिए आशवादी होना होगा। मगर आज हमारे ऊपर नैराश्य छाया हुआ है। तरह-तरह के कुचक्र राष्ट्र के तथाकथित नायक (नेता) कर रहे हैं -

छोटे नेताओं की देशद्रोहात्मक, अमानवीय
देश से परिवार तक विभाजक आरक्षण-खाई
पटेगी; राष्ट्र को, मानव को पाटनी पड़ेगी
क्योंकि समर्पण संपन्न प्रेम ही सुखदायी!⁵

किसी दल विशेष से न जुड़कर मिश्रजी ने स्वतंत्र रूप से राष्ट्रीय कविताओं को रचा है। इसके साथ उन्होंने राष्ट्रप्रेम के साथ खिलवाड़ करने वालों पर व्यंग्य भी खूब किया है। भारत स्वतंत्र होकर दिनोदिन गिरता जा रहा है। कवि का राष्ट्र प्रेम अडिग है। उसके लिए देश ही मर्म, धर्म और कर्म है।

आज नेता लोग राष्ट्रभाषा की जगह अंग्रेजी भाषा का उपयोग करते हैं। कवि ने सब पर व्यंग्य किया है।⁶ कवि ने हिन्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तान के प्रति अटूट मानवातावादी निष्ठा प्रकट की है -

हिन्दी मेरी साँस है, हिन्दी है उच्छ्वास
हिन्दी मेरी आस है, हिन्दी ही विश्वास।⁷



4. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 60

5. स्वर्गता, पृ. 80

6. देखिये - 'नेताचरित्रम्'

7. 'नेताचरित्रम्', पृ. 6

झुका नहीं, टूटा नहीं, सहे बहुत आघात
अन्त समय तक करूँगा, भारत की ही बात।⁸



जो भारत को मातृभूमि ना माने, वह ग़दार है
जो भारत को पुण्यभूमि ना जाने, वह ग़दार है
जो विदेश-महिमा के गाता गाने, वह ग़दार है
जो विदेशियों की भी लगा बसाने, वह ग़दार है।⁹

किसी भी जाति और धर्म से बड़ा है राष्ट्र जिसमें राष्ट्र प्रेम है, वह राष्ट्र का रत्न है, चाहे वह किसी बिरादरी का हो। राष्ट्रभक्त मुसलमानों की उन्होंने वन्दना की है -

खुसरों, अकबर, रफी, छागला मुसलमान हैं
औ रहीम, रसखान, निज़ामी राष्ट्रप्राण हैं
देशभक्ति - मानवीकरण ग़फ़ार खान हैं
जब हों ऐसे मुसलमान तब सर्वत्राण हैं।¹⁰

हिन्दू-मुस्लिम भेदों को प्रकट करना कुचक्र है। "बाँटो और राज्य करो" की नीति से ऐसा किया था। बहुत हद तक वे सफल भी रहे। विदेशी वस्तु, विदेशी नारी और विदेशी नीति से बचने के लिए उन्होंने लिखा है। कवि ने महान् ईसाईयों की भी वन्दना की है - जो देश के लिए बहुत कुछ दे सके हैं।¹¹ राष्ट्र मुख्य है। राष्ट्रवादियों के प्रति कवि में अपार श्रद्धा है -

पुनः तिलक ने ही स्वराज्य का शंख बजाया
चाफेकर - बन्धुत्रय ने निज रक्त लुटाया
खुदीराम, आज़ाद, भगतसिंह ने दी काया
भारत ने स्वातंत्र्य-रत्न इनसे ही पाया।¹²

हर क्षेत्र में हमारा योगदान रहा है। गणित में भी। हमारा राष्ट्र सम्पन्न है। इसको सँभालने की आवश्यकता है। अपने छोटे-छोटे स्वार्थों को छोड़कर राष्ट्रीय धारा को प्रवाहित करना है।

8. 'नेताचरित्रम्', पृ. 6

9. 'नेताचरित्रम्', पृ. 108

10. 'नेताचरित्रम्', पृ. 110

11. 'नेताचरित्रम्', पृ. 110 द्रष्टव्य।

12. 'नेताचरित्रम्', पृ. 124

यह सत्य है कि मुस्लिम भाई रेडियो पाकिस्तान को सुनकर उत्तेजित हो जाते हैं, पर वे अल्पसंख्यक हैं; अल्पसंख्यक कभी गलती नहीं करते, बेचारे घबराते हैं, परन्तु साम्प्रदायिक हिन्दू आकाशवाणी और दूरदर्शन की निन्दा से क्या कुछ सीख पाते हैं? व बी बी सी वॉइस ऑफ अमेरिका इत्यादि को सुनते और भरोसा करते हैं। कितने आशावदी, समझौतावादी और शांतिप्रिय होते हैं! यहाँ साम्प्रदायिक हिन्दुओं पर व्यंग्य है — जो केवल भीड़ को भड़काते हैं, पर कर कुछ नहीं पाते हैं। कवियों के व्यावसायिक राष्ट्रप्रेम पर व्यंग्य है। मौसमी साहित्य पर व्यंग्य है। देश के महत्वपूर्ण स्थान को उसके वैशिष्ट्य के साथ स्मरण किया गया है। भारत माता का योगदान व बिम्ब-विधान सराहनीय है। इससे देश की संस्कृति और इतिहास का पता चल जाता है। कवि राष्ट्रीय सम्पदाओं के वर्णन और चित्रण के प्रसंग में आघाता नहीं है। देशीपन कवि को बहुत पसन्द है। राष्ट्र विरोधी-आचरण एवं व्यवहार की कवि ने निन्दा की है, चाहे जिसके द्वारा किये गये हों। कवि को देश पर बढ़ते हुए ऋण की चिन्ता है। प्रदूषण पर चिन्ता है। राष्ट्रसेवकों के भोग-विलास पर चिन्ता है। अनावश्यक राष्ट्रीय पुरस्कारों पर खेद व्यक्त किया गया है। राष्ट्रीय निर्माण कार्यों पर व्यंग्य है, क्योंकि वे नाम मात्र के होते हैं। कवि ने अनेक रहस्यों का उद्घाटन किया है। आज के गन्दे, स्वार्थी, और कमाऊ राष्ट्रवाद के विरोध में कवि ने लिखा है। 'वन्देमातरम्-गान को साम्प्रदायिक कहने पर कवि ने खेद व्यक्त किया है। (आज के अंग्रेजी समर्थक नेताओं पर व्यंग्य किया गया है) जो नेता मानते हैं, कि अंग्रेजों के कारण ही देश का विकास हुआ, हो रहा है और होगा — उनकी समझ पर कवि को खेद है। ईसाई मत के लिए राष्ट्रीय सहानुभूति पर खेद है। अपनी माटी के प्रति कवि को बहुत लगाव है। मिथ्या तुष्टीकरण पर उसको खेद है। इधर साहित्य पर जो पश्चिमी प्रभाव आ रहा है — उस पर कवि को दुःख है। उसका राष्ट्रवाद बहुत व्यापक है—

जय-जय अतुलनीय भारत, जय जगनिर्माता
विश्वात्मा और शून्य, गणित का अमर प्रदाता
अणु-पृथ्वी - परिक्रमा का रहस्य व्याख्याता
सब धर्मों का मूल, प्रथम गायन उद्गाता!¹³

हमारा भारत महान् है, विश्वगुरु है। सभी-दर्शनों ने हमारे दर्शनों को दुहराया है। 'जल से सृष्टि' यहूदी — बाइबिल ने दुहराया है। आत्मवाद

सुकरात और प्लेटो पर छाया, ईसा ने विनय और करुणा को यहीं से लिया। मुहम्मद ने एकेश्वरवाद को यही से लिया। इसी प्रकार विश्व संस्कृतियों पर हमारी छाप है। भा = प्रकाश, रत = व्यस्त अर्थात् वितरक। अतः यह प्रकाश या ज्ञान का वितरक है। यही आर्यावर्त श्रेष्ठ लोगों का देश है। ब्रह्मावर्त = ब्रह्ममय पावन है। मानव हो या मैन सबके पिता हमारे मनु हैं। यह आर्यों का आदि देश, जग-ज्योति प्रदाता, धर्म, संस्कृति, काव्य, कला का आदि विधाता, आदि ग्रन्थ 'ऋग्वेद' और उपनिषद् का उद्गाता, याज्ञवल्क्य और उद्दालक का यह देश है। कपिल, कणाद, जैमिनी, गौतम, बादरायण, पतंजलि, शंकर, रामानुज, वल्लभ, रवीन्द्र, अरविन्द आदि का यह देश है। धन्य है यह भक्तिप्राण देश। उसके रोम रोम में देवत्व रमा है। शस्य-श्यामल देश श्याम का है। यहाँ का एक-एक प्राणी, धल, का कण, धन्य है। हमारे देश में बहुत पहले से पर्वत, नदी, वृक्ष, पक्षी, अतः जड़-चेतन की पूजा का विधान है। सब देवता हैं। पृथ्वी, वरुण, अग्नि, नक्षत्र सभी। हमारी सम्पन्नता का स्वस्थ इतिहास है। देश को बिगाड़ा — भूखे और दरिद्र विदेशियों ने, आक्रामकों और लुटेरों ने। हमीं को लूटकर सब दरिद्र कहने लगे। हमारी गाथा समुद्र कहता है। अतः अतल और अमर है हमारा देश। यदि यहाँ औपनिवेशिक सत्ता न कायम हुई होती तो कितना अच्छा होता। विश्व वाङ्मय में हमारी पावन गाथाएं भरी पड़ी है। उच्च भव्य का हिमालय हमारे गौरव का प्रतीक है। हमें कभी भी हीनता से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। गंगा जैसी पावन नदी यहीं बहती है। गंगा भारत की नाडी है, उसके उद्गम स्थल से ही पवित्रता प्रस्फुटित हुई है। वास्तव में हमारा देश पृथ्वी का स्वर्ग है। हमारी प्रकृति, पौरुष, साहित्य और दर्शन सब धन्य हैं। रामायण और महाभारत जैसी रचनाएं यहाँ हुई। निगम और आगम साहित्य यहीं रचे गये। इसी से कवि राष्ट्र एकता के लिए कटिवद्ध हैं —

राष्ट्र एकता का पथ हो जगमग औ चौड़ा,
चूड़ी की झनकार एकता के स्वर गाए
खड्गों की झंकार एकता के स्वर गाए
रसिकों की मनुहार एकता के स्वर गाए
वीरों की ललकार एकता के स्वर गाए।
काटे जो एकता हाथ वह काटेंगे हम
शत्रु-शवों से पावन धरती पाटेंगे हम।¹⁴

कवि कही भी अन्धभक्त, कायर और रूढ़िवादी नहीं है। वह क्रांतिदर्शी राष्ट्रवादी है। राष्ट्रवाद के विपरीत उसमें कहीं भी समझौता नहीं है। वह हाथ पर हाथ रखकर बैठने वाला अहिंसा वादी नहीं है। मात्र अहिंसावाद से राष्ट्र की रक्षा नहीं हो सकती है, आज के परिवेश में विशेष रूप से। आज के सामरिक परिवेश की कवि को सटीक पहचान है। इसी से कवि ने भारत प्रहरी को बार-बार प्रणाम किया है। वह धन्य हैं, जो भीषणतम झंझावातों में, सागर-लहरों की घातों में, मरुस्थली की जलती वातों में और प्रलय की रातों में गतिशील हैं, पौरुष के प्रतीक ऐसे सपूत धन्य हैं, क्योंकि वे राष्ट्र के प्रहरी हैं। वे अपना सब कुछ गवाँ कर देश की रक्षा करते हैं। दुश्मन का सदैव सामना करते चलते हैं। ऐसे राष्ट्रभक्त सच्चे क्रांतिकारी और शांतिदूत हैं।

इसी प्रकार कवि ने कृषकों को प्रणाम किया है। आज के किसानों ने उन्नति करके राष्ट्र को खाद्यान्न के लिए स्वावलम्बी बना लिया है। देश को किसान ही खिलाता है। वह भारत का अभिमान है, रक्षक है। भारत कृषि प्रधान देश है। इसलिए किसानों का महत्त्व है। राष्ट्र की सारी प्रतिभाओं को किसान पालता है। यही स्थिति श्रमिकों की है। सारा निर्माण-कार्य श्रमिक करते हैं। श्रमिक यंत्र युगों का भाग्यविधाता है। राष्ट्र की सभी वस्तुएं उसी से बनी हैं। ताजमहल, खजुराहो आदि सब उसी की देन हैं। आचार्य विनाबाभावे ने कहा है — “आदमी महान् है जो जीवन भर काम करे।” मिश्रजी भी वही मानते हैं। चाहे जितने यंत्र बनें पर उनका नियामक, नियंत्रक व संचालक श्रमिक ही रहेगा, वही लोक — वेद को मिलाता है। ‘मेरा प्यारा उत्तर प्रदेश’, कविता में कवि ने देश गौरव की सारी बातों को कह दिया है। देश उन्नति के लिए, बलिदानों के लिए कवि इस उत्तर प्रदेश का आभारी है। उसने इसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। उपलब्धि और देन पर प्रकाश डाला गया है। इसका राष्ट्रीय योगदान है।

इसी प्रकार मध्य प्रदेश पर कविता है। कवि को एक-एक भू-खण्ड पर गर्व है, सम्पदाओं पर गर्व है।¹⁵ ‘हरियाणा की वीर भूमि’ में हरियाणा की प्रशंसा है। प्रणाम है! नेता शीर्षक की कविता में नेता के गुण-दोषों को कहा गया है। आज के ये कर्णधार हैं। ‘सरदार पटेल’ को कवि ने 20वीं सदी के इतिहास का नायक कहा है। पं. गोविन्दपल्लभ पंत के गुणों का उसने गायन किया है। ‘जय हिन्दी भारती, नागरी’ कविता भी राष्ट्रवाद

से ओतप्रोत है। हिन्दी ही राष्ट्रभाषा और नागरी लिपि ही राष्ट्रीय लिपि है। हिन्दी का विकास राष्ट्र के विकास का प्रतीक हैं। राष्ट्रवाद की बातें हिन्दी में सबसे अधिक लिखी गयी हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन का विशेष संचालन हिन्दी में ही हुआ था -

तोड़ो न्यस्त स्वार्थ, शोषण, अंग्रेजी कारा,
मुक्त राष्ट्र में बहे मुक्त हिन्दी की धारा,
हीनभाव, दासत्व संस्कारों को तोड़ो
कोटि-कोटि जनता को अब सत्ता से जोड़ो।¹⁶

'माखनलाल'¹⁷ पर लिखित कविता उनके राष्ट्रवादी चरित्र को व्यक्त करती है। वे महान् राष्ट्रवादी तथा राष्ट्रकवि थे। उनकी कोई निजी चाह नहीं थी। वे मात्र राष्ट्र को स्वतंत्र रूप में देखना चाहते थे। वे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। उनमें मातृभूमि का उत्कृष्ट प्रेम था -

तन फकीर, मन वीर का, प्राण यज्ञ की ज्वाल।

कवि अनेक पर व्यक्ति है केवल माखन लाल।¹⁸

प्रकृति चित्रण में भी राष्ट्रवाद है। कवि का देश-प्रेम सराहनीय है -

सुन्दर हैं सूर्य, चन्द्र, शुक्र और मंगल आदि,
किन्तु, ओ मेरी पृथिवी, तू सबसे सुन्दर है;
पास से प्रकृति लगती, दूर से कृति लगती;
तेरी निराली छटा कितनी श्रेयस्कर है!

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

किन्तु, आह, तेरा कोलाहल! मनुष्य ने
तेरे साथ केवल हृदयहीनता दिखाई है!
कितना संकीर्ण और असुन्दर जीवन जीता,
और तेरी कितनी विशद मोहक लुनाई है!

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

ओ री विराट् की सुन्दरतम पुत्री पृथ्वी,
कितने इन्द्रजाल अपनी स्मिति में छिपाए है?

16. उपरिवत्, पृ. 48

17. सार्वभौम, पृ. 33-34

18. सार्वभौम, पृ. 35

शत-शत ग्रह, लक्ष-लक्ष तारक तुझे लखते हैं,
क्योंकि तू अद्वितीय शोभा सरसाए है।¹⁹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

मैंने भूतल से स्वर्ग-स्वप्न सदा देखे हैं,
स्वर्ग में भूतल स्वप्न शतशः उपयुक्त है;
मेरे भूतल में सदा स्वर्ग समाया है;
इसलिए, मेरा स्वर्ग भूतल संयुक्त है।²⁰

कवि ने राष्ट्र को एक विराट् पुरुष के रूप में माना है — जिसका मुख = ब्राह्मण, भुजा — क्षत्रिय उरु — वैश्य = ऊ और चरण = शूद्र है। चरण पूज्य हैं न कि सिर या भुजा उरु या अतः शूद्र पूज्य है। शरीर के सभी अंग एक दूसरे के सहायक होते हैं; अन्योन्याश्रित थीं। अकेले पूर्णता कभी नहीं आ सकती है। समाज के सभी लोग राष्ट्र के अनिवार्य अंग हैं। राष्ट्र सब को समेटता है। राष्ट्र की सत्ता में सब समाहित हैं। इसलिए सब को एक होकर समरसता के साथ आचरण व व्यवहार करना चाहिए।

राष्ट्रवाद की प्राचीन परम्परा का कवि ने उल्लेख किया है देश-भक्ति काव्य के आदिकवि महर्षि अथर्वा हैं। हमारे प्राचीन ऋषि राष्ट्र-निर्माता हैं — अगस्त्य, कश्यप, वसिष्ठ, विश्वामित्र, भरद्वाज, पराशर, अत्रि, शाण्डिल्य (ऋषि), घोषा, अपाला, श्रद्धा, विश्वावारा, सूर्या, इंद्राणी, सार्यराज्ञी, कुमारिका, विश्पला (वीरांगना), मांधाता, दिवोदास, सुदास, और पुरुरवा आदि (सम्राट्)।

राष्ट्र रक्षा सबसे पावन कर्म है —

शत्रु से युद्ध में, राष्ट्र की रक्षा में
धर्म के पथ में मृत्यु अमरता बन जाती।²¹

राम के अनन्तर, कृष्ण एवं पाण्डव ही विराट् भारत की विराट् एकता के निर्माता थे। भीम का नरभक्षी आदिवासी वर्ग-विशेष की हिडिंबा तथा अर्जुन के नाग-जाति की उलूपी तथा माणिपुर की चित्रांगदा से विवाह प्रभृति कार्य इन महत्त्ववर्गीय योद्धाओं एवं नेताओं के एकता प्रतिष्ठापन में अन्तर्भूत कार्य भी थे। कृष्ण, अर्जुन, जनमेजय इत्यादि निर्णायक ऐतिहासिक महापुरुष

19. दृष्टि, पृ. 13

20. दृष्टि, पृ. 100

21. पुरुषोत्तम, पृ. 298

थे, जिन्होंने भारतीय राष्ट्र की निर्माण प्रक्रिया में महान कार्य संपादित एवं निष्पन्न किये थे।²²

कवि ने विविध पक्षों से अपने राष्ट्र प्रेम को व्यक्त किया है। आज के तथाकथित राष्ट्रवाद से कवि को संतोष नहीं है। "अपनी सभ्यता, राष्ट्रीयता और संस्कृति को बेच देने तक की साजिश करने वाले राष्ट्रद्रोही और आत्मघाती चरित्रहीन नेताओं के मुख पर उनके इस प्रबन्धकाव्य का एक-एक शब्द करारा तमाचा है। भारत की अस्मिता के साथ खिलवाड़ करने वालों के प्रति घृणा मिश्र जी के हृदय की अक्षुण्ण राष्ट्रीय भावना को व्यक्त करती है। यह काव्य केवल एक व्यंगकाव्य ही नहीं है अपितु राष्ट्र की अर्चना में समर्पित एक महिमायम छंदोबद्ध वंदना है।²³

कवि ने राष्ट्रवाद को बहुत महत्व दिया है। इसकी स्वस्थ परम्परा और अस्वस्थ वर्तमान को उसने दिखाया है। लोग इस दुर्लभ उपलब्धि का महत्व नहीं समझ रहे हैं — इसका कवि को हार्दिक कष्ट है। उसका राष्ट्रवाद धन्य है!

22. कल्यान्त (भूमिका) पृ. 91

23. ओमप्रकाश 'आदित्य' समीक्षा 'नेताचरित्रम्' मासिक अंजुरि, रानीबाग, दिल्ली, अगस्त-सितम्बर संयुक्तांक पृ. 298

प्रकृति-चित्रण

जगत्-जीवन का स्रष्टा कवि प्रकृति के चित्रण से अछूता नहीं रह सकता है। प्रकृति और पुरुष का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित होता है। मानव का विकास प्रकृति में हुआ। कबीले, गाँव, आश्रम, और नगर कालान्तर में बने। विश्व-साहित्य में प्रकृति की प्रतिष्ठा है। प्राचीन, मध्य और आधुनिक साहित्य को देखा जा सकता है। मानव-चरित्र का पूर्ण विकास प्रकृति से जुड़कर हुआ है।

आधुनिक काव्य में छायावाद में प्रकृति-प्रेम अधिक बढ़ा है। आज भी है। यूरोप में जो वंडर्सवर्थ, शैली और कीट्स आदि की रचनाएं लिखी गयीं; बंगला में रवीन्द्र नाथ टैगोर ने नये ढंग से कविता की; सब का हिन्दी कविता पर प्रभाव पड़ा। प्रकृति-चित्रण के साथ-साथ लक्षणा और व्यञ्जना को भी रखा गया है। अभिव्यञ्जना को विशेष महत्त्व मिला है। उदाहरण के लिए छायावाद और छायावादोत्तर हिन्दी कविताओं को देखा जा सकता है। मिश्रजी ने अपने जीवनकाल का लम्बा भाग प्रकृति में व्यतीत किया है। उनको इसमें बड़ा आनन्द मिलता रहा है। उनको मानसिक और शारीरिक आरोग्य भी इसी साहचर्य से मिला। उनका जन्म भारत की नाड़ी गंगा के तटवर्ती निंबई गाँव, जिला — उन्नाव, उत्तर प्रदेश में हुआ। शैशव-कानपुर तथा वाराणासी में बीता। कालान्तर में उन्होंने पृथ्वी के स्वर्ग कश्मीर के हिमाच्छादित पर्वत शिखरों में से लेकर पावन धाम जगन्नाथपुरी के अप्रतिम प्रशान्त सागर तट, कहीं उच्छल जलराशि तक के अनुशीलन में प्रकृति से तादात्म्य स्थापित किया। नैनीताल, मसूरी, माउंट आबू, उदयपुर के प्राकृतिक रस का जितना पान उन्होंने किया है, उतना बहुत कम लोग कर सके हैं। वे सम्मेलनों, गोष्ठियों, सदस्यताओं, पत्र-पत्रिका लेखनों, ग्रन्थ सम्पादनों, संस्था सदस्यताओं इत्यादि से नितान्त मुक्त कलाकार हैं।

‘बौद्धिकरस’, ‘बहादुरशाह ज़फ़र’, ‘ध्यान के गान’, ‘सेतु’ आदि कवितासंग्रहों में आलम्बन, उद्दीपन व रहस्य आदि के प्रसंग में आगत प्रकृति-चित्रण बहुत सुन्दर है। बौद्धिक रस की श्रेष्ठ कविता ‘इल और इला’

में प्रकृति चित्रण दर्शनीय हैं। आरम्भ में ज्योत्स्ना — चित्रण जितना आलम्बनात्मक है उतना उद्दीपनात्मक भी, क्योंकि प्रकृति और जीवन दोनों को अद्वनारीश्वरवत् प्रस्तुत किया गया है।¹ एक उदाहरण दर्शनीय है —

उस मधुराका में
जीना सुखद लगता था,
भुवन में मादकता भर गई थी इतनी
कि ऋतुराज अलसाया हुआ लेटा था,
चंचल समीर के स्पर्श स्पष्ट थे,
यौवन को भूल गया स्वर्ग-अपवर्ग था।
चन्द्रिका वसुधा और व्योम के अन्तर को
पूर चुकी थी, अथवा
द्यवापृथिवी के मृदुल आभिसार में
कौमुदी स्नेह-ज्योति बनकर खोई थी,
कमल नेत्र बन्द किए मधुर स्वप्न लीन थे,
जलाशयों का जीवन भोगतुष्टशान्त था,²

'बहादुरशाह ज़फर' की 'कचनार' शीर्षक कविता में बड़ी विदग्धता के साथ वस्तु को रहस्य से मिलाया गया है —

होली आ रही है!

उसकी पायलों की

रुनझुन में सुन रहा हूँ.....

हवा नशीली है

मेरी साँसों की तरह

और आसमान मादक

रूप से विकल है

मेरे दिल की तरह.....

मैं वसन्त के नशे

में चूर हूँ..... और

सारी प्रकृति मेरे नशे

में झूम-झूम पड़ती।.....

लेकिन ये कचनार?³

1. बौद्धिक रस, पृ. 129-130 दर्शनीय।

2. बौद्धिक रस, पृ. 129

3. बहादुरशाह ज़फर, पृ. 66

‘बहादुरशाह ज़फर’ कवित संग्रह की ‘बादल’ शीर्षक की मनोहर कविता में प्रकृति का उद्दीपन रूप देखा जा सकता है —

तेरा अटन संवेदन
से सम्पन्न होता है,
देखकर वेदनाएं
तू बरस पड़ता है;
तभी तो कवियों को
तू सदा ही भाया;⁴

‘सेतु’ की सर्वश्रेष्ठ कविता ‘तब, अब और आगे’ की निम्नांकित पंक्तियों में इसी तथ्य के दर्शन होते हैं —

स्वर्ण की वर्षा हुई, सरसों हुए सम्पन्न,
सरस सोना हुआ, उसमें सुरभि का संचार,
मैं मगन, मन मगन, नाचे मगन सारे खेत,
मैं, मगन औ खेत, बस था तीन का संसार।⁵

मिश्र जी ने अद्वैतता को बहुत महत्त्व दिया है। इसी से उनकी कविताओं में रहस्यात्मक प्रकृति — चित्रण स्वाभाविक है। ‘बौद्धिक रस’ की ‘टूटते कगार’ कविता इस दृष्टि से उल्लेखनीय है, जिसकी आरम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं — ‘कुदरत के खज़ाने जीवन थे आँगन में’ प्रत्यूष को कुदरत के खज़ाने का कोहेनूर बताना अच्छी कवि — कल्पना है। प्रकृति का मानवीकरण भी किया गया है —

कुदरत के खज़ाने का कोहेनूर सबेरा,
ईश्वर-सा शान्त,
फरिश्तों-सा पाक,
ब्रह्मचर्य-सा गम्भीर;
विष्णु की साँस-सी बयार जीवन्त करती
जीवन को,
नैसर्गिक संगीत मुञ्जरित हो रहा
पंछियों के कलरव में,
नास्तिकता ठिठुर रही

4. बहादुरशाह जफर, पृ. 65

5. सेतु, पृ. 67

वातावरण में और
आस्था कमल के साथ
खिली पड़ रही प्रसन्न;
तामसिकता गंगा में डूब मरी,
सात्विकता उषा बन बरस पड़ी
जीवन के आँगन में।⁶

सुन्दर रूपक, बिम्ब, प्रतीक और उपमाएं हैं। सूक्ष्म भावों या गुणों को प्रकृति के रूप में दिखाया गया है। 'इल और इला' में प्रकृति का प्रभावकारी चित्रण उद्दीपन के रूप में हुआ है प्रकृति की अद्भुत मादकता का वर्णन है -

उस अनुपम प्रमद वन के
तृण के गुल्म-गुल्म में,
लता के अंग में,
कमल के रंग में,
वायु के व्यंग्य में,
रस के कलगान में,
ज्योत्स्ना की तान में
अनंग अंगवान था।⁷

प्रकृति के कोमल और कठोर रूपों को 'टूटते कगार' शीर्षक की कविता में देखा जा सकता है। प्रकृति और मानव का सम्बन्ध बड़ा घनिष्ठ होता है। दोनों एक दूसरे में संपृक्त होते हैं -

प्रकृति के रहस्य को मानव स्पष्ट करता,
प्रकृति की इन्द्रियों को मानव टटोलता,
प्रकृति के अगम को वह सुगम कर लेता,
प्रकृति को कृति से मिला अंक में भर लेता।⁸

ग्रामीण प्रकृति का रमणीक और मार्मिक चित्रण 'स्वर्गता' में है -

आज प्रकृति-मृगी नगरों की अजगरी-लपेट
में दम तोड़ती लगती, पर तब जीवंत थी

6. बौद्धिक रस, पृ. 11

7. बौद्धिक रस, पृ. 131

8. बौद्धिक रस, पृ. 132

कहीं आम, जामुन कहीं, महुए कहीं, खिन्नी कहीं
शस्य भरित श्यामला कुहक मूर्तिमंत थी
कोयल की कूक, पपीहे की हूक, श्यामा की
सीटी सहज रूप से हृदय-विजयंत थी।⁹

प्रकृति का पवित्र मानव — क्रीड़ा-स्थली के रूप में चित्रण है।

डॉ. रामप्रसाद मिश्र को कविता का वरदान प्रकृति से प्राप्त हुआ है, जिस प्रकार अंग्रेजी साहित्य में शेक्सपियर के लिए 'बुड — लैण्ड वर्ड' अर्थात् 'वन्यप्रान्त का संगीत प्रेमी पंक्षी' कहा गया है उसी प्रकार डॉ. राम प्रसाद मिश्र भी ऐसे कवि हैं जिन्हें नैसर्गिक रूप से काव्य — रचनाओं से न केवल हिन्दी साहित्य की वरन् भारतीय साहित्य की वृद्धि होगी।¹⁰

कवि को अपनी माटी, परिवेश और समाज से अगाध प्रेम है। वह पश्चिम के प्रभाव से सतर्क है —

ओ कवि, अपनी माटी भूला!

ओ कवि, अपनी माटी भूला!

पश्चिम के झूले में झूला -

लेकिन वहाँ कहाँ पुरवाई?

औ घनघोर घटा सुखदायी?

वहाँ कहाँ कजरी की तानें?

वहाँ कहाँ बिरहा के गानें?

वहाँ कहाँ कोयल की कूकें?

नहीं पपीहे की रस हूकें?¹¹

पश्चिम शीत हवाओं में भारत की मस्त हवाओं का आनन्द कहाँ है?

शत पर्वत, सहस्र सरिताएं, उर्वर धरती

वन-उपवन-हरीतिमा शोभा मन को हरती

छह ऋतुओं की अतुलनीयता विस्मित करती

प्रकृति स्वयं सारे रूपों में यहाँ विचरती !

कहीं कूकती कोयल, कहीं पपीहे बोले

9. स्वर्गता, पृ. 132

10. पद्मभूषण डॉ. रामकुमार वर्मा, 'जय भारत जय भारत प्रहरी — कृषक, श्रमिक जय' से।

11. जय भारत, जय भारत प्रहरी, कृषक, श्रमिक जय (भूमिका से)।

कोमल-मधुर-कल्पना सुनकर आँखें खोले
 श्यामा सीटी-बजा-बजाकर अमृत घोले
 चुटकी चटकाता है चटक जहाँ भी डोले;
 पूजा पर्वत, नदी, वृक्ष की यहीं हुई है!
 पशु-पंक्षी की ऐसी महिमा कहीं हुई है?
 जड़-चेतन की द्वैत-मूर्खता नहीं हुई है।
 सर्वप्रकृति-मैली की सीमा यहीं हुई है!¹²

गंगा को कवि ने भारत की नाड़ी कहकर अति उत्तम भाव को व्यक्त किया है। कवि को अपनी प्राकृतिक सम्पदा पर गर्व है। ग्रामीण प्रकृति का चित्रण कवि ने खूब किया है। सजीव चित्र उभरते हैं। कवि ने अपने जीवन का एक लम्बा काल शहरों में गुजारा है, परन्तु, उसका मन गाँव में ही रमता है। 'सार्वभौम' (पृ. 30-32) में कण्व का आश्रम, हिमालय की पावन प्रकृति और आज की प्रदूषित प्रकृति का चित्रण है। प्रकृति के अतीत और वर्तमान रूप चित्रित हैं। प्रकृति के ऋतुगत स्वरूप का सजीव चित्रण है। हमारे त्योहार, व्रत आदि भी ऋतुओं से जुड़े हैं। होली का त्योहार सबसे अधिक उमंग से भरा होता है। प्रकृति चहक उठती है। कवि का मन भी चहक उठा है — शीर्षक है — 'मतवारी होरी' —

कोयल की कूक लिये हिरण की हूक लिये
 चालों की चूक लिए मतवारी होरी आयी! आयी!!
 टेसू के रंग लिए सरसों के ढंग लिये
 मादक उमंग लिए मतवारी होरी आयी! आयी!!
 शीत को जलाते हुए भीत को भगाते हुए
 प्रीत को जगाते हुए मतवारी होरी आयी! आयी!!
 बूढ़े जवान हुए युवकों के गान हुए
 बच्चे मस्तान हुए मतवारी होरी आयी! आयी!!

आज मानव भौतिकता की ओर पागलपन के साथ दौड़ रहा है। प्रकृति स्थिर है, पर कभी-कभी वह अपना उग्र रूप दिखा दिया करती है। प्राकृतिक आपदायें भी हैं। प्रकृति का लगाव हृदय से अधिक है। बुद्धि ने तो उसकी उपेक्षा की है। 'दृष्टि' महाकाव्य के प्रत्येक सर्ग लोक, पड़ाव की यात्रा में कवि ने प्रकृति-चित्रण किया है वह कहीं वर्णनात्मक तो कही

मानवीकरण के रूप में है। इसमें विभिन्न ग्रह, नक्षत्रों, उल्काओं के तादृश्य वर्णन भी है। विभिन्न लोकों के स्थापत्य, संगीत तथा वात्सल्य चित्रण हैं। जलचर, नभचर, स्थलचर प्राणियों की विशिष्टताओं के साथ-साथ उनके क्रीड़ा-परिवेश के सुन्दर चित्र हैं —

रेशम की चादर से झीने-झीने बादर
व्याप्त हरिताभा को सादर निहारते। (बादल)
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖
लाल-लाल फूलों के लाल-लाल लालों की
प्यारी किलकारी आँखें झँपकर छुप जाती थीं। (फूल)
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖
और वह सरिता उस घाटी के ओर छोरे
को विभोर करती सी भरती हर छाती थी। (नदी)
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖
पुष्पों के लोक में, सौरभ के ओक में
भरा हुआ चारो ओर गुंजार था। (गुंजन)
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖
मेरे सौन्दर्यबोध - तू अतल होता चल,

सागर से, गिरि से, मरु समतल से प्यार के (विविध) 'दृष्टि' में काल्पनिक प्रकृति चित्रण भी हैं। उसके साथ स्वर्गीय प्रकृति का भी चित्रण है। 'दृष्टि' का पैगम्बर-लोक, दिव्य-लोक प्राकृतिक सौन्दर्य से मण्डित है। भारतीय प्रकृति को कवि ने सबसे अधिक महत्त्व दिया है। भारत की प्रकृति अति सम्पन्न है —

प्राकृतिक विविधता की समग्रता भारत है,
कश्मीर से केरल तक शोभा नव-नव है।¹³

रूसो के प्राकृतिक जीवन व समाज के प्रति कवि में सहानुभूति है। कवि ने उन्मुक्त होकर प्रकृति के सौन्दर्य का गान किया है। सजीव बिम्ब बड़े काम के हैं —

पावन उषाकाल था, सात्विकता छाई थी
आभा बन विश्व पर लहरा रहा था धवल

ध्वज क्षितिज-छोर पर सत के उत्कर्ष-सा
प्रभु के प्रशवास-सा पवन जीवन्त करता
जीवन को विचर रहा था और सुरभि-कुबेर
कोष-द्वार खोलकर था विरक्त, आनन्दित।¹⁴

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

छिटक रही थी धरती पर उजली धूप,
उजला हो रहा था जग, उजला हो रहा था जीवन,
किन्तु जनकपुर उस दिन बहुत अधिक उजला था
पाकर प्रकाश सूर्य-पुत्र रामचन्द्र का!
हुए थे सूर्य-चन्द्र एक साथ उपलब्ध!!
उषा और शीतलता एक साथ अनुभूत!!!
द्विगुणित प्रकाश-ज्योतिर होने का सौभाग्य
प्राप्त हुआ था। कमल विकसित थे सरोवर में
जनपथ में भवनों में और मुदित कुमुदिनी
बन विकसित हो रहा था प्रत्येक पथ-सर में
गवाक्षों, वातायनों, देहलियों, तोरणों पर।¹⁵

इसी प्रकार नदी, वन, तालाब, पर्वत, पुष्प, ऋतु, रात, चाँदनी और दिन के सजीव बिम्ब विधान हैं। कवि प्रकृति का कुशल चितेरा है। कवि के प्रकृति-चित्रण में जीवन-दर्शन, प्रकृति प्रेम, पर्यावरण-शुद्धि, पशु-पक्षी-प्रेम, भाषा-प्रवाह और शैली-गम्भीर्य है, जिसको बच्चन, पंत और राम कुमार वर्मा ने सराहा है। पंत की 'स्वर्णोदय' (स्वर्णधूलि में) के समान प्रस्तुत कवि की भी कुछ रचनाएं हैं। कहीं प्रसाद की रचना 'आँसू' की याद आती है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, और रायबरेली से सम्बन्धित कविताओं में प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर चित्रण है। इतिहास, भूगोल, और प्रकृति का यौवन कहा गया है। वन-यात्रा के स्वाभाविक दृश्य बड़े मनोरम हैं। सब मानव भावनाओं के साथ अद्भुत साम्य है।

वैदिक कालीन अन्न 'जौ' आदि का वर्णन है। उस समय प्रकृति और यश का विशेष महत्त्व था। गोधन महान् सम्पदा थी। याज्ञिक दृश्यों और परिणामों का चित्रण है। उषा का वर्णन है। श्रुति का गान सिन्धु के तट पर होता था। गंगा, यमुना, सरस्वती, परुष्णी, असिक्नी, मरुद्वृधा, सुषोमा,

14. पुरुषोत्तम, पृ. 20 (पाण्डुलिपि)

15. पुरुषोत्तम, पृ. 67

वितस्ता, अर्जीकीया की स्तुति होती थी। नदियाँ पवित्र, जलयुक्त एवं रसमयी थीं। कवि के इस वर्णन का आधार 'ऋग्वेद' का नदीसूक्त है। गंगा, यमुना, और सरस्वती, अब लुप्त, किन्तु हरियाणा में अवशेष विद्यमान, प्रयोग में गंगा, यमुना, और सरस्वती त्रिवेणी में जीवन्त, परुष्णी (रावी), असिक्नी (चिनाब), मरुद्वृधा (चिनाब-झेलम-मध्यवर्ती मबर्दवन्), वितस्ता और आर्जीकीया (व्यास) ऋग्वेद (नदी सूक्त)। वर्णित हैं। कवि की मौलिक उद्भावनाएं सराहनीय हैं —

ओ मेरी दृष्टि! उस सजगतम शोभाराशि
पावनतम शोभाराशि में विलय कर ले तू
जीवन-भरित सरिताओं का रस तू पीती रह
अपने प्राण उनकी शीतलता से भर ले तू।¹⁶

'ऋग्वेद' को प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ कृति कहा गया है। यह प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। दिव्य और वसुधा का सम्मिलन ऋग्वेद है। ऋग्वेद के महान गुणों को 'वेदायन (पृ. 48) में कहा गया है। 'ऋग्वेद' भूमि को दिव्यता प्रदान करता है। उसने सहज को कला रूप दिया है। उसमें मानवता की प्रतिष्ठा है। वह मानवता का यौवन गान है। उस काल में समस्त देवता और ऋषि-मुनि धरती पर सुलभ थे। मानव प्रकृति का सर्वोत्तम रत्न है। वह प्रकृति के संकेतों को सुन लेता है। गर्जन, तर्जन, वर्जन, सर्जन और रहस्य सब को समझ लेता है। मानव प्रकृति के अंक का शिशु है। प्रकृति की अवहेलना करने से विकृति आ जाती है; सब कुछ समस्या और दुःखमय हो जाता है। अनेक परिवर्तन प्रकृति से होते हैं। सृष्टि प्रकृति का ही अंग है। जीवनरहित प्रकृति भयावह और जीवनसहित प्रकृति भावोच्छ्वास है। प्रकृति सब कुछ प्रदान करती है। प्रकृति के विविध रूप हैं — काल, अकाल, आदि। अकाल का सजीव चित्रण है। सुन्दर बिम्ब-विधान है। उसके दो रूप (+ -) हैं। उसकी विपरीतता में लोक शवलोक हो जाता है। अकाल में सारी सरसता समाप्त हो जाती है। ऋषियों के आश्रम उजड़ जाते हैं। अन्न-जल ही सब कुछ हो जाते हैं। चारों ओर दरिद्रता का राज्य छा जाता है भले-बुरे बिम्ब हैं।

कवि ने प्रकृति के बाह्य और अन्तस्, प्राचीन और आधुनिक रूपों को प्रस्तुत किया है। प्रकृति ने मानव को बहुत कुछ दिया और उसका

रसवाद और प्रगति प्रयोग तथा नयी कविता से उनका अविरोध

डॉ. रामप्रसाद मिश्र ने हिन्दी साहित्य में 11वें रस बौद्धिक रस का प्रवर्तन किया है। इस पर उन्होंने पर्याप्त लिखा और तदनुसार कविताएं भी की हैं। उनका पहला काव्य संग्रह 'बौद्धिकरस' (1964 ई.) नामधारी ही हैं। इसके साथ कवि में प्रगतिशीलता है। मिश्र जी शोषण-विहीन समाज की सृष्टि चाहते हैं। जैसे वर्षा से धूल धूसरित फूल धुल जाते हैं वैसे ही क्रांति से समाज में परिवर्तन व सुधार आ सकता है, प्रगति हो सकती है। 'सेतु' नामक काव्यसंग्रह की कविताओं में समग्रता और समायोजन है। बौद्धिकरस के प्रवर्तन के उपरान्त उन्होंने सेतुवाद को चलाया। सेतु दो किनारों को मिलाता है, समायोजित करता है। यह उनके काव्य चिन्तन की चिर स्मरणीय उपलब्धि है। इसमें उन्होंने 'ऋग्वेद', बाइबिल, अध्यात्म, एकान्त चिन्तन के साथ प्रेम, रूप, कुण्ठा, संत्रास आदि आज की प्रवृत्तियों को जोड़ा है। योगानन्द से लेकर उन्होंने भोगे हुए यथार्थ को एक साथ कहा है। 'सेतु' अपने आप में प्रतीक है। धर्म, दर्शन, मनोविज्ञान, इतिहास, राजनीति, और कला का समन्वित रूप 'सेतु' है। इसी में पुरातन और आधुनातन, प्रगति और प्रयोग, शान्ति और क्रांति का सहज संगीत है। कवि ने पारम्परिक और नयी कविताओं के विषयों को एक साथ लेकर यात्रा की है। उन्होंने सामान्य प्रसंगों को भी बड़ा और सारगर्भित बना दिया है। ऋषियों और राजाओं से लेकर उन्होंने आज की बेकारी और प्रतीक्षा में खड़े मानव की चर्चा की है। "नई कविता और पारम्परिक कविता को भी सहज रूप में अभिव्यक्त करने की अद्भुत कला कवि में है। काव्य-संग्रह का नाम 'सेतु' पूर्ण सार्थक है। कवि का सेतुवाद ही कविता का सम्पूर्ण दर्शन बनकर सामने आ जाता है।" अतः उनके प्रयोग नयी कविता से विरोध नहीं रखते हैं।

1. आकाशवाणी, लखनऊ, पुस्तक-समीक्षा-प्रकरण। दि. 1919-1980, रात्रि सेवा आठ बजे, प्रसारक - श्री इन्द्रनारायण त्रिपाठी।

बौद्धिक रस स्वातंत्र्योत्तर कविता की महान् उपलब्धि है। प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद ने 'छायावादोत्तर' काव्य शीर्षक की पुस्तक में इस तथ्य का उल्लेख किया जा सकता है, जिनमें अधिकांश के नाम ही मेरी उक्ति की सार्थकता सिद्ध हैं।¹ बौद्धिकरस में भाव और बुद्धि के मध्य द्वय स्थापित होता है। नये रस का उद्घाटन है जो वैज्ञानिक और सार्थक है। मिश्र जी इसके प्रवर्तक हैं। बौद्धिक रस में मिश्र जी ने विज्ञान, ज्ञान, यौन, मनोविज्ञान, दर्शन, कला इत्यादि को एक समान्वित रस-रूप में प्रस्तुत किया है और यह एक बहुत ही बड़ी देन है। रस, अलंकार, शोषण-विगर्हणा, प्रयोग एवं संशक्त अभिव्यक्ति का जैसा संगम 'बौद्धिकरस' की कविताओं में प्राप्त होता है, वैसे अन्य किसी छायावादोत्तर काव्य में नहीं।² छायावादोत्तर कविताओं में जो शुष्क व कलाहीनता मिलती है, वह इसमें नहीं है। छोटी कविताएं भी अपना विशेष महत्व रखती हैं। तर्क की कसौटी से खरा उतरता सत्य कविता का सत्य है। सामान्य विषयों को विशेष महत्व दिया गया है। छायावादोत्तर काव्य में इस प्रकार के उदात्त प्रयोग अत्यल्प हैं। उनके महाकाव्य 'पुरुषोत्तम' और 'दृष्टि' में उदात्त प्रयोग सबसे अच्छा है। ऐसी स्थिति जिसमें श्रद्धाओ और विस्मय दोनों का योग हो। 'बौद्धिकरस' की कविता 'इल और इला' में यह दर्शनीय है -

सहसा नेत्र विस्फारित, तदनन्तर आतंकित
 हो गए तेजस् की अलौकिक ज्वाला से,
 अवयव-अवयव में हुआ पराभव का प्रकम्प,
 मानस हतचेत हुआ और मस्तिष्क भ्रमित,
 किंकर्तव्यता दिग्भ्रम में खो गई,
 रसना नीरस हुई,
 एक बड़ा हाहाकार मूक सा विवश रहा,
 देखा इल ने समीत
 सामने खड़े थे भूत
 भावन महादेव शंकर।
 कर्पूर गौर वपु पर
 श्मशानभस्म लेषित;
 देवापगा की सुधा
 भुजग-गरल की सखी;

शीतल, धवल निशानाथ
ज्वलित, कराल, स्थायी
प्रलयंकर तृतीय नेत्र
के सीमा क्षेत्र में;
अमृत के प्रदाता ने
विषम कालकूट को
कंठ से लगाया है;
अंग-अंग में अनुपम पावनतम शान्ति थी
किन्तु लहू टपकाता
हस्तिचर्म तन का वस्त्र;³

व्यक्ति किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है। 'अन्धे का आत्मनिवेदन' कविता इसी प्रकार की है —

“मेरे लिए सारी सृष्टि नासदीय सूक्त की
सर्गरचना-पूर्वस्थिति
सदृश और बाइबिल का
“आदि में केवल शब्द था” चिरंतन सत्य।”⁴

आधुनिक कविता को रीतिकालीन अश्लीलता से उबारने का प्रयास यथार्थवादी दृष्टि को अपनाकर किया गया है। कवि द्वारा सही बात को बड़े ढंग से कहा गया है। 'दृष्टि' को आश्रयदाता कहा गया है। उसके वास्तविक आकर्षण, और उपयोग को दर्शाया गया है। शृंगार और मातृत्व के आश्रयदाता के रूप में भी नारी के उरोजों को वर्णन है। लोगों ने अपनी दृष्टि से उसको देखा है। मिश्र जी ने अपनी दृष्टि से देखा है। उन्होंने सब कुछ कहा है, पर अश्लीलता से हटकर। इधर की कविताओं में जो शुष्कता आ रही है — मिश्र जी ने उसको दूर करने का प्रयास किया है। उदाहरणार्थ 'सर्वश्रेष्ठ वस्तु क्या?' कविता को देखा जा सकता है —

“सर्वश्रेष्ठ वस्तु क्या?”
अन्धे ने कहा, आँखें।”
बहरे ने, “श्रवण - शक्ति”,
वाणी का रस चाखें।

3. बौद्धिक रस, पृ. 132-133

4. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 94

लँगडे ने कहा, "टाँग"
 भंगड़ गिड़गिड़ाया, "भाग!"
 मद्यं "मधु" चिल्लाया,
 कामी ने "नारी" गाया,
 लोभी ने कहा, "हेम!"
 सन्त ने , "योगक्षेम!"⁵

तुंकान्त-अतुकान्त दोनों रीति की कविताओं में कवि सफल है। सब को लेकर चलने की उसकी क्षमता सराहनीय है। परम्परावादी, प्रयोगवादी और नयी कविता से उसका कहीं विरोध नहीं है। कवि का दृष्टिकोण वाल्मीकि और व्यास-सा विराट् है।⁶ इसी क्रम में पतंजलि और तुलसीदास पर भी कविताएं हैं। कवि ने काव्यशास्त्र या रसवादी परम्परा से न जुड़कर अपने ढंग से सबका प्रयोग किया है। उसने बौद्धिक रस को सबसे अधिक महत्त्व दिया है। इसके उपरान्त यथा प्रसंग पारम्परिक रसों के प्रयोग भी हैं। 'दृष्टि' महाकाव्य के 'दारिका' और श्यावाश्व के संक्षिप्त प्रेम-प्रसंग में स्थायीभाव का अनुकरण दोनों प्रेमियों के हृदय में समान रूप से होता है। अतः वे दोनों आश्रय और आलम्बन दोनों हैं। यौवन और हावभाव एक दूसरे के लिए उद्दीपन का कार्य करते हैं। हर्ष, आवेग, पीड़ा आदि संचारियों के साथ अनेक कायिक, मानसिक और सात्विक अनुभावों का संयोजन भी हुआ है। अस्तु यहां शृंगार का पूर्ण परिपाक है।

'दृष्टि' महाकाव्य के विलक्षण लोकों, धूमकेतुओं, ज्वालामुखियों, जलप्लावनों आदि को देखते समय नायक के मन में जहाँ भय और विस्मय के जो स्थायीभाव जाग्रत होते हैं वहाँ अनायास ही भयानक और अद्भुत रसों की योजना हो गई है।

अनेक ऐसे प्रसंग हैं जहाँ नायक निर्वेद के स्थायी भाव से अभिभूत दिखाई देता है। ऐसे स्थलों पर वह शांति का अनुभव करता है। अपने को परमानन्द की स्थिति में पाता है। ऐसे स्थल पर शान्त रस है। इसी प्रकार भक्तिरस के उदाहरण भी हैं। विभिन्न देवी-देवाताओं के प्रति नायक के मन में भक्ति का भाव है। श्रद्धा-प्रेम समन्वित भाव है। आलम्बन, उद्दीपन तथा विभिन्न संचारी भाव भी हैं। विविध अनुभाव हैं। इस प्रकार 'दृष्टि' काव्य

5. डॉ. रामप्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताएं, पृ. 5

6. दे. 'व्यासं वन्दे परम गुरुम्' शीर्षक की कविता (जय भारत), जय भारत-प्रहरी, कृषक श्रमिक जय, पृ. 22-26

में शृंगार, भयानक, अद्भुत, शान्त एवं भक्तिरस का संयोजन हुआ है। अन्तिम दोनों रसों की बहुलता के कारण इसको भक्ति एवं शान्त रस प्रधान महाकाव्य कहा जा सकता है। कुछ उदाहरण दर्शनीय है —

प्रतिभा एक ज्वाला है, जलना ही जीवन है,

प्रतिभा की शान्ति ही उसका बुझ जाना है;

मैं जला भी हूँ, बुझा भी हूँ, और इसलिए

ही मैंने प्रतिभा को ज्वाला ही माना है।⁷

कवि ने प्रतिभा को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। बौद्धिकरस में भी इसकी प्रतिष्ठा है। नयी कविता के रचनाकार भी इसको महत्त्व देते हैं। नयी कविता भी बौद्धिकता से युक्त है। इसी से उस पर आरोप है कि, वह जिस वर्ग को दृष्टि में रखकर लिखी गयी है उसी की समझ के परे है। आगे कवि ने जीवन के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रस्तुत किया है। आज की कविताएं भी चिन्तन से अधिक और वर्णन से अल्प माला में जुड़ी हैं ये विचारप्रधान रचनाएं अपना व्यापक अर्थ रखती हैं। इस प्रकार ऐसी कविताएं जीवन और समाज के नानापक्षों को समेटकर सामने आती हैं। कवि बौद्धिक जटिलता से स्वयं दूर रहना चाहता है। सहज शैली की वह वकालत करता है —

“तू जीवन के नाना तत्वों को समेट ले,

तू चिर काव्य-सत्त्वों को ठीक पहचान ले;

तू सहज शैली में नूतनतम रचना कर;

जिससे साहित्य रूप विशद, महान् ले।”⁸

कवि ने अमूर्त को मूर्त रूप खूब दिया है। उसके भाव और कल्पना लोक बहुत सम्पन्न हैं।

कवि के सामने छन्द, अलंकार और नायिकाभेद अथवा चमत्कार की समस्या नहीं है। कविता इनके बिना भी बहुत ढंग से की जा सकती है। आज की कविता ने इन सबको नकारा है। भारत ही नहीं, विश्व की कविताओं ने नकारा है। पुरानी रूढ़ियों, मान्यताओं और शिल्प को नकारा गया है। कवि सबके साथ है। ये कविताएं रस को स्वीकार करती हैं। इनका भाव पक्ष बहुत सबल है।

7. दृष्टि, पृ. 95

8. दृष्टि, पृ. 106

कवि ने वैदिक, औपनिषदिक तथा पाश्चात्य दर्शनों को आत्मसात् किया है। वेदों को उसने सर्वोच्च चिन्तन का और ज्ञान का छोर कहा है। कवि के इतिवृत्त और वर्णन में भी चिन्तन है, भाव और प्रयोग हैं, नयी कविता में भी भारतीय और पाश्चात्य दर्शन हैं, मनीषियों के ऊँचे विचार हैं। सब के साथ कवि ने भारतीय चिन्तन की श्रेष्ठता को प्रतिपादित किया है। कवि किसी का विरोध न करते हुए अपनी बात को कहता चला गया है। उसके भाव स्वस्थ और उपयोगी हैं। अतीत से जुड़कर भी वह समसामयिक है। नयी कविता के रचनाकार भी अच्छे अध्येता हैं। सब ने बहुत सोच समझकर अपनी बातों को प्रस्तुत किया है। इधर की कविताओं में चिन्तन और प्रयोग की बहुलता है। प्राच्य-पाश्चात्य सभी दृष्टियों से कवि-कर्म अनूठा है। इतने व्यापक भावों को कल्पना से अधिक यथार्थ से जोड़ा है। अनुभूति से माँजा है —

ओ चरम अनुभूति की दुहिता, ओ कविता!

रूपवती भावना, अन्तर की काया ओ

ओ सहज मानस की सहज-वीचिमाला, ओ

चित्त की चिति, चिरता की यात्रा की छाया ओ!⁹

अन्तर का सहजोल्लास बाह्य के इंगित मात्र

को पाकर उच्चतम गान बन जाता है।¹⁰

कवि ने आस्तिक भावों को ग्रहण किया है, परन्तु नास्तिकों की निन्दा में अपना समय नहीं गँवाया है। आस्तिकता हमारी चिर थाती है। उसकी मात्रा जितनी अधिक रही जीवन उतना ही सुखी रहा। हर दशा में एक संतोष था। संतोष जीवन का सबसे बड़ा सुख है। आस्था में संतोष अधिक होता है। अहं और इदं एक पूर्ण के दो नाम हैं, इनका दो होना ही जीवन है। प्रत्यक्ष और अनुमान दोनों अपने-अपने ढंग से सत्य हैं। इसी प्रकार प्रेम-भाव भी शाश्वत है, केवल्यवत् है। इसकी महत्ता को सब ने स्वीकार किया है। प्रेम परमतत्त्व है —

प्रेम कैवल्य का लौकिक स्वरूप है

प्रेम रहित जीना द्वैत-ज्वाला में जलना है

9. वेदायन, पृ. 21

10. वेदायन, पृ. 22

प्रेम की साँसे परमात्मा की साँसें हैं

प्रेम की साँसों में प्राण को चलना है।¹¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम कलाकारों का कलाकार, प्रेम अखिल

कवियों का कवि, प्रेम सृष्टि का सार है

प्रेम से नर द्रष्टा, स्रष्टा बन जाता है

प्रेम का उद्गार विभु का उद्गार है।¹²

मानव शांतिकामी होता है। वह शांतिपाठ भी करता है, किन्तु शान्ति के वाहक योद्धा ही हो सकते हैं न कि कायर। एक पल वेद मंत्र, एक पल रणघोष के तत्पर वीर ही शान्ति की रक्षा कर सकते हैं। युद्ध और विज्ञान जीवन के महानतम सहयात्री हैं। युद्धजयी वातावरण शांति-विभव का दाता होता है। वैज्ञानिक विश्व की अविष्कारों से भरत हैं परन्तु जिन राष्ट्रों में युद्ध-विज्ञान अनुपात बिगड़ा वे नष्ट हो तभी सम्भव है जब अन्य भी मित्र की आँख से देखें। अतः यदि कोई शत्रु की आँख से देखे तो उससे युद्ध करना चाहिए। कवि को उदात्त चरित्र पसन्द है। शत्रु को बल या भय ही मित्र बनाता है। इसीलिए युवा इन्द्र सबको प्रिय है। प्रत्येक इन्द्रिय की सबलता के गीत वेदों में गाये गये हैं। सबल तन, सबल मन, सबल राष्ट्र, सबल तंत्र के समाहार से जीवन सफल होता है। आर्य जीवन को गतिशील, और समन्वयशील बनाये रखने के पक्षधर थे। मानव जीवन को वे शाश्वत और चिरंतन मानते थे कि मरना कठिन है, परन्तु जीना सबसे कठिन है। आर्यों ने युद्ध को धन माना है। आज की कविताओं में संघर्षशीलता है। कवि ने इसको एक लम्बी परम्परा से जोड़ दिया है। इसके साथ आधुनिक दर्शकों को भी लिया है — 'मैं अकेला हूँ' कविता में अस्तित्ववादी कविता-सी अभिव्यक्ति है। अज्ञेय जी ने भी ऐसा ही माना है। छायावादी तथा छायावादोत्तर कवियों के समान कवि ने मानवीकरण, अभिव्यञ्जना, कल्पना, मूर्त-अमूर्त विधान, बिम्ब और प्रतीक को स्वीकार किया है। प्रगति और प्रयोग को भी लिया है। 'कचनार' कविता में मानवीकरण, मादकता, मौन राग और

11. वेदायन, पृ. 26

12. वेदायन, पृ. 26

अध्याय 13

सौन्दर्य-दर्शन एवं सौन्दर्य-चित्रण

कविता में डॉ. मिश्र ने रूप सौन्दर्य के सन्दर्भ में पेनीलोपी, फेनी ब्राउन, बीट्रिस, मोनालिसा, दमयन्ती, हेलेन, शकुन्तला, हेरियट आदि को सन्दर्भित करते हुए रूप का छलावा, सौन्दर्य की मृगमरीचिका को दूर का नन्दन, निकट का दण्डक वन कहा है—

तुम्हारे आने में

तुम्हारे जाने में

तुम्हारे पाने में

हाहाकार जलन प्यास

जब तुम क्षितिज के उपमेय मात्र रहते

केवल तभी परितोष पाती है विकल आस।

इसी प्रकार के सौन्दर्य भी प्रतिष्ठित हैं। प्रकृति और प्राणी के सौन्दर्य को उन्होंने समान रूप से महत्त्व दिया है। कहीं न अशक्ति है न घृणा। सौन्दर्य और कविता का सम्बन्ध शाश्वत है। मिश्र जी का जीवन सत्य रहा है, परन्तु अमर्यादित नहीं। जहाँ तक काव्य में सौन्दर्यबोध का प्रश्न है — वह समर्थ है। सौन्दर्य का उन्होंने छककर पान किया है। अतीत और वर्तमान सब में सौन्दर्य को देखा है। सौन्दर्य और धरती को जोड़ा है। उनका 'रूपायन' इस तथ्य का प्रतीक है। तीन प्रतीक देखे — 1. कौन है वह रूप जिसकी प्यास में मैं भटकता में वनों में भागता विशेष में? 2. किसने तेरा रूप बनाया? 3. कभी लगीं 'ऋग्वेद ऋचा सी कभी लगीं खय्याम रूबाई। इसी से उनका सौन्दर्य चित्रण सफल है। बिम्बों से उन्होंने सबसे अधिक सौन्दर्य चित्रण किया है। 'दृष्टि' महाकाव्य में इस प्रकार का चित्रण सबसे अधिक है। कविता संग्रह 'शती' में भी है। सौन्दर्य को वे हेय या अश्लील नहीं मानते हैं। तभी तो वे इतनी महान् उपमाएं दे पाते हैं —

चम्पा-सौरभ सा तन

शरद-ज्योत्स्ना सा मनै

हंस-व्याति-सा जीवन

सुन्दरी ¹

‘सेतु’ की ‘रूप शीर्षक कविता में उनका सौन्दर्य-दर्शन एकदम स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि उसमें रूप-दर्शन भाव और रहस्य-दर्शन एक रूप हो गये है —

सुन्दरी! ठहरो निहारूँ तनिक मैं यह रूप,
बनूँ तन्मय, बनूँ कवि, हो भाव-भव का भूप,
स्वच्छ होए दृष्टि
स्वच्छ होए सृष्टि
एक शीतल ज्योति से हो निखिल सर्ग अनूप।
सिहर उठते कल्पना के प्राण, सारे छोर,
कला-वीणा-मूर्च्छना करती अलौकिक रोर,
नयन मीलन मन्द,
मधुर कवि का छन्द,
नमित कर देता मनोरस नयन का रस-कोर।
इंद्रियाँ अनुभूत करती अतीन्द्रिय उल्लास,
लोक में बनता अलौकिक प्रति सरस उच्छ्वास,
अक्ष होते लक्ष,
योग का रस पक्ष,²

नैसर्गिक सौन्दर्य ही सर्वोत्तम होता है। उसका अभाव ही कुरूपता है। कॉफी हाउस, चलचित्र, आदि में कलात्मक रूप देखने को कम ही मिलते हैं। व्यक्ति की यह एक कमजोरी है कि वह सौन्दर्य को सब कुछ मान लेता है जब कि जो चीजें बाहर से बहुत सुन्दर होती हैं वह भीतर से सुन्दर या अच्छी नहीं भी हो सकती हैं। प्रायः सुन्दरों का तन सुन्दर होता है, मन नहीं, क्योंकि वे तन की लज्जा में व्यस्त मन और आत्मा को सँवारने का अवकाश नहीं पाते है —

कुरूप गढ़ते इतिहास

क्योंकि अन्तस को

सँवारने का आचरण

प्राप्त हो जाता है।³

1. सेतु, काव्यानुभूति : एक व्यवधान, पृ. 18-19

2. मान्यता प्राप्त कविताएँ, पृ. 68-69

3. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 65

इसलिए कुरूपता के प्रति हीनता की भावना नहीं होनी चाहिए। उसको अपने कर्म की श्रेष्ठता में विश्वास रखना चाहिए। रूप नहीं कार्य अमर होता है। अतः वास्तविक सौन्दर्य रूप में नहीं कर्म में होता है। यदि सब का निरीक्षण तटस्थता से किया जाये तो पता चलता है कि —

सबका है अपना-अपना

मूल्य किन्तु कृत्रिमता

चाहे वह गोपन हो

कुरूपता का अथवा

बुद्धि प्रदर्शना हो

सुन्दरता का असह्य

लगा है मुझे सदैव।

सत्य को स्वीकार

करना मानवता का

सबसे स्वस्थ मार्ग है।⁴

कवि ने बिम्बों, उपमानों और उल्लेख के माध्यम से भी मानवीय सौन्दर्य का चित्रण किया है। 'उरोज' शीर्षक कविता यहाँ दर्शनीय है —

निसर्ग के कोमलतम पुष्प,

तन के मधु शृंग,

त्रिगुणात्म त्रिवर्ण,

अंगों के भी अंग

हृदय की ऊँचाई

मन्मथ के अभ्रभेदी

प्रासाद, नारीत्व

के पूर्णतम अवयव।⁵

भारतीय, ग्रामीण और सहज सौन्दर्य-दर्शन एवं सौन्दर्य-चित्रण में कवि का मन अधिक रमा है। वस्तु वर्णन में सौन्दर्य-चित्रण अधिक है। 'दृष्टि' महाकाव्य में रूप-वर्णन, ऋतु-वर्णन, प्रकृति-वर्णन के अनेक उदाहरण हैं रूप वर्णन, (शंकर) ('दृष्टि')।

4. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 65

5. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 82

हे तुषार-गौर महत्-रूप सौन्दर्य,
 सुधाकर-धारी गरल-कंठ, फार्ण-शोभित हे!
 हे जटिल, हे गंगा-सुधा के प्रवाहक ; हे
 गज चर्म वेश धर सत्य रूप शिव हे!
 गुण वर्णन (हनुमान्)
 और ब्रह्मचर्य-तेज, सेवा किरीट-शुभ,
 विक्रम साकार, महावीर हनुमान् हे!
 हे महान् सात्विक तेज शाश्वत आवास हे
 चरित चरित्रबल वरतम उपमान हे! ('दृष्टि')

डॉ. रामप्रसाद मिश्र सौन्दर्यबोध के कवि हैं। बीच-बीच में वे कविताओं में जीवन-सूत्र पिरोते हैं। उनका सौन्दर्य बोध बड़ा व्यापक है। इसमें राष्ट्रीयता भी है। इसी से उनको धरती सबसे सुन्दर लगती है -

सुन्दर हैं सूर्य, चन्द्र, शुक्र और मंगल आदि,
 किन्तु, ओ मेरी पृथिवी, तू सबसे सुन्दर है⁶

सौन्दर्यबोध द्रष्टा की दृष्टि और वस्तु की विशेषताओं के अपूर्व समन्वय से जन्म लेता है -

जीवन्त सौन्दर्य संगति है, दृष्टि है,
 संगति और दृष्टि से रहित सौन्दर्य क्या?⁷

सौन्दर्य निरूपण में (क) भौतिक व शारीरिक (ख) आध्यात्मिक और (ग) काल्पनिक सौन्दर्य है। सब का अपना-अपना महत्त्व है। सबके उदाहरण भरे पड़े हैं प्राकृतिक सौन्दर्य को पीछे प्रस्तुत किया गया है। कुछ उदाहरण दर्शनीय हैं -

लगे इला का रूप
 सम्राटों का भी भूप

जिसके कपोलों में अकृत्रिम लज्जा की
 रंगशाला बन रही थी और अधरों की स्मिति
 रति के संगीत-सी
 (काम में मीत-सी)

6. दृष्टि, पृ. 13

7. दृष्टि, पृ. 17

अभिव्यक्त कर रही थी अन्तर के रहस्य

सारे अन्तर मिटाती

सूक्ष्म को दिखलाती।

भ्रमरयुक्त रक्तकमल सहज उरोज देख जड़ बने

हृत्कंप-झंझा में झूल उठे सरस फल

पाकर कल

हो निश्चलः

हृदय की विशालता

समा नहीं सकी जब

अन्तराल में तब

स्वतः अभिव्यक्त हुई

काम के शृंगों में

वत्सल भरे अंगों में

विविध स्नेह-रंगों में

मधुर उमंगों में

पुरुष का हृदय कहाँ नारी-हृदय-सा महान्?*

नारी सौन्दर्य चित्रण को कवि ने शृंगार कालीन दल-दल से उबारकर उसको अन्तस् और बाह्य की सर्वसमक्ष किया है। इस सौन्दर्य में वासना का कोई स्थान नहीं बन सका है। काम के प्रसंग स्वाभाविक है। इला और बुध का मिलन, प्रेम-प्रसंग, संवाद, इला का सरोवर में कौशयवस्त्र पहनकर स्नान करना तथा उस समय का उसका सौन्दर्य-निरूपण बहुत कामुक और स्वाभाविक है, पर उसका अनावृत सौन्दर्य बुध के मन को मथ देता है —

वीचि कौशेय के मृदुल परिधान में

सहज अनावृत तन बुध-मन को हर गया

नटखट मुसकान उसकी

बहुत कुछ बोल जाती

और आँखें आमंत्रण देती मतवाली हो।

अंततोगत्वा बुध निकट आ बोलने को

विवश हुए, "सुन्दरी;

रति के वरदान-सी

काम के काम-सी

क्या तुम वनदेवी हो
 जिसने अकस्मात् मेरे संयम को तोड़ डाला
 एक मुसकान से
 मौन दृष्टिदान से
 चंचल सम्मान से?
 आह, तुम नयनों को उठाकर गिराती हो
 बहुत मन भाती हो
 मत बोलो, किन्तु मेरी दशा देखो एक बार
 लो निहार
 गया हार⁹

कवि ने सब कुछ कहा है, परन्तु गम्भीरता के साथ। रूप सौन्दर्य, भाव सौन्दर्य और परिवेश सौन्दर्य के सराहनीय चित्रण हैं —

बुध ने प्रश्वास की ज्वाला से शीतल करते
 इला को उठा लिया अपनी भुजाओं में
 और एक निर्मम क्रूर सुस्पष्ट अभिव्यक्ति आलिंगन द्वारा तोड़ी
 सारे शरीर की
 मन की
 आत्मा की
 चिरंतन ग्रंथियाँ
 दो तन, मन, प्राण शतशः मुक्त हो गये
 कैवल्य में सारे स्थूल द्वैत खो गये।
 जल से बाहर ले आये।
 दो ने एक स्वन गाए।
 आवेग के अनंतर जब सहज रूप आया
 तब इला झंझा द्वारा छिन्न हुई लता-सी
 गज द्वारा मथित पंकिल ग्रीष्म की सरिता-सी
 दीख पड़ी बुध शिथिल
 महत्तम शंका प्रशांत समाधान से।¹⁰

इला को राज पाट का वैभव सब भूल जाता है। वह काम भूप के अधीन हो जाता है। काम के सार्वभौमिक प्रभाव को स्वीकार किया गया

9. वेदायन, पृ. 87

10. वेदायन, पृ. 89

है। स्त्री और पुरुष को एक सत्ता माना गया है। दोनों एक दूसरे में मिले जुले रहते हैं। अर्द्धनारीश्वर के दर्शन को समझाया गया है। अद्वैत से द्वैत, फिर द्वैत से अद्वैत हो जाता है। यही 'सृष्टि', ब्रह्म, माया, नर और नारी के रहस्यों का उद्घाटन होता है। अन्ततः सब एक हैं। इसी में सौन्दर्य का भी चरम उत्कर्ष है। कवि की दृष्टि बहुत साफ है।

राम और सीता का प्रथम साक्षात्कार विश्वामित्र आश्रम में होता है। यहाँ भाव और शरीर सौन्दर्य दर्शनीय है। सब कुछ सुन्दर और सुखमय है। बिम्ब, चित्र, अनुभाव, आश्रय, आलम्बन और उद्दीपन परम सुन्दर, सहज और मर्यादित है। राम का प्रथम दर्शन कर विदेहराज जनक भी मुग्ध हो जाते हैं -

और, जनक के नयनों से झरे अश्रु-बिन्दु,
पुलकित शरीर, शिथिल मन, युगनद्ध दशा।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

इसी बीच सीता ने कलभ-गति लज्जित कर
मृगशावक-नयन-कोर से देखा राम को
कुतूहलवश, किन्तु हुए मीलित पलक-कपाट
स्वयं, बालहंसिनी-सी वे, गई माँ की ओर
और उन्हें विश्व का गतिविधि का परिज्ञान
पूर्णतः विस्मृत हुआ, स्मृति में रहा केवलमात्र
राम का संयोगजन्य शुभ्र दृष्टि-दान।

सब कुछ था अब नया, तिल में तिल मिल गया;
सारा जग खिल गया। भाव का अत्यधिक
भार देख निमि भागे भरित उत्साह से।

पी लिया रूप-महासागर कनीनिका ने!!

पुरुषोत्तम राम का अद्भुत सौन्दर्य लोकोत्तर है - उसमें लौकिक, पारलौकिक सुख या आनन्द है। उनका सौन्दर्य आर्य पुरुष का सौन्दर्य है। शक्ति, शील, कोमलता और कठोरता का सौन्दर्य उनमें एकत्र है। एक लम्बा वर्णन है। उनका बिम्ब प्रस्तुत है। सौन्दर्य का ऐसा चित्रण बहुत कम लोग कर सके हैं -

कहते थे नर-नारी अत्र तत्र सर्वत्र,

"राम के शरीर में धातु नील कमल बनी!"

“काँप रहा पाताल इनके पदचाप से!”

“इनकी गति से पृथ्वी मुक्त है ताप से!

नीलाम्बर, फैलकर क्षितिज के उस पार तक को मुट्ठी में भीचकर मरोड़ सकते हैं।”

“इनके अतिशय विशाल सुदृढ़ स्कन्धों पर पड़कर वज्र चूर्ण-चूर्ण होता उड़ जाएगा!”

“इनके ललाट की रेखाएं विधाता और नियति के वश में नहीं, स्वयं वशवर्तिनी,”

“विधाता अनुचर इनका और नियति प्रतिहारी!”

“तमस् को यमराज, रजस् को कामदेव, सत् को उरुक्रम विष्णु, पूर्ण को पर ब्रह्म!”

“तमस् को भीषण इंद्रा, रजस् को मलयानिल, सत् को प्राणवायु और पूर्ण को कैवल्य!”¹²

प्रकृति, नदी, तीर्थ, मानव, नगर, किले और राजभवन के सौन्दर्य निरूपण में कवि सफल है। खुला सौन्दर्य अधिक है, मानसिक कम। कुन्ती और द्रौपदी का सौन्दर्य निरूपण अपने ढंग का है। सौन्दर्य को वासना से दूर रखने का प्रयास किया गया है। सौन्दर्य निरूपण पारम्परिक और मौलिक है। सौन्दर्य का मानक भारतीय है। कवि ने सबसे बड़ा सौन्दर्य भारतीय आदर्शों में देखा है। यह बहुत बड़ी बात है। यह सौन्दर्य कभी नष्ट नहीं हो सकता है। ऐसे आदर्श चरित्रों, कार्यों, घटनाओं और अवसरों को कवि ने बार-बार प्रस्तुत किया है। नर-नारी और प्रकृति के स्थूल सौन्दर्यों में कवि ने आदर्शों को महत्व दिया है। आधुनिक काल के सौन्दर्य निरूपण में शृंगार कालीन अश्लीलता नहीं है, यह अच्छी बात है। कवि भी आधुनिक आदर्शों का पक्षधर है। राम, कृष्ण तथा अन्य महापुरुषों के चारित्रिक सौन्दर्य को कवि ने अपनी दृष्टि से देखा है। ये सब चरित्र आदर्श हैं, इनके कर्म, तन, मन और यश में सौन्दर्य है। पुरुषोत्तम महाकाव्य सर्ग 6 में विवाह के अवसर पर राम का अद्भुत चरित्र व सौन्दर्य मिथिला के लोगों को मंत्रमुग्ध कर लेता है। विवाह पूर्व (राममय सीता के हृदय की दशा का बहुत सुन्दर चित्रण है।) राम का पुरुषोत्तम रूप है। राम हर तरह से उत्तम एवं सुन्दरता के मानक हैं ‘कल्पान्त’ में कृष्ण का सौन्दर्य भी सर्वांगीण है, युग का मानक है। व्यक्तिगत, सामाजिक, पारम्परिक, मौलिक, सामन्ती सौन्दर्य के रूप

मिलते हैं। अतीत और वर्तमान के विविध सौन्दर्य हैं। संस्कृति और सभ्यता के भी सौन्दर्य पर प्रकाश डाला गया है। पुरुष के समान नारी का भी कर्म सौन्दर्य स्तुत्य है। भोग — विलास में ही नहीं, संघर्ष में भी सौन्दर्य होता है। सौन्दर्य शुभपक्ष तक को मुग्ध कर लेता है —

“पुरुषवा” एक आतंक, एक सम्मोहन,
 एक सत्य, एक कल्पना, एक इतिहास
 बल-प्रतीक उरु, पुर जीतता बल पूर्वक
 उसका युद्धारोहण ध्वंस का था विकास
 किंतु रूप ऐसा, सौन्दर्य भी ऐसा कि
 शुभ नारियाँ तक विकल पालती उच्छ्वासः
 कहीं अत्याचारी, कहीं मोहक, कहीं मोहित
 कहीं वेदमंत्रद्रष्टा! पूर्णता का विलास।¹³

कवि सौन्दर्यवादी नहीं, रसवादी, प्रगतिवादी, प्रयोगवादी और लोकमंगलवादी है। उसने सब को अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। सब पर में भारतीयता है। उसको अपने देश पर गर्व है। अतीत के गौरव में उसने सब कुछ देखा है। जो भारतीय है — वही आदर्श और सुन्दर है। वाम और दक्षिण से मुक्त होकर कवि ने सौन्दर्य का निरूपण किया है। अतः कवि का सौन्दर्य-दर्शन व्यापक और सौन्दर्य-चित्रण पारम्परिक और मौलिक है।

काव्य में एकाग्र चिन्तन और अभिव्यक्ति

कवि के लिए एकाग्रता, चिन्तन और अभिव्यक्ति के गुण अनिवार्य हैं। कविता केवल मनोरंजन का साधन नहीं है; वह जीवन की गहन, एकाकी अनुभूति है जो सार्वभौमिक होकर अभिव्यक्त होती है। कवि व्यक्ति, व्यवस्था और युग का गायक होता है। उसका चिन्तन सबका चिन्तन होता है। कवि के एकान्त में युग युग की हलचल रहती है। उसका सम्पूर्ण समाज प्रस्तुत रहता है। उसकी कविता में सब की संवेदना और क्रांतिदर्शिता छिपी रहती है। मिल्टन ने विश्व के प्रथम मनुष्य आदम से कहलवाया था, एकान्त कुछ एक अवसरों पर सर्वोत्कृष्ट समाज है। मिश्र जी को भी एकान्त से बहुत अनुराग है। 'मैं अकेला हूँ' शीर्षक कविता दर्शनीय है। उनकी अनुभूतियाँ एकाकीक्षण की हैं। उनकी शताधिकक्षणिकाओं को इस सन्दर्भ में देखा जा सकता है। इन अनुभूतियों में प्रकृतिक, इतिहास और एकान्त सम्बन्धी अनुभूतियाँ अभिव्यक्त हैं। उन्होंने मेरे नाम अपने एक पत्र में लिखा है — "इधर, इतने ग्रन्थ छपते जा रहे हैं, इतने मुद्रणशोधन करने पड़ रहे हैं, इतनी पुस्तकें (सम्मत्यर्थ) रखी हैं, कि लगता है, मस्तिष्क-स्फोट हो जाएगा! मैंने चुपचाप गंभीर सर्जन किया है, दौड़धूप नहीं की। जितनी विधाओं में जितने ग्रन्थ मैंने लिखे हैं, जितने शब्दों का प्रयोग किया है, उतने हिन्दी के ही नहीं, अपितु किसी भी साहित्य के सर्जक ने नहीं। दस-बीस लाख पुरस्कार राशि तो कुछ भी नहीं। आप परत-दर-परत खोलते चलें सहारा बन जाएं।

दि. 18/02/2001

दिल्ली - 110081

अभिन्न

रामप्रसाद मिश्र

मिश्र जी मेले की भीड़ से बचना चाहते हैं; भीड़ में न विवेक होता है न एकाग्रता और न पहचान-विशेष ही। इसीलिए वे गुटबन्दियों से दूर रहकर अपना कार्य करते चले आ रहे हैं। एकाग्रता में ही समग्रता आ सकती है। इस सन्दर्भ में उनके 'सेतु' कवितासंग्रह को देखा जा सकता है। (इसमें समग्रता है। एकाग्र चिन्तन और उसके निकषों की) अभिव्यक्ति सबके वश की बात नहीं है। मात्र अध्ययन और अध्यापन आज की दुनिया में प्रतिष्ठित होने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। लेखन, कथन, मत-स्थापना, उपलब्धि और देन भी आवश्यक है। कितने मूर्धन्य अध्यापक मर गये — आज उनका कोई नामलेवा नहीं रह गया। मिश्र जी ने लेखन और व्याख्यान से भी अपने को अभिव्यक्त किया है। उनके एक सौ से अधिक ग्रन्थ इसके प्रमाण हैं। उन्होंने स्वयं को जोड़कर अन्य को जोड़ा है। इस संदर्भ में उनके समान नाम मात्र के लोग मिलेंगे। उनके ऊपर लिखी गयी पुस्तकों में पत्र संस्मरण सम्बन्धी सामग्री अधिक है। बहुत कुछ उनके चिन्तन और अभिव्यक्ति की बातें छूट गयी हैं। इतिवृत्त और वर्णन बहुत काल तक नहीं चल पाते हैं। न जाने कितने रचनाकार हैं — जिनके सम्बन्ध में व्यक्तिगत रूप से कुछ ज्ञात नहीं है, पर उनके चिन्तन और अभिव्यक्ति (रचना) की धूम मची हुई है। मध्यकाल तक तो जीवनी-लेखन के प्रति रचनाकार प्रायः उदासीन मिलते हैं। अनेक अटकलें लगानी पड़ती हैं।

काव्यगंगा का उद्गम गंगोत्री से नहीं, कविहृदय से होता है। वह घूमती हुई बंगाल की खाड़ी में नहीं, बल्कि सहृदय में प्रविष्ट होती है। स्रोत यूँ ही नहीं फूट जाते; नहीं तो अकाल क्यों पड़ते, रेगिस्तान क्यों बनते? अतल जलराशि को जो कुण्ड सँजोता है — और जब उस जल राशि में उद्वेलन होता है, तो स्रोत उत्पन्न हो जाता है। कवि का हृदय ही वह जलकुण्ड है। विचारमंथन ही उद्वेलन और अभिव्यक्ति का स्रोत है। सभी पर्वत दुर्लभ कण्ठधारी नहीं होते — जिससे उनसे जलप्रपात नहीं हो पाता है, न सभी लोग कवि हो पाते हैं। कवि होना बड़ी बात है, कवि बने रहना बहुत बड़ी बात है, जैसे कुण्ड, पानी और उद्वेलन होना बड़ी बात है, पर गंगा बहाना बहुत बड़ी बात है। यह कोई भगीरथ ही कर सकता है। कविता और गंगा दोनों सर्वमंगला हैं।

मिश्र जी प्रवाही कवि नहीं हैं, न भीड़ के। वे सब को देखते हैं, पर सब में मिलते नहीं। मेले या भीड़ से निजी पहचान नहीं रह जाती है —

मेले की भीड़ में मत खोओ
ऊँची जगह खड़े होकर
सारे मेले को देखो।¹

कहीं-कहीं उनको वैराग्य उत्पन्न हो जाता है — वे व्यथित होकर कहते हैं —

कब्रिस्तान की शाम-सा मन
विधवा की साँसों-सा तन
बौद्धदर्शन-सा जीवन
कर रहा दृष्टि को उलूक-दृष्टि
लगती है शंकर-अद्वैत-सी सारी सृष्टि ²

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

मैं अकेला हूँ बिल्कुल अकेला

विधुर के प्यार-सा

विधवा की साँस-सा

व्योम-सा

ब्रह्म-सा³

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

नाटक नहीं देखता

चलचित्र भी नहीं

दूरदर्शन भी नहीं

क्योंकि

मुझे अपने आप को देखना आता है।⁴

काव्य में चिन्तन और उसकी अभिव्यक्ति होती है। वह काव्य ही चिरजीवी होता है — जिसमें सघन चिन्तन होता है। वैचारिक क्षीणता में कविता मर जाती है। हमारे प्राचीन साहित्य के अंश इसके उदाहरण हैं। जो विचारयुक्त हैं — वे आज भी स्मरण किये जाते हैं — शेष को पढ़कर भी भुला दिया जाता है। समाज, इतिहास और प्रकृति में काम की वस्तुएं

1. डॉ. रामप्रसाद मिश्र का बहुआयामी व्यक्तित्व — एक परिचय, पृ. 162

2. डॉ. रामप्रसाद मिश्र का बहुआयामी व्यक्तित्व — एक परिचय, पृ. 163

3. उपरिचय, पृ. 163

4. उपरिचय, पृ. 163

ही टिक पाती हैं। मिश्र जी की उत्तरकालीन रचनाओं में उनका चिन्तन सघन और अभिव्यक्ति सशक्त हो गयी है। उनके सभी महाकाव्य गहन चिन्तन से युक्त हैं। उनके चिन्तन गहन भावधारा से युक्त हैं।

श्री श्यामलाल शुक्ल, एम.ए. ने 'ध्यान के गान' को जीवन की चिरन्तन पिपासा को तृप्ति करने वाली एक मात्र कृति कहा है। उनके शब्दों में, "रामप्रसाद मिश्र जी ने इस कृति में 'योग जीवन' का विज्ञान और जीवन की कला की अनुभूतिपरक व्याख्या प्रस्तुत की है।"⁵ कविता विवशता, कुण्ठा, वेदना आदि की भी अभिव्यक्ति है। प्रतिभाशाली व्यक्ति यदि बाह्यतः समर्थ होता है, तो शासक बनता है। यदि वह बाह्यतः असमर्थ होता है, तो कवि बनता है —

कृष्ण यदि कृष्ण न होता, तो व्यास होता।
सीजर यदि सेनापति न होता, तो कवि होता।
वीर समुद्रगुप्त रसखान बन जाता।
नैपोलियन फ्रांस का गेटे हो सकता था।
इसलिए कविता को देखकर आती याद
उत्कृष्ट अभिनय की।
कवि मानवाकृति है
विवश विनय की
अथवा विस्फोट की।
या, किसी ओट की।⁶

प्रतिभा काव्य का एक अपरिहार्य गुण है। प्रतिभा को कार्लाइल आदि विचारक जन्मजात मानते हैं। उनके शब्दों में "प्रतिभा ईश्वर प्रदत्त उपहार है।" परन्तु डॉ. मिश्र इसको जन्मजात न मानकर संघर्षजात मानते हैं। प्रतिभा संघर्ष की ज्वाला में कुन्दन बन जाती है। प्रतिभाशाली व्यक्ति सामान्य नहीं हो सकता है —

जो नहीं कुंठाग्रस्त,
जो नहीं यौन-त्रस्त,
जो नहीं अलमस्त
जो नहीं जला हुआ,

5. डॉ. रामप्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताएं, पृ. 19

6. बौद्धिक रस, पृ. 93

जो नहीं छला हुआ,
जो नहीं गला हुआ
जो न कहीं खपा हुआ,
सोने-सा तपा हुआ,
पागल, पाखण्डी, नट,
वह नहीं प्रतिभाशाली;
सामान्यता और प्रतिभा,
धरती और आकाश।⁷

प्रतिभा दरिद्रता, कुण्ठा, अभाव आदि में पलती है। मिश्र जी ने प्रतिभा सुख का सम्बन्ध अस्वीकार किया है। अनेक प्रतिभाओं के साथ वे स्वयं भी इसके उदाहरण हैं -

जहाँ नहीं अन्तर्बाह्य
अभाव की ज्वाला,
कुण्ठा की तीक्ष्ण हाला,
दरिद्रता का पाला,
वहाँ नहीं प्रतिभा कभी।
प्रतिभा और जन्म की,
प्रतिभा और सुख की
सम्बन्ध बतलाने
वाली कहानियाँ
चण्डूखाने की गर्में!⁸

‘दृष्टि’ महाकाव्य में जिस आनन्द लोक के लिए जीवन-यात्रा कही गयी है - वह एकाग्र चिन्तन की ही अभिव्यक्ति है। एक दीर्घ और स्वस्थ पावन परम्परा का निर्वाह है। आह्लाद, चेष्टा है। मानव-कल्याण की भावना है। ‘दृष्टि’ और ‘वेदायन’ तथा ‘कल्पान्त’ इसी प्रकार के महाकाव्य हैं। इनमें सर्वाधिक ऐकान्तिक चिन्तन और उसकी अभिव्यक्ति हुई है -

ओ मेरे जीवन, तू एकान्त के कर से
अन्तर-अरुण-कर-निकर लेता जा;

7. बौद्धिक रस, पृ. 68

8. बौद्धिक रस, पृ. 69

उसके अनन्त कोष के प्रकाशमय रत्नों
को जीवन के कर में हर्षित हो देता था।⁹

इसी प्रकार अकेलेपन पर लिखा गया है —

उस विराट् हिम-घन-देवदारु-सलिल-लोक में
संगति थी, संगति थी, और मैं अकेला था,
एक एकाकी है, किन्तु एक रमण नहीं
कर सकता, मानस में अपर का खेला था।¹⁰

कवि कल्पना लोकों का सृजन करता है। उसका काल्पनिक सौन्दर्य
बड़ा आकर्षक है। कवि का मानस बड़ा उपजाऊ है। वह बहुत सोचता और
व्यक्त करता है।¹¹

कवि ने एकान्त को ही अभिव्यक्ति का उचित क्षण माना है — जहाँ
बैठकर जिन्दगी अपने को पूर्णता पर व्यक्त करती है। भीड़ में तो मात्र
कुण्ठा की चिल्लाहट होती है —

जिन्दगी कभी भी भीड़ में नहीं बोलती
भीड़ में बस उसकी कुण्ठा चिल्लाती है;
एकदम एकान्त में आँखें बन्दकर,
सब कुछ भूलकर, उसकी बात सुनी जाती है।¹²

चिन्तन, मनन और मन्थन का साहित्य में बहुत महत्व होता है। मध्य
कालीन हिन्दी कविता इसी से सम्पन्न है। इस गुण को कोई नकार नहीं
सकता है। जिस राष्ट्र का चिन्तन और मनन जितना ही ऊँचा होता है
— वह राष्ट्र उतना ही विकसित होता है। हीन सोच के साथ किसी का
भी विकास नहीं हो सकता है। पाश्चात्य साहित्य में भी चिन्तन-मनन की
प्रमुखता है। रचानाकार प्रकृत्या मनन शक्तिमय होता है। ऐसे ही रचनाकार
राष्ट्र की निधि होते हैं —

मनन का हनन राष्ट्र का हनन होता है,
मनन ही जीवन है मनन ही प्राण है ;

9. 'दृष्टि', पृ. 26

10. 'दृष्टि', पृ. 96

11. 'दृष्टि', पृ. 98

12. 'दृष्टि', पृ. 104

मनन का पुत्र अध्ययन कहलाता है

मनन-अध्ययन विहीन राष्ट्र प्रियमाण है।¹³

काव्य में अर्जन और विसर्जन का समान महत्त्व होता है। एकाग्र चिन्तन दोनों में परिष्कार करता है। इससे संग्रह और त्याग की पहचान होती है। कवि ने देश के प्राचीन साहित्य और समाज से आज तक के साहित्य और समाज को लेकर अपने काव्य में एकाग्र चिन्तन करके अपनी अभिव्यक्ति की है। इसी से उसकी कविता चिन्तनप्रधान हो गई है। प्राच्य-पाश्चात्य सभी दृष्टियों से 'पुरुषोत्तम' एक अनूठा महाकाव्य है। कवि का चिन्तन निखरकर पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत है। इसके 10वें सर्ग 'वनगमन' में राम सीता से जीवन को अभिव्यक्त करते हैं -

हाँ प्रिये, नाटक, है! विश्व-रंगमंच पर
प्रत्येक जीवन एक नाटक है, यहाँ पर भी
एक ऐसा ही अभिनय हुआ है,.....डूबे थे
दर्शक उल्लास में, मधुमती-भूमिका
रंगशाला-भूमि का अलौकिक रूप प्रस्तुत
कर रही थी, सहसा रस का प्रवाह बदला -
यवनिका टूट गिरी, नायक हुआ हतचेत।
निलिप्त दर्शक मुक्त हास में, हास में
और उल्लास निहित हुआ चिद्विलास में!¹⁴

'वेदायन' में कवि ने वैदिक चिन्तन को आधुनिकता के परिवेश में अभिव्यक्त करने का सफल प्रयास किया है। वैदिक वाङ्मय आज भी उपयोगी है। इसलिए कि इसके माध्यम से हमने घने अन्धकार में आलोक को देखा था -

वेदी थी, वेद का होना स्वाभाविक था
वेदी रसा है तो वेद उसका आकाश है
स्वाहा का नाद था, स्वगत आह्लाद था
स्वाहा स्व के परिचय का पावन प्रकाश है।¹⁵

वैदिक धर्म, कर्मकाण्ड दर्शन आदि का लक्षणा और व्यञ्जना से

13. 'दृष्टि', पृ. 169

14. पुरुषोत्तम, पृ. 118

15. वेदायन, पृ. 20

परिचय दिया गया है। अनेक शुभकामनाएं की गयी हैं परम तत्त्व का ज्ञान होने पर सारा अन्धकार या अज्ञान नष्ट हो जाता है। उस काल में सभी तत्त्वों में पूर्णता थी, सर्वत्र अलौकिकता थी।

पवन के सर-सर में, मेघ के नाद में
विहग-आह्लाद में, एक विभु गाता था
प्रकृति के धीमे और गूढ़ बोल सुन-सुन कर
द्रष्टा वहाँ पर पूर्ण स्रष्टा बन जाता था।¹⁶

ऋषि ही स्रष्टा और भोक्ता है। सिन्धु सभ्यता की महानता का वर्णन है। सिन्धु सभ्यता वैदिक सभ्यता है। कवि का चिन्तन वेदों से सबसे अधिक जुड़ा है। वेद की ऋचाएँ मानवता के यौवन का गान है। उनमें किसी प्रकार की कुण्ठा नहीं है। प्रवृत्ति की शक्तिमत्ता का उनमें गान है। कवि ने 'ऋग्वेद' में जीवन के पावन रस को देखा है। उसका कथन है कि यदि दिव्य होना है, तो 'ऋग्वेद' के मंत्रों को गाओ। मानव ने उस वैदिक समाज को एक लम्बी तपस्या से प्राप्त किया था।

अधुनातन चिन्तन-मनन से भी कवि परिचित है। विश्व के पात्रों को उसने इसीलिए अपनी कविता का विषय बनाया है। कवि का चिन्तन दीर्घ, स्वच्छ और प्रासंगिक है। सब की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

विज्ञान और वैज्ञानिक

विज्ञान आज बहुत आगे बढ़ता जा रहा है। नयी खोजें होती जा रही हैं। आधुनिक भारत के निर्माण में विज्ञान का बहुत बड़ा योगदान है। विज्ञान ने अनेक असंभवों को सम्भव बनाया है, अदृश्य को दृश्य किया है, दूर को पास किया है, वैश्विकता लाने में सहयोगी सिद्ध हुआ है। उसने आदमी और उसके कार्यों को बहुत फैलाया है, अनेक सुविधाएं दी हैं। विज्ञान की जितनी तारीफ की जाय, कम होगी, पर सब कुछ वहीं नहीं है। अनेक रहस्यों को समझने में वह असमर्थ रहा है। अध्यात्म, मन, कल्पना, सुख-दुख, मोक्ष-बन्धन, वैकुण्ठ-नरक आदि के मतलब को वह नहीं समझ सका है। ईश्वर के सम्बन्ध में बोलने की क्षमता उसमें नहीं आ सकी है। उसमें ज्ञान है, पर हृदय नहीं है। मस्तिष्क ही पर सीमित है? जीवन को उसने बहुत कुछ दिया है, पर मृत्यु के रहस्य को नहीं समझ सका। नैसर्गिकता के आनन्द को वह नहीं दे पाता है। आनन्द, मौन, प्रेम, ब्रह्म, और 'ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में वह अभी अधूरा है। मिश्र जी ने अपनी कविताओं में इस सन्दर्भ में बहुत कुछ कहा है। 'आत्मा' शीर्षक की कविता उद्धरणीय है —

अरे ओ विज्ञान! मेरे हृदय में सम्मान
किन्तु रुक जा तनिक, गा लूँ आत्मा के गान
देख लूँ आकाश
पाल लूँ विश्वास
क्षमा कर, कर लूँ समय कुछ सोम-अमृत पान।
तुझे संतत देखना रहता युगल दृग खोल
दृष्टि मीलित कर सुनूँ दो आत्मा के बोल
कहीं नहीं विरोध
उचित यह अनुरोध
एक ही तोलक रहा है सभी कुछ-को तोल।
एक ऊर्जा, एक व्यापकता, करोड़ों लोक

एक तन में रोम-वत्, देखूँ अमर आलोक
 बूँ शाश्वत तत्त्व
 तत्त्व-बलित महत्त्व
 ठहर, देखूँ शून्य में अपना चिरंतन ओक!
 तू मुझे परिचय बताए स्वयं मेरा, व्यर्थ
 और, तू संबद्ध
 साधना-सन्नद्ध

अंग तू मेरा, न बन स्वच्छन्द, कर न अनर्थ।
 झूमता है हृदय मेरा पल्लवों के संग
 हृत्तरंगों में लसित नर्तिन महान् तरंग
 व्योम मेरा लास
 क्षितिज सारे हास

मैं निरंजन और अंजन, मैं सअंग अनंग।
 बज उठी वीणा, निनादित प्राण का संगीत
 गान गूँजा, सर्ग सारा बन गया अभिनीत
 चित्र का यह लास

एकता के पास
 गीत में, संगीत में, मुझ में मिला वह मीत।
 देखता शत बिम्ब सविता के सरस आदर्श
 और उनमें देखता निज महत् का उत्कर्ष
 एक ज्योति अछोर
 एक ज्योति-हिलोर

एक चिति औ महाचिति बनती अलौकिक हर्ष।
 अए ओ विज्ञान! करता सतत अनसंधान
 चल, मचल, हलचल उठा, पर कर न दुर्बल प्राण
 प्राण तेरी शक्ति
 प्राण तेरी भक्ति
 प्राण यदि दुर्बल हुए तो कहाँ तेरा त्राण?
 आत्मा! विज्ञान तेरा एक रूप महान्
 कर रहा तेरे अजिर मैं गहन अनुसंधान
 तू अनंत, अछोर
 एक शाश्वत भोर

बोल तेरे चाहता सुनना सुधी दे कान।

अए युग! तू विशद शाश्वत देह का लघु लोम

गर्व कर, है बहुत लघु यह व्योम, शत-शत व्योम

एक चिर आनन्द

एक चिर स्वच्छन्द

ज्वलित जेहोवा, ललित आहोम, केवल ओ३म!¹

यदि भारत धर्म प्रधान है, तो यूरोप विज्ञानप्रधान। पूर्ण सुख दोनों के समीकरण से ही मिल सकता है। धर्म को छोड़कर विज्ञान विनाश ही करेगा। शक्ति का प्राप्त हो जाना एक उपलब्धि है, परन्तु उसका सदुपयोग बहुत बड़ी उपलब्धि है। विज्ञान के दुरुपयोग के अनेक उदाहरण सामने आ चुके हैं। विज्ञान में विवेक नहीं होता है। उसका उपयोग पशुता और देवत्व दोनों के लिए हो सकता है। वह तो बिना सवार का घोड़ा है, बिना महावत का हाथी है। कवि ने विज्ञान के दोनों पक्षों को प्रस्तुत किया है, व्यंग्य भी किया है -

विज्ञान, तेरे पास

बहुत आस-विश्वास,

पर यंत्रों ने

मानव के श्रम को छीन

उसे आलसी कर डाला,

मिला दी कृत्रिमता

की हलाहल-हाला;

प्रकृति के रहस्यों को

खोजते हुए आज

प्रकृति से दूर हो बैठा,

अपने आप में ऐंठा!

जिन्दगी की कैद में इन्सानियत तड़प रही!²

भारतीय विज्ञान की एक स्वस्थ परम्परा रही है, परन्तु उस पर धर्म का नियंत्रण था। महाशक्तियों के प्रयोग की आधार संहिताएं बनी थीं। सृष्टि और प्रलय कारक शक्तियाँ भी थीं, परन्तु सब को सीमाओं में बाँधा गया था। भारतीय खोजों को देखा जा सकता है -

1. डॉ. रामप्रसाद मिश्र का बहुआयामी व्यक्तित्व - एक परिचय पृ. 164-165

2. देश, दिल्ली और अहम पृ. 62

अश्विद्वय, ऋभुगण, मय, आर्यभट्ट वैज्ञानिक
हुए विश्वकर्मा, भास्कर जैसे गुणखानिक
रहे वराहमिहिर से, सुय्य, रमण से माणिक
शून्य, दशमलव और गणित हैं हिन्दूस्थानिक।³

कवि भारतीयता से ओत-प्रोत है। वह रामभक्ति में डूबा है। 'मुझसे मेरा राम न छीनो शीर्षक उसकी कविता को देखा जा सकता है -

ओ विज्ञान! यांत्रिकी! स्वागत
ओ वाणिज्य! सांख्यिकी! स्वागत
उन्नत हो नव विश्व बनाओ
दैन्य और दरिद्र्य मिटाओ
मानव रोगमुक्त हो जाए
जीवन शोकमुक्त हो जाए
किन्तु उमग जो कीर्तन गाते
अन्तर में ऋत-अमृत पाते
उन्हें न रोको, मूर्ख न मानो
उन्हें न कोरा भावुक जानो
कहो, "भावना-सर के मीनों।"
मुझसे मेरा राम न छीनों,⁴

कवि प्रगतिशील और परम्परावादी दोनों है। परम्परा बन्धन नहीं, व्यवस्था है। मौलिकता और परम्परा का आधुनिक रूप ही अगला विकास है। वैसे तो आज के युग को हम अनेक संज्ञाएं दे सकते हैं - विज्ञान युग, प्लास्टिक युग, अणुयुग, कम्प्यूटर युग, लघुविश्वयुग एवं लघुमानवयुग। नये-नये आविष्कारों और सफलताओं से आज का मानव आश्चर्य-विमूढ़ हो गया है। वह दिन दूर नहीं जब केवल हृदय ही नहीं बल्कि मानव के शरीर का प्रत्येक अवयव प्लास्टिक के कृत्रिम अवयव से बदला जा सकेगा। परन्तु मानव मन का क्या होगा? उसकी संवेदनाओं का क्या होगा? इस ओर हमारे वैज्ञानिकों का ध्यान नहीं जा रहा है। चेतन, अचेतन और अवचेतन मन की खोज पश्चिम की दृष्टि से नई है; हमारे प्रचीन शास्त्रों के ज्ञाताओं की दृष्टि से नहीं। मनोचिकित्सकों की संख्या में वृद्धि हो रही है। अर्थात् मन के रोगों में भी वृद्धि हो रही है। पश्चिमी देशों में मनोचिकित्सक स्वयं

3. नेताचरित्रम्, पृ. 125

4. जय भारत जय भारत प्रहरी, कृषक श्रमिक जय, पृ. 18

आत्महत्या करने लगे है। जहाँ जितना ही भौतिक विकास हो रहा है वहाँ उतना ही विघटन भी हो रहा है। यह संत्रास शोषण, युद्धों की विभीषिकाओं, भौतिक विकास से हो रहा है। मानवमूल्य-विघटन, विसंगति तथा भ्रष्टाचार तथा मानव को तीव्रता से भक्षण करने वाले रोगों, कैंसर और एड्स का युग है। आज मानव ही नहीं, बल्कि प्राणीमात्र के लिए संकट उत्पन्न हो गया है। एक ओर मानव आकाशी लोकों की खोज कर रहा है, तो दूसरी ओर जड़ भी होता जा रहा है, संवेदनशून्य होता जा रहा है। आज इंसान की कमी होती जा रही है। नैतिकता, चारित्रिकता, सहिष्णुता, करुणा, दया, क्षमा, परोपकार आदि गुणों का हास होता जा रहा है। इस दशा में सदसाहित्य की बहुत अधिक आवश्यकता पड़ती है। वह मानव के दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है। वह वास्वविकता को देखने की दृष्टि देता है। जीवन और जगत् की समस्याओं को देश, जाति, काल आदि के प्रवाहों से ऊपर उठकर देखने और समझने की सीख देता है।

कवि ने 'दृष्टि' महाकाव्य के विज्ञानलोक में वैज्ञानिकों पर विचार किया है। वैज्ञानिक सत्य — साधक होते हैं। वैज्ञानिक होना सबके बूते की बात नहीं है। वह अनेक गूढ़ तथ्यों को खोजता है। अदृश्य शक्तियों को व्यवहार में लाता है। वह सतत् सत्य का खोजी होता है। अपनी खोज में वह सदा व्यस्त रहता है। नये तथ्य की खोज में उसकी बुद्धि लीन रहती है। कवि ने वैज्ञानिक की परिभाषा इस प्रकार दी है —

प्रकृति-कृति-योग योगी वैज्ञानिक कहलाता,

श्रेय का प्रेय से नाता कराता है;

प्रकृति निज भेद उसी के तप से तुष्ट हो

खोलती, उसको वह कृति से लुभाता है।⁵

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

वैज्ञानिक आवेग को नहीं मानता,

वह केवल प्रत्यक्ष सत्य पहचानता;

उसका तप रुक्ष से रस को निकालता,

सत्य की कृतियों को वह ही तो जानता।

कल्पना के पथ पर चलकर सत्य के लक्ष्य तक पहुँचने में भी वह रुचि रखता आया है; किन्तु स्थूल अथवा सूक्ष्म सत्य का साधक है वह, उसका ब्रह्म सत्य ही है और माया भी। सत्य की महत्ता विज्ञान में सबसे

अधिक है। हमारे ऋषि भी वैज्ञानिक थे, जैसे अंगिरा जिन्होंने काष्ठ-तूल अथवा तृण-घर्षण-विधि से अग्नि का अविष्कार किया था। इसी प्रकार हमारे ऋषियों-वैज्ञानिक ऋषियों ने बहुत-कुछ दिया है -

भारतीय चिकित्सा प्रणाली के आदि पुरुष

ऋग्वेद - वार्णित अश्विद्वय तथा ऋभुगण थे

भारतीय चिकित्सा शास्त्र अथर्ववेद -

बद्धमूल, ऋषि - आश्रय आरोग्य - आयण थे।⁶

आयुर्वेद-प्रणाली तथा चिकित्सा शास्त्र के अनेक आचार्य हुए हैं। उनके गुणों से मनुव को अनेक लाभ मिलते रहे हैं। भारतीय आयुर्वेद के अनुपम ग्रन्थकार महिमामय भिषगाचार्य चरक हुए। उन्होंने अनेक रसों (रसायनों) का निर्माण किया। महान् शल्य-चिकित्सक सुश्रुत और कत्यायन थे।

हमारे इतिहास का स्वर्णकाल गुप्तकाल भी इस सन्दर्भ में बड़ा सम्पन्न रहा है। गणित और फलित ज्योतिष के महान् आचार्य हुए, जैसे आर्यभट्ट, भस्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त तथा वराहमिहिर। आर्यभट्ट का कार्य न्यूटन से कम नहीं है। सबसे पहले उन्होंने पृथ्वी को गोलाकार (वृताकार) सिद्ध किया। इसके साथ उन्होंने पृथ्वी के आकर्षण की खोज भी की है। भाषा-विज्ञान, संगीत, कला, धर्म, दर्शन, राजनीति, युद्ध आदि के अनेक पुरोधा स्मरणीय हैं, उन्हीं में अमीर खुसरो भी हैं। अंकगणित भारत से चली; अरब होती हुई पाश्चात्य जगत् तक गई। संवत्सर तथा शून्य की खोज हमने की। आज सब उल्टा हो गया है। हम अपनी पुरानी उपलब्धियों को न देखकर पश्चिम के अनुकरण में लगे हुए हैं। क्या कभी भारत में वैज्ञानिक युग की पुनरावृत्ति होगी? यदि होगी तो अति सुन्दर होगा, भारत पुनः विश्वगुरु बनेगा।

विश्व के महान् आधुनिक वनस्पतिशास्त्रवेत्ता जगदीश चन्द्र बोस ने जड़ - चेतन की संवेदना को एक-सा प्रमाणित कर दिया है। वनस्पतियों प्राणशक्ति की खोज की। वे कितने मौलिक थे! बेतार के तार (वायरलेस) का अविष्कार उन्होंने किया किन्तु साधनों के अभाव में श्रेय मारकोनी ले गए। अभिनव भारत के महान् रसायन शास्त्री प्रफुल्ल चन्द्र राय, भौतिक शास्त्री चन्द्रशेखर वेंकट रमण, अणु वैज्ञानिक होमी जहाँगीर भाभा आदि प्रणम्य हैं। सब की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। आज राजनीति की छाया में वैज्ञानिक प्रतिभाएँ भी उपेक्षित हैं। हर्ष है कि प्रक्षेपण वैज्ञानिक डॉ. अब्दुल कलाम को राष्ट्रपति बनाया गया है। ज्ञान का क्षेत्र मुक्त होना चाहिए -

राजनीति की कृत्रिमता-विवशता ने

तुम्हें बहुत ठीक-ठीक नहीं पहचाना था;

किन्तु महत् राष्ट्र ने सारे प्रयासों का

मूल्य ऐतिहासिक और श्रेष्ठ ही माना था।⁷

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु करे, विज्ञान राजनीति - मुक्त हो,

प्रभु करे, भारत में मौलिक विज्ञान हो;

प्रभु करे, विज्ञान भाव से प्रेरित हो,

प्रभु करे, विज्ञान मानवता-तान हो।⁸

पाश्चात्य वैज्ञानिकों को भी कवि ने प्रणाम किया है।⁹ पश्चिम विज्ञान के प्रथम व्यक्ति रेखागणित के जनक यूक्लिड को उसने ससम्मान याद किया है। विश्व के सबसे बड़े वैज्ञानिक चक्रकार थे; यंत्र सम्राट है; विज्ञान चक्र का सबसे अधिक ऋणी है; वैज्ञानिक यात्री की चक्र ही बाट है। वस्त्र और कृषि विज्ञान के जनक भी महान् वैज्ञानिक थे। कवि मिश्र ने सुमेरिया के वैज्ञानिक को, नाविकों और व्यावसायिकों की देन को स्वीकार किया है। विज्ञान का कोई अंतिम लक्ष्य नहीं होता है। आर्किमिडीज सापेक्षिक घनत्व के उद्घाटक थे। गैलीलियो कितना महान् है कि उसने खोज में अपना सब कुछ खो दिया था। आइज़क न्यूटन ने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति की खोज की। वाष्प शक्ति के द्रष्टा थे जेम्सवाट। उन्हीं के विकासक हुए स्टीवेंसन और रोबर्ट फुल्टन (वाष्प पोत के आविष्कर्ता)। विश्व के महान् वैज्ञानिक फैराडे थे उन्होंने प्रकाश को शक्ति-रूप में बदला। वह ज्योति सब में है। टॉमस अल्वा एडिसन और मार्कोनी महान् आविष्कारक थे। सब अपने-अपने क्षेत्रों में कार्यरत थे; व्यावसायी नहीं थे। इसी से अपनी कुर्बानी देकर वैज्ञानिकों ने विश्व को अमरदान दिये है। ओटो लिलिअंथल और राइट-बन्धु (वायुयान) की भी महान देन है। हिप्पोक्रीटीज से लुई पाश्चुर इत्यादि तक चिकित्सा-वैज्ञानिकों ने जीवन को गति दी है। जीवन ही तो सब का आधार है। कवि ने वैज्ञानिकों की देन के लिए बार-बार प्रणाम किया है। कविता को यहाँ व्यापक रूप मिला है इसमें सब-कुछ है। अल्बर्ट आइन्स्टाइन विज्ञान के सार या अवतार थे। परन्तु दुःख इस बात का है कि आज राजनीति

7. दृष्टि, पृ. 184

8. दृष्टि, पृ. 185

9. दृष्टि, विज्ञान लोक-2

विज्ञान पर शासन कर रही है। उसने मानवता को दास बना डाला है। सबकी हस्ती पर सत्ता की हैसियत हावी है। इसी से विज्ञान की शक्तियों का भी दुरुपयोग हो रहा है। सत्ता और सम्पदा के लोभ ने सब उलट पलट दिया है —

सम्प्रति विज्ञान-युग विश्व में प्रचलित है,
ऐसा कहा जाता, किन्तु इसमें क्या तथ्य है?
राजनीति विज्ञान पर शासन करती है,
उसका कथ्य बन जाता शासन का कथ्य है।¹⁰

राजनीति विज्ञान पर सदैव अन्याय करती आ रही है। न जाने कितने वैज्ञानिकों को इसने नष्ट कर दिया है अथवा उनके आविष्कारों का दुरुपयोग किया है। वैज्ञानिक सदैव अपनी खोज ज्ञान, प्रयोग, रक्षा और मंगल के लिए करता है। उसके उद्देश्य सदैव धनात्मक या रचनात्मक होते हैं। परन्तु राजनीति में उनका प्रयोग किसी रूप में भी हो सकता है। इस सन्दर्भ में कवि के विचार दर्शनीय है —

अए राजनीति, शुद्ध आदिम-बल-मूल पर
कितने और कैसे इन्द्रजाल-फल लाती है;
विभ्रम उपजाना ही तेरी महानता,
शान्ति-शान्ति रटते हुए युद्ध करवाती है!¹¹

आज राजनीति का कोई चरित्र नहीं रह गया है। वह अपने लिए कुछ भी कर सकती है। अणुबम-निर्माता डॉक्टर ओपेनहाइमर को कवि दुःखी देखता है; इसलिए कि उनकी खोजी हुई शक्ति का दुरुपयोग हो चुका है। जीवन को खपाकर खोज करता वैज्ञानिक है और उसका उपयोग राजनीति, कूटनीति अपने स्वार्थ के लिए करती है। हिराशिमा-नागासाकी अणु-बम-विनाश के लक्ष्य बने और अभूतपूर्व नरसंहार हुआ। वह दिन कितना भीषण था, पराजय का दिवस था, उन दिनों अणु बम-निर्माता वैज्ञानिक पर कैसी बीती थी? इस विनाश को कोई अच्छा नहीं कह सकता है। यह विज्ञान का दुरुपयोग है विज्ञान मानवता कब सीखेगा? कब स्वाभिमानी होगा? कोई बता सकता है?

10. दृष्टि, पृ. 196

11. दृष्टि, पृ. 196

और इस 'बीती' बिना मानवता रीती है,
मानवता रीती रही तो सब ही व्यर्थ हैं;
आह विज्ञान, स्वाभिमान कब सीखेगा,
आह रिक्त-युगता का क्या कोई अर्थ है।¹²

इधर के अमरीका और ईराक के संघर्ष ने विश्व को नयी सीख दी है। आज का आतंकवाद विज्ञान का दुरुपयोग कर रहा है। विज्ञान के श्रेय को कवि ने स्वीकार किया है, परन्तु उसकी कमियों को भी स्वीकार किया है। उसने सुधार के लिए कहा है -

विज्ञान, निज प्रभुक्त-अभिधान धार ले,
विज्ञान, चिरता से निज को निखार ले;
विज्ञान, युग को निज अंक में दुलार ले,
विज्ञान, सीमाएं तोड़ जय - हार ले।¹³

विज्ञान को स्वावलम्बी होने की आवश्यकता है। वैज्ञानिक को राष्ट्र को अपनी खोज सशर्त समर्पित करनी चाहिए कोई-न-कोई अनुबन्ध होना चाहिए नहीं तो जिस दिन महाशक्तियों का संघर्ष हो जायेगा उस दिन विश्व नष्टप्रायः हो जायेगा। विस्फोट से वही देश नष्ट नहीं होता जिस पर बम वर्षाया जाता है, बल्कि पड़ोसी देश भी कुप्रभावित होंगे महायुद्धों के कुपरिणाम प्रायः सम्पूर्ण प्राणी जगत् झेलता रहेगा; कवि के सुझाव दर्शनीय हैं -

विज्ञान, अपने में आत्मबल ले आ तू,
विज्ञान, अपने में जग का फल ले आ तू;
विज्ञान, समस्या-भव का हल ले आ तू;
विज्ञान, शक्तिदहन, गंगाजल ले आ तू!
विज्ञान, जीवन में व्याप्ति होकर छा जा,
विज्ञान, शासित मत बन, हो जा राजा;
विज्ञान, नीति को गले लगकर गा जा,
विज्ञान, ऐसा बन कला को भी भा जा!¹⁴

12. दृष्टि, पृ. 197

13. दृष्टि, पृ. 198

14. दृष्टि, पृ. 198

वैज्ञानिक इसी कारण युग-नायक नहीं हो सके, क्योंकि राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसा और मुहम्मद जैसा स्वतंत्र रूप से विकास और उद्धार का कार्य नहीं कर सके। विज्ञान के दुरुपयोग पर कोई पाबन्दी नहीं है -

किन्तु आज वैज्ञानिक एव विकसित युग में
प्राचीन के अपने छोटे-छोटे संसार

भुला देने पर सत्य आंशिक रह जाएगा

इन सभी ने किया विकास और उद्धार।

कृष्ण का आत्मवाद-निष्काम कर्मयोग

सार्वभौम दर्शन, बुद्ध का अहिंसा-विचार

शांति का प्रेरक, ईसा की क्षमा मानवीय

मुहम्मद का विश्वास पाता अतुल विस्तार।¹⁵

इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि यदि विज्ञान अध्यात्म और मानवता से जुड़ जाये तो वह बहुत सार्थक होगा तथा वैज्ञानिक परम पूज्य हो जायेगे। अभी तक जो देखा और भोगा गया उससे परिणाम यही आता है कि विज्ञान और वैज्ञानिक अभी पूर्ण नहीं हो सके हैं। इनको योग की प्राप्ति तो हो गयी है, पर क्षेम की नहीं।

अध्याय 16

कलापक्ष — भाषा, छन्द, अलंकार, काव्यरूप और शैली

कविता के भाव और कला दोनों पक्षों का अपना-अपना महत्त्व है। इनको किसी कवि या समीक्षक ने नकारा नहीं है। इतना अवश्य है कि किसी ने भाव पक्ष को प्रथम (प्रधान) और कला पक्ष को द्वितीय (गौण) स्थान पर माना है, तो किसी ने ठीक इसके विपरीत। लोक में दोनों तरह के लोगों की पर्याप्त संख्या मिलती है। हिन्दी कविता का भक्तिकाल भाव प्रधान है, तो शृंगारकाल कला प्रधान। दोनों में वस्तुएँ हैं, पर स्थान बदलकर। भक्त भी कला पक्ष के ज्ञाता और पक्षधर थे। दोनों में तुलना करने पर अभी तक अधिकांश काव्यमर्मज्ञों ने भाव पक्ष को प्रधान माना है। इसी आधार पर हिन्दी कविता का स्वर्णकाल भक्तिकाल ही कहा जाता है। भाव पक्ष रस पक्ष ही है। इस पर पीछे विचार हो चुका है। यहाँ कला पक्ष पर ही विचार केन्द्रित है। कवि राम प्रसाद मिश्र की कविताओं में दोनों पक्ष समाहित हैं।

कलापक्ष के मूल घटक हैं — भाषा, छन्द, अलंकार, काव्य रूप और शैली। मिश्र जी के काव्य में इनकी सम्पन्नता है। “डॉ. रामप्रसाद मिश्र जी भी अपनी रचनाओं को प्रकाशित करने के पक्ष में नहीं थे। किन्तु एक समय आयेगा जब उनके ‘पुरुषोत्तम’ और ‘दृष्टि’ नाम के महाकाव्य और ‘ययाति’ नाम का खण्डकाव्य तथा अन्य रचनाएं स्थायी साहित्य की सीमा स्पर्श करने में सफल होंगी। मैं स्वयं रामप्रसाद मिश्र जी की रचनाओं का प्रशंसक हूँ और विश्वास करता हूँ कि उनकी रचनाओं से न केवल हिन्दी साहित्य की वरन् भारतीय साहित्य की श्रीवृद्धि होगी।”¹ कवि के कला पक्ष पर विचार करना वैज्ञानिक होगा।

1. (स्व.) पद्मभूषण डॉ. रामकुमार वर्मा

भाषा

भाषा अभिव्यक्ति और ग्रहण का अनिवार्य साधन होती है। कविता के दो बल मुख्य रूप से होते हैं — शब्द और अर्थ। बिना इनके ज्ञान और समन्वय रीति को समझे कविता नहीं हो सकती है। कविता मात्र मन की भड़ास नहीं है। सबके मन में भाव होते हैं, पर उनको व्यक्त करने की कला नाम मात्र के लोगों में होती है। वही नाम मात्र के लोग रचनाकार होते हैं। कवि, कथाकार तथा अन्य विधाओं में वे अपने भावों को व्यक्त करते हैं। मिश्र जी ने शब्द और अर्थ को ढंग से पहचाना है। शब्दों का उन्होंने सटीक उपयोग किया है। वाक्यवक्रता, मुहावरे की सजावट, अलंकारों की चमक-दमक, बिम्ब, प्रतीक और मिथक प्रयोग के चक्कर में न पड़कर, उन्होंने शब्दों को विशेष रूप से पकड़ा है। शब्द की सभी कोटियों को उन्होंने प्रयोग में लाने का सफल प्रयोग किया है। "डॉ. राम प्रसाद मिश्र की लम्बी कविताओं में 'इल और इला' तथा 'तब, अब और आगे' काव्यात्मक चित्रण की दृष्टि से प्रभावशाली लगीं। उनकी दृष्टि और चेतना से अलगाव महसूस करते हुए भी मैं इन कविताओं को काफी दूर तक पसन्द कर सका तो इसीलिए इनमें प्रकृति और आगे की भाषा पारम्परिक होती हुई भी वेगवान है और छन्द में प्रभावशाली गति है।"²

कवि ने मात्र खड़ी बोली का काव्यभाषा के रूप में उपयोग किया है। भाषा परिनिष्ठित एवं व्यावहारिक आधुनिक हिन्दी है। प्रायः भाषा सरल और स्पष्ट है। संकेत, व्यञ्जना और दार्शनिक विवेचन में भाषा कुछ दुरुह अवश्य हो गयी है। भाषा में प्रसाद गुण की अधिकता है। इतिवृत्त और वर्णन भी खूब हैं। प्रतीकात्मक और बिम्बात्मक भाषा भी है। भाषा भावों को व्यक्त करने में सर्वथा समर्थ है। कवि ने तत्सम, तद्भव, देशज, और विदेशी शब्दावली का खूब उपयोग किया है। व्यावहारिक उर्दू (फारसी-तुर्की-अरबी) और अंग्रेजी के शब्दों को भी कवि ने ले लिया है। भाषा परिष्कृत और प्राञ्जल है जिसमें संस्कृत की शब्दावली अधिक है। कवि अपने उच्च मानक से नीचे नहीं उतरना चाहता उसकी वीषयानुमोदिनी भाषा अपना विशेष महत्त्व रखती है। संस्कृतनिष्ठ भाषा के साथ अंग्रेजी, और उर्दू के भी व्यावहारिक पद आ गये हैं। कवि की स्वाभाविक भाषा का एक उदाहरण दर्शनीय है—

2. डॉ. रामप्रसाद मिश्र का बहुआयामी व्यक्तित्व — एक परिचय (डॉ. रामदरश मिश्र का लेख), पृ. 84

“कहाँ आवास दूँ?
 नयनों के आर्द्रता है
 चित्र कहीं धुले नहीं
 हृदय में ज्वाला है,
 चित्र कहीं जले नहीं!
 मस्तक में आँधी है
 चित्र कहीं उड़े नहीं!
 कहाँ आवास दूँ?”³

स्वाभाविक भाषा के साथ उन्होंने उर्दू और अंग्रेजी के शब्द को भी लिया है —

लागत में कुछ नया बढ़ाव
 अक्ल में कुछ नया खिंचाव
 शक्ल में कुछ नया तनाव
 कुछ नये झिटके
 कुछ नये लटके
 कुछ नयी नग्नता
 कुछ नयी भग्नता
 नयी फिल्म!⁴

उपर्युक्त कविता में अक्ल, लागत, और शक्ल उर्दू तथा फिल्म अंग्रेजी शब्द हैं। भाषा से व्यक्ति की पहचान बनती है। कवि ने सहज भाषा का प्रयोग अधिक किया है। उससे वे भावों को सहज रूप में व्यक्त कर देते हैं —

पहली तारीख़ सचमुच पहली है, उस दिन
 वेतन मिल जाता है।
 उस दिन पहली तारीख़
 को बैंक से निकाला
 तो काव्यानुभूति विहवल करने लगी।
 “चम्पा सौरभ सा-तन
 शरद ज्योत्स्ना सा-मन

3. बौद्धिकरस, पृ. 18

4. सेतु, (नयी फिल्म), पृ. 19

हंस-ख्याति सा-जीवन
सुन्दरी
सहसा एक 'माताजी' ने
पूछा
तिहाड़ को कौन-सी बस जाती है?

यहाँ विलक्षण भाव-संधि है। चम्पा, सौरभ, शरद-ज्योत्स्ना, हंस-ख्याति आदि तथा "तिहाड़ को कौन बस जाती है?" की यथार्थ स्थिति दर्शनीय है। कवि की भाषा प्रसंगानुकूल और बोलचाल की है। "कविवर श्रीमिश्र जी अपने कथ्य को पाठकों के अन्तस् में ज्यों-का-त्यों उतार देने में पूर्णतया समर्थ हैं। भावानुकूल भाषा का प्रयोग तो प्रस्तुत कृति की प्रमुख विशेषता है। निश्चय ही यहाँ भाषा के पीछे भाव नहीं, अपितु भावों के पीछे भाषा चलती है, जो एक सच्चे और अच्छे कवि की पहचान है। करुण रस के परिपाक में भी लघुता नहीं है। कहीं-कहीं तो बलात् आँसुओं को रोकना पड़ता है। व्यष्टि के दर्पण में समष्टि का सम्यक् चित्र प्रस्तुत करते चलना प्रौढतम लेखनी का प्रमाण है। छोटे-से काव्य ग्रंथ में विचारों और भावों का लहराता हुआ सागर देखते ही बनता है। पुरातन गाथाओं से लेकर आधुनिक समाज तक की चर्चा करती हुई, संस्कृत के उत्कृष्ट छन्दाशों से लेकर सामान्य जनजीवन में, घुलीमिली लोकोक्तियों को आत्मसात् करती हुई 'स्वर्गता' निश्चय ही एक विलक्षण कृति है।⁵

'नेताचरित्रम्' में शब्दों का चयन और वर्ण्य विन्यास नितान्त उच्च कोटि का हुआ है, जिससे रचना मात्र विद्वत् समाज की वस्तु बनकर रह गयी है। इस व्यंग्य रचना का आनन्द जनसाधारण को उपलब्ध नहीं हो सकेगा।⁶ कृति को पढ़ने से यह आरोप व्यावहारिक नहीं बनाता है। इसका व्यंग्य सरल और बोधगम्य है। कवि ने हिन्दी को भारतीयता की दृष्टि से देखा है। उर्दू के संघर्ष से दूर करके संस्कृति की पावन रसना कहा है—

उर्दूबाज़ी और ग़ज़लबाज़ी पहचानो
उर्दू राजनीति से अब लड़ने की ठानो
कालातीत दासता के फन्दों को जानो
भाषा को संस्कृति की पावन रसना मानो।⁷

5. 'स्वर्गता' की समीक्षा से, समीक्षक — गोमती प्रसाद मिश्र 'अनिल'

6. समीक्षक एस. के. शुक्ला

7. नेताचरित्रम्, पृ. 120

‘सार्वभौम’ संग्रह की पेट, अजगर आदि कविताएं अर्थ की गहराई रखती हैं। शब्द साधारण हैं, पर व्यञ्जना गूढ़ है। व्यक्ति और समाज की दशा और दिशा का इनसे ज्ञान हो जाता है। इसी प्रकार प्रायः प्रयुक्त पाश्चात्य शब्दावली से भी आज की भाषा-दशा का ज्ञान हो जाता है। कुछ शब्द उद्धरणीय हैं — इम्पाला कार, फुट, क्विंटल, गॉउन, मैक्सी-कम-गॉउन, स्लीपर, सैण्डल, ब्रैजियर, क्रीम, पॉउडर, स्नो, रुज़ फर्स्ट, लॉटरी, टी.वी., फ्रिज, फैंक्ट्री, बस-स्टैण्ड, रेलवे स्टेशन, मिसिंग लिंक, पेनीलोपी, फेनी ब्रॉउन, नोटिस, मोनालीसा, हेलेन, हैरियट, ओडिसियस, कीट्स, दान्ते, बिंची, पेरिस, होमर, इलियड, हेक्टर, एकिलीज।

यत्र-तत्र सपाटबयानी का प्रयोग अधिक हो गया है। कहीं-कहीं ऐसा ज्ञात होता है कि इन छोटी-छोटी कई पंक्तियों के स्थान पर गद्य की कुछ पंक्तियाँ ही कथ्य के लिए पर्याप्त होती। कहीं भाषा न संस्कृत रह गयी है न हिन्दी (यद्यपि यह कहावत है) —

शहर बसन्ते देवानाम्

गवही-गाँव भूतानाम्।⁸

इसी प्रकार प्रभावानुकूल बनाने के लिए कुछ शब्द रूप बिगड़ भी गये हैं। पंजाबी की हिन्दी में ढूँसा-ढूँसी हो गयी है। बाशशाओं, इत्थें, भैणों आदि। लम्बे-लम्बे अनेक संवाद चलाये गये हैं जिससे नाटकीयता बढ़ गयी है। कुछ तो बहुत रोचक और प्रासांगिक हैं। नारों की भाषा हल्की हो गयी है। सामासिकता, लक्षणा और व्यञ्जना की कमी यत्र-तत्र खलती है। परन्तु कवि की संस्कृतनिष्ठ शब्दावली बहुत ढंग से प्रयुक्त है। दूसरी और सामान्य शब्दावली है। दोनों में कवि सफल है। ‘दृष्टि’ काव्य की भाषा-संरचना अति शालीन और सरस है। सुरुचिपूर्ण तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया गया है जिससे पूरे काव्य में माधुर्यगुण का समावेश सहज रूप में हो गया है। अनेक संज्ञा, विशेषण और संबोधन तथा शब्दों की कलात्मक आवृत्ति से भी भाषा में सरसता, मधुरता और मोहकता आ गई है। कहीं-कहीं विरोधाभास भी है पर सर्वत्र सजीवता है। कुछ उदाहरण दर्शनीय है —

1. लक्ष्य भी लक्ष्य है, अलक्ष्य भी लक्ष्य है
मौन भी गान है, अमौन भी गान है।

2. गाया भी अच्छा, अनगाया भी अच्छा है।
सृजन निर्माण है, सृजन ही ध्वंस हैं।
3. हे पावन रूप, चिर भाव की काया हो।
4. उज्ज्वल धरा भी रहे, उज्ज्वल आकाश हो
उज्ज्वल तन, उज्ज्वल मन, उज्ज्वल प्राण।

मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग तत्समता के आकर्षण के कारण नाम मात्र का हो सका है, क्योंकि ये आम भाषा से आते हैं। सूक्तियों के सुन्दर प्रयोग हैं —

मनन का हनन राष्ट्र का हनन होता है। 'दृष्टि', पृ.,-179

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

स्वास्थ्य बिना स्वयं का अनुशीलन सम्भव नहीं। 'दृष्टि' पृ., 183

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

स्वयं में खोने का अर्थ सब पाना है। 'दृष्टि' पृ.,-189

“कल्पना कला एवं कविता का आत्मा है” जिससे भरपूर सहयोग लिया गया है। अलंकार से डरा नहीं गया, क्योंकि वह कविता का शाश्वत चित्र है, वस्तुतः भी कविता एवं अलंकार अद्विनारीश्वर हैं, तत्त्वतः भी। भाषा का एक स्तर रखा गया है, क्योंकि बाजारी भाषा कविता का आदर्श कभी और कहीं नहीं रही, न रहेगी, न उसे ऐसा रहना ही चाहिए। साहित्य भाषा की प्रगति का प्रमाण है, लकीर का फकीर नहीं, किसी का लगू-भगू नहीं।⁹ इसी प्रकार ‘पुरुषोत्तम’ महाकाव्य को संतुलित, शुद्ध, व्यावहारिक और संस्कृतनिष्ठ भाषा में प्रस्तुत किया गया है। भाषिक सौन्दर्य सराहनीय है। कवि के कुछ सुन्दर प्रयोग भी हैं — ऋष्यमुखा, ऋष्यमूक पद बना है — इसका आशय है — जिसकी छवि ऋषि को भी मंत्रमुग्ध कर देती है। ‘मुहम्मद’ खण्ड काव्य की भाषा में धार्मिक इस्लामिक अरबी शब्दावली का प्रयोग है। यह प्रयोग मौलिकता की ओर ले जाता है। ‘कल्पान्त’ में देशी-विदेशी शिल्प-विधान हैं।

छन्द

कवि ने नये-पुराने छन्दों का उपयोग किया है। बिना छन्द की भी उसकी अनेक रचनाएँ हैं। चार चरणों के छन्दों का प्रयोग उसने सर्वाधिक

9. 'दृष्टि' (भूमिका) डॉ. रामप्रसाद मिश्र, पृ. 2

किया है। 'तब, अब और आगे' जीवन-दर्शन की सुन्दर लम्बी कविता है, जो रूप-माला छन्द के 153 छन्दों में लिखी गयी है। चार चरणों वाले 'रूपमाला छन्द' के द्वितीय और चतुर्थ चरण में तुकान्तता होती है। इनमें एक सहज नादसौन्दर्य पाया जाता है। आल्हा छन्द में 'नेताचरित्रम्' में नेता का उद्भव और विकास दिखाया गया है। 'दृष्टि' महाकाव्य में आद्योपान्त एक ही छन्द का प्रयोग है। यदि छन्द वैविध्य होता तो पाठकों के लिए और आकर्षक होता। सीधे और सपाट छन्द हैं। कवि छन्दों का आग्रही नहीं है। आज के कवियों में प्रायः छन्दों के प्रति आग्रह नहीं है। अब छन्दविहीन तथा अतुकान्त कविताएं स्थापित हो चुकी हैं। कवि बहुत ही छंदो तक भी गया है तथा प्रगजित और प्रयोग शील भी है। उसने अपनी राहों को स्वयं सँवारा है।

अलंकार

अलंकार काव्य के शोभाकारक धर्म हैं, न कि अनिवार्य। यह बात दूसरी है कि अलंकारवादी आचार्यों ने अलंकार को ही काव्य की आत्मा कहा है। कवि ने इनके लिए कोई अलग से प्रयास नहीं किया है; जो स्वतः आ गये हैं, वे वन्दनीय हैं। न राग है न द्वेष। इसके उपरान्त भी पर्याप्त प्रयोग हैं। 'बौद्धिकरस' में संगृहीत 'मैं स्फिक्स हूँ', 'सूरज की आवारा बेटी' 'मेरा क्षुद्र जीवन' आदि कविताएं सांगरूपक में रचित हैं। तुकान्त कविताओं में अन्त्यानुप्रास बहुत सफल है। साहित्यिक और सामाजिक जगत् में कवि की उपमाएं फैली हुई हैं। 'बहादुरशाहजंफर' संग्रह की 'मैं अकेला हूँ' कविता को पढ़ते समय शैली की स्काईलार्क की उपमाओं का ध्यान आ जाता है। 'सेतु' संग्रह की 'आशाएं' — आस्थाएं' शीर्षक कविता में प्रयुक्त उपमाएँ दर्शनीय हैं —

समाजवाद के नारों सी
नेता के स्मितों सी
नेत्री के सिद्धान्तों सी
अभिनेता के प्रेमों सी
अभिनेत्री के समर्पणों सी
व्यवसायी की कसमों सी
खोखली
खोखली
खोखली

आशाएँ।

भगवानों के गौरवों' सी

अवतारों के चमत्कारों' सी

गुरुओं के उपदेशों' सी

आकाशगंगा में स्नानों' सी

मंत्र की रटनों-सी

तंत्र की खटनों-सी

खोखली

खोखली

खोखली

आस्थाएँ।¹⁰

कवि ने चमत्कार उत्पन्न करने के लिए अलंकारों का प्रयोग नहीं किया है। बिना अलंकार के भी कविता, बनिता और मित्र शोभा पा सकते हैं। नैसर्गिक सौन्दर्य सर्वोत्तम होता है। अलंकार के बिना भी कविता सुहागिनी, सुन्दरी और आकर्षक होती है। कविता की शोभा उसके चिन्तन, उपलब्धि और देन से होती है न कि अलंकारों से। जैसे कुलटा का शृंगार समाज को भ्रष्ट करने के लिए होता है, उसी प्रकार अनावश्यक अलंकार — प्रयोग पाठकों को धोखा देने के लिए होते हैं। हिन्दी के उत्तरमध्यकाल (1900 ई. तक) में रस, छन्द, अलंकार और नायिका भेद कविता के मुख्य विषय रहे हैं। हिन्दी में प्रायः संस्कृत के अलंकारों के प्रयोग मिलते हैं। इधर अंग्रेजी के अलंकार भी अपना प्रभाव डालने लगे हैं। कवि रामप्रसाद मिश्र तो बहुभाषाविद् हैं। हिन्दी के साथ संस्कृत और अंग्रेजी में भी इनकी अच्छी गति है। इसके उपरान्त अलंकारों के प्रति उसमें माह नहीं है। सहज रूप से जो आ गये हैं उनको उसने ले लिया है। उत्प्रेक्षा का एक उदाहरण दर्शनीय है —

लगता था मानो तप ने जन - दृष्टिभ्रम के लिए
अपने को दो तनों में परिणत कर डाला है।¹¹

दूसरा रूप का का सुन्दर उदाहरण है —

'भाव - रत्नाकर' स्वयमेव खो गया।¹²

10. सेतु, पृ. 27

11. पुरुषोत्तम महाकाव्य, विश्वामित्र आगम प्रसंग से

12. उपरिवत्

नये उपमानों के प्रयोग भी मिलते हैं। उदासी का प्रभाव बड़ा सुन्दर व्यंजित है। जीवन की उपमा भस्मासुर के वरदान से दी गयी है -

शमशान की शान्ति सा मन।
बरसाती नाले सी वेदना गरज रही,
जड़ से उखड़े हुए झाड़ों से बह रहे
आशा के, प्यार के, साहस के उद्गार।¹³

विरोधाभास और उपमा - शान्ति-व्यर्थ राग है। कहीं शान्ति नहीं है, सौन्दर्य मात्र प्रकृति ने मानव को अशान्त बनाया है। शान्ति कुछ नहीं इन्द्रजाल है, निष्क्रियता की कहानी है।

बौद्धिकरस की 'व्यथा' शीर्षक कविता में प्रयुक्त सार्थक, सटीक और समीचीन उदान्त-संपृक्त उपमाओं का प्रयोग है -

कब्रिसतान की शाम सा तन
विधवा की साँसों-सा तन
बौद्धदर्शन-सा जीवन
कर रहा दृष्टि को उलूक दृष्टि
लगती है शांकर अद्वैत की सारी सृष्टि।¹⁴

'बहादुरशाह ज़फर' संग्रह की कविता 'मैं अकेला हूँ' में मालोपमा के सुन्दर उदाहरण हैं -

मैं अकेला हूँ बिल्कुल अकेला
कॉलरिज की अकेलेपन की
कल्पना-सा, अलेक्जेंडर
सैलकर्थ-सा ...¹⁵

इसी कविता की अन्य उपमाएँ -

मैं अकेला हूँ बिल्कुल अकेला
विधुर के प्यार सा
विधवा की साँस-सा
धरती-सा,
व्योम-सा
ब्रह्म-सा।¹⁶

13. बौद्धिकरस; पृ. 29

14. बौद्धिकरस (व्यथा), पृ. 96

15. बहादुरशाह ज़फर, पृ. 74

16. बहादुरशाह ज़फर, पृ. 75

उपमा और दृष्टान्त -

मेरा क्षुद्र जीवन
खचड़े में जुते हुए
उस विवश्या खच्चर-सा
जो चला जाता, किन्तु
बल्गा है हाथ में
चालक के अर्थात्
शोषक समाज के।¹⁷

समुच्चय अलंकार का एक उदाहरण -

बैठा प्लेटफार्म पर
गाड़ी की प्रतीक्षा में
देखता कभी इधर कभी उधर।
बोला निश्चिन्त युवक -
"अभी बहुत देर है!"
बोला गम्भीर प्रौढ़
देखकर हाथ घड़ी -
"अभी कुछ देर है!"
बोला प्रशान्त वृद्ध
हाथ रख भृकुटियों पर
दूर-दूर, देखकर
"अब देर नहीं है!"
सुनकर मन मेरा
बोला
सभी ठीक कहते हैं।¹⁸

श्लेष का उदाहरण -

मिस्टर हरबिन्दर ने मुझको बतलाया,
"ऐश बड़ी चीज है!"
और मैंने ऐश-ट्रे के अन्दर नज़र डाली।¹⁹

17. बौद्धिकरस, पृ. 41

18. बौद्धिकरस, ('अपनी-अपनी' कविता) पृ. 12

19. सेतु (ऐश) पृ. 23

विरोधभास का उदाहरण -

नेता! बाहर से गीता, अन्दर से लोलिता।²⁰

‘गीता’ एक पवित्र पुस्तक है और ‘लोलिता’ अत्यन्त विवादास्पद तथा अश्लील उपन्यास। अतः नेता बाहर से कुछ और भीतर से कुछ और होता है। उसकी कथनी और करनी में बहुत अन्तर होता है। ‘सार्वभौम’ में उपमा, अन्नवय, मालोपमा आदि अर्थालंकारों की भी सहज आकर्षक योजना हुई है। ‘दृष्टि’ काव्य का कला पक्ष पर्याप्त सम्पन्न है। अलंकारों में अनुप्रास और उपमा की छटा सर्वत्र है। इनके साथ उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण, वीप्सा, प्रकाश, दृष्टान्त और श्लोक की बहुलता है। इस सन्दर्भ में अमूर्त भावों को भी मूर्त रूप दिया गया है। ‘कल्पान्त’ सन्दर्भ में सर्व रसनिष्पत्ति और अलंकार के विविध प्रयोग मिलते हैं। इसमें रसदर्श, अलंकार - अनुशीलन भव प्रयोग और चिन्तन के अनेक उदाहरण हैं। अलंकारों के विशेष रूप से नये प्रयोग हैं। देशी-विदेशी शिल्पविधान की झलक इसमें मिलती हैं। एक अतिशयोक्ति का उदाहरण दर्शनीय हैं द्रौपदी के अपमान पर भीम कहते हैं -

सभा में कीचक-कीट कीचक के पद-प्रहार,
भूलुंठन, मुखरक्तपात को देखकर
उपलवत् बैठा रहा और अब सो रहा!
सचमुच अब द्रौपदी विश्व में अकेली है।

बस करो द्रौपदी! अन्यथा इसी समय
फाड़ डालूँगा व्योम पुरइन के पते - सा
लटकेगा अम्बर एक कटे हुए कत्ते - सा
धरा को उठाकर फेंक दूँगा अधर में और
सागर को पीकर अगस्त्य बन जाऊँगा -
कीचक को कीच में रगड़कर मिटा दूँगा
और विराट् को काट-काट डालूँगा!
कौन-सा पुरुष है जो भीम के क्रोधानल से
बच सकता? बाड़व, पवि, सर्व अग्नियाँ मेरी!²¹

20. बौद्धिकरस (नेता), पृ. 54

21. कल्पान्त, पृ. 215

काव्यरूप

काव्यरूपों के अनेक भेदोपभेद हैं। संस्कृत के काव्य शास्त्रीय ग्रन्थों में इनकी खूब चर्चा है। प्रबन्ध और मुक्तक, इनके प्रमुख रचनात्मक भेद हैं। तुक की दृष्टि से तुकान्त - अतुकान्त, गेयता की दृष्टि से गीत - अगीत और भाषा शैली की दृष्टि से गद्यकाव्य और पद्यकाव्य आज के प्रमुख भेद हैं। कवि ने अपने अनुसार व्यवस्था दी है। इस सन्दर्भ में कवि क्रांति दर्शी हैं। उसका व्यापक काव्य - फलक है। महाकाव्यात्मक कविताओं की भी उसने रचना की है। निष्कर्ष में उसके काव्य रूप हैं - महाकाव्य या प्रबन्ध काव्य, खण्डकाव्य, गीत काव्य, लम्बी-कविता या महाकाव्यात्मक कविता।

कवि के काव्य रूप इस प्रकार हैं -

1. प्रकाशित रचनाएँ

1964 ई. से कवि की रचनाएँ पुस्तकाकार आने लगी हैं। सब विवरण इस प्रकार हैं -

(क) कविता संग्रह : 'बौद्धिकरस', 'देश दिल्ली और अहम', 'दृश्य जो न भूले', 'बहादुरशाह जफर', 'ध्यान के गान', 'क्रांति के गीत', 'मृत्युञ्जय जयप्रकाश', 'सेतु', 'हिन्दुओ जागो', 'जय भारत जय भारती कृषक श्रमिक जय', 'सार्वभौम', 'रूपायन'। बालकवितासंग्रह 'सबसे प्यारा अपना देश'।

(ख) खण्ड काव्य : 'पाण्डु ग्रन्थि', 'स्वर्गता' और 'मुहम्मद'।

(ग) महाकाव्य : 'नेताचरित्रम्' 'दृष्टि', 'वेदायन', 'पुरुषोत्तम' और कल्पान्त।

(घ) महाकविता या प्रबन्धात्मक कविता : 'तब, अब, और आगे'।

2. अप्रकाशित रचनाएँ

शती (कवितासंग्रह), एकाकी की अनुभूतियाँ (कविता संग्रह), सारा भारत अपना देश, ययाति (खण्डकाव्य) तथा सृष्टि (कविता संग्रह)।

कवि को सभी काव्यरूपों में सफलता मिली है। महाकाव्यात्मक पाबंदियों की उसने परवाह नहीं की है। सर्ग और खण्डों में बाँटा है। आरम्भ में स्तुति, सर्ग या खण्ड के छन्द - परिवर्तन नहीं हैं, न नायक के लिए उदात्त या धीरवेदान्त नायक की अनिवार्यता है। 'दृष्टि' महाकाव्य को एक ही छन्द में लिख दिया है। यह भी एक प्रयोग है। उसका कथानक भी

भाव, विचार और चिन्तन प्रधान हैं। 'वेदायन' 12 सर्गों का विशाल महाकाव्य है। इसके कथानक में अनेक नये प्रसंग हैं। कवि अनुकरण का कायल नहीं है, काव्यरूप में मौलिकता अधिक है। पारम्परिक कथाओं को भी कवि ने अपने ढंग से कहा है। संग्रहों में गीत-अगीत दोनों शैलियों की रचनाएं हैं। फुटकल कविताएं तुकान्त-अतुकान्त दोनों शैलियों में हैं। कवि दोनों में सफल है। खण्ड काव्य भावात्मक ओर चरित्रप्रधान हैं। महाकाव्यात्मक कविता 'तब, अब और आगे' हिन्दी की महान् लम्बी कविताओं में अपना प्रमुख स्थान बनाती है। कवि के काव्य पर देशी-विदेशी स्वच्छन्तावाद का अधिक प्रभाव है।

शैली

शैली से आशय है, कथन-पद्धति। शैली से व्यक्तित्व और कृतित्व में निखार आता है। उसके प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होती है। इधर शैली-विज्ञान का अपना अलग अस्तित्व सामने आ रहा है। भाषा विज्ञान में भी एक अध्याय शैली-विज्ञान का रहता है। इधर कई कवियों के ग्रन्थों का शैली वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है। अर्थ व्यवस्था पर इसका सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है।

विवेच्य कवि की कविताओं में शैली का उपयोग सबसे अधिक किया गया है। भावात्मक, अलंकृत, मनोविश्लेषणात्मक, ललित, व्यंग्य विनोदात्मक, विरोधाभासात्मक, वर्णनात्मक एवं इतिवृत्तात्मक, वक्रोक्ति एवं व्यञ्जनात्मक, मानवीकरण, प्रश्नसूचक, डॉट शैली, पश्चस्मरण शैली आदि के सफल प्रयोग मिलते हैं। इनमें से यथासम्भव उदाहरण भी दिये जा रहे हैं —

परिभाषात्मक या व्याख्यात्मक शैली

रूप - जिसे देखकर झंकृत हो अस्तित्व

रूप जिसे देख हो विशृंखल व्यक्तित्व, (बौद्धिकरस, पृ. 17)

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

बालक - आइसक्रीम, कालाजाम, रूप का रसायन,

प्रौढ़ - अर्थशक्ति, सम्पत्ति, यश, गौरव, स्वाभिमान,

वृद्ध - अनिर्दिष्ट दौड़, सुख, ईश्वर का ध्यान

सत्य - सत्य, तू क्षितिज-सा कुछ दूर दीखता,

(बौद्धिकरस, पृ. 30)

सत्य, तर्क और बुद्धि की कारा में रहता है। वादों की धारा में बहता रहता है।

कवि की परिभाषा या व्याख्या विचार प्रधान है —

- आत्महत्या** : तीव्रतम चिन्तन का परिणाम, धैर्य, गम्भीरता, महिमा का रूपान्तर, केवल एक महापुरुष आत्महन्ता हो सकता है।
- पागलपन** : अपार ज्ञान वहन की असमर्थता; काण्ट, नीत्शे, निराला, पाउण्ड, साधनन्त पर ऐसा ही होता है। मूर्ख पागल नहीं होते हैं।
नग्नता — उत्सुकता की आत्मा, परम कुतूहल कारक, चरम रहस्यमय।
- चौंद** : कला का मित्र, रसदाता, वैज्ञानिकों का गुरु, राजनीतिज्ञों की महत्त्वाकांक्षा का केन्द्र बिन्दु।
- प्रतिभा** : सब इसे चाहते हैं — कवि, वैज्ञानिक, दार्शनिक आदि को प्रतिभा ही महान् बनाती है। बुरे को अच्छा, यही बनाती है। प्रतिभा ही सही मूल्यांकन करती है। यही भाव या मनोविकार को अमूल्य बनाती है। प्रतिभा का सुविधा से कोई नाता नहीं।
- युद्ध** : ऊर्जा का आत्मज, गौरव का पितामह, ऐश्वर्य का पिता। (बौद्धिकरस)
- भावुकता के प्रति** : कविता में रूप, प्रेम, बुद्धि की परिभाषा दी है। इसी 'बौद्धिकरस' कविता संग्रह में रूप (पृ. 86), प्रेम (पृ. 86), सौन्दर्य (पृ. 88), मानव (पृ. 81), कविता (पृ. 83), मेरा जीवन (पृ. 85), व्यथा (पृ. 88), स्वर्ग, नारी आदि पर इसी प्रकार की व्याख्यात्मक कविताएं हैं। स्फुट कविताओं में कवि ने प्रायः इस शैली का उपयोग किया है।

अलंकृत शैली

: उपमा, रूपक, अन्योक्ति, अनुप्रास, व्यतिरेक, उल्लेख, श्लेष, विराधाभास, यमक और परिकर आदि अलंकारों के माध्यम से कवि ने अपने कथन को अलंकृत किया है -

उपमा

: दूर उड़ रही धूल।
मानसिक निराशा-सी (बौद्धिकरस पृ. 18)

मानवीकरण

: दूर से झाँकती काली रात

प्रश्नमूलक

: कहाँ आवास दूँ?

नयनों में आर्द्रता है;

चित्र कही धूल न जाय!

हृदय में ज्वाला है,

चित्र कही जले नहीं।

मस्तक में आँधी है

चित्र कही उड़े नहीं!

कहा आवास दूँ? (बौद्धिकरस पृ. १८)

विरोधाभास

: दर्द के गीत गाता मदिरा की छाँव में,
मुफ़लिसी की तानें भरता कामों के गाँव में
वासना की निन्दा करता नारी के अंक में,
कमल की बातें सदा करता मैं पंक में
दर्शन की बातें करता पागलपन में मैं,
महल बनाता रहता विस्तृत पवन में मैं।
(‘बौद्धिकरस’ पृ. 86)

इसका शैली विज्ञान की दृष्टि से भी विशेष महत्त्व है।

हास्य व्यंग्य शैली

: इस शैली के बड़े सहज, स्वाभाविक, सत्य और मनोरंजक उदाहरण हैं -

संयोगात् जनवासे जाते, तुम्हारे घरों
के बीच, पथ पर से डोली आगे बढ़ी
उस दिन तीन बारातें गाँव में आनी थीं
तुम सोत्साह देख रही थीं छत पर चढ़ी
देखकर डोली, अन्य की समझ, कूदती
आई, लालटेन डाल, देखी मूर्ति-सी मढ़ी

“का मुँह लटकाए, भुक्कु-अइस बइठ है।

मैंने सर उठाया, तुमने आकृति-प्रकृति पढ़ी।²²



वापस जाकर उन्होंने बताया कि लड़का तो अच्छा है, पर भुक्कु जैसा बेटा है। फिर किसी ने कहा —

“यहै भुक्कु अइस बइठ लारिका तुम्हार दुलहा

आय, कहकहा लगा, अचकचा मौन गहा

और वहाँ से भार्गी; (स्वर्ग पृ.23)

इसी काव्य में इतिवृत्तात्मक, वर्णनात्मक, विवरणात्मक प्रतीक और बिम्ब से समलंकृत शैलियों के उदाहरण हैं। व्यंग्य-विनोद से भाषा रसमयी हो गयी है।

भावात्मक एवं प्रतीकात्मक शैली

इस सन्दर्भ में ‘बौद्धिकरस’ की ‘अहम्’ कविता दर्शनीय है। सम्यता का प्रतीक है। यौनपरक अहम् काम, महिमापरक अहम् ज्ञान, धर्म और व्यंग्य है। आज का नेतृत्व अहं पूर्ण हो गया है। अहं का विकृत रूप रावण है। सात्विक अहम् जीवनरस की अन्तर्धारा है। अहम् की सही अभिव्यक्ति, कला है, अहम् की विवशता प्रमाद है। जीवन अहम् का स्वामिभक्त पुत्र है। “ऊर्ध्वगामी अहम् तू बुद्ध हैं, ईशु है। अधोगामी अहम् तू देवदत्त, नीरो है। मध्यमा, प्रतिपदा तेरी मानवता है।

इसमें परिभाषात्मक शैली भी है।

वर्णनात्मक एवं इतिवृत्तात्मक शैली

इस सन्दर्भ में नेपाल पर लिखी गयी कविता दर्शनीय हैं —

देवता हिमालय का पावन हृदय नेपाल

शिव-पशुपतिनाथ का मनमोहक आवास,

मानवता की एक सीमा बुद्ध के श्वास

से पावन आकाश,

योग को भोग में लुप्त रखने का प्रयास

करने वाले महत्तम राजर्षि जनक की भूमि?²³

22. स्वर्गता, पृ. 23

23. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 27

इसी शैली में वेद, उपनिषद्, व्यास पतंजलि, तुलसीदास, आदि पर लिखी गयी कविताएं हैं।²⁴ कवि ने किसागोई का भी उपयोग किया है। उसने अनेक बातों को कहानी-किस्सा या दास्तान के समान समझाया है, जैसे — एक था अजगर (सार्वभौम पृ. 15) तथा अन्य कविताएं। इमारतों आदि के सम्बन्ध में भी उसने ऐसा ही कहा है। इस प्रकार काव्य में कथा का भी आनन्द मिल जाता है। कवि ने इतिवृत्त और वर्णन की शैली में अनेक सूचनाएं भी दी हैं।²⁵

स्मृति, संचारी भावों के माध्यम से कवि ने स्वर्णिम अतीत का वर्णन किया है —

आह! कहा खोई तू गंगा?

कहां हिमालय वह बहुरंगा?

कहाँ सुन्दरी कञ्चनजंगा?

आह उदात्त अब नही चंगा।²⁶

अतीत + वर्तमान, परम्परा + मौलिकता का कवि ने सात्विक सौन्दर्य-निरूपण, किया है। सांस्कृतिक व धार्मिक चरित्र-चित्रण, रोमांस और युगमर्यादाओं के सुन्दर वर्णन है। राम और लक्ष्मण एक — दूसरे से भिन्न नहीं; एक — दूसरे के पूरक है। कवि ने दोनों के स्वभाव को कितना सुन्दर काव्यरूप दिया है —

“तमस् को हलाहल, रजस् को मधुर मधु,

सत् को सोम-पीयूष, पूर्ण को रस स्वयं!”

“तमस् को दावाग्नि, रजस् को शीतानल,

सत् को शुभ्र यज्ञ-ज्योति, पूर्ण को वैश्वानर!”

“इनका अनुज इनसे भिन्न लगता है, है नहीं;

राम हैं धर्म तो लक्ष्मण हैं सदाचार!”

“राम शुद्ध-बुद्धि, तो लक्ष्मणा है सद्विचार!”

“राम हैं हृदय तो, तो लक्ष्मण भावसंचार!”²⁷

24. दे. जय भारत जय भारत प्रहरी कृषक श्रमिक जय।

25. दे. सार्वभौम, पृ. 35

26. सार्वभौम, पृ. 43

27. पुरुषोत्तम, पृ. 68

इसी प्रकार 'दृष्टि' महाकाव्य में भी अनेक उदाहरण मिल जाते हैं। कवि के वर्णन मर्यादा, अतीत, युगबोध, संस्कृति, धर्म, दर्शन और इतिहास से सम्बद्ध है। वर्णन के लिए वर्णन नहीं हैं, न तो अनुकरण मात्र ही हैं।

विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक और व्यंग्यात्मक शैली

इसके कतिपय दृष्टान्त भी हैं। रूप से उत्पन्न होने वाले दोषों को भी कहा गया है।²⁸ इसमें निष्क्रियता होती है। यह ऐश्वर्य का दास, शक्ति की दयनीयता और हीनता है। यह मूर्खों का आराध्य होता है। यह बहुत कुछ प्रकृति के विपरीत होता है। यह वासना के आगे नहीं जा सकता है। इसके आगे जाने की क्लीव — चर्चा व्यर्थ है—

मानवता के लिए

रूप अभिशाप है,

स्वयं रूप रूप का

भीषण संताप है।²⁹

परिभाषाओं और व्याख्याओं में भी कवि ने इन शैलियों का उपयोग किया है। 'बौद्धिकरस' और 'नेताचरित्रम्' में इनके अनेक उदाहरण मिल जाते हैं।

संवादात्मक शैली

'दृष्टि', 'पुरुषोत्तम', 'कल्पान्त' तथा मुक्तक रचनाओं में लम्बे संवाद चले हैं। स्वगत कथन भी हैं। कवि अपनी ओर से भी बहुत कुछ कह गया है। संवाद प्रासंगिक, तथ्यपरक और रोचक हैं। प्रणाम और आशोष के प्रसंग बहुत अधिक हैं। उदाहरण के लिए 'पुरुषोत्तम' सर्ग-8 को देखा जा सकता है। इसी सर्ग में दशरथ — कैकेयी संवाद है। इसके पूर्व विश्वामित्र — दशरथ संवाद है। 'कल्पान्त' में द्रौपदी से सम्बद्ध अनेक संवाद है। 'पुरुषोत्तम' में राज परिवार, काननवासी जातियों, विविध राजाओं, राम और बालि, विभीषण, रावण, अंगद, सुग्रीव सीता आदि से सम्बद्ध अनेक संवाद हैं। कवि को इसमें बहुत सफलता मिली है। इस शैली के साथ-साथ कथानक और भावपक्ष भी सम्पन्न हुए हैं। संवाद भावुक, तार्किक और माधुर्य भाव से मण्डित हैं। प्रेमिल संवाद भी स्वाभाविक हैं। ऐसे संवाद सबसे अधिक 'इल और इला' कविता में हैं।

28. दे., देश, दिल्ली, और अहम, पृ. 18

29. उपरिवत्, पृ. 62

ललित शैली का भी कवि ने उपयोग किया है। महाकाव्यों तथा स्फुट कविताओं में उसने अतीत-वर्तमान, प्रकृति-पुरुष, स्त्री-पुरुष आदि के मेल में 'व्यक्ति' उत्पन्न किया है। सांस्कृतिक बोध के प्रसंग में भी इस शैली का उपयोग किया है। अनेक जड़ प्रसंगों को उसने आधुनिकता के स्पर्श से सरस और प्रासंगिक बना दिया है।

डॉट शैली

डॉट शैली का उपयोग पर्याप्त किया गया है। स्फुट कविताओं में इसका उपयोग अधिक है। महाकाव्यों में भी यथाप्रसंग इसका उपयोग किया है -

“किन्तु सत्य उसके भी तल में नित पलता है।”

(वेदायन, पृ. 85)

“चंचल संमान से?”

(वेदायन, पृ. 86)

कलापक्ष : एक समीक्षा

मात्रगुणगान से किसी का सम्यक् मूल्यांकन नहीं हो सकता है। सभी कवियों में कुछ प्रसंग सामान्य से हटकर मिलते हैं, जैसे - वाल्मीकि में उल्लंग वर्णन, व्यास का विस्तार, कालिदास की अश्लीलता और व्याकरण की निरंकुशता, तुलसी का ब्राह्मण-स्तवन, शूद्र प्रत्याख्यान, नारीनिन्दा, सूर की शृंगारिकता और बिहारी की लफ्फाजी आदि। फारसी और उर्दू के कवियों में अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन भरे पड़े हैं। विवेच्य कवि के विशाल काव्य जगत में भी कुछ बिन्दु विचारणीय हैं -

1. विचारतिरेक

बौद्धिक रस के प्रणेता की विचार या बुद्धिप्रधान कविताएं नीरस लगती हैं। द्रविड़ प्राणायाम हो गया है। भाव से कुछ दूर भी। गद्य का प्रभाव अधिक है। इससे कलापक्ष दब गया है -

अहम् - परितोष का उदान्त वर्ण माध्यम ?

जिजीविषा, विजिगीषा का नाटकीय परिणाम ?

वित्त का पुत्र, राजनीति का एक दाँव,

प्रतिभा, शक्ति आदि का अत्यन्त चतुर ग्राहक

पुरस्कार प्राचीन दासता का स्मारक,

जिसे आधुनिकता ने चमकदार रंगों से
रँगने की चेष्टा की।³⁰

पुरस्कार से प्रतिभा का क्रय होता है। यह दान शासक वर्ग की प्राचीन एवं मध्यकालीन मनोवृत्ति का प्रतीक है। 'दृश्य जो न भूले' की बेचारी नारी थी! कविता यद्यपि गद्यात्मक नहीं है — फिर भी इसकमें विचारों का अतिरेक है —

बस स्टैण्ड डार्विन के
विकासवाद को स्पष्ट
कर देता। वहाँ सदैव
योग्यतम सफल होता।
डार्विन यदि भारत के
किसी रेलवे स्टेशन
या बस-स्टैण्ड पर
आ जाएं, तो उनको
लुप्त-शृंखला की कड़ी
(मिसिंग लिंक) सहज ही
ज्ञात हो जायेगी। (पृ. 49)

इसी प्रकार 'ताजमहल' कविता भी बौद्धिकता से बोझिल है —

मध्यकालीन विलासिता का महान् स्मारक,
एक पैसे रोज़ की मजदूरी की गाथा,
शक्ति की अमरता का ऐश्वर्यपूर्ण नाटक,
भीषण कामवासना की शाही तवारीख
ताजमहल, जिसके नीचे गड़ी है लाश
अर्जुनन्दबानू की,
जो साम्राज्ञी बनकर
मुमताज़ महल हुई,
प्रति वर्ष संतान
सम्राट की मोहब्बत
का मानवीकरण बनकर
प्रकट होती चली गयी

और जब चौदहवाँ
मानवीकरण आया
तब मर गई बेचारी।³¹

2. सन्दर्भों की दुरुहता

सभी सन्दर्भ सामान्यजन के लिए बोधगम्य नहीं हैं। सन्दर्भ है। कवि ने विश्व के धर्म, दर्शन, साहित्य और इतिहास का गहन-गम्भीर अध्ययन, विवेचन और विश्लेषण किया है। बौद्धिक पक्ष प्रबल हो गया है। 'रूप' कविता की प्रस्तुत पंक्तियाँ देखें — जिनमें पेनीलोपी, फ़ेनी ब्राउन, बीट्रिस, मोनालीसा, दमयन्ती, हेलेन, शकुन्तला और हेरियट के सन्दर्भ दिये गये हैं, जो ओडीसियस, कीट्स, दांते, बिंची, बल, पेरिस, दुष्यन्त और शैली से सम्बन्ध रखते हैं। सन्दर्भ ज्ञान सब के बूते की बात नहीं है —

रूप! तुम दूर के ढोल सुहावने,
तुम्हारी दूरी का नाम कविता, कला, भावुकता,
पेनीलोपी, फ़ेनी ब्राउन, बीट्रिस, मोनालीसा,
तुम्हारी निकटता है शिथिलता, अरुचि, छलना,
दमयन्ती, हेलेन, शकुन्तला, हेरियट;
क्षितिज पर काव्य तुम,
निकट कवि के जीवन;
दूर के नन्दन तुम,
निकट दण्डक कानन;
तुम्हारे आने में, तुम्हारे जाने में,
तुम्हारे पाने में हाहाकार, जलन, प्यास;
जब तुम क्षितिज के उपमेय मात्र रहते,
केवल तभी परितोष पाती है विकल आस।³²

इसी प्रकार 'मेरा जीवन' कविता में यदि कवि एक ओर होमर के इलियट से जुड़ा हुआ है, तो दूसरी ओर वाल्मीकि की रामकथा से —

मेरा जीवन है हेक्टर की मृत्यु-सा
और कामना है अन्त रावण का अन्त हो।³³

31. बौद्धिकरस, पृ. 109

32. बौद्धिकरस, पृ. 86

33. बौद्धिकरस, पृ. 95

वीर हेक्टर की मृत्यु बहुत दुखद थी। उसका पार्थिव शरीर भयंकर योद्धा एकिलीज़ के रथ से बाँधा गया था, घसीटा जा रहा था। रावण का अन्त भी युद्ध में हुआ था, किन्तु वह वीरतापूर्वक मारा गया था। दोनों के अन्त में उतना ही अन्तर है — जितना पूर्व और पश्चिम के दृष्टिकोण में। यद्यपि पश्चिम में भी मृत्यु पवित्र कर देती है। पर यह बात जीवन में व्यवहृत नहीं होती। उसे उपालम्भ, उपमान और व्यंग्य का पात्र बनना पड़ता है। सभी लोग मृत्यु के भय से काँपते हैं।

3. शब्द, छन्द प्रयोग

‘अतिशय विराट् आनन’ का प्रयोग है। विराट् का अर्थ ही सबसे बड़ा होता है या जिससे बड़ा अन्य कोई न हो, फिर इसके साथ अतिशय लगाया गया है। फ़ारसी में जुमुलजुला (दोहरे विशेषण) खूब चलते हैं। कुछ हिन्दी में भी हैं।

‘दृष्टि’ महाकाव्य में एक ही छन्द है। बदलाव होता तो आकर्षण और अधिक बढ़ जाता। कुछ कविताओं में तुक मिलाने के लिए कुछ शब्दों को तोड़ा गया है। जब कविता अतुकान्त है तो शब्दों को मूल रूप में ही रखा जा सकता था।

वर्णन में लम्बी-लम्बी नाम आदि की सूचियाँ हैं, जिनसे सूचनाएं ही मिलती हैं। इनसे न भाव पक्ष सम्पन्न हुआ है न कला पक्ष।

निष्कर्ष

निष्कर्ष में कवि का कलापक्ष सम्पन्न है। “इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ. रामप्रसाद मिश्र की लेखनी में अमूर्तभावों को लिपिबद्ध कर पाठकों के अन्तर्मन तक पहुँचा देने की अपूर्व क्षमता है। कारुणिक भावों का प्रस्तुतीकरण निश्चय ही ऐसा है कि सहृदय पाठक भी रोने लगे।³⁴

कवि गद्य-पद्य दोनों शैलियों में सफल है। ऐसे कवि हिन्दी में नाम मात्र के हैं। तत्सम और बोलचाल की शब्दावली को कवि ने एक शैली में मिला दिया है, जैसे — बड़मनई (सार्वभौम पृ. 18) यह नया प्रयोग है। ‘दृष्टि’ महाकाव्य भले एक ही छन्द में रचा गया है, परन्तु इसमें सरसता, मधुरता, मोहकता, लालित्य, गाम्भीर्य और महाकाव्यात्मक गरिमा संचित है। ‘कल्पान्त’ में रासो और होमर की कविताओं के गुण हैं।

सारतः कवि का कलापक्ष पूर्णतया सम्पन्न है। कमियाँ नगण्य हैं।

बिम्ब और प्रतीक

बिम्बों और प्रतीकों से यथार्थ अभिव्यक्ति में सहायता मिलती है। कविता का उद्देश्य मात्र अर्थ ग्रहण कराना नहीं, बल्कि बिम्ब ग्रहण कराना भी होता है। वर्णन के साथ मानस-पटल या दृष्टि में बिम्ब विविध रूपों में सामने आने लगते हैं। बिम्ब और प्रतीक विशेष प्रकार की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। कवि रामप्रसाद मिश्र को इस सन्दर्भ में पूरी सफलता मिली है। कहीं-कहीं तो उपमाओं के दायरे में भी इन प्रतीकों और सौन्दर्यों से नवीन भावोत्पत्ति हुई है। पुरुहूत (इन्द्र) के उल्लास और दिवोदुहिता (उषा) की लालिमा का बिम्ब दर्शनीय है —

सघन घन कुंतल सदृश पुरहूत के उल्लास
दिवोदुहिता लालिमा के सदृश सरस कपोल
सोम रस के पान के परिणाम से हर भाव
वेन शम्पा मिलन सुख उद्गार से दो बोल।।¹

आज की कविताओं में इनका महत्त्व अधिक बढ़ गया है। बिम्ब और प्रतीक अलग-अलग घटक हो गये हैं। छायावाद से इनके प्रयोग अधिक बढ़े हैं। मध्यकालीन कविताओं में भी प्रतीकों को सुन्दर योजनाएं मिलती हैं। कवि के भी सुन्दर प्रयोग हैं। स्पष्टता के लिए दोनों पर अलग-अलग विचार किया जा रहा है —

बिम्ब

कवि ने अतीत वर्तमान, मूर्त-अमूर्त प्रकृति-प्राणी, पुरुष-स्त्री, विविध भाव मूलक बिम्बों की सृष्टि की है। कवि के सजीव बिम्ब सब कुछ देते हैं। अतीत को वर्तमान में लाकर खड़ा कर देते हैं। विश्वामित्र का ऋषि रूप दर्शनीय है —

वट-दुग्ध-स्नेह-गुम्फित उज्ज्वल जटाएं उज्ज्वल
घोषणा करतीं जीवन में सूर्योदय की
आनन में आयु की रेखाएं बताती थीं
अनुभव-दीप्त जीवन-गत सात्विकता की कथा,
नेत्रों में तपस् का प्रकाश प्रवहमान था,
दण्ड दण्ड शब्द का अर्थ परिवर्तित कर
रहा था, वरद-हस्त अपनी अक्षय विभूति
जग को था बाँट रहा पूर्ण उन्मुक्त हो।

स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार के मिश्रित बिम्ब विधान भी हैं। आगे
विश्वामित्र वसिष्ठ-मिलन का सजीव बिम्ब है —

लगता था मानो तप ने जन-दृष्टि भ्रम के लिए
अपने को दो तनों में परिणत कर डाला है।

बिम्बों का उपयोग माध्यम के रूप में अधिक किया गया है। कवि
को माध्यम पर पूर्ण विश्वास है। कथ्य स्पष्ट रूप से व्यक्त है। रूप, प्रेम,
सौन्दर्य और निराशा के बिम्ब सराहनीय हैं। शिल्प सशक्त है। इस सन्दर्भ
में 'इल और इला' श्रेष्ठ रचना है। इसमें पौराणिकता, आधुनिकता और
मनोवैज्ञानिकता है। बुध और इला के प्रथम संगम का बिम्ब 'कामायनी' के
मनु श्रद्धा-संयोग (वासना तथा कर्म) की याद दिलाता है। आसमान के अनेक
रंग के बादल, वही कानन-सा दृश्य बना लेते हैं। अद्भुत दृश्य बिम्ब बन
जाता है। 'तब, अब और आगे' कविता का बिम्ब-विधान दर्शनीय है। 'बादलों
के बुत' कविता में भी सुन्दर बिम्ब-विधान है। उनका आकाश पर क्षणिक
अधिकार हो जाता है। कभी-कभी रुके हुए बादल बुत जैसे जान पड़ते हैं।
कभी गांधी से, कभी आइंस्टाइन से तो कभी भेड़ के झुण्ड से लगते हैं।
आशानिराशा, आनन्द और दुःख दोनों के ये रूप हैं।

प्रकृतिगत बिम्ब और दुःख दोनों के ये रूप हैं। प्रकृतिगत बिम्ब सबसे
सुन्दर बन सके हैं। सन्ध्या के बिम्ब-विधान की स्वरूप परम्परा है।
देशी-विदेशी साहित्य में इसको देखा जा सकता है। कवि का भी एक बिम्ब
दर्शनीय है —

साँझ का झुटपुट
दूर-दूर क्षितिज में
पेड़ों की चोटी पर

सूरज लाल-लाल;
पिघले हुए लोहे का
बड़ा सा फुटबाल।²

यहाँ साँझ, क्षितिज, पेड़ की चोटी, लाल सूर्य, पिघले लोहे का लाल फुटबाल-सा के बिम्ब हैं। इनके अतिरिक्त बाग, नदियाँ झरने, रंग-बिरंगे बादल आदि के सजीव बिम्ब हैं। गाँव के विविध दृश्य उकере गये हैं — फूली अरहर, चिल्लाते पंछी, राही के बजते नूपुर, दूर से झाँकती काली रात, आदि —

कुछ दूर खेत में
अरहर फूली हुई,
राशि-राशि पीले फूल
संख्यातीत तितलियाँ से।
कहीं-कहीं पेड़ों पर
चिल्लाते पंछी हैं,
भंग कर रहे हैं
पूर्ण निश्शब्दता को।
पिछड़े हुए पंछी
तेजी से दौड़ रहे,
पिछड़े बटोही जैसे
रात्रि को निकट देख
चुपचाप, जोर-जोर
मगन चले जाते हैं।
अरहर के खेत के
उस ओर जल्दी-जल्दी
जा रही दूध वाली,
नूपुर बता रहे -
"देखो हम जा रहे!"
बहुत दूर क्षितिज से
झाँक रही काली रात।³

2. बौद्धिक रस, पृ. 19

3. बौद्धिक रस, पृ. 20

‘बौद्धिक रस’ पृ. 41 पर क्षुद्र जीवन की उपमा कीचड़ में खचड़े में जुते हुए खच्चर से दी गयी है। एक बिम्ब भी यहाँ बनता है — खच्चर खचड़े में फँसा है फिर भी चाबुक लगती है। यहाँ प्रतीक और बिम्ब दोनों हैं। कवि ने अपनी सुहागरात (मई माह) और पत्नी का सटीक बिम्ब-विधान किया है —

छोटा-सा कमरा था, जिसमें तख्त पड़ा हुआ
लालटेन जलती, तुम बैठी पसीने से तर
क्योंकि विकट गर्मी थी मई-उत्तरार्द्ध की
हाथ-पंखा झलती छुई-मुई विविध भाव भर
मैंने हाथ पकड़कर कहा, मिठाई खाओ
तुम छिटकी, खड़ी हो गयी, छुड़ाकर कर
थोड़ा-सा अनुनय किया पर तुम नहीं मानी
घूँघट, घूँघलके में दर्शन भी थे दूभर।⁴

दूसरा बिम्ब खुले स्थान के मिलन का है —

बड़ा-सा खुला-सा स्थान नीम के तले फैला
नील गगन, नील तरु, नील रंग शृंगार
दो पलंग डाले गये और दादी बाहर गई
अनायास ही उपजी उभयनिष्ठ मनुहार
तुम मेरे लेटने पर पैर दबाने लगी।⁵

प्रकृति चित्रण में सुन्दर बिम्ब विधान है। देश के विविध भागों का चित्रण है। हिमालय, हिन्दमहासागर, गंगा, यमुना, हरे-भरे मैदान, कानन, पेड़, पहाड़, नदी के बिम्ब हैं। सृष्टि के आदि स्वरूप का बिम्ब है —

द्रवसागर-शून्य-सागर एकाकार थे और
उन पर था तैरता एक विराट् विशद,
निराकार निरंजन, निर्लेप, अव्यक्त।⁶

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा आदि स्थानों के बिम्ब बनते हैं। ‘सार्वभौम’ में बिम्ब और प्रतीक के मिले-जुले अनेक उदाहरण मिलते हैं। एक उदाहरण दर्शनीय है —

4. स्वर्गता, पृ. 26

5. स्वर्गता, पृ. 28

6. जय भारत जय भारत प्रहरी कृषक श्रमिक जय, पृ. 16

नीला विशाल चारागाह और शांत मेष दल
अच्छा लगता है -

लेकिन वातघात उसे हाँकता, मिटा देता।⁷

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

हाथियों के झुण्ड-के-झुण्ड

सचमुच वितुण्ड!

मस्त हो नीलसर में स्नान कर रहे

तट पर विहर रहे

लेकिन अचानक खेदा

कुछ भागे, बच गए

कुछ खाइयों में गिरे। (सार्वभौम पृ. 11)

कुछ बिम्ब ध्वनि, दृश्य युक्त हैं -

झर-झर झरता झरना

रश्मियों का उस पर तरना

स्वर्ण भरना

तल पर कल-कल जल-संगीत भरता

मन हरता।

छोटी-छोटी ऊँची-नीची पहाड़ियों से घिरी घाटी

सरस माटी

लहलहाते खेतों में लहलहाते शस्य

दृष्टि वैवश्य

निर्झर-सार में पहले अधरोष्ठ-स्पर्श का पुलक लेते

और तब रसपान करते हिरन, गाय, बछड़े

सरस सरसों की सुरभि से विभोर

ओर-छोर। (सार्वभौम पृ. 15)

आगे घर-गाँव के स्थूल पर आकर्षक बिम्ब हैं -

गाँव के छोर पर, निर्झर-सरि के कगार के ऊपर

एक था बरगद

बहुत बड़ा

7. सार्वभौम, पृ. 11 ('बादलों के बुत' कविता से)

सदियों पुराना

(सार्वभौम, पृ. 16)

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

एक ओर एक गाय बैठी जुगाली करती

गति मंद

आंखें बन्द

मुँह के छोरों पर दूधिया झाग।

एक ओर एक मृग अपनी मृगी की

बाई आँख की कोर

अपनी दाई सींग की कोर से खुजला रहा।

एक ओर आँखों और कानों से चतुर्दिक् देखता

खरगोश दौड़ रहा।

बरगद पर श्यामा सीटी बजा रही

गौरेया गा रही। (सार्वभौम पृ. 16)

‘कालिदास के प्रति’ कविता (सार्वभौम संग्रह) में कण्व के आश्रम, दुपट्टा खींचते मृगशावक, देवतात्मा हिमालय, मेघ, उड़ते हुए हंस, बगुले फिर प्रदूषण भरे आज के वातावरण का बिम्ब है।⁸ ‘माखनलाल’ कविता का बिम्ब देखिये —

एक-दुबला सा, पतला-सा, किसान-सा

पीर था, फकीर था, हकीर था, (सार्वभौम पृ. 33)

‘आगमेन्नों के अन्तिम क्षण’ कविता में ट्राय-विजेता आगामेन्नों के उत्सव के दृश्य, स्वागत के दृश्य, और तक उसकी हत्या और कत्लेआम के दृश्यों के बिम्ब; विरोधी स्वरूप वाले पर वास्तविक और आकर्षक तथा भयंकर हैं। उत्सव शोक में बदल गया। ‘काली घटा’ कविता (सार्वभौम, पृ. 143) में सुन्दर बिम्ब विधान है। इसमें दृश्य बिम्ब बनते हैं। उनके प्रभाव भी व्यक्त हैं। ‘बादरिया आ गई’ (सार्वभौम पृ. 155) के भी बिम्ब विधान हैं। ‘आंखें’ कविता में प्रभाव पूर्ण आँखों के बिम्ब हैं। दे. सार्वभौम पृ. 155। आंखें अद्वैत की अन्यतम वाहिकाएं, व्याख्याएं हैं। नारी के मांसल बिम्ब हैं; अनुभाव चित्रण में। सान्ध्य, सान्ध्यतारा, द्वितीया का चन्द्रमा के सुन्दर बिम्ब हैं। कल्पनाजन्य बिम्ब विधान भी हैं। प्रकृति और मानव के बिम्ब साथ-साथ

भी हैं (दे. 'सार्वभौम' पृ. 208)। 'दृष्टि' महाकाव्य में विराट् दर्शन विश्वदर्शन की ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, साहित्यिक, संस्कृतिक झाँकियाँ अपने पूरे विश्व विधान के साथ निःसृत हुई है। सूक्ष्म बिम्ब भी है। कल्पना जगत् के बिम्ब 'दृष्टि', 'वेदायन' और 'कल्पान्त' महाकाव्यों में हैं -

वहाँ से पृथ्वी नीलमणि - मुद्रिका लगती,
अतिशय सम्मोहक और इन्द्रजाल काया-सी;
सर्वग्रह सुन्दरतम उसकी शुभ शोभा थी,
अतुलित विराट् की मोहक लघु छाया सी।⁹

'दृष्टि' महाकाव्य में विविध लोकों के बिम्ब बनते हैं। सभी लोकों से न्यारी पृथ्वी का भी बिम्ब है। कवि का भाव-जगत् बड़ा उर्वर है। वेद-लोक में बिम्ब बनते हैं - फागुन का सबेरा फाग गाता ही आता था, हरी-हरी वनस्पति, भरी-भरी ज्योति थी। चारों ओर लगा हुआ रंग का मेला था।¹⁰ 'दृष्टि' के पैगम्बर लोक में अनेक बिम्ब दैवी लोक के हैं। 'कुरान' में ऐसे लोकों का वर्णन है। 'आबेहयात' का वर्णन है (पृ. 66)। नदियों के वर्णन बड़े आकर्षक हैं। प्रतीक और बिम्बों के लोक हैं। खण्ड-खण्ड चित्रण है। कल्पना की लम्बी उड़ानें भी यथार्थ लगती हैं। लम्बे बिम्ब विधान हैं। विज्ञान लोक (एक) का एक बिम्ब विधान उद्घृत है -

नीले आकाश पर बादलों की पतली
परत पड़ी थी, कहीं-कहीं पर उड़ती सी;
कहीं-कहीं पर जमी, कहीं-कहीं से हटी,
कहीं-कहीं इधर-उधर घूमती-मुड़ती-सी।¹¹
ऊँचाई पर हंसों के युग्मों का उड़ना
उनकी छाया का पड़ना, बहुत ही भाता था;
एक नीलकण्ठ मेरे पास के बिरवे पर
बैठा हुआ सबल-राग प्रायशः गाता था।
कचनार ऊर्ध्वद्रष्टा सुमन विविध वर्ण
कथाएं सुनाने में ना अलसाते थे;
कभी-कभी शान्त हो कान्त-कथा कहते थे,

9. दृष्टि, पृ. 13

10. दृष्टि, पृ. 53

11. दृष्टि, पृ. 162

कभी-कभी कान्त हो-हो सिर हिलाते थे।
अहा, वहाँ सेमल के सुमन सुगन्धित थे,
उनका वर्ण - अनुराग - ललित था, प्रेयस था;
मैं उनका आलोचक नहीं हो सकता था,
क्योंकि दृष्टि का मेरी विशदतर ध्येय था।
गेंदा के गेंद-से बड़े-बड़े फूल मुझे
सुरभि के बोलों से रुकने को कहते थे,
वे वसन्त - दूत - बोल भाते थे, राते थे,
मन के अछोर-छोर अनायास कहते थे।¹²

कवि ने 'वेदायन' में विशेष रूप से चिरंतन प्रतीक और बिम्बों से चिरंतन प्रवृत्तियों (आस्था, अनुराग, जिजीविषा, विजिगीषा, अभियान इत्यादि) को चिचित्र करने का प्रयत्न किया है। अतीत को वर्तमान में ढालने का कवि ने सफल यत्न किया है, किन्तु यह अनुकरण मात्र नहीं है; सबका अपना-अपना महत्व दिखाया है। प्राचीन की अपनी सत्ता और महत्ता है। नवीन की अपनी अस्मिता है। सबके सुन्दर बिम्ब और प्रतीक है। 'पुरुषोत्तम' महाकाव्य में विश्वामित्र के आश्रम, राम सीता दर्शन, विदाई का दृश्य, धनु भंग, विवाह-प्रसंग तथा अन्य प्रसंगों के सुन्दर बिम्ब विधान हैं -

घोर निशा थी, तम ने निगल लिया था प्रकाश,
तरु समूह मेघ राशि के सदृश प्रतीत होता
अन्धकार में सहमी और आँखें भीचे
स्तब्ध हो रही थी वनस्पति की संतानें,
पवन का तीव्र वेग दस्युदल-सा भय व्याप्त
करता गतिमान था, पक्षी चुप थे, केवल
उलूकों का प्रखर राग बीच-बीच में स्थिति को
भयानकतर रूप प्रदान करता था, स्तब्ध
नगर के पार्श्ववर्ती वनों से शृगालों का
कर्कशस्वर उलूक गान से मिलकर अशुभ व्यक्त
उद्गार लगता था।¹³
कुम्भकर्ण का क्षत-विक्षत शव रखा था समक्ष

12. दृष्टि, पृ. 162

13. पुरुषोत्तम, पृ. 362

तथा रानियाँ, आत्मीयजन एवं पौलस्त्य
फूट-फूट रोते थे। करता था विलाप काल
जयी रावण¹⁴

‘कल्पान्त’ में युद्धों के सजीव बिम्ब हैं। कवि बिम्ब-विधान में सफल है।

प्रतीक

साहित्य में प्रतीकों का अपना विशेष महत्त्व होता है। इनकी एक स्वस्थ परम्परा मिलती है। वेद, उपनिषद्, आख्यान, पुराण और कथा आदि में इसको देखा जा सकता है। आधुनिक साहित्य में प्रतीकों की संख्या अधिक होती जा रही है। सन्तों ने प्रतीकों का खूब उपयोग किया है। सूक्ष्म के स्थूल प्रतीक सन्त साहित्य में खूब हैं, जैसे गाय = आत्मा, सिंह = अहंकार, लोभ, काम आदि। सन्तों की उलबाँसियों और रहस्यानुभूतियों में इनकी संख्या सर्वाधिक है। इस संसार को नैहर और स्वर्ग को सासुर माना गया है। शेमर का फूल, पानी का बुलबुला इत्यादि क्षणिकता के प्रतीक हैं। जायसी के ‘पद्मावत’ और जयशंकर प्रसाद की ‘कामायनी’ के प्रतीकों को देखा जा सकता है —

पद्मावत	कामायनी	प्रतीकार्थ
1. रत्नसेन	मनु	मन
2. पद्मावती	श्रद्धा	हृदय निवासिनी बुद्धि या श्रद्धा
3. नागमती	इड़ा	दुनिया दारी या सांसारिकता की ओर ले जाने वाली बुद्धि।
4. राघव चेतन और अलाउद्दीन	किलात आकुलि	आसुरी शक्तियाँ

‘पद्मावत’ और ‘कामायनी’ में साधक सात्विक बुद्धि या श्रद्धा की सहायता से बन्धन से मोक्ष या अलौकिक आनन्द को प्राप्त करते हैं। अतः ‘पद्मावत’ के रूपक तत्व का सम्बन्ध सूफीमत से न होकर भारतीय साधना पद्धति से ही सिद्ध होता है। इस दृष्टि से कवि का ‘दृष्टि’ महाकाव्य भी

14. पुरुषोत्तम, पृ. 434

सराहनीय है। इसके अतिरिक्त अन्य काव्यों तथा फुटकल रचनाओं में भी सुन्दर और सटीक प्रतीक हैं, जैसे -

तोते के पंख
चिकने, हरे, चमकीले
बड़े भले लगते हैं
लेकिन ऋतुराज उन्हें
झाड़ देता है और
तोता प्रसन्न होता।¹⁵

यह कविता 20 शब्दों में सामाजिक परिवर्तनों को अत्यन्त कलात्मक ढंग से विवृत करती है। तोता समाज, पंख सामाजिक परिवर्तनों और ऋतुराज परिस्थितियों के प्रतीक हैं। जब तोता चमकीले पंख झाड़ता है तो वह अनेक लोगों को अच्छा नहीं लगता है, परन्तु वह स्वयं अत्यधिक प्रसन्न होता है। उसी प्रकार सामाजिक परिवर्तन समाज के एक बड़े वर्ग को रुचिकर नहीं लगते, किन्तु विराट् समाज परिवर्तनों को स्वीकार करता है, क्योंकि 'स्कन्द गुप्त' नाटक के 'श्रणेता जयशंकर प्रसाद के शब्दों में परिवर्तन प्रकृति का नियम है। परिवर्तन रुका कि महापरिवर्तन हुआ।'

'बादलों के बुत' कविता में प्रतीकात्मक और बिम्बात्मक योजनाएं हैं। वर्षा आनन्द और बुत भावनाओं का प्रतीक है। भावनाएं कभी-कभी घातक सिद्ध हो जाती हैं। बादलों का बरसना और भावनाओं का व्यक्त होना स्वभाव है। गांधी और आइन्स्टाइन के भी प्रतीक हैं। ये बुत धरती की दुर्दशा पर रोते हैं; गांधी साम्प्रदायिक दंगों को देखकर रोते हैं, आइन्स्टाइन भी स्वयं को अणु शक्ति की खोज के लिए कोसने लगते हैं। प्रतीकात्मक शीर्षक यथार्थ जीवन को व्यक्त करता है। आँधी क्रांति की प्रतीक है और फूल झरना विनाश का। एक आध्यात्मिक प्रतीक दर्शनीय है -

बैठा प्लेटफार्म पर
गाड़ी की प्रतीक्षा में
देखता कभी इधर, कभी उधर।
बोला निश्चिन्त युवक
"अभी बहुत देर है।"¹⁶

15. सेतु, पृ. 10 (तोते के पंख कविता से)

16. डॉ. रामप्रसाद मिश्र की मान्यता प्राप्त कविताएं, पृ. 106

यहाँ प्लेटफार्म-संसार और स्टेशन का माहौल दुनियादारी है। यहाँ सब कुछ अस्थिर है। नेताचरित्रम् ये नेता को राष्ट्र का प्रतीक माना गया है। कुछ प्रतीक और बिम्ब एक दूसरे को विशिष्ट बनाते हैं। ऐसे मिश्रित विधान की कविताएं अपना विशेष महत्व रखती हैं —

“हाथियों के झुण्ड-के-झुण्ड

सचमुच वितुण्ड!

मस्त हो नील-सर में स्नान कर रहे

तट पर विहर रहे

लेकिन अचानक ‘खेदा’

कुछ भागे, बच गये

कुछ खाइयों में गिरे।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

काला विराट् अजगर हंस को निगल गया

और सोया भी नहीं

लेकिन कुछ देर बाद उसका पेट फाड़कर

अक्षत हंस निकल आया

पर अजगर मरा नहीं

भागकर काले जंगल में छिप गया।¹⁷

जहाँ नारी का मांसल बिम्ब है वहीं वह सत्य, शिव और सुंदर के प्रतीक रूप में भी है। इसी प्रकार मानव रूप दिव्य रूप का भी प्रतीक है।

कवि को बिम्ब और प्रतीक विधान में समान रूप से सफलताएं मिली हैं। काव्य की अर्थवत्ता इनसे बढ़ गयी है। कवि का शिल्प-विधान भी इनसे सम्पन्न हुआ है। पारम्परिक और मौलिक प्रयोग सराहनीय है।

कुछ इतिहास-पुरुषों के अन्तिम क्षण

अवसान अथवा उससे भी बढ़कर साम्राज्य या सत्ता के अन्तिम क्षण बड़े मार्मिक होते हैं। कविता में मार्मिक पक्षों का उद्घाटन अपना विशेष महत्त्व रखता है। कवि ने कुछ महापुरुषों के अन्तिम क्षणों की अनुभूतियों को व्यक्त किया है। उनकी अनुभूतियाँ सार्वभौमिक स्तर की हैं। प्रासंगिक हैं। इस सन्दर्भ में कवि की रचना 'बहादुरशाह जफर शीर्षक की ही है। इसमें स्मृतियों का बड़ा महत्त्व है। पूर्वदीप्ति या पश्चस्मरण शैली में अंग्रेजी में कथा और काव्य साहित्य बहुत है। हिन्दी में यह शैली प्रतिष्ठित हो चुकी है। उक्त कविता अतीत रस की हिन्दी की अन्तिम रचना है। बहादुरशाह का चारित्रिक द्वन्द्व, विवशता तथा पीड़ा को कवि ने कलात्मक रूप से विवृत किया है, इससे इतिहास पर कहीं व्याघात नहीं पहुँचता है। दिल्ली के पतन की रात निश्चित ही भयानक रही होगी। आतताइयों का आगमन भयानक होता है। उस पर भी रात और नगर के पतन पर। नागरों के अल्प स्वर सुनाई देते हैं। दस्युओं-से भयानक स्वर गूँजते हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में वातावरण-संरचना, इतिहास और भावना तीनों को एक साथ प्रस्तुत किया गया है। यहाँ ध्वन्यात्मक और दृश्यात्मक बिम्ब बनते हैं। सूक्ष्म और स्थूल, बाह्य और आभ्यन्तर बिम्ब भी बनते हैं -

"..... भीमा रजनी? आतंक

विश्व पर छाया है

ध्वस्त हो चुके हैं नगर

के प्राचीर तथा द्वार

धराशायी हो चुके हैं

शत-शत भवन, प्राण-त्याग

कर चुकीं सहस्रों विवश

नगरियां, बलिदान
 कर चुके असंख्य नर
 तथा उनसे भी अधिक
 पलायन कर गये
 नगर में नागर कम,
 दुर्दान्त दस्यु अधिक
 हैं अन्धकार उनकी
 रुचि के अनुकूल है।¹

जफ़र के अन्तिम क्षणों को लाल किले के मानवीकरण के माध्यम से भी दिखाया गया है। यहाँ लाल किला मुगल सत्ता या मुगल उत्तराधिकारी जफ़र का प्रतीक भी है —

लाल किला मन पर चोट
 खाए बेहोश पड़ा!
 जा चुके इसके वासी
 सुरक्षित स्थानों में
 और मैं अकेला हूँ!
 दो चार दास, प्राण
 से प्रियतर समझते
 हुए मुझे, विद्यमान
 हैं; बस, तैमूर का
 वंशधर अकेला है!
 ऐ आसमान में
 चमकते सितारो, तुम
 मेरे ऊपर बीती
 व्यथाओं पर मत रोओ
 क्योंकि इस ज़मीन पर
 कहानियाँ प्रायः करुण
 ही होती हैं! आह,
 कोई भी ऐसा नहीं
 जिससे दर्द को बाँटूँ!²

1. बहादुरशाह जफर, पृ. 9

2. बहादुरशाह जफर, पृ. 10

जफ़र साहब भाग्यवादी और नियतिवादी दोनों हैं। मृत्यु की तरह इनको टाला नहीं जा सकता है। ऊपर अंग्रेजी साम्राज्य के आतंक को दिखाया गया है। लोग कुर्बानी दे रहे थे और अंग्रेज सब नष्ट कर रहे थे। उजड़ी दिल्ली का चित्र है। लालकिला टूटते इतिहास का प्रतीक है मन पर चोट खाये बेहोश पड़ा है। बहादुरशाह जफ़र की वेदना है। बादशाह के अन्तिम क्षण की मानसिकता का सुन्दर चित्रण है। अनुभूतियों की सही अभिव्यक्ति है। रोते हुए सितारों को वह समझाता है कि तुम मेरी व्यथा पर मत रोओ! कोई शेष नहीं था कि उसको दर्द दिया जा सके। सर्वत्र सन्नाटा है। इससे शिक्षा मिलती है कि सब की यही अन्तिमदशा होती है। अन्तिम रात सबसे अधिक काली होती है। 'राम की शक्ति पूजा' में भी निराला जी ने ऐसा ही बिम्बात्मक चित्रण किया है। लाल किला मुगलों के ऐश्वर्य का स्मारक है। राग तथा उनके करुण अन्त के इतिहास का ग्रन्थ है। इसका खूनी रंग करुण अन्त के इतिहास का ग्रन्थ हैं इसका खूनी रंग करुण कहानी कहता है। स्थान स्थान की स्मृतियाँ सताती हैं। समय सब को माँझता है। इसमें गत वैभव को याद किया गया है। आज बहादुरशाहजफ़र न बहादुर न शाह रह गया है। एक करुण नाटक का अन्त है। उसका जन्म भी दुर्भाग्य की घड़ी में हुआ था। यहाँ जीवनी, इतिहास और अनुभूतियों का समायोजन है। बादशाह अहं की ज्वाला में जलते हैं। या करुणा ज्वाला में। हर शासक टूटकर फकीर हो जाता है। बादशाह मोटी रोटियाँ खाता और उनको स्वादिष्ट बताता है; स्वाद भूख में होता है न कि भोजन में। उसको पूर्वज, उनकी घटनाएँ और स्थान याद आते हैं। वह सबसे अभागा अपने को कहता है। अंग्रेजी दुष्टता का वर्णन है। विवश को तोड़ना और सबल का पदचुम्बन फिरंगी की नीति हैं। बन्दी बहादुर शाह सब कुछ सहन करने के लिए विवश है। उस राजद्रोह का अभियोग है। वह दया की भीख माँगता है। करुण कथा है। लम्बा स्मृति संचारीभाव है। पूरी कविता करुण रस का सुन्दर उदाहरण है। बिम्ब - विधान इतिहास - बोध, अतीत और वर्तमान के विविध रूपों से जफ़र के अन्तिम क्षणों को प्रस्तुत किया गया है। मुगलवंश की संध्या का बिम्ब है -

आलमगीर का वध हुआ,
शाह आलम की आखें
निकाली गई, अकबर³

को फकीर बनना पड़ा

और बहादुरशाह

सारे दुखान्त नाटक

का करुण अन्त बना!

मत रो, अभागे ज़फ़र

तेरा जन्म ही दुर्भाग्य

की घड़ियों में हुआ

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

किला काल का कराल

आख्यान है; सैयद -

बन्धुओं का निरंकुश

आचरण, आह, मैंने

अपनी आँखों से देखा

था गुलाम क़ादिर का

अपने पितामह शाह

आलम को नेत्ररहित

करने का लोमहर्षक

अनाचार, मराठों

की उच्छृंखलता! अभी

विगत संग्राम में

दीवान-ए-आम

के पार्श्ववर्ती तरु

के निकट गौरांगों

का वध! रक्त लाल किले

की पहचान है! अभी,

न-जाने कितना रक्त

इसके रक्तवर्ण प्रस्तर

पियेंगे? पता नहीं!⁴

ज़फ़र के माध्यम से अनेक बादशाहों के अन्तिम क्षणों की स्थितियों का वर्णन दिया गया है। एक त्रासदी का संग्रह बन गया है। यह जीवन-अश्व की कठोर बल्गा विवशता है। उसका शासन हर दशा में स्वीकार

करना पड़ता है। सब का अन्त विवशता में ही होता है। बहादुर शाह ज़फ़र के बन्दी होने के पूर्व के वाक्य कितने मार्मिक है —

चलूँ स्वेच्छा से बन्दी

बनना उचित नहीं —

जाता हूँ, लाल किले!

अब कभी तेरे दर्शन

नहीं कर सकूँगा⁵

ज़फ़र का जीवन दुःखों की कहानी है। उसे लालकिले के दर्शन पुनः करने पड़े किन्तु बन्दी रूप में! दास का भी करुण अन्त हुआ था। अनेक करुण प्रसंग ज़फ़र को याद आते हैं। वह अपने को सबसे बड़ा अभागा और नियति का व्यंग्य, वंश का बुझता दीपक और मुगलवंश का आखिरी वारिस कहता है। अपने को वह अतुलनीय अभागा कहता है। वह अंग्रेजों के सामने अपने को स्वयं समर्पित करता है। वह राग-विराग से ग्रस्त है। वह बार-बार अपने पूर्वजों को महान् कार्यों को स्मरण करता है। वह कहता है कि जो अंग्रेज मुगलदरबार में अर्जियाँ दिया करते थे — वे आज मुझको बन्दी बना रहे हैं। वह सब कुछ सहन करने के लिए विवश है वह दीवाने खास में अपमानित होने के भय से संत्रस्त है। लाहौरी दरवाजे को देखता है। वह अपने को नियति का व्यंग्य कहता है। न्याय के नाम पर किए जा रहे अंग्रेजों के नाटक का वह बार बार स्मरण करता है। अरण्य रोदन करता है। बन्दी जीवन को वह समाधि कहता है। स्मृति संचारी भावों का सुन्दर चित्रण है। वह राष्ट्रद्रोही और बन्दी हैं आज इससे कोई स्नेह करने वाला नहीं है। कोई संवेदना देने वाला नहीं है। जो उससे दूर है — जो जीवित है वे नाम लेलेकर रो रहे हैं। जो पास हैं वे अपनी-अपनी व्यथा में ही डूबे हैं। रंगून में शाह आत्मपीड़ा को व्यक्त करता है। ज़फ़र की वेदना सब की वेदना है, सब की वेदना है। हर सत्ताच्युत व्यक्ति यही सोचता है। जीवित ही व्यक्ति समाधिस्थ-सा हो जाता है। कविता का अन्तिम अंश है —

ओ निरुपाय, दीन ज़फ़र

रोना है एकमात्र

साथी और सहारा

तेरा, तू उसी के साथ
 दिन-रात एक कर दे,
 दिन-रात एक कर दे,
 तब तक जब तक कि मृत्यु
 की शीतल छाया में
 तेरे पराजय, कुण्ठा
 तथा विवशता से
 भरे हुए तथाकथित
 जीवन का अन्त न हो
 'जीवन' का अन्त न हो!⁶

'वृद्धा का दर्पण-दर्शन' शीर्षक में कवि एक वृद्धा की बातों को कहता है — जो सभी वृद्धाओं की हो सकती हैं अन्त में सब कुछ बदल जाता है, मात्र एक दीर्घ व्यथा रह जाती है — जीवन का पराजित शिशिरा है—

आह, यह आनन है
 यौवन की समाधि नहीं,
 जीवन की समाधि! नहीं
 जीवन की समाधि! धवल
 केश धवल शवावरण?

गत यौवन के लिए पश्चात्ताप है।⁷

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जीवन एक समझौता
 है, उसे न तोड़ूंगी
 तुझे नहीं तोड़ूंगी!⁸

'हत्या का स्मरण' कविता में भी अंग्रेजी साहित्य के कुछ उदाहरण हैं। हत्यारा स्वयं अपने लिए क्रूरतम दण्ड है, स्मरण उसको मरण से जकड़ लेता है, सीज़र की छाया-सी चिरदोलित रखता है, स्थिति में अन्तर होने पर भी कॉलरिज की 'द राइम ऑफ द एन्शान्ट मैरीनर' की स्मृति दिला देती है। इसमें अपराधी का मनोविज्ञान विश्वस्तरीय ढंग से उभरकर सामने आया है। हत्यारा भी उसको स्वीकार करता है —

6. बहादुरशाह जफर, पृ. 32

7. बहादुरशाह जफर, पृ. 48

8. बहादुरशाह जफर, पृ. 53

ओह जिस क्षण मैंने
किया था प्रहार, उस क्षण

पूरी कविता, दर्शनीय है।

‘बहादूरशाह ज़फ़र’ की कविता ‘मैं अकेला हूँ’ में कॉलरिज के प्राचीन सामुद्रिक यात्री (एंशंट मेरिनर) की याद आती है, जो शापित होकर समुद्र पथ पर अकेला रह जाता है, जिसके सारे साथी मारे जाते हैं, और तब वह बोल पड़ता है —

अकेला, अकेला, समग्रतः अकेला

इस विस्तृत सागर में बिल्कुल अकेला⁹

विलियम कॉउपर ने अलेक्जैण्डर सैल्कर्क की निर्जन द्वीप एकान्त के क्षणों का मार्मिक वर्णन किया है। वह सब कुछ का स्वामी है, पर सब कुछ निष्प्रयोजन है।

एलिजाबेथ के अंतिम क्षण

इतिहास मेरा चारण

बना है, बनेगा, वह

सर्वथा मूढ़ है;

किन्तु मेरे अतिरिक्त

किसी को ज्ञात नहीं

कि मैं कितनी दयनीय

विश्व इतिहास की

सबसे विकल, सबसे क्षुब्ध

सबसे अभागिन नारी!

शाहजहाँ के अन्तिम क्षण¹⁰

वह महान् था; उसने 5000 स्त्रियों को जीवन नष्ट किया। मुमताज़ की 14वीं सन्तान ने उसको मारा। समकालीन यात्री टेवर्नियर के अनुसार जहाँनारा से उसका अनैतिक सम्बन्ध था; वह यौनरोगी था। अन्तिम क्षणों की शृंखला में ‘मिस्टर जिन्ना के अन्तिम क्षण’ का। प्रस्तुत प्रसंग अनेक भारतीयों को सोचने के लिए विवश करेगा —

9. सार्वभौम, पृ. 75

10. सार्वभौम, पृ. 76

“फ़ातिमा, डायरी के वे पन्ने सुनाओ
जो मुझे बहुत प्यारे!
फ़ातिमा ने स्वयं उठकर अलमारी से
डायरी निकाली इच्छित पृष्ठों को खोजा और
पढ़ने लगी, जिन्ना आँख बन्द किये सुनता रहा;
मुझे गर्व है, मेरे पूर्वज कुशपुर (कसूर)
के रहने वाले क्षत्रिय (खत्री) थे और मैं
राम का वंशज हूँ।” (सार्वभौम पृ. 84)

सार्वभौम के दूसरे खण्ड के 'क्षणायन' में विभिन्न महान् व्यक्तियों के अपने-अपने अन्तिम क्षणों के स्वर मुखरित हुए हैं। इनमें भगवान् कहलाने वाले व्यक्ति भी हैं। वैसे, लोग आज भी हैं। मनुष्य के अहं और पाश्चात्य या आत्मगलानि की कोई सीमा नहीं होती। आदमी महान् अपने कार्य और अन्य की सराहना से होता है। हर व्यक्ति को अन्त में अपने दुष्कर्म याद आते हैं। जीवन की निस्सारता भी महसूस होती है। अपनी असहायता, असमर्थता, निरुपायता का ज्ञान होता है। इनसे सामान्य जन को सीख मिलती है रोमांचक कल्पना का विस्तार होता है। ऐतिहासिक तथ्यों के संकेतों के साथ, अन्तिम क्षणों के चिन्तन भी रोमांचक कल्पना होती है। भगवान् बुद्ध के अन्तिम उद्गार विशेष रूप से दर्शनीय हैं —

जिजीविषा-विजिगिषा सहज तत्त्व हैं, इनसे
मुक्त कौन हो सकता? किन्तु मैं यह नहीं
मानता कि मेरा जीवन परतंत्र था।

आगामेम्नॉन के अन्तिम क्षण

ट्राय या इलियड का युद्ध ईसा पूर्व 1193-83 में हुआ था। राजाधिराज आगामेम्नॉन यूनानियों के नायक थे। स्पार्टा नरेश मेनेलाओस की पत्नी हेलेन को ट्राय-राजकुमार पेरिस हर ले गया था; उसकी इच्छा से। विजय के बाद वापसी पर राजाधिराज आगामेम्नान का स्वागत हो रहा था, शौर्यगान हो रहा था; लगता था धरती पर स्वर्ग आ गया है, किन्तु ठीक इसी समय राजाधिराज की पत्नी क्लीटेमनस्ट्रा ने जार एजिस्थस के साथ प्रहार किया, अप्रत्याशित प्रहार, असामयिक प्रहार और जो पुत्र ओरेस्टीज चुपचाप सब कुछ देखता रहा। बाद में उसने माँ और जार का संहार किया। केसेंद्रा की हत्या केश खींच-खींचकर की गयी। उसका कटा

तथा क्षत विक्षत शव! कुमारी केसेंझा ट्रॉयपति प्रियतम की परम सुन्दरी पुत्री थी।

महमूद गज़नवी के अन्तिम क्षण

सुन्दर बिम्ब-विधान है। मरणासन्न गज़नवी के आस-पास उसके शुभ चिन्तक खड़े हैं वह बड़बड़ाया

भटिंडा.... जयपाल.... सेवकपाल.... आनंदपाल....

नगरकोट.... मुल्तान.... भीमपाल.... थानेसर....

कन्नौज.... कालिंजर.... सोमनाथ....

सोमनाथ!

सोमनाथ!

सोना, सोना, सोना!!!

वह तूफान-सा उठकर बैठ गया। आदेश दिया "सारा खजाना मेरे हुजूर में पेश करो। मसूद ने कहा — अब्बा खजाना देखिये!

वह हीरे-मोतियों के ढेर को देखता है जो लूटा था। उसने अपने विरोधाभासी चरित्र को भी स्मरण किया। वह प्रायश्चित्त बोध करता है। वह स्वीकार करता है कि मैं दुनिया में लुटेरा हूँ, नरपशु हूँ। वह अपने को धिक्कारता है। वह खूब रोता रहा, लूटी हुई सम्पदा को देखता रहा। अन्त में चीत्कार करता हुआ लुढ़क गया। महमूद गज़नवी 1030 ई. में मरा।

बुद्ध के अन्तिम क्षण

बुद्ध ने भी अनात्म और अनीश्वरवादी दर्शन पर पश्चात्ताप किया है। कायरता की वृद्धि पर उन्होंने चिन्ता व्यक्त की है। दुःखनिरोध नहीं हो सका। उन्हीं के कथन का आशय है — "मैंने सत्य, धर्म, अहिंसा, मानवता, उदारता, दया, करुणा, क्षमा, शील का प्रचार-प्रसार किया फिर भी मेरे ऊपर व्यभिचार और बलात्कार के अनेक आरोप लगे। मुझे क्लीब और पलायनवादी भी कहा गया। मैंने किसी की निन्दा नहीं की। मैं जीवन की कारा का बंदी नहीं रहा। मैंने परिष्कारक और प्रक्षालक पुनर्जन्म को प्रतिपादन किया। प्रेरक और पावनतम निर्वाण को परम लक्ष्य सदा घोषित किया। निर्वाण महत्तम निर्माण का ही नाम है।" उन्होंने ध्वंस नहीं निर्माण का सहारा लिया। सबके उपरान्त वे जिजीविषा से मुक्त न हो सके। अपने को उन्होंने मानव ही माना है।

डैविड के अन्तिम क्षण

बाइबिल (ओल्ड टस्टामेण्ट) के पैगम्बर-योद्धा, राजा एवं कवि डैविड का दाऊद को यहूदी, ईसाई और मोहम्मदी तीनों मजहबों के अनुयायी परम पूजनीय मानते हैं। समय ईसा से प्रायः 1000 वर्ष पूर्व है। सत्ता के लिए किए गये पापों पर वह पश्चात्ताप करता है। अशांति में मरता है। सोता रहा। अपनी कामवासना पर पछताता रहा। वह ग्लानि से भरा था। बाथशेबा उरिया की पत्नी थी। डैविड बाथशेबा के लिए उरिया को अपनी सेवा में ले आया। उरिया ने प्राणपन से उसकी सेवा की, किन्तु कामातुर डैविड ने षड्यंत्र करके उसे मरवा डाला। इस प्रकार बाथशेबा डैविड की पत्नी बनी। इस अपावन कर्म पर वह सदैव पछताता रहा। बाथशेबा के आलिंगन व शृंगारिक चेष्टाएं उसको याद आती रहीं। चिकित्सकों ने उसके शरीर में उष्मा लाने के लिए एक परम सुंदरी (अविशाय) की व्यावस्था कराई जो निष्फल हुई। यहूदी, ईसाई और मोहम्मदी आदमी को जन्मजात पापी मानते हैं, ईश्वर का अवसाकारी। डैविड (दाऊद) को यहूदी, ईसाई और मोहम्मदी सब सम्मान देते हैं। वह राजा था, धर्म सम्राट और प्रभु का दूत था, पर अन्तिम क्षण में उसको कर्म याद आते रहें; प्रभु नहीं।

नैपोलियन के अन्तिम क्षण

वह महान् विजेता था, परन्तु विपत्ति को उसने मस्तक टेक दिया। वह नियति के नियन्ता को प्रणाम करता है। सेकेंड लेफ्टिनेण्ट से जनरल और जनरल से सम्राट बनने वाले महान् योद्धा नैपोलियन बोनापार्ट (देहांत 1821 ई.) ने 1815 ई. के वाटरलू युद्ध में परास्त होने के उपरान्त दयनीय बन्दी जीवन बिताया था वह भी फ्रांस से दूर हिन्द महासागर के सेण्ट हेलेना (अफ्रीका) की विकट जानलेवा चट्टान (लघुद्वीप) पर। वह नियतिवादी था। अन्तिम समय में वह अपने भले-बुरे दिनों का स्मरण करता है। वह लम्बा-तड़गा न था; कुछ गिट्ठा, कोमल और बेहद खूबसूरत था। महान् संकटों पर उसने विजय पायी थी, अन्त में वह स्वयं फँस गया। वह सम्राट बना था, उसकी तुलना सिकन्दर महान्, सीजर और शार्लमैन से की गयी। इतिहास उसके सामन झुक जाता है। पर एक समय आया कि सारा वैभव

11. डॉ. मिश्र के अनुसार, यह एक चिकित्सा-पद्धति हो सकती है। चरक ने भी चिकित्सा में कामप्रयोग का प्रतिपादन किया है। यहूदी उच्चारण में बतशेबा और अवीशग का उल्लेख बाइबिल में है।

पतझड़ -सा झर गया। वाटरलू की लड़ाई उसके जीवन की समाधि बन गयी। उसका जीवन करुण नाटक या करुण-महाकाव्य बन गया। वह आस्तिक था। वह प्रिया को संदेश देना चाहता था। उसके अन्तिम शब्द थे — फ्रांस की सेना, जासेफीन!¹²

सार्जेण्ट ह्यूपर्ट के निर्णय क्षण (सार्वभौम पृ. 85)

सार्जेण्ट ह्यूपर्ट अपनी नैपोलिअन-भक्ति में महान् था। उसने राजकुल में जन्म नहीं लिया था; परन्तु लोग उसके नाम से प्रेम करते थे। 6 वर्ष तक बन्दी नैपोलिअन (स्वामी) के साथ रहा। नैपोलिअन की समाधि पर वह उन्नीस वर्षों तक अकेला रुकता है। इसके पश्चात् जब एक संधि के अंतर्गत नैपोलिअन का ताबूत फ्रांस लाया गया, तभी आया।

कवि ने मार्मिकता को चरमात्कर्ष पर पहुँचा दिया है। महापुरुषों के अन्तिम क्षण बहुत अल्प मात्रा में उत्तम होते हैं। शासकों, सैनिकों, पहलवानों, नर्तकी, नर्तकियों, गायकों, वादकों, खिलाड़ियों और पुलिस के लोगों के अन्तिम दिन बड़े कष्ट के होते हैं। औरंगजेब की आखिरी रात भी बहुत भयानक थी। वह अपने कर्मों का मूल्यांकन करके अपने को सबसे बड़ा गुनहगार कहता है। तपेदिक-रोगी मिस्टर जिन्ना के गले में कैंसर भी हो गया था। उनका गला सड़ गया था। कायदे-आजम का नरककाल शव के समान शैया पर पड़ा था। हजारों अत्याचारों का प्रेरक, पाकिस्तान का निर्माता, लाखों लोगों का कांतिल, खरबों का लुटेरा था वह। सब कार्यों के लिए वह पश्चात्ताप करता रहा। जिस गले से वह जहर उगलता रहा — वही सड़ गया। (सार्वभौम, पृ. 84)

इनसे बचे हुए लोगों की सीख मिलती है। अतिरेक करनेवालों की यही गति होती है। मानव को मानव के समान ही रहना चाहिए। समभाव या मध्यम मार्ग को अपनाना चाहिए। कविता शिक्षिका होती है। अच्छी कविता को पढ़कर कितने दुष्ट साधु हो गये। इसी प्रकार बुरा साहित्य पढ़ने से अनेक साधु दुष्ट भी हो गये हैं। इसलिए साहित्य भविष्य की मंगल कामना के साथ लिखा जाना चाहिए। मिश्रजी की इस प्रकार की कविताएं बहुत उत्तम हैं। प्रकारान्तर से उन्होंने समझा दिया है कि बुरे कर्म का फल अच्छा कभी नहीं होता, कर्ता स्वयं का अन्तिम मूल्यांकक भी होता है। उसका वह मूल्यांकन जनमानस के मूल्यांकन के आस पास होता है।

नारी-संवेदना

कवि (डॉ. रामप्रसाद मिश्र) में नारी-संवेदना बहुत अधिक है। उसने अपनी दृष्टि या यथार्थ की दृष्टि से उसको देखा है। जो कहा गया है उससे अधिक कवि ने स्वयं की आँखों से देखकर लिखा है। युवती, सुन्दरी और देवी भी उसने माना है। विविध मनोदशाओं और प्रभावों पर उसने लिखा है। काम, रोमांस और उसके अवारा रूप का भी कवि ने वर्णन किया है, जिसको देख कर बदन धू-धू कर जलने लगता है। हृदय घृणा से भर जाता है। कुलटा, बदचलन, रूप का भी वर्णन है। परन्तु कवि को उसका सात्विक सौन्दर्य और सहज ही पसन्द है। उसके विकृत रूप को उसने नहीं स्वीकार किया है। अपनी पत्नी राजकिशोरी के प्रति कवि ने जो संवेदनाएं प्रकट की हैं, वे नारी जगत् के लिए बहुत उपयोगी हैं। उसने अपनी पत्नी के लिए 'स्वर्गता' शोककाव्य लिखा है। उसको सम्बल, उज्ज्वल अतीत की विजय — ध्वजा आदि कहा है।

जीवन की निराश चिरन्तनता में आशा की

एक मात्र ज्योति राजकिशोरी, नारीत्व तुम्हें!

नारी माता होने के कारण सबसे अधिक पूज्य है। देशी-विदेशी कवियों की बातें भी हैं। कवि ने नारी के स्थूल रूप का विरोध किया है। 'इल और इला' कविता में स्त्री-पुरुष सम्बंधों पर लम्बा विचार है। इसमें बुध और इला का प्रेम है। 'पुरुष का यौन-अनुभव' शीर्षक की कविता में पुरुष के अन्तःबाह्य अनुभवों को कहा गया है। नारी का सही सम्मान पुरुष ही कर सकता है। इसी प्रकार 'नारी का संभोग-अनुभव' कविता में अनुभवों को ढोंगों से ऊपर उठकर कहा गया है। मानव की प्रवृत्तियों और संभोगजन्य क्रिया कलापों को भी लिखा गया है। क्रमवार संभोग के 3 सोपानों का वर्णन है। सभी के सभी रूपों को प्रस्तुत किया गया है। उसके अभिनेत्री रूप का चित्रण दर्शनीय है —

मेरा नवनीत-कोमल रूप,
मेरा रम्भा-सा नृत्य,
मेरे विलास कलित लास
अर्थ में बद्धमूल!
मेरा सौन्दर्य होकर निर्लज्ज बन जाता
सार्वजनिक काम का मादकतम उत्तेजक,
जिस पर अधिकार सबका!²

नारी अपने सभी रूपों में संवेनाग्रस्त है। समाज ने व्याक्तिगत और सामाजिक रूप से उसका शोषण किया है। उसके अभिनेत्री रूप का व्यापक प्रचार-प्रसार होता है, धन मिलता है, वह सराही जाती है, पर वह नारीत्व का नाश ही करती है। वह स्वयं बेचैन या असंतुष्ट रहती है। कितना तीखा व्यंग्य है।

इसके साथ नारी के देवी और सूक्ष्म रूप को भी कवि ने स्पष्ट किया है। नारी नर के पूरक-रूप में है —

“प्रत्येक नर में नारी छिपी होती है,
प्रत्येक नारी में अन्तर्निहित रहता नर,
केवल नर, केवल नारी, यह एक भ्रम है।
शाप से भयभीत होकर भी तुमने अपना
पुरुष-दर्प नहीं त्यागा,
पर मैं व्यथा का
समाधान कर दूँगी!
जाओ, तुम आज से
एक मास पुरुष और
एक मास नारी होगे,
पूर्ण मानवता का रस तुम्हें प्राप्त होगा³
❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖
“पुरुष और नारी दो
नहीं, एक के दो रूप;
एक में दूसरा
घुला-मिला रहता है।⁴

2. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 89

3. बौद्धिकरस, पृ. 134-135

4. बौद्धिकरस, पृ. 146-148

नारी के मांसल सौन्दर्य को भी दिखाया गया है। नारी का वह बाह्य आकर्षण भीतरी आकर्षण से कम नहीं होता है। नारी-संवेदना को कवि ने फुटकल रूप में अपने विविध काव्यों में व्यक्त किया है, परन्तु स्वतंत्र कवयः के रूप में। 'स्वर्गता' काव्य है। स्मृति संचारी भावों के माध्यम से कवि ने अतीत और वर्तमान के मध्य एक लम्बा जाल बुना है। अपनी ही पत्नी को केन्द्र में रखकर उसने नारी जगत् के प्रति अपने भावों को व्यक्त कर दिया है। कहीं कहीं युग और समाज में भी नारा-दृष्टिकोण आ गये हैं। कवि की मूल्यांकन दृष्टि व्यापक और संवेदनशील है। निराला ने अपनी पुत्री सरोज को केन्द्र में रखकर लम्बा 'शोकगीत' 'सरोज-स्मृति' शीर्षक से रचा है। 'स्वर्गता' को भी 'राजकिशोरी-स्मृतिकाव्य' कहा जा सकता है। इतिवृत्तात्मक, वर्णनात्मक और यथातथ्य कथन भी आकर्षक हैं। उनके अपने पूर्वापर सम्बन्ध है। पूरा काव्य विरहाकुल हृदय से निःसृत मार्मिक ज्ञान है, जो अनायास सृजित हो गया है। इसमें पुरुषप्रधान भारतीय समाज की तानाशाही पर रोक है। नारी की स्वतंत्र अस्मिता को स्वीकार किया गया है। नारी जीवनसंगिनी तथा पुरुषवत् स्वतंत्र है। उसमें सबकुछ है। वह विधाता की स्वतंत्र सृष्टि है। कर्मशीला है। वह असहाय और अबला नहीं है। दूसरे की शक्ति पर पालिता और पोषिता नहीं है। "भारतीय नारी अपनी कर्तव्य शक्ति से कुछ ऐसे अमिट हस्ताक्षर छोड़ जाती है, जिसे पति रूपी पुरुष चाहकर भी नहीं भुला सकता।⁵

नारी संवेदना से सम्बद्ध उनकी अन्तर्दृष्टि की तड़प दर्शनीय है -

"धिकार उस धर्म ध्वज-धर्मग्रन्थ को
जो नारी को लघुतर या दासी बतलाए
बहुविवाह की उपयोगिता समझाए
नारी-त्याग के घटिया बहाने बनाये।
धिकार उस पुरुष को जो पत्नी से
अनुचित-उचित छिपाये।"⁶

कवि ने नारी से क्षमा-याचना भी की है; भूल किसी से भी हो सकती है -

"शपथ तुम्हारे चरणों की, सद्यःप्रकाशित
अश्रुओं की, आँखें तुम थीं, तब भी झरती थीं

5. डॉ. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश', समीक्षा (स्वर्गता)

6. स्वर्गता

कि तुम मुझे क्षमा कर दोगी क्योंकि तुम
जीवन में सदैव क्षमा लोक में विहरती थी।”⁷

बात सत्य है — नारी पुरुष से अधिक क्षमा करती है। वह सापेक्ष तथा पुरुष से अधिक सहृदय होती है। कवि की पत्नी व्यक्ति-रूप में तो है ही, प्रतीक-रूप में भी है। अधिकांश सही औरत इसी प्रकार होती है। भारतीय गृहिणी का नमूना कवि ने ठीक चुना है। यही हमारा आदर्श भी है। कवि ने नारी को श्रद्धा के योग्य बताया है। वह आह्लादिनी शक्ति होती है। उससे पुरुष को अनवरत ऊर्जा या संघर्षशक्ति मिलती रहती है। वह पीयूष स्रोत होती है —

नारी कभी न त्याज्य है, वह श्रद्धा के योग्य
उसके शुभ संयोग से मिलता बल, आरोग्य।
नारी का संयोग है योगपूर्ण, कैवल्य
नारी के अनुराग से डरते सारे शल्य।⁸

नारी का सहज, सात्विक और त्यागी व्यक्तित्व कितना महान् होता है, यह ‘स्वर्गता’ के अध्ययन से ज्ञात होता है। नारी पहले सब-कुछ देकर ही बाद में सब-कुछ प्राप्त कर पाती है। उसी से जीवन में प्रकाश आता है। कवि ने अपने को पत्नी की तुलना में न्यून माना है। पुरुष की महानता को श्रेय नारी को भी जाता है। वैयाकरण कैपट की पत्नी स्वयं रस्सी बटकर तथा मेहनत मजदूरी करके गृहस्थी-का संचालन किया करती थीं। उन्होंने कैपट को व्याकरण लिखने के लिए चिन्तामुक्त कर रखा था। कुँवर सुरेश सिंह कहा करते थे कि मुझको घर-बार के प्रपंचों से दूर रखकर मेरी रानी साहिबा (स्व. प्रकाशवती) ने 19 किताबों को लिखने का श्रेय दिया। मैं 10 वर्षों तक कालाकाँकर तथा अन्यत्र घूमकर पक्षियों का शिकार करता रहा, उन पर किताबें लिखता रहा और 10 वर्ष तक पंत जी कालाकाँकर में रुककर कविता करते रहे। दोनों पर प्रकाशवती जी का प्रकाश था। नारी भारतीय संस्कृति को धरोहर है — इसी से लिखा गया है कि “जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता लोग रमण करते हैं।” कवि ने भी संस्कृति स्वरूपा नारी को सम्मान दिया है। उसने एकपत्नीव्रत को अपने जीवन में व्यवहृत किया है। विस्तार के लिए कवि के स्वर्गता काव्य को देखा जा

7. स्वर्गता

8. स्वर्गता, पृ. 100

सकता है। नारी ही सृष्टि का सृजन करती है। सीता और द्रोपदी की भाँति वह संघर्ष-यात्रा में पति का साथ देती है। प्रकारान्तर से वह अनाथ को सनाथ करती है। गंगा-सी जीवनधारा बनकर सब को पवित्र करती है। वह पादुका बनकर पुरुष और समाज, परम्परा और आधुनिकता, धर्म और संस्कृति की रक्षा करती है। ऐसी नारी के शोषण पर कवि ने संवेदना व्यक्त की है। 'स्वर्गता' में अपनी पत्नी के बहाने उसने नारी जगत् पर प्रकाश डाला है। कवि की पत्नी प्रतीक-रूप में भी हैं। गृहस्थी का वह संकुचित रूप कवि को सह्य नहीं है, जिसमें नारी घुट-घुटकर मरती है, स्त्रियों के श्रमाधिक्य पर कवि ने खेद प्रकट किया है। उसने निश्छलता से पत्नी (स्त्री) तथा व्यवहृत भी किया है। पत्नी-शोक में कवि ने 7 सर्गों का काव्य लिखा है। पत्नी-याचना भी की है, जबकि समाज में प्रचलित है कि पत्नी के मरने और जुकाम होने पर न रोते बनता है न हँसते, परन्तु कवि खुलकर रोया है। वह अपना सारा धन पत्नी के हाथ में रखता था। अपनी पत्नी के सम्पूर्ण सम्बन्धों को उसने खुलकर लिखा है। महान् नारी आदर्श पत्नी, कुशल गृहिणी, परम सेविका, पावन माँ सब-कुछ होती है। ऐसी नारियाँ अपकार को भूलकर उपकार का ही स्मरण करती हैं। पत्नी गृहस्थी की रीढ़ होती है। गृहलक्ष्मी भी। गृहस्थधर्म सबसे महान् होता है। कवि ने अपने अन्तःकरण में उसको स्थान दिया है -

कहाँ आवास दूँ?

मस्तक में आँधी है

आँखों में आँसू है

हृदय में ज्वाला है -

तुम्हें आवास दूँगा अन्तःकरण में मैं

तुम्ही-सा, शीतल, पावन, गहनतम!

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

शब्द नहीं ये अश्रु हैं, वृत्त नहीं यह भाव!

राजकिशोरी के बिना किसे दिखाऊँ घाव?

रो-रो कर मैंने लिखा प्रकृतिप्रिया-इतिहास

निज जीवन में सभी जन पाएं प्रेम-प्रकाश।⁹

अनेक दोषों के उपरान्त भी देश की अनेक नायियाँ उत्तम कही जाती हैं। सामन्ती परम्परा में सामन्तों के घरों की नारियों की महानता की बातें

होती हैं। सामान्य नारियों को साहित्य से दूर रखा जाता था। इधर सब पर विचार आ रहे हैं। अब तो राजभवनों से बहुत अधिक सामान्य घरों की नारियों की चर्चा होती है। कवि का परिवार सामान्य कोटि का ही रहा है। सामान्य वर्ग की उपेक्षिता नारी को कवि ने सर्वोपरि स्थान दिया है। अच्छाई-बुराई तो कहीं भी हो सकती है। प्रजातंत्र की यह सबसे बड़ी देन है कि उसने समीक्षा, संवेदना, साहित्य और भाषा को विस्तृत आयाम दिया है। इस प्रकार इसने दरबारों से जुड़ी समझदारी को आकाश के नीचे ला दिया है। अब किंगलिटरेचर नहीं, बल्कि पब्लिक लिटरेचर की धूम है। आज वह नारी पूज्या है, जो जीवन या पुरुष को प्रकाश देती है। सबसे पहले जो अपने काम आये उसकी चर्चा होनी चाहिए। सर्वत्र इतिहास को दुहराने से कोई लाभ नहीं है। सदा गड़े मुर्दों को उखाड़ना ठीक नहीं है। नारी वहीं नहीं है जो महल में उत्पन्न होकर वहीं खेलकर बड़ी हुई हो, फिर पत्नी और माँ बनी हो। नारी वह भी है — जो उपवास करती हुई, अर्द्धनग्न रहती हुई परिवार और पति के साथ बनी रही हैं। पुरुष से भी अधिक गम्भीर बनी रही है। 'नारी प्रेम सागर की अतल गहराई है।' (स्वर्गता पृ.7)। नारी के लिए ऊँची शिक्षा के साथ मर्म की पहचान, मर्यादा का पालन और सेवाभाव आवश्यक है। नारी हलाहल बनकर पानकर महान् हो जाती है। उसकी महानता विष को अमृत में बदल देती है। सद्गृहस्थी का 75 प्रतिशत भार नारी पर होता है। सही नारी के समक्ष जपी, तपी, नेता आदि सब व्यर्थ हैं। नारी श्रद्धा स्वरूपा है। कवि ने अपनी पत्नी को संकेत करके स्पष्ट कहा है कि "तुम्हारी विशेषताओं के कारण ही बहुपत्नी वाले अनेक महान् साहित्यकार भी मुझको अच्छे नहीं लगे।" कवि पत्नी को पाकर सब-कुछ सुखपूर्वक सहता रहा। पति-पत्नी का सामंजस्य सम्पूर्ण क्लेशों को दूर करने वाला होता है। पत्नी की अच्छाइयों के कारण भी पति व्याभिचार से बच जाता है। भारतीयता के सभी गुणों की उसने अपनी पत्नी में देखा है। इसी से वह अपनी पूरी कमाई पत्नी के हाथ में रख देता था। कवि ने स्वयं लिखा है —

नारी सर्वोपरि सत्य
चिति का प्रकट नृत्य।¹⁰

पैगम्बर, खलीफा, सम्राट् सब बहुविवाह के शिकार थे। नारी शोषण करते थे —

धन्य वही पुरुष जो नर-नारी समता-भवन
पर अखण्ड प्रत्यय का विजय-केतु फहराये!
तथाकथित महापुरुष प्रायः कल्पना, अंधविश्वास
मूढ़, रूढ़ उच्छ्वास.....

(स्वर्गता पृ. 12)

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

इसलिए तुम महान् हो -

“तुम मानस निकष पर स्वर्ण की शाश्वत लोक!

(स्वर्गता पृ. 13)

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

जब बेहद बढ़ता अवसाद

प्राण बचा लेती तब याद।

(स्वर्गता पृ. 15)

आत्मकथात्मक शोककाव्य ‘स्वर्गता’ के बीच-बीच में बहुत महत्त्वपूर्ण वाक्य हैं। वे आदर्श, यथार्थ और मार्मिक हैं -

सतीदास की मिश्र तुम सती-सतीत्व प्रवीण

‘सत्’ की चर्चा प्रायशः करती धर्मधुरीण।

(स्वर्गता पृ. 12)

राजकिशोरी जी आदर्श हिन्दू पत्नी थीं। उन्होंने अपनी कुर्बानी देकर सब को प्रसन्न करने का प्रयास किया था। कवि ने ठीक मूल्यांकन किया है -

ज्यों-की-त्यों चदरिया तम्ही ने धरी क्योंकि

कभी न कठोरता न अहंप्रस्तता न प्रमाद है।

(स्वर्गता पृ. 25)

कवि ने बड़ी ईमानदारी के साथ अपनी पत्नी की अच्छाइयों की खुलकर प्रशंसा की है -

तुम्हारी सेवा-भावना अद्वय की प्रतीकः परिचित

अपरिचित सभी को सदा प्रेम से खिलाती थीं

आते अतिथि को प्राप्य भी अवश्य देती थीं

परिचितों को पकवान देती-भिजवाती थीं

जाति, धर्म, आयु, नर-नारी भेद से ऊपर

उठकर जूटे बर्तन किसी से न उठवाती थीं
कोई परिचिता गई बाहर उसके पति हेतु
अशन-सामग्री भिजवाती थीं, रख आती थीं।

(स्वर्गता पृ. 72)

हम दोनों का शाश्वत प्रेम अप्रतिहत रहा
शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक गंभीर
यह रस था, 'कहीं-कहीं रससंधि, किन्तु कहीं
नहीं रसाभास, नहीं अति-नायिका चिर-घिर
पति-पत्नी पति-पत्नी होते, नहीं मजनू-लैला
फ़रहाद-शीरी, महिवाल-सोहनी, राँझा-हीर!

(स्वर्गता पृ. 78)

दुष्चरित्रता-बहुविवाह और अधुनातन पाश्चात्य भोगवाद और अस्थायित्व की निन्दा है। मानवीय समर्पणवाद को ही शांतिप्रद माना गया है। समर्पित प्रेम ही सुखदायी होता है। भारतीय नारी की कवि ने इसी से बार-बार प्रशंसा की है —

राजकिशोरी! तुम अमर, गया समर्पण जीत
वज्रशीर्ष नारीत्व के सम्मुख हुए विनीत!!
भारतीय नारीत्व की प्रतिमा तुम साकार
सदा रहोगी विजयिनी मानी कभी न हार।

(स्वर्गता, पृ. 80)

सत्य अहिंसा हैं विषय भाषण के नर हेतु
नारी का जीवन सहज सत्य-अहिंसा-केतु।

(स्वर्गता, पृ. 87)

स्वामी और दासी की भावना असम्भ्यता का मूल है। अतः

अरे दहेज-दानव के दास!

वधू-दाहक!

अपने पतन के वाहक

नारी नर की साँस

आस

विश्वास

जिसकी आँखों में स्वर्ग

अधर में अपवर्ग
हृदय में आनन्द।

(स्वर्गता पृ. 38)

दहेज सग कासे जलाकर स्वयं नहीं जल पा रहा है। दहेज नारी का सबसे बड़ा शत्रु है। आज स्त्रियों की दुर्दशा, अग्निदाह, आत्मदाह, आत्महत्या और प्रताड़ना पर कवि को क्षोभ है। 'ऋग्वेद' की महान् ऋषिका अपाला को कुष्ठ हो गया था जो अन्ततः ठीक हुआ और वह सफल काम हुई। ईसा पूर्व 2500 के आसपास का समय हो सकता है। वह अत्रि की पुत्री थी, कुल की चिर दीपशिखा। उसकी अन्तर्व्यथा को कवि के शब्दों में देखा जा सकता है —

ब्रह्मवादिनी हूँ, ऋषिका
हूँ, विदुषी हूँ, परन्तु
सबसे पहले मैं नारी हूँ।

यह तथ्य सबसे अधिक

स्पष्ट, मुखर, वाचाल।

आह, मुझे नारी का

तन और, उससे भी

अधिक, मन देने वाले

क्रूर सृष्टिकर्ता ने

कोटि कलिमाओं से

अधिक विषम, भयानक

श्वेत चर्मरोग क्यों..... (सार्वभौम, पृ. 118)

इसमें ज्ञान को प्रेम से छोटा दिखाया गया है। (दे. सार्वभौम पृ. 120) —

यदि प्रेम-समर्पणशील

पति प्राप्त हो जाये तो

मैं इस जीवन को कृतकृत्य समझूंगी।

नारी की संरचना पर कवि ने प्रकाश डाला है। प्रकृति और दैवी शक्तियों ने उसको सृष्टि के लिए रचा है —

घटाओं ने केश, सूर्य ने दीप्ति कांति, उषा ने लालिमा, अनंग ने हावभाव, रति ने लज्जा, दुराव, कमल ने लोचन-मुख-कर और चरण बनाये और एक मोहकतम प्राणी दृष्टिगोचर हुआ। सृष्टि ठगी सी रह गयी, पर

इसके उसमें कमियां भी आयीं — अष्टमी चन्द्र भाल बन गया। नेत्रों में अमिय, हलाहल और भेद भर गया, धनुष ने भृकुटियों पर स्थान ले लिया है। गुलाब ने कपोलों पर स्वयं को निछावर किया, तिलोत्तमा ने उन पर तिल-कविता लिख डाली, परिजात-फल उरोज में परिणत हो गया। नन्दनवन-मलय की लहरें त्रिवली में बदल गयीं, कररेखाओं में सौभाग्य ढल गया। चरणरखाओं में सौन्दर्य इतिहास लिख डाला और मोहकत प्राणी एक कुहक बन गया जिसको देखकर कोकिल कुहू-कुहू गानें लगा, चातक पी कहा? की तानें लगाने लगा। श्यामा ने सीटी बजायी, चटक ने चुटकी ली, मोर नाच पड़ा! —

सृष्टि के स्वर्ण में अमूल्यतम् नग जड़ा
विधाता सुखी हुए, हर्षित, आनंदित हुए
और उनके चारों मुख अनायास बोल पड़े
नारी! नारी! नारी! (सार्वभौम पृ. 148)

नारी में सम्पूर्ण प्रकृति समायी हुई है —

चैत के बौर-सी
बैसाख के भोर-सी
जेठ की छाया-सी
असाढ़ की घटा-सी
सावन की वर्षा-सी
भेदों की बिजली-सी
क्वॉर की जुन्हाई-सी
कातिक की बयार-सी
अगहन की नदिया-सी
पूस की दुपहरिया-सी
माघ के अलाव-सी
फागुन के फाग-सी
तुम्हारी पुष्पसज्जा,
आकृति,
स्मिति,
अलकावली,
दृष्टि,
हँसी,

लज्जा,

श्वास,

स्वीकृति,

समर्पणवृत्ति,

आवेश,

मिलन!

सारी प्रकृति तुममें और मुझमें

समा गयी

अपना लक्ष्य पा गई।

(सार्वभौम, पृ. 150)

पूरी प्रकृति के निर्माण के उपरान्त ब्रह्मा ने नारी को बनाया। उसके सारे गुणों को नारी में डाल दिया। इसी से नारी में इतने गुण आ सकें। कवि का अपना अंदाज है। भाव के धरातल पर सब ठीक है। उसकी स्वरथ परम्परा मिलती है। नारी-चेतना में इससे बल मिलता है। नारी को अनेक रचनाकारों ने अधम और अवगुण की खान कहा है। संतों ने नारी की निन्दा की है माया, नरक की खान, ठगिनी आदि कहा है। पर कवि ने उसको बहुत महत्त्व दिया है। पहले उसके उपमान बने फिर वह। उसके अंग-अंग में सौन्दर्य प्रतिष्ठित है। वह नरक नहीं, स्वर्ग का द्वार है नारी में प्रकृति और प्रकृति में नारी को कवि ने देखा है (सार्वभौम पृ. 152)। नारी में सत्य, शिव और सुन्दरम् को कवि ने देखा है। सुन्दरम् सात्विक और सहज है।

आज का यथार्थवादी युग इन मान्यताओं से बहुत घबराता है। वह सब-कुछ व्यक्तिगत मानता है। यथार्थ में यही है। अच्छे-बुरे सर्वत्र हैं। अनेक धिनौनी नारियाँ हैं, तो अनेक पूज्या भी हैं। एक मानक सर्वत्र नहीं लगाया जा सकता है। यह बात अच्छी है कि पावन नारी का मोहक रूप कवि में समाया हुआ है। यह न सौन्दर्यवादी दृष्टि से है न यथार्थवादी। कवि ने उसके उज्ज्वल पक्ष को ही देखा है। खुला प्रेम या सौन्दर्यपान हैं। (सार्वभौम, पृ. 152)। नारी सौन्दर्य को कवि ने बहुत सराहा है। उसके पावन रूप को प्रचारित और प्रसारित किया है। कवि ने सब-कुछ कह दिया है, पर पवित्र भाव के साथ; यथातथ्य जैसा। मांसल सौन्दर्य—वर्णन बिहारी के समान रस लोलुप नायक के लिए नहीं, बल्कि नारी-सम्पदा की प्रस्तुति के लिए है —

हर्ष से विह्वल वह चलती अविराम
बीच में अँगड़ाई! उठ गये उरोज

स्नेह के स्वर्ण-शिखर कला के ओज
ऊपर तक चले गये विश्वजयी हाथ

(सार्वभौम, पृ. 154-155)

सुन्दर भावभंगिमा है। सौन्दर्य वासना के लिए नहीं है। आनन्द के लिए है, सुख और तृप्ति के लिए है। कवि को सहज, सुन्दर नारी रूप ही स्वीकार है। तीनों लोकों में नारी का पावन सौन्दर्य व्याप्त है उसकी सभी मुद्राओं का वर्णन है, पर सौन्दर्य की दृष्टि से खजुराहो, कोणार्क के सौन्दर्यबोध-सा कवि को आज की नारी का भी बोध है सबको प्रणाम है। (सार्वभौम, पृ. 155) नारी ने ही विश्व की विभूतियों को उत्पन्न किया है। उसका पूज्य-रूप कवि को सबसे अधिक प्रिय है, पर भोग्या-रूप की उसने उपेक्षा भी नहीं की है -

“नारी कला काया है”

नारी मानवता की आत्मा है, नर शरीर।”

(कलाकोक -, दृष्टि)

कवि ने वैदिक नारी के पावन रूप को गुण और स्वभाव तथा ऋषि-बालाओं के आदर्श को प्रस्तुत किया है। विश्वावारा, घोषा, अपाला, इन्द्राणी, सूर्या, मैत्रेयी, गार्गी, आदि के वर्णित चरितों को देखा जा सकता है, सीता-सावित्री को भी प्रणाम है। नारी की पावनता को कवि ने अणु-अणु में व्याप्त माना है -

अणु अणु में व्याप्त हुए जीवन के चिर-सत हैं

(दृष्टि, पृ. 33)

भारतीय दर्शन सर्वश्रेष्ठ दर्शन है। उसको निष्पक्ष रूप से देखने की आवश्यकता है। नारी के त्याग और निःस्वार्थ पर कवि ने खूब सोचा और लिखा है। उसने नारी को मानवता का केन्द्र माना है। वह अपना सब-कुछ लुटाकर आनन्दित होती है -

ओ नारी, ओ मानवत्व की आत्मा,
तेरा दायित्व कठिनतर औ महान् है;
तेरा समर्पण धन अतुलनीय पावन है,
तेरी चिर साधना में चित्ति गतिमान है!!¹¹

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

पुरुष पुरुष है, स्वार्थ उसका अति स्पष्ट है
 वह नाम, दाम, काम, धाम का दास है;
 किन्तु, ओ नारी, तू आत्मा मानवता की,
 तेरा समर्पण-धन शाश्वत-आश्वास है!¹²

‘वेदायन’ में कवि ने विविध नारियों की चर्चा की है। अपाला की चर्चा है — वह विदुषी-रत्न थीं। यज्ञ में शान्त ज्ञानधारा प्रवाह के लिए उनकी प्रार्थना की जाती है —

हे माता! तुमने निज जीवनगत ज्वाला से
 अमृत निकाला था, अमृत ही पाला था
 महत् वंश उद्भवा हे देवी तुमने निज
 सीमा को असीम के साँचे में ढाला था (पृ. 50)

‘वेदायन’ के पंचम सर्ग में विश्वपला जैसी नारी पर प्रकाश डाला गया है। जीवन की विविध दशाओं का चित्रण है। युद्ध को जीवन का आवश्यक अंग बताया गया है। युद्धरहित जीवन आत्मघात है। युद्ध नर का शृंगार अंग नारी की शोभा है। इन्द्र का युद्ध जीवन्त यश था। विश्वपला के संघर्षरत रूप का चित्रण है। भागते हुए कायर अरियों को खदेड़ती हुई वह परम सुख पाती है। शौर्यमयी नारी का चित्रण है। उनके पैर कट गये थे — फिर भी वह लड़ती रहीं। कवि ने नारी का चित्रण उदपुरुष के समान किया है। वैदिक नारियाँ युद्ध से नहीं डरती थीं। वे युद्ध को जीवन का अंग, सम्यता और संस्कृति का विस्तार मानती थीं। योद्धा राष्ट्र की आशा होता है। रक्षक होता है। वह अपना अनुभव सुख प्रस्तुत करती हैं —

उस भीषण एवं गहन वन में मैं खड्ग लिए
 भागते हुए कायर अरियों को खदेड़ती
 परम सुख पा रही थी कि अकस्मात् उभय
 दिशाओं में घिरी, डरी नहीं शौर्यमती।
 पर साथी मारे गये प्रस्तर के खड्गों
 द्वारा, अश्व लुटे, पर आह! मैं नहीं हती
 लटके पैर, मूर्च्छित, पर आहत अश्व ले भागा;
 जहाँ मैं गिरी वहीं खड़ा रहा वह यती!¹³

12. दृष्टि, पृ. 160

13. वेदायन, पृ. 60

वे सेनापति के समान लड़ती हैं। वह युद्ध को जीवन का दर्शन मानती हैं। 'वेदायन' का सर्ग-6 अपाला पर केन्द्रित है। प्रकृति की गाद का जीवन है। वह वेद का गान करती है, वेद रचती और रचाती थीं। परन्तु उसको कुष्ठ हो गया था। उसके दयनीय, उपेक्षित एवं आत्महीन जीवन का वर्णन है। अश्विद्वय उन्हें ठीक कर देते हैं। उन्हीं के द्वारा विशपला का कटा पैर भी ठीक किया जाता है। कुष्ठ ने अपाला को सबसे वंचित कर दिया था, वह दया की पात्रा हो गयी थी। उपेक्षित थीं। प्रकृति और पशुजीवन से उनको अनुराग हो गया था, उनको अपना परिवार स्मरण हो आता। वह सोचती, मुझको अब कौन ग्रहण करेगा? पिता के जो शिष्य उनके रूप सौन्दर्य पर मोहित थे वे अब अरुचि रखते थे जो उनको अपमान-जनक लगता था वही आनन, वही रूप वही सौन्दर्य, वही वाणी, वही गायन — किन्तु थोड़े 'फूल आर पंजों के बनाते हलाहल पंचत्व। चारों ओर से अरुचि उत्पन्न कराते । आत्मग्लानि और घृणा से भरे जीवन का वर्णन है। मनोविश्लेषण और समाज की दृष्टि है। वह तपस्या कर माँ बनने का वरदान मांगती हैं। अपाला के भाव-जगत् का सुन्दर चित्रण है। वह प्रतीक-रस में भी है।

'वेदायन' सर्ग-7 की इला अनिन्द्य सुन्दरी है। उसकी संवेदना अवस्थाजन्य है — जिसका समाधान मात्र बुध हैं। नारी पुरुष के समानान्तर शक्ति है। उसके समकक्ष और बराबर हैं, उसको पुरुष की जितनी आवश्यकता है, उससे कम पुरुष को उसकी आवश्यकता नहीं है। दोनों दो नहीं अन्ततः एक हैं। दोनों के सामरस्य का फल सृष्टि है। सृष्टि स्त्री-पुरुष की कामजन्य इच्छा का परिणाम है। नारी के योगदान को कवि ने सर्वत्र स्वीकार किया है। कवि ने उसके उद्धार की भावना सर्वत्र है। उसने नारी मर्म को हर प्रसंग में समझा है। उसके सुख-दुख का हिसाब रखा है। नारी में सब-कुछ होता है; राग-विराग, भोग-विलास, सौन्दर्य आदि।

'वेदायन' सर्ग-7 में इला और बुध की प्रेम गाथा है। रोमांस का सुन्दर चित्रण है। ऐसे सात्विक शृंगार नाम मात्र के मिलते हैं। सबसे पहले बुध प्रभावित । इला के अनावृत मुखमण्डल ने उनको आकर्षित कर लिया। इला का नैसर्गिक सौंदर्य वर्णित है। मनोविज्ञान का सहज निरूपण है। उस बाह्य रूप को देखकर बुध का अन्तस आन्दोलित हो उठता है (पृ. 84)

16 वर्ष की इला का स्वाभाविक वर्णन है —

उसे स्वयं भूल गया था कि वह इला थी।

परिवेश मन को स्वानुकूल ढाल सकता है

किन्तु सत्य उसके भी तल में नित पलता है--

सरक गया परिधान

सहज ने लखा

अपूर्ण पूर्ण बन गया

जीवन अध्याय नया।

इधर इला को देख मच गया हाहाकार

प्रचण्ड पौरुष में बुध के और वह

समझते हुए भी नहीं समझ सके उत्क्रांति

निश्चित किन्तु आक्रामक दृष्टि से देखने

को इला का रूप

सम्राटों का भी भूप (पृ. 87)

बुध याचक-सा हो जाता है। एक कामकातर पुरुष का चित्रण है इसी दशा में पुरुष का पूरा पौरुष नारी के सामने निचुड़ जाता है। वह नारी से दया की भीख मांगता है। इला का मन भी मथ जाता है। आलिंगन का बिम्ब बड़ा रसिक और सहज रूप से है। परिणाम इस प्रकार है -

नित्यप्रति दोनों का होता रहा विलास

और समय बीत गया इला क्षण में

और वह दिवस आया जब किशोरी इला माता

बनी अनुपम सौन्दर्यशाली पुरुरवा की। (पृ. 80)

आगे गौरी कहती है -

प्रस्तुत देख जलसमाधि हेतु गौरी ने कहा

प्रत्येक नर में नारी छिपी होती है

प्रत्येक नारी में अन्तर्निहित रहता नर

'केवल नर, ही केवल नारी, यह एक भ्रम है

अतः अर्द्धनारीश्वर रूप ही सत्य है -

पुरुष और नारी दो नहीं, एक के दो रूप।

एक में दूसरा घुलामिला रहता है।

अगले सर्ग में पुरुरवा और उर्वशी का प्रेम है। उर्वशी को पाकर सुन्दरता सुन्दर हो जाती है। उसका अद्भुत सौन्दर्य है। वह राजा पुरुरवा

को अपने जाल में बाँध रखती है। वह दास-सा हो जाता है। उर्वशी छोड़कर स्वर्ग चली जाती है। नारी पुरुष की कमजोरियों का लाभ उठाती है। मर्यादा के साथ उसका उपयोग हो तो आदर्शों की स्थापना होती है। आदर्श जीवन का भी चित्रण है।

परन्तु नारी वहीं तक पूज्य है — जहाँ तक वह लोकमंगल की भावना से जुड़ी रहती है। अमंगली नारी के वध को भी उचित ठहराया गया है। ताटका वध इसीलिए होता है —

बोले महर्षि "राम, अत्याचारी चाहे
नर हो अथवा नारी, वध्य है। नारी यदि
मातृत्व से विरहित हो तो वह नारी नहीं।
नर का पतन होना घृणित है, परन्तु नारी का
पतन मानवता का अपमान। मातृशक्ति
का उच्छृंखल या क्रूर होना आत्मघाती है।¹⁴

जब नारी नारीत्व को छोड़ दे तो उसका वध करना पुण्य होता है, तब वह भीषण पिशाचिनी हो जाती है। नारी वध के अनेक उदाहरण प्रस्तुत हैं —

मारा था विरोचन सुता मन्थरा को इन्द्र ने
स्वयं विष्णु ने भृगु-पत्नी का वध किया। (पुरुषोत्तम)

याज्ञवल्क्य और गार्गी के शास्त्रार्थ की भी चर्चा है जिसके निर्णायक राजा जनक थे। इसीसे उनको राजर्षि कहा जाता है।

'पुरुषोत्तम' महाकाव्य में सीता के प्रति राम के आदर्श विचार हैं। सीता शक्ति और शील स्वरूपा हैं प्रथम दर्शन में ही वे सीता के सारे गुणों की सराहना करते हैं। नारी के प्रति कहीं उपेक्षा का भाव नहीं है। राम अहिल्या का उद्धार करते हैं' —

चलते-चलते देखा, एक ग्राम छोर पर
निर्जन पुटज-उपेक्षित, भयावह-एकांतमय
जिसके द्वार पर पाषाणी प्रतिमा-सी सुन्दरी
जड़ और चेतन का अंतर मिटाती थी।
ज्ञात हुआ, छली गयी, पति द्वारा दली गई

पतिता, समाज की तिरस्कृता अहल्या
यहाँ पर मर-मर का किसी तरह जी रही!

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

राम नेक कहा, गुरुदेव! नारी अपराधिनी
कैसे हो सकती यदि नर अपराधी न हो?

नारी यातना को अनार्य, असंस्कृत और हेय कहा गया है। अहल्या राम-लक्ष्मण को देखकर अभिभूत हो गयी। राम ने कहा — 'ऋषि पत्नी, मैं आपका सम्मान करने आया हूँ। उसी क्षण अहल्या जीवन्त हो गयी; समाज-सम्मानित तथा गौतम ऋषि की परमप्रिया! (पुरुषोत्तम पृ. 58)।

विवाह बन्धन में नारी बंधकर भी आनन्दित होती है। वैवाहिक जीवन के कष्ट भी उसे धर्म लगते हैं, सुख देते हैं। (दे. पुरुषोत्तम महाकाव्य सर्ग-6) 'पुरुषोत्तम' महाकाव्य सर्ग-15 में कैकेयी और भरत-शत्रुघ्न बन्धु में लम्बी वार्ता चलती है दोनों अपने को सही ठहराना चाहते हैं। भरत का बन्धुभाव मातृभाव से ऊपर चला जाता है। सीता एक आदर्श नारी हैं —

बैठ गए दोनों वीर और जनक-तनया उन्हें
परस कर खिलाने लगीं। प्रत्येक ग्रास एक
हास, एक उल्लास बना प्रशंसा में।
कहते जाते थे राम, 'अशन का धातु प्रिय
पारस के स्पर्श से कंचन बन जाता है।
स्पर्श, पारस, परस इसीलिए एक हैं।....
बलवत्तर होता है। देखकर आशन-व्यस्त
शुद्ध उल्लास-कलित पति तथा देवर को
सीता स्वर्ग-कल्पना पर हैंसी, "नारी का
स्वर्ग उसका परिवार, नारी का अपवर्ग
उसका सतत-अच्युत और सच्चरित्र भर्ता है
नारी का कैवल्य उसका पतिव्रत है।"

भारतीय नारी का उदात्त रूप सीता जी में है। सती नारी ही देवी होती है। राम सीता को देवी मानकर स्फटिक शिला पर उनका श्रृंगार करते हैं —

मरुभूमि का बट-वृक्ष

“होगा, अब आओ और उस स्फटिक आसन पर चुपचाप - देवी हो, देवी की ही भाँति सुस्थिर होकर अप्रतिम प्रतिभा-सी।”

और प्रभु ने उनको उठाकर आसन पर बैठा दिया, वे कुतूहल-भरित बैठी भी रहीं। (पृ. 208)

प्रभु ने सीता जी श्रृंगार किया है आगे पंचवटी में शूर्पणखा के लाख प्रयत्न करने पर भी राम में उसके प्रति कोई आकर्षण नहीं उत्पन्न होता है। वे सीता के दृढ़ अनुरागी हैं। वे कहते हैं, सभी सुन्दरियों से ऊपर आत्मशाक्ति होती है। शील नारी का सबसे बड़ा धर्म होता है।

राम ने अहल्या का उद्धार और शबरी का आतिथ्य स्वीकार किया शबरी से राम कहते— हैं देवि, मैं तुम्हारी भक्ति को सुनकर दर्शनार्थ आया हूँ। भक्ति तो नारी ही है; पुरुष ज्ञान, योग और कर्म हो सकता है। भक्ति, ज्ञान, योग और कर्म रूपी संतानों की सम्यक् रूप से पालन पोषण करती है। शबरी स्वयं को तुच्छ और अबला कहती है। नारी का पूर्ण आदर आर्य संस्कृति का एक प्रमुख आदर्श है जो व्यक्ति नारी का सम्मान नहीं करता वह अनार्य हैं। अपाला, विश्वावारा, घोषा, सूर्या, इन्द्राणी, अरुन्धती, गार्गी, मैत्रेयी आदि आर्याओं की भी यथा प्रसंग आदर्शनारी के रूप में चर्चा है। नारी का अनादर करने वाला असम्य है। जो राष्ट्र नारी का आदर नहीं करता वह दास बन जाता है। जिस राष्ट्र की मातृशक्ति दुर्बल हो या अपमानित हो, उसका भविष्य नहीं होता है। शबरी के जूटे बेर को खाकर राम प्रसन्न होते हैं। इसको वे अतुलनीय सम्मान समझते हैं वह कभी चख कर तो कभी पोछकर रखती थी; भाव विभोर थी।

वीर की पत्नी और माता दोनों महान्
वीर पत्नी के दायित्व बहुत बड़े होते हैं।
वीर माताओं के ऋण बहुत कड़े होते हैं।¹⁵

रावणवध के उपरान्त मन्दोदरी के विलाप को सुनकर राम की आँखों में आँसू आ जाते हैं। वे उसको पतिव्रताशिरोमणि कहते हैं।¹⁶

‘मुहम्मद’ की पत्नियों में समान्यतः मैत्री
थी, पर सपत्नी भाव सहजतर सत्य है

15. पुरुषोत्तम, पृ. 442

16. पुरुषोत्तम, पृ. 464

किन्तु नबी समभाव के प्रति सचेष्ट थे
अचित न्याय करता जो अल्लाह-भृत्य है
अबू बक्र पुत्री आयशा, उमर-पुत्री हफ़सा
की मैत्री विख्यात, किन्तु सत्कृत्य है
नबी को प्रिय, मरिया लौंडी होन पर
भी न्याय ही पाती, न्याय ही व्रत्य हैं

(मुहम्मद पृ० 103)

‘कल्पान्त’ महाकाव्य में द्रौपदी पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। उसके असम्मान पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। उसकी प्रतिक्रियाएं भी हैं। सब का परिणाम ‘महाभारत’ बताया गया है। अतः जहां नारी का अपमान होगा वहां विनाश भी होगा।

इस प्रकार कवि ने नारी के सभी पक्षों पर विचार किया है। इसके साथ उसने वैदिक काल की नारी से लेकर आज तक की नारी पर विचार किया है। नारी के उदात्त, मधुर और गर्हित चरित्रों को सामने रखा है। नारी का समाज के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान होता है, पुरुष से किसी स्तर पर कम नहीं। वह पूज्या, भोग्य, गृहिता और वध्या भी है। परन्तु कवि का आग्रह है। वह छुई-मुई नहीं हैं, उसमें भी तेज, बल, बुद्धि, हृदय और सतीत्व होता है। वह पुरुष से कम त्याग नहीं करती है। वह गृहिणी, सेविका, दासी, जन्मदात्री और योद्धा भी है। कलाओं की निर्मात्री और गायिका भी है। उसका योगदान सभी क्षेत्रों में रहा है। आज वह सहगामिनी के साथ साथ स्वतंत्र रूप से भी अपना विकास कर रही है। समाज ने भी उसको समान दर्जा दे दिया है। उसका कार्यक्षेत्र बढ़ गया है। उसने सभी क्षेत्रों में अपनी भागीदारी को सहर्ष स्वीकार भी कर लिया है। उसको सफलता भी मिल रही है। आज वह मधुकालीन दासता और उपेक्षा से बहुत हद तक परे हो गयी है, इससे सम्बन्धित अनेक अवधारणाएं बदल चुकी हैं। फिर भी वह शोषणमुक्त नहीं है। कुशल गृहिणी के रूप में उसके चरित्र को कवि ने सबसे अधिक सराहा है। उदाहरण के रूप में उसने अपनी पत्नी को ही प्रस्तुत किया है। नारी अपने चरित्र को स्वतंत्र रूप में विकसित न करके भी पति और परिवार को सहयोग करके भी बहुत कार्य कर सकती है। इस प्रकार की पत्नी को पाकर पति अपना पूर्ण विकास कर सकता है। नर बिना नारी के अपूर्ण है। नारी भी बिना पति अपूर्ण है। इसलिए समाज के सम्यक् विकास के लिए दोनों में समरसता आवश्यक है, मग के अनुसार परिवर्तन भी अपेक्षित है।

समाजशास्त्रीय अध्ययन

कविता का साहित्यशास्त्र ही नहीं, समाजशास्त्र भी होता है। रचनाकार समाज का अभिन्न प्राणी होता है। इधर साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की महत्ता बढ़ गयी है। कवि कई समाजों में विचरण करता है। वर्ण्य विषय का समाज, उसका यथार्थ समाज और संकल्पित समाज संयुक्त रहते हैं। तीनों के बीच वह तालमेल बैठाता है। वह ऐसे समाज को देना चाहता है जो सबके लिए मंगलकारी हो। मंगल के लिए वह क्रान्ति का भी आह्वान करता है। प्रगतिशील दर्शन का सहारा लेता है। सबसे अधिक कविता का लगाव वर्तमान या यथार्थ से होता है।

विवेच्य कवि (डॉ. रामप्रसाद मिश्र) की कविताओं में यथार्थ समाज की सबसे अधिक चर्चा है। 'क्रांति के गीत' कवितासंग्रह में सन् 1965-77 की राजनैतिक और सामाजिक दशा का यथार्थ चित्रण है। 'क्रांति' जब कवि के कंठ से मुखरित होती है तब समाज जागता है। कविता का उद्बोधन बड़ा सजीव होता है। इससे समाज चैतन्य होकर विकसित होता है। उसके भीतर गति और स्फूर्ति आ जाती है। कविता के अनेक चमत्कार देखने को मिलते हैं। कविता में जोश, सच्चाई, उपदेश, वर्णन और अनुभूति का होना आवश्यक होता है। इन्हीं के आधार पर वह पाठक या श्रोता को आकर्षित कर लेती है। जिस कविता में ये गुण नहीं होते हैं, वह कविता बहुत शीघ्र जनमानस द्वारा विस्मृत कर दी जाती है। ओज, असर और मार्मिकता से जुड़ी कविताएं काल और देश की सीमाओं को लांघकर अमरता को प्राप्त करती हैं। विश्व का अमर साहित्य इसके लिए प्रमाण है। समाज को जगाने का यही पुरुषार्थ कविता का श्रेय बन जाता है। कवि का मानना है कि प्रतिभा - अभाव, कुण्ठा और दरिद्रता में ही पल्लवित होती है। इसके साथ परिस्थितियाँ उसको उद्वेलित करती रहती हैं। कवि ने आज के यथार्थ को प्रस्तुत किया है, जिससे आज की लोकतांत्रिक व्यवस्था का पता चल जाता है -

जहाँ नहीं अन्तर्बाह्य
अभाव की ज्वाला
कुण्ठा की तीक्ष्ण हाला
दरिद्रता का पाला
वहाँ नहीं प्रतिभा कभी। (प्रतिभा से)

कवि समाज में वैचारिक क्रांति को लाना चाहता है। आज के अनेक कवियों ने ऐसा किया है; क्योंकि बिना इसके शोषण विहीन समाज नहीं बन सकता है। क्रांति तो वायु, तेज और जल की भाँति सर्वत्र फैली हुई है। वह कहीं आँधी है, तो कहीं समीर। क्रांति ही समाज में फैली सम्पूर्ण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विसंगतियों को नष्ट करती है। शान्ति और समानता के लिए क्रांति आवश्यक है। आधुनिक विश्व के निर्माण में क्रांति की देन सर्वोपरि है। कवि ने क्रांति को आंधी का प्रतीक माना है—

आँधी आ गई
पानी बरस गया
निरे फूल झर गये
पांखुरियां बिखर गईं
लेकिन बाग धुल गया
पुष्प रंग खुल गया।

सामाजिक कुरीतियों के प्रति उसके तीखे विचारों को व्यंग्य के प्रसंगों में देखा जा सकता है। कवि ने ग्रामीण समाज को अधिक बल दिया है। शहर से उनकी तुलना करके उन्हें श्रेष्ठ भी प्रमाणित किया है। आज गांव का समाज नष्ट हो रहा है और शहरी समाज बढ़ रहा है। प्रकृति विकृत होती जा रही है। आल्हा, कजरी, सोहर, नकटौरा और फाग आदि ग्रामीण गान लुप्त होते जा रहे हैं। सामाजिक संक्रमण बढ़ रहे हैं। चौपालों का अब पता नहीं है। कवि अपनी इच्छा प्रकट करता है कि ये गांव भाव की छाँव है, इनको मिटाओ मत —

मत मेटो गाँव, गाँव भाव की छाँव
शहर तो भाव शहर, घात औ दाँव।
कहाँ गई अमराई? कोयल की इक?
कहाँ गये मोर? कहाँ चातक की हूक?
कहाँ गई पगडंडी? कहाँ गई पुलिया?
कहाँ गई नदियाँ? आह, बदल गया हुलिया।

कहाँ गया आल्हा और कहाँ गई कजरी?
 कहाँ गया फाग? आह, पड़ गई बजरी!
 कहाँ गए सोहर? कहाँ गया नकटौरा?
 कहाँ गई चौपाल? कहाँ गया चौरा?
 सब अलग-अलग पड़े, करें काँव-काँव!
 मत मेटो गाँव, गाँव भाव की छाँव।

ग्राम्य समाज वर्णन के साथ-साथ कवित्त में सुन्दर बिम्ब-विधान भी है। भारतीय गाँव की मूल रूपरेखा सामने आ जाती है। विकास के नाम पर आज हमारी मौलिकता छीजती जा रही है। यह देश देव भूमि के रूप में था। शान्ति का प्रतीक था। आज न तीर्थ, न नदियाँ, न देवालय, न आस्तिक पवित्र भावना रह गयी है। सब घालमेल होता जा रहा है। धूल, धुएँ से सब कुछ भरता चला जा रहा है। औद्योगिक समाज भयंकर रूप से प्रदूषण मुक्त वातावरण ला रहा है। हमारी मानवता आज के समाज में रुग्ण हो गई है, नर-नारी सब बदल गये हैं। आज स्वस्थ मन और तन का अभाव है। औद्योगिक विकास में एक मशीन हजार हाथों को बेकार करती जा रही है। हमारी श्रम क्षमता छिनती जा रही है। फलतः बेकारी बढ़ती जा रही है। विकास के नाम पर हम बहुत बेकार हुए हैं। हमारा स्वर्णिम भारत अपने नैसर्गिक सौन्दर्य के साथ चला गया। सारे भाव नंगे होते जा रहे हैं। हमारी निजी पहचान मिटती जा रही है। वे कुशल काँस और वनखण्ड कटते जा रहे हैं। वे मोहक लताएँ, शीतल वायु, निर्झर, तरु, तमाल समाप्त होते जा रहे हैं। सब की स्वाभाविकता चली जा रही है। नैसर्गिकता को 'विकास' खाता जा रहा है। मूल्य बदलते जा रहे हैं। आज नैसर्गिकता को देखनेवाले या चाहनेवाले लोग धोखा खा रहे हैं या बेवकूफ कहे जा रहे हैं -

मैं फिसलकर नीचे गिर पड़ा

क्यों ?

मैं शरद के चन्द्रमा की चांदनी निहारने लगा था।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

फूल बहुत जल्दी मुरझा जाता है

यही उसकी पहचान

नजाकत, नफ़ासत

कागज़ के फूल बहुत जल्दी नहीं मुरझाते

प्लास्टिक के फूल बहुत वर्षों तक चल जाते।

आदमी शुद्ध अर्थाश्रित या लाभार्थी होता जा रहा है। विकास की आँधी आयी, विविध उत्थान-पतन हुए, हमारी नैसर्गिकता समाप्त हुई। कवि भीड़ से अलग हटकर वास्तविकता को देखने की सलाह देता है — “वैज्ञानिक दृष्टि से देश में विकास हुआ है। आर्थिक समृद्धता भी बढ़ी है, किन्तु वह चन्द लोगों की तिजोरियों को भरने में सफल हुई है। यह आर्थिक असमानता अनेक बुराइयों को जन्म दे रही है। भ्रष्टाचार का बोलबाला है। नेताओं का चरित्र पूरी तरह कलंकित है। नये-नये घोटाले करके राजनेता विदेशों में धन जमा करा रहे हैं, जिसका वे सुरक्षा शुल्क भी देते हैं। राजनैतिक दलों का दलदल बन गया है। जातिवाद और सम्प्रदाय आज धिनौनी राजनीति के हथियार बन गये हैं।¹ आज का सांस्कृतिक प्रदूषण से भरता जा रहा है। प्रबुद्ध वर्ग को इसको दूर करने का उपक्रम करना चाहिए। कवि ने ‘पुरुषोत्तम’ महाकाव्य में रामायण, ‘कल्पान्त’ में महाभारत, ‘वेदायन’ में वैदिक ‘दृष्टि’ में प्राचीन तथा आधुनिक और ‘नेताचरित्रम्’ में समसामायिक समाज को प्रस्तुत किया है। ‘नेताचरित्रम्’ में आज का भारतीय राजनैतिक चरित्र है। एक जिम्मेदार धूर्त समाज का चित्रण है। जीने की विवशता है कि आदमी जी रहा है —

जलती रहती है होली रोज अरमानों की
सपनों में तेरी व्यथा दूनी हो जाती है,
जीवन में रस नहीं, प्रतिक्षण दुखान्त नाटक,
जीने की विवशता ही तुझको जिलाती है।²

क्षुद्र जीवन की उपमा ‘बच्चर’ से दी गयी है। शोषण का चित्रण है। जिन्दगी व्यर्थ हो गयी है। परिणाम में जिन्दगी; जिन्दगी की समाधि हो गयी है। सबके बावजूद आदमी जिन्दा है, क्योंकि उसमें जिजीविषा है। वह गलत-से-गलत रास्ते पर चलकर भी जी रहा है। वह जनसामान्य से दूर अपने मतलब के लोगों से जुड़ा थोथा किताबी कीड़ा, कर्तव्यहीन चिन्तन, सड़ा तन, सड़ा मन लेकर चल रहा है। पहले समाज राजा का दास था — अब अपनी सुख-सुविधाओं का दास है। मानवता मरती जा रही है। इस होटल युग में सब घाल मेल हो गया है। दरिद्रता यहाँ पंगु होकर बैठ गयी है। जहाँ से सम्पन्नता, समता, समृद्धि रूठ गई है। यहाँ के लोग अंतीत का आसव पीकर झूमते हैं, दासता में भी गर्व का अनुभव करते हैं। अशिक्षित,

1. सच का साया, पृ. 3, 31 अक्टूबर 1996 ई.

2. बौद्धिकरस, पृ. 16

दरिद्रहीन सम्प्रदाय और जातिभाव से ग्रस्त है। स्वयं को वे भूल गये हैं। सही मूल्यांकन का अभाव हो गया है। आज मानवता रो रही है। परतन्त्रता और स्वतन्त्रता में कोई अन्तर नहीं रह गया है। मानसून पर निर्भर यह देश बिना बलिदान का आत्म गौरव चाहता है। वर्तमान को देखकर अतीत पर विश्वास नहीं होता है। अपने महान् ग्रन्थों पर भी विश्वास नहीं होता है। हमारा समाज आशावादी है, वह अपने पुराने गौरव का स्वप्न लिए सदन में भी मुसकरा रहा है। कवि भी आशावादी है, परन्तु वह यथार्थ को देखकर ही चकने को कहता है — बहुत विकृत है। मानव की पशुता पर उसको सबसे अधिक चिन्ता है। 'बलात्कार' शीर्षक कविता में कवि कहता है—

मानव की पशुता के
सर्व प्रमुख रूप, हत्या,
के ओ विवश अनुज, क्रूर
बलात्कार तुझमें भी
एक कला होती है;
तेरे संभोग में
पौरुष परितोष पाता;³

'भारतवर्ष' कविता (बौद्धिकरस पृ. 64) को देखा जा सकता है। पूरी कविता में भारतवर्ष की वर्तमान दशा पर प्रकाश डाला गया है। 'देश, दिल्ली और अहम्' कविता संग्रह में भी कवि ने पूर्वाग्रहमुक्त होकर अतीत और वर्तमान पर विचार किया गया है। इसके प्रकाशक के विचारों को देखा जा सकता है — "स्थिरता, प्रतिगामिता, एवं पूर्वाग्रह से मुक्त उनकी प्रतिभा साहित्य में नूतन प्रकाश विकीर्ण करने की दिशा में 'देश, दिल्ली और अहम्' को लेकर प्रस्तुत हो रही है। इस संग्रह की अनेक कविताएं देश के जीवन का ऐसा गम्भीर चित्र अंकित करती है कि इसे हिन्दी का नूतन 'कैण्टरबरी टेल्स' कहा जा सकता है। अपनी अचूक ग्रहण-शक्ति अपने सार्थक चिन्तन एवं अपनी सुनिर्दिष्ट शैली में 'देश, दिल्ली और अहम्' तथा 'बौद्धिक रस' का हिन्दी में वही स्थान प्राप्त होगा — जो अंग्रेजी में 'दि वेस्ट लैण्ड' और "फोर क्वार्टेट्स को प्राप्त हुआ है।"⁴ इस संग्रह की प्रमुख कविताएं 'अन्धे का आत्मनिवेदन', 'देश', 'दिल्ली' और 'अहम्' है। इनसे देश के अतीत और वर्तमान दशाओं का सम्यक् ज्ञान हो जाता है। समाज क्या था और क्या

3. बौद्धिकरस, पृ. 112

4. प्रकाशकीय, पृ. 5

हो गया? निष्कर्ष में अच्छा और खराब समाज था अब केवल खराब बचा है। इतिहासबोध से कवि ने दिल्ली की विविध सामाजिक दशाओं पर प्रकाश डाला है। दिल्ली एक बड़ा कब्रिस्तान भी है।

अभी वर्तमान समाज मध्यकालीन समाज से मुक्त नहीं हो सका है। आज का भारत दोनों और खिंच रहा है; अधर में है, जैसे दा पत्नियों के बीच बेचारा पति होता है। कवि ने यह नयी उपमा दी है —

मध्यकाल उसे खींच रहा पीछे की ओर;
आधुनिककाल की निशा है यहाँ नहीं भोर।
मध्यकाल की जड़ीभूत प्रतिक्रिया और
अलसाई विलासिता आधुनिक काल की
अपनी-अपनी ओर
खींच रही भारत को
दो पत्नियों के पति-सी
हालत बेचारे की।⁵

देश दलदल में फँसा है। इसको एक ओर परतन्त्र अतीत की जड़ता खींच रही है, तो दूसरी ओर इसके अवगुण हैं — रूढ़ि, भ्रम, अगति, सड़ा चिन्तन, कुण्ठा, धर्मप्रेत, अधरसेवा, शोषण, नग्नतम अर्थवाद, भीषण असमानता, कल्पनातीत भोग, कल्पनातीत रोग, मानसिक दासता, अवसरवाद, आलस और विलासिता आदि। फलतः हम पूर्ण आधुनिक नहीं हो सके हैं। होटल, क्लब, दफ्तर पर वस्त्र, पहनाना और साजसज्जा के अतिरिक्त मध्यकाल में है। हमारी सोच अभी बहुत पीछे है। कवि व्यंग्य करता है —

हम हैं वैज्ञानिक, किन्तु
प्रयोगशाला के बाहर;
हम हैं आध्यात्मिक, किन्तु
इस जन्म के पश्चात्।⁶

परिणाम में आज का देश कहीं का नहीं रह गया है। अतीत में यह जा नहीं सकता, आज का होने के समर्थ नहीं हो सका है। देश अतीत को पकड़े हुए है, पर वह तो पकड़ के बाहर है। वर्तमान के अनुकूल यह अभी तक बन नहीं सका है। फलतः यह अधरों में है। धोबी का कुत्ता न

5. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 12

6. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 13

घर का न घाट का। देश कहीं का नहीं रह गया है। नये मूल्य बन नहीं सके, पुराने ध्वस्त हो गये। एक रिक्तता छायी हुई है -

पुरातन मूल्य ध्वस्त
नये मूल्य अनिर्मित;
एक रिक्तता-सी छायी।⁷

आज हम संक्रांति के काल में पड़े हुए हैं। फलतः हमारे मानस में प्राप्ति की जिज्ञासा नहीं है; नैराश्य और आलस है। विकास तो जिज्ञासा से होता है। नये विचार इसीसे आते हैं। हमारी आत्मा में इसी से आनन्द नहीं है। इसी से कर्म शैथिल्य भी बना है। कहीं सुख नहीं है। भारत का सब कुछ ओझल हो गया है। इसकी मस्ती और सौन्दर्य जा चुका है। आज विदेशी बुद्धिवाद का मात्र ढोंग है। वास्तविकता यह है कि हमारा सब कुछ बिखर कर व्यर्थ हो गया है। तन, हृदय और बुद्धि में जितनी अप्राकृतिक दूरी भारत में है उतनी कहीं नहीं। यह अच्छा नहीं है। हम प्रकृति से हटकर विनाश की ओर जा रहे हैं।

आज हमारी सम्पदाएं नगरों में चली जा रही है। गाँव, बुद्धि, धन, बल से हीन होते जा रहे हैं। थोड़े-से नगरों, मुट्ठी भर लोगों तथा नरपशुओं में सब कुछ लुटाया जा रहा है। देश की धरती रक्त की प्यासी है। यह सदियों की प्यास है। जब तक एक भी शोषक, भोगी, पाखण्डी रहेगा तब तक देश का विकास नहीं हो सकता है। सम्पूर्ण विकास इन शोषकों को धराशायी करने के बाद ही होगा। यदि हम सावधान न हुए तो कल नष्ट हो जायेंगे। ऐसे लोग परम अधोगति को प्राप्त करेंगे। शोषक अपनी कब्र स्वयं खोदता है। कलीब नेता यह न भूलें कि यदि वे सदैव धोखा देते रहेंगे, तो जनता क्षमा नहीं करेगी। इतिहास उन पर थूकेगा। क्रांति या मुक्ति में से एक को चुनना होगा। श्मशान में जाना होगा। जो देश का जोश जल रहा है, इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। कविता देश का दस्तावेज है। इसका समाज शास्त्र सत्य और व्यापक होता है। कवि ने अपनी कविताओं में वर्तमान समाज पर सबसे अधिक प्रकाश डाला है परम्परा और आधुनिकता की प्रस्तुति में उसने व्यंग्य भी किया है। कविता का यथार्थ समाज या युग का यथार्थ होता है -

7. देश, दिल्ली और अहम, पृ. 13

दिल्ली भारत की राजधानी,
गुलामी की कहानी,
स्वतंत्रता में पैसा
बहता यहाँ बन पानी।⁸

दिल्ली का भौतिकवादी, राजनीतिक और ऐतिहासिक चित्रण है। वह एक दुखान्त नाटक है। भ्रष्टाचार, शोषण, ऋण, पतित समाजवाद और अत्याचार का स्मारक है। शासकों की यह निशानी है। इससे पराधीनता और शोषण की कथा का पता चलता है। दिल्ली का चरित्र चित्रित है। परतंत्रता, शोषण के गणनातीत अनुभव, दासता और शोषण का दिल्ली महाकाव्य है। दिल्ली विदेशी कला और देशी सामग्री की दोगली बच्ची है। इसमें रूप हो सकता है, पर गाम्भीर्य नहीं। एक भी महामानस यहाँ जन्म नहीं ले सका। महानता के लिए यहाँ कोई जलवायु नहीं है। यहाँ नीच और विलासी महान् बनते रहे हैं। यहाँ की जलवायु मादक है। तुच्छ है। यहाँ के आकाश में अत्याचारों के प्रेत हैं। पराजय और अपमान की भावना आज भी है। यहाँ का जीवन बाहर मदिरा-सा तरल, किन्तु अन्दर लाश-सा निष्क्रिय, दुर्गन्धित और जड़ी भूत है। इसी प्रकार कॉफी हाऊस के तमाम अवगुण हैं — वह यथार्थ समाज का छोटा-सा प्रतीक है। यह आदमी के खोखलेपन का सबसे बड़ा विज्ञापन है। यहाँ का शोर गुल, मानसिक निस्तब्धता का सूचक है। पारिवारिक जीवन की विशृंखलता का प्रतीक, अशिक्षा और निष्क्रियता का यह उद्घाटक है। राजनीति की डफली यहाँ बहुत पीटी जाती है, क्षुद्र विषय यहाँ बहुत ही महान् बन जाते हैं। यहाँ पूँजी का प्रभाव सबसे अधिक होता है। यहाँ मानवता बिकती है और सम्यक् व्यक्ति उसको हर्ष से खरीदते हैं —

सोने के पिंजरे में प्रकृति, कर्मठता से
यथार्थ, व्यापकता से
दूर, मगन हो रहा
शोषक, अर्द्ध-शोषक, कुण्ठित,⁹

आज का प्रथम श्रेणी का नागरिक वह है जो कृत्रिम जीवन जीये, अभारतीय-सा रहे, विदेशी भोजन, आचरण और व्यवहार करे। दिखावे में डूबा रहे। पूँजीपति हो। गर्वीला हो, काम कम और दिखावा अधिक करे, क्लब

8. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 29

9. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 60

जाये, रात में दवा ले, असामान्य रहे, बहुत दिन जिये, भोगी, विलासी, शोषक और आचरणहीन हो, देश से अधिक उसकी विदेश में आस्था हो। अन्त में हैमरेज, लकवा या हृदयरोग से मरे। द्वितीय श्रेणी का आदमी वह है — जो अग्रगामी का अनुकरण करे। महत्त्वाकांक्षी हो, बड़ो की जी हजूरी करे। तृतीय श्रेणी का आदमी वह है — जो द्वितीय श्रेणी को पाने में टूट जाय। जीवन में मर जाय।

आज का व्यक्ति अहम् में डूबा हुआ है। अहम् प्रचण्ड हिंसा-सा है — जो फाड़ डालना चाहता है। दूसरे के दर्द पर हँसता है। अहम् एक मनोविकार है। वह अपने सामने किसी को नहीं समझता है। अपना मिथ्या मूल्यांकन करता है —

जिन्हें अपनी निर्बल मेधा
से न मिलती अभिव्यक्ति,
वे अपनी हीनता को
मेरी अनुभूतियों की
तीक्ष्णता को कृत्रिम कह
पुचकारते रहते!
किन्तु मैं बढ़ा जाता
उन पर हँसता हुआ
और जीवन-ज्वाला के
अपने प्रति अत्यधिक
मोह पर कभी-कभी
थोड़ा क्षुब्ध होता हुआ
संघर्ष के महापथ पर।¹⁰

अहम् में आदमी सदैव मिथ्या मूल्यांकन करता है। आज इस प्रकार के मानव की अपार वृद्धि हो रही है —

क्योंकि मैं हूँ नूतन युग का
प्रज्ज्वलित श्रम-गौरव,
समता, सम्पन्नता का
एक महान् रूपक।¹¹

10. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 63-64

11. देश, दिल्ली और अहम्, पृ. 65

प्रकाशकों के यथार्थ चरित्र को दिखाया गया है। उनके अन्धेपन या भ्रष्टाचार और स्वार्थनीति पर लिखा गया है। साहित्यकार बनने का भी वे प्रयास करते हैं। मिथ्या आतंक, भय और बुद्धि का वे दबाव बनाते हैं। वे स्वयं तो लाभ उठाते हैं, पर लाभ देने से बराबर कतराते हैं। धैर्यशाली भारतीय लेखकों की कवि ने सराहना की है जो उनको झेलते हुए कुछ कर ले जाते हैं।

दूसरा समाज अभिनेताओं का है जो अर्थ, ऐश्वर्य, रूप और स्वास्थ्य को बेचता है। घटिया का भी वह स्वागत करता है। उसका अपना कोई चरित्र नहीं होता है। वह दूसरों का मुखौटा लगाकर कार्य करता है। अभिनेत्रियों की भी विचित्र स्थिति है जिनका अर्थ के लिए सब कुछ बिका है।

आज भी देश में पुरुष प्रधान समाज है। स्त्री की दशा पुरुष जैसी नहीं हो सकी है। कहीं-न-कहीं नारी लाचार है। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की कहावत चरितार्थ है। नारी आज भी आशंका की दृष्टि से देखी जाती है, परन्तु कवि के जीवन में कहीं अविश्वास नहीं है। व्यक्तिगत रूप से वह सच्ची नारी को श्रद्धामय देखता है। अपनी पतिपरायण पत्नी राजकिशोरी जी को भी सम्मान देता है। वे आदर्श हिन्दू गृहिणी के समान रही, परन्तु कवि का परिवार उनको लूटता रहा। परिवार के लोग यह भी चाहते थे कि राजकिशोरी जी मर जायें, तो कवि का विवाह करके पुनः दहेज लिया जाय। समाज में दहेज प्रथा भयंकर रूप से बढ़ती जा रही है। शिक्षा के स्तर के साथ इसका मोल भी बढ़ता जा रहा है।

आम आदमी बहुत आगे नहीं जा सका है। कवि के व्यक्तिगत उदाहरणों को समष्टिगत समझना चाहिए। समाज दशा का पता एक उदाहरण से लगाया जा सकता है -

कमजोर का शोषण सदा से होता आया
हो रहा, दुनिया में दुर्बल दला जाता है
भेड़िया नहीं बकरा कटता, यह निर्विवाद!
हम दोनों अल्हड़, और लापरवाह

लुटते रहे गाते रहे, पिसते रहे, आज़ाद! (स्वर्गता, पृ. 38)

नारी-शोषण का चित्रण है। कवि की पत्नी गाँव पर पसेरियों आटा पीसती, गाड़ियों अनाज तोलती, फिर भी, घर के लोग प्रसन्न नहीं रहते थे। यही स्थिति समाज की भी है।

20वीं सदी में भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे बड़ी समस्या साम्प्रदायिकता की ही रही है। 21वीं सदी इससे उबर पाती है कि नहीं? हमारे देश में साम्प्रदायिकता की स्वस्थ परम्परा है। 'नेताचरित्रम्' में कर्णधारों के चरित्रों को खोला गया है जिन पर आज़ादी के पूर्व देश की जनता को नाज़ था; वे आज बिल्कुल गिर गये हैं। विगत 50 वर्षों में इन लोगों ने देश को बहुत गिराया है। सबसे अधिक पतन चरित्र और मानवमूल्यों का हुआ है। नेताओं ने ओछे हथकण्डों से समाज को गुमराह किया है। सबके दुष्परिणाम भी सामने आ रहे हैं। 'नेताचरित्रम्' व्यंग्य महाकाव्य में अधुनातन भारत का रहस्यपूर्ण इतिहास प्रस्तुत किया गया है। नेतावन्दना से ही व्यंग्य का आगमन हो जाता है। कवि ने नेताओं का यशोगान नहीं किया है। नेता नवयुग का नरेश है। जब तक वह पद पर रहता है तब तक राजा और ऋषि तथा अध्येता बना रहता है। मालाएं, बालाएं सब सुलभ रहती हैं। मादक पदार्थ भी मिलते हैं। वह अखिल सृष्टि का समाहार होता है। मुगल, नवाब और अंग्रेज शासकों से वह कम नहीं होता है, सब वही तामझाम है। उसका सब कुछ मिश्रित है। अपनी सत्ता बनाने के लिए शासक (नेता) कुछ भी कर सकता है। टूटते हिन्दुत्व की ओर भी संकेत है। मुसलमान एक है, बाहर के मुसलमानों से भी उनको सहायता मिलती है। देश का सुन्दर सामाजिक चित्रण है। आपसी सामाजिक संघर्षों का वर्णन है। नेताओं ने देशी रियासतों को तोड़ा; अपने लिए। आज भी मुसलमान हिन्दुओं को सम्मान नहीं देते। हिन्दू और हिन्दू धर्म की कमजोरियों को दिखाया गया है। (दे. नेताचरित्रम्)। हिन्दू छुआ छूत से टूट गया। आज वह विश्व का कलंक बन गया है। दरिद्रता और गुलामी का भी हिन्दू शिकार रहा है। मांस-मदिरा का सेवन भी चलता रहा है। नेताओं में सभी दुर्गुण हैं, पूजा उन्हीं की होती है। उनके फर्जी बड़प्पन और अगली पीढ़ी की दुर्दशा का भी वर्णन है। आज महापुरुष वही है जिसका जनता सम्मान करे। अभिनव सामन्तवाद का चित्रण है। नेता नौकरी को कुछ नहीं समझता है। नौकरी की कमियों को भी दिखाया गया है। बिगड़ी संस्कृति और सम्यता का चित्रण है। सबके मुखिया नेता ही हैं। नेतागिरी के नाम पर सब कुछ चल जाता है। आज नेता युग या नेतासंस्कृति में हिन्दू, ईसाई और मुसलमान के खानपान में मामूली अन्तर रह गया है। बढ़ती मांसाहार की प्रवृत्ति और उस पर की गई प्रतिक्रिया भी है। आज के महापुरुषों को मात्र अंग्रेजी आती है — यही उनकी पहचान है। विदेशी नशा सामग्री और बढ़ते शौक का

वर्णन है। स्वतंत्रता पूर्व नेताओं का जो चरित्र त्याग और बलिदान से पूर्ण था, वह आज उलट गया है। समाज गिरता जा रहा है, दरिद्रता, अपव्यय और नशाखोरी में एक साथ वृद्धि हो रही है। सबके कुप्रभाव भी सामने आ रहे हैं। नेताओं का सड़ियल दाम्पत्य जीवन है। नये प्रेम प्रसंग बढ़ते जा रहे हैं। दुर्गुणों को छिपाने के लिए लोग अतीत से उदाहरण ढूँढ़ लेते हैं। बहुविवाह, मांस, मदिरा, आदि की परम्पराएं और उनके परिणाम भी दिखाये गये हैं। बेमेल विवाह तब भी थे और आज भी हैं। बूढ़े अशोक ने तिष्परक्षिता सी कुमारी से विवाह किया था। विश्व भर में ऐसे उदाहरण हैं। साथ में ब्रह्मचर्य के भी अनेक उदाहरण हैं। जनता अपना स्वार्थ देखती है, नेता सत्ता और भोग देखता है। विश्वयुद्ध के दुष्परिणाम सामने हैं, पर जनता अपने काम के पीछे पागल है। आज भी दासवृत्ति, सबसे अधिक है। इसी से देश पिछड़ा और अशिक्षित है। आज पूँजीपति और अन्यायी खूब पूजे जा रहे हैं। नव-साम्राज्यवाद आया है। स्वतंत्र भारत पर विदेशी दबाव बहुत बढ़ गया है। आज जो जितना धूर्त है, वह उतना ही महान् है। हिन्दू आपसी भेदभावं के कारण कमजोर होते जा रहे हैं। वे संकीर्ण, निन्दक और द्वेषी हैं, बेसमझ भी।

नेता सब कुछ छोड़कर अपनी कुर्सी देखता है। अल्पसंख्यकों को देखता है। आज वोट की राजनीति है। आज हिन्दू ही सबसे अधिक हिन्दुओं की उपेक्षा कर रहा है। नेता फूट भी डालता है। जाति और सम्प्रदाय की बात करता है। वह साम्यवाद या समाजवाद की बात करके जनता को छलता है। नेता के साथ-साथ जनता, पत्रकार आदि के गिरे चरित्र भी हैं। यथार्थ समाज का चित्रण है। जहाँ अपव्यय, दरिद्रता, कुचाल, विलासिता और व्याभिचार है। अपनी परम्परा और महापुरुषों का उपहास है। आज मिश्रित समाज बन रहा है। एक ही घर में हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई मिल जाते हैं। सिनेमा संस्कृति चल रही है। इसके विरोधियों को लोग साम्प्रदायिक कहते हैं। महापुरुषों की निन्दा आज प्रगतिशीलता है। अपने इतिहास का भी उपहास किया जा रहा है। अंग्रेजियत हावी है। हम भारतीयों को अपने को हिन्दू कहने में लज्जा आती है। सत्ता के लिए नेता हिन्दू, ईसाई और मुसलमान सब कुछ बन जाता है। हिन्दू मस्जिद की ड्योढ़ी पर पगड़ी रख देता है। धर्म निरपेक्षता के नाम पर भी सत्ता हथियाने की कोशिश की जाती है। पारकीयता बढ़ रही है। सरकारी धन का खूब घोटाला हो रहा है। देश की आर्थिकदशा दयनीय है। आज जो जितना गलत है, उतना ही महान् है। पूँजीवादी व्यवस्था बराबर नेताओं का साथ दे रही है। दलगत चन्दों

की भी स्वस्थ परम्परा है। गांधीवाद के नाम अनेक गलतियाँ सत्य की तरह चल रही हैं न कि यथार्थ। लोक में चलते हुए आतंकवाद की भी चर्चा है। भारत महान् है; मात्र नारे और पोस्टर में; यथार्थ में जब कतरे ही अधिक हैं।¹² देश के यथार्थ का चित्रण है। निर्वाचन की गलत प्रक्रिया का भी वर्णन है। निष्कर्ष लोकतंत्र को गर्दभतंत्र सिद्ध किया गया है। इसके साथ यह भी कहा गया है कि ऐसी व्यवस्था को ही समाजवाद कहा जा रहा है। व्यंग्य है।

हमारा देश विदेशी ऋण लेने वाले सबसे बड़े देशों में है। आज गरीबी में भी अपव्यय हो रहा है, अत्याधिक विदेश-यात्राएं हो रही हैं। कार्य के नाम पर भाषण बाजी की परम्परा बन गई है। हमारे नेता ऋण की याचना करते हुए स्वाभिमान पर भाषण करते हैं। पराश्रयी ज्ञान का समाज पर आज भी प्रभाव है। समाज पर पाश्चात्य संसदों में पैदा हुआ लोकतंत्र ही शासन कर रहा है, जब कि उसमें परिवर्तन की आवश्यकता है। साम्राज्यवादी प्रवृत्तियाँ समाज में आज भी हैं। हमारे मूल्य गिरते जा रहे हैं, साहित्य में लिखा जा रहा है, परन्तु समाज में वह आ नहीं पा रहा है।

जो देश हमारे ऋणी थे, हमसे पराजित थे, वे आज दाता और रक्षक हैं। स्वतंत्र भारत की 88000 वर्गमील भूमि पाकिस्तान और 28000 वर्गमील भूमि चीन ने छीन ली है। हमारे समाज में पोंगापंथी बढ़ रहे हैं। आज स्वर्ग विदेश और नरक देश माना जा रहा है।¹³

क्षुद्र स्वार्थ के लिए जातियों को लड़ाया जा रहा है। इसी के लिए देश को भी बाँटा गया, ऋणी बनाया गया। समता, अखण्डता, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद और साम्यवाद सब ढोंग बनाए जा चुके हैं। पहले आग लगाना फिर तापना, अपना हित साधिये; राष्ट्र दहे तो दहे की परम्परा समाज में है।¹⁴ चुनावी स्वार्थ व राजनीतिक प्रपंच से समाज संतुष्ट है। यह सब नेताओं की करतूत है कि लोग एक-दूसरे के दुश्मन होते जा रहे हैं, एकता आदि सम्मेलन तो मूर्ख बनाने के तरीके हैं। अनेकता मात्र स्वार्थ और नेताओं में है। भाषा, जाति और धर्म के नाम पर अनेकता पैदा की जाती है। मूल में सब एक है।

12. नेताचरित्रम्, पृ. 68

13. नेताचरित्रम्, 'विदेशों में देश सेवा' सर्ग।

14. दे. नेताचरित्रम्, पृ. 99-100

'कालिदास के प्रति' (सार्वभौम) कविता में कवि द्वारा दो युगों के भेद को कहा गया है। तब और अब के भारतीय समाज का उसमें दिग्दर्शन है। बहुत भिन्नता आ गई है। युगबोध, इतिहासबोध, समाजबोध, आज का परिवेश और प्राणी सब दूषित हो गये हैं (दे. सार्वभौम)। सामाजिक नियति को भी कवि ने प्रस्तुत किया है। सामाजिक परिवर्तनों को उसने स्वीकार किया है। समाज और कवि के चरित्र को दिखाते हुए कवि ने वर्तमान की विसंगतियों को दिखाया है —

कालिदास, तुम्हें जो वसुन्धरा प्राप्त थी
वह बहुत भिन्न थी!

तुम्हारा हिमालय 'देवतात्मा' था किन्तु

अब

वह सैनिक गतिविधियों का अपार

आगार¹⁵

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

अचानक धुँधले वृहत् क्षेत्र में रंग-बिरंगे

लोग आ खड़े हुए

बहुत-बहुत बोले

लगा रस बरसेगा

लेकिन एक हवा चली

गली-गली गई छली

और सब चले गये

फिर सूखा-का-सूखा।¹⁶

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

"गांधी! गांधी! गांधी!"

सचमुच

सब चिल्ला पड़े

लेकिन

कुछ देर बाद घना सन्नाटा छा गया

गांधी-बिला गया। (सार्वभौम, पृ. 12)

15. सार्वभौम, पृ. 31

16. सार्वभौम, पृ. 12

समाज में सब कुछ नष्ट होता जा रहा है, परन्तु कुछ चालाक लोग अपना कार्य निकालते जा रहे हैं। सब की दृष्टि को वे धोखा दे रहे हैं। समाज में आज ऐसे खरगोशी चरित्र के लोग बहुत सफल हैं। उनके व्यक्तिवाद और स्वार्थवाद सराहे जा रहे हैं। वही चालाक माने जाते हैं। आजकल पटाऊवीरों की संख्या के साथ-साथ आँख में धूल झोकने वालों की संख्या भी बढ़ती जा रही है -

सुरसा का भयावह और अतिशय विराट् आनन!

सब कुछ समा गया

लेकिन एक छोटा-सा खरगोश उसे वेध

दूसरे छोर से निकलकर भाग गया। (सार्वभौम, पृ. 13)

कवि ग्रामीण समाज का प्रेमी है।¹⁷ उसको अमराई, कोयल की कूक, मोर, चातक की हूक, पुलिया, नदी का स्मरण बराबर होता है जिनके रूप आज बदल गये हैं। अब गाँव पहले वाले गाँव नहीं रह गये। आल्हा, कजरी, फाग सब समाप्त होते जा रहे हैं। चौपाल और चौरा सब लोगों के जुड़ने के साधन थे, अब गाँव का समाज विखंडित हो गया है। गाँव भावात्मक एकता के साधन हैं जो अब टूटते जा रहे हैं; शहरीकरण बढ़ता जा रहा है।

समाज में मूलभूत समस्याएँ बढ़ती जा रही है। आज भी पेट की समस्या सबसे बड़ी समस्या बनी हुई है। समाज का सबसे अधिक बड़ा वर्ग इससे परेशान है -

मैंने देखा:

एक पेट साधारण-सा

लेकिन वह बढ़ने लगा, बढ़ता गया

उसकी टक्कर से पेड़ चरमराने लगे

उसी में समाने लगे

वन-के-वन विलाने लगे

और वह बढ़ता गया, बढ़ता गया, बढ़ता गया!¹⁸

कवि ने मानव समाज के साथ-साथ पशु-पक्षी और वनस्पतिक जगत् का भी वर्णन और चित्रण किया है। समाज के व्यापक अर्थ को उसने दिया है। सबके अन्तर्स और बाह्य जगत् को सर्व समक्ष किया है, -

17. मत मेटो गाँव (सार्वभौम, पृ. 13 द्रष्टव्य)

18. सार्वभौम, पृ. 14

एक था वन
 विहरते थे वनचारी - मृग, वृक, हंस, क्रौंच
 कलरव के अतिरेक में दूसरे की बात न सुनाई देती
 कहीं कुहकभरा कुहू
 कहीं पानिपभरा पी कहाँ
 कहीं झिल्लियों की झनकार
 कहीं भौरों की गुंजार
 कहीं दर्प भरी दहाड़
 गूँज उठते थे पहाड़।¹⁹

ग्रामीण समाज के प्रति कवि का आकर्षण सबसे अधिक है। उसके रूप, गुण, इतिहास और भूगोल पर वह बार-बार रीझता है, उसके सुन्दर बिम्बों को बार-बार रचना है, भाव बोध, समाजबोध और युगबोध का समन्वय करता है -

एक था गाँव
 सहज की छाँव
 कायक²⁰ का पाँव
 सरल-सागर की नाव।
 छोटे घर
 छोटे डगर
 छोटे हाव
 छोटे भाव
 छोटे चाव
 छोटे दुराव
 किन्तु कायकजन्य बड़ा हास
 बड़ा लास
 बड़ा रास
 पर्व-नृत्य
 पर्व-गीत
 सहज प्रीति
 सहज भीति।²¹

19. सार्वभौम, पृ. 15

20. शारीरिक परिश्रम।

21. सार्वभौम, पृ. 16

सामन्ती दृष्टि का बोध अनेक कविताएँ कराती है।²² अभिनव सामन्तवाद है। विदेशी और उससे प्रभावित देशी समाज का चित्रण है। कवि की आस्था भारतीय समाज में है। आज थानेदार, पटवारी सब भ्रष्ट हैं। धन का वैभव है। आज का औद्योगिक समाज भ्रष्ट तरीके से आगे बढ़ रहा है। शुद्ध मेहनत करने वाले बहुत पीछे हैं। फितरती बहुत विलास कर रहे हैं। आबकारी का काम करने वाला शराब की तारीफ करता है। सबको पीने के लिए प्रेरणा देता है। उसके अनेक गुणों का बयान करता है। विदेशी समाज का वह उदाहरण देता है। शराब के बल पर वह पहलवान और बुद्धिमान बनने की बात करता है। उन्नतदेश अमरीका, रूस, इंग्लैण्ड, फ्रांस और जापान की उन्नति के मूल में वह शराब सेवन की बात बताता है। कहने का आशय यह कि आज अपने लाभ के लिए मनुष्य कुछ भी कर सकता है, कर भी रहा है। अर्थ, स्वार्थ और सत्ता प्रधान है, आज का समाज पूँजीपति प्रलोभन देकर समाज को अपना अन्धभक्त बनाता है। किसानों की जमीन कम दाम पर लेता है। खेती को वह व्यर्थ का धन्धा बताता है। केवल समाज ही नहीं, सिगरेट, साबुन, हेअर-फिक्सर आदि के कारखानों की भी बात करता है। ऐसे लोग भोले भाले किसानों को धोबी का कुत्ता न घर का घाट का बनाते चले जा रहे हैं। आज असफल होते कल कारखाने गरीब जनता या अपने कर्मचारियों को कहीं का नहीं छोड़ रहे हैं। गाँव उजड़ते जा रहे हैं। शहर घुटन और गन्दगी के साथ बढ़ते जा रहे हैं। पूँजीपति गॉउन, मैक्सी, मैक्सीकम गॉउन, स्लीपर, पाउडर, स्नो, रूज आदि का भी प्रलोभन देता है। भारतीय समाज के मूल रूप को मिटाकर आज का पूँजीपति विदेशी समाज तैयार कर रहा है जिससे उसके उत्पादन की बिक्री हो। उपभोक्तावाद की धूम है। इसी से शहरी समाज बढ़ रहा है। पूँजीपति और नेतावर्ग का एक समाज है। शेष तो शोषित हैं। अधिकारी तो इन्हीं के सहारे आम जनता का शोषण किया करते हैं। भारतीय समाज का यह दुर्भाग्य है कि पूँजीवादी व्यवस्था और सत्ता की अच्छी साँठ-गाँठ चल रही है। इस स्तर पर समाज के मूल वर्ग 2 हैं — 1. शोषक 2. शोषित। वर्णव्यवस्था की बात तो नेता लोग वोट की राजनीति के लिए उभारते हैं। आज के विदेशी प्रलोभन सबको लेकर डूबे जा रहे हैं। गांधी, नेहरू आदि नारे और भावुकता की वस्तु बनकर रह गये हैं। समाज ने गांधी को खूब भुनाया है। कृषक समाज मिटता जा रहा है। कृषि उपकरणों का पूर्ण

22. * देखिये 'सार्वभौम' की 'अजगर' कविता पृ. 15-30

उपयोग नहीं हो पा रहा है। देश का आर्थिक और सामाजिक विकास देश की आवश्यकतानुसार न करके पूँजीवादी व्यवस्था के अनुसार किया जा रहा है। पूँजीपति तर्क देता है कि बिना उद्योगों के राष्ट्र विकास नहीं कर सकता। उन्नत पश्चिम में 5 से 10% लोग खेती करते हैं, शेष उद्योग में लगे हैं।

व्यावहारिक रूप से पूँजीवादी व्यवस्था ही चल रही है। जो उसका विरोध करता है — उसको दबा दिया जाता है। नये समाज का सब्ज बाग दिखाया जा रहा है। यहाँ फैशनपरस्त, दिखावटी कृत्रिम, रोगी और कामी बसते हैं। गाढ़ी कमायी का वह नाम मात्र का उपयोग कर पा रहा है। महानगरों की तंग जिन्दगी का चित्रण है।²³ नये समाज का एक चित्रण प्रस्तुत है — जहाँ उजड़े हुए किसान बसाये जाते हैं —

इस नववगर से काफी दूरी पर बसाये गये

पूर्व-ग्राम के वासी

धरती की छाती पर फुंसियों-सी झुगियाँ

हेण्डपम्प के क्यू और फ़ौज़दारियाँ

सीमित पार्श्व भूमि पर अस्वच्छ जन-सुविधाएँ

दारू, गांजा, भांग, चरस इत्यादि के ठेके

चाय की दूकानें, पान-बीड़ी-सिगरेट के स्टाल इत्यादि

प्राचीनकाल-आधुनिककाल का अटपटा संगम।²⁴

इस प्रकार स्वावलम्बी-स्वच्छन्द प्रकृतिजीवी किसान एक शहरी कीड़े के समान होते जा रहे हैं। आदमी चींटियों के समान शहर रूपी बिल में जाते व वहाँ से निकलते देखे जाते हैं। ऐसे समाज की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ती जा रही है। झुग्गी-झोपड़ी की कालोनियाँ बड़े लोगों की कालोनियों के समानान्तर बनती जा रही है। ग्रामीण समाज नष्ट होते जा रहे हैं। किसान मजदूर होते जा रहे हैं। नयी जमींदारी प्रथा चल पड़ी है। रित्रियाँ कारखानों व ठेकेदारों की मजदूरनी बनती जा रही है। एक आदमी के विकास के लिए अनेक लोग मिटाये जा रहे हैं। समाज के मूल रूप का पतन होता जा रहा है। जिनका रानी बनने का संकल्प था वे चेरी बनती जा रही है। यह अभिनव सामन्तवाद पहले के सामन्तवाद से भी अधिक खतरनाक होता जा रहा है। गाँव के बच्चे भी पशु चराते थे अब बाबुओं

23. दे. सार्वभौम, पृ. 28

24. दे. सार्वभौम, पृ. 28

की सेवा करते हैं, बूटपॉलिश करते हैं, पाखना साफ करते हैं, जूटे पतल उठाते हैं। आज का समाज पूँजीवादियों के पंजे में है। उदंड नेताओं के कब्जे में है। नेता भी पूँजीपतियों के सामने घुटने टेक देता है -

हिन्दुस्तान में असली मालिक बिड़ला जी हैं,
टाटा भी, रिलायंस भी, बॉम्बे डाइंग भी,
सिंघानिया भी,

मफ़ललाल ग्रुप भी,

इन शतरंज के उस्तादों के मोहरे नेता भी²⁵

❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖ ❖

तुम्हारे समय के जीवन में भी कुंठाएं थीं

समाज भी था, और विवशताएं भी थीं

मुग्धा शकुन्तला की व्यथा

निष्काषित यक्ष के गणनातीत अश्रु

असुरों के अनाचार, अपहरण, शोषण आदि

किन्तु जीवन उन पर नियंत्रण कर लेता था

क्योंकि उसे सहज-सबल प्राणवायु प्राप्त थी²⁶

आज का समाज कुंठा, विकृति और संत्रास से पूर्ण है। जीवन की सहज वायु प्राप्त नहीं है। आज का समाज यांत्रिक हो गया है। कालिदास के समाज में सहज आत्मविश्वास था। आज तर्क और बकवाद है। आज का समाज पुराने समाज को सामंतवादी कहता है, जबकि यह स्वयं सामंतवादी है।

वैदिक युग से लेकर आज तक के समाज पर प्रकाश डाला गया है। 'दृष्टि' महाकाव्य में वैश्विक एवं आध्यात्मिक समाज है। सर्वदर्शन का समन्वय है। विश्वमानव को दृष्टि में रखकर इसकी रचना की गयी है। वैश्विक समाज को परिकल्पना है। वह समाज मानवतावादी होगा। यदि सब का एक समाज हो जाय तो बहुत अच्छा हो। कवि की दृष्टि में 3 समाज हैं - 1. यथार्थ, सांसारिक, 2. आध्यात्मिक, 3. काल्पनिक। जीवन रहित लोक की भी कल्पना की गयी है। 'दृष्टि' के वेद-लोक में वैदिक समाज का चित्रण है। वैदिक समाज याज्ञिक समाज था। एक ईश्वर को मानने वाला था -

25. सार्वभौम, पृ. 30

26. सार्वभौम, पृ. 32

आने लगीं यादें मुझे सिन्धु की, गंगा की,
नील की, दज़ला-फ़रात की, ह्वांगहो
की, सांगत्सीक्यांग की, टाइबर आदि की;
मेरी सरिताओ! तुम दृष्टि-सृष्टि में बहो।²⁷

उस समय का समाज प्रकृति में खेलता था। गोधन सबसे पावन धन था। दूर्वायुक्त गाय का मुख कवि को विशेष आकर्षित करता है। ख़ूब अन्न पैदा होता था। कृषि उन्नतिशील थी। जौ की पैदावार ख़ूब होती थी। घर-घर यज्ञशालाएँ थीं। वेदपाठ होता था। अग्निदेव का बहुत महत्त्व था। लोग सोमरस का पान करते थे। अग्नि को ऊर्जा और सर्वत्र व्याप्त माना जाता था। सृष्टि के मूल में भी अग्नि को माना जाता था। प्रत्यक्ष देव और सामर्थ्य युक्त माना जाता था। विश्व वाङ्मय का प्रथम ग्रन्थ 'ऋग्वेद' है। उसका समाज आदिम और आदर्श समाज है। वेदमंत्र का पाठ होता था। वेद जीवन-शक्ति के प्रेरणा-स्रोत थे। अग्नि को बल का पुत्र कहा गया है। महत् की प्रतिष्ठा थी। स्तुति की जाती थी। सूर्य प्रत्यक्ष देवता माना जाता था। ऋषियों और राजाओं का सम्मान था। मंत्रों का महत्त्व था। गायत्री मंत्र की प्रतिष्ठा थी। इन्द्र का बहुत महत्त्व था। इसी से उसकी बहुत अधिक स्तुतियाँ हैं। वैदिक वर्णव्यवस्था पर कवि प्रकाश डाला है —

चरण में आघात या कंटक लगने पर
मुख पीड़ा व्यक्त करता, संवेदन मूल है;
राष्ट्र की पीड़ा ब्राह्मण-व्यथा का कारण है,
उसमें पार्थक्य यदि हुआ, तो भूल है। ('दृष्टि', पृ. 126)
तन की आवश्यक सेवा, रक्षा बाहु करते हैं,
राष्ट्र की सेवा रक्षा क्षत्रिय का धर्म है;
भाल हो या पद हो, कर सेवा करता है,
रक्षा करता है; यही क्षात्र कर्म मर्म है। ('दृष्टि', पृ. 128)
उरु उदर यदि लोभी, कुरुचि मूल बन जाता,
वैश्य यदि लोभी बना, रुग्ण हो जाएगा,
उसका लोभ एवं अनपेक्षित परिग्रह उसे
यातना देगा, राष्ट्र को भी कलपाएगा। ('दृष्टि', पृ. 128)
चरण ही देह को लक्ष्य तक पहुँचाता,

चरण ही वंघ, शूद्र प्रगति का मूल है;
 शूद्र अपमान कष्ट राष्ट्र का शूल है। ('दृष्टि', पृ. 128)
 वह विराट् निखिल प्रकृति, निखिल जड़-चेतन-जग
 सान्त-अनन्त तक सबका जन्मदाता है,
 अतएव, प्रकृति से, जड़ और चेतन से
 सान्त से, अनन्त से एकता का नाता है। ('दृष्टि', पृ. 128)

कवि की यह मान्यता या व्याख्या बहुत व्यापक, लोकमंगली, राष्ट्रीय, मानवीय, सामाजिक और सांस्कृतिक है। ऐसा मान लेने पर सामाजिक संघर्ष की समाप्ति हो जायेगी। एक आदर्श समाज सामने आ जायेगा। वर्ण-व्यवस्था-युक्त समाज की विशेषता कवि पुनः कहता है -

निस्सन्देह मानव की समता ही श्लाघ्य है,
 निस्सन्देह श्रम का मूल्य महत् ही होता है,
 किन्तु वर्ण चिन्तन का अपना महत्व है,
 वह युग प्रवाह में मूल्य नहीं खोता है। ('दृष्टि', पृ. 158)

कवि ने वर्ण व्यवस्था के मूल महत्व को स्वीकार किया है, परन्तु छुआ-छूत ऊँच-नीच व परस्पर घृणा की विगर्हणा की है। मानवता को उसने केन्द्र में माना है। समाज के सहज रूप की उसने सराहना की है। यह आदिम साम्यवाद है। विविध लोकों के विविध समाज भी हैं। ये यथार्थ और अनुभूतिजन्य दोनों हैं।

वैदिक युग के अकाल का वर्णन है। लोग अन्न जल के बिना त्रस्त थे। पशुबलि बढ़ गयी। स्वपच (जो श्वान को भी पचा जाता हो) का यहाँ उल्लेख है। विश्वामित्र श्वपच या चाण्डाल के घर में घुस कर कुत्ते के मांस की चोरी करते हुए पकड़े जाते हैं। जीने का औचित्य सिद्ध करते हैं। अतः जीवनरक्षा के लिए सब कुछ किया जा सकता है -

तरुतल आवास हो, उटज हो, सदन हो,
 प्रासाद हो - सभी 'घर' कहलाते हैं
 श्वपच जो श्वान को भी पचा जाता है
 उसे लघु उटज के तिनके सुहाते हैं
 'द्वार' टटिए का, पर पशु-पक्षी रक्षक
 और विश्वामित्र उसे खोल घुस जाते हैं
 भुना हुआ श्वानमांस उत्तरीय में रखते
 सोचते: इसे भी मनुष्य ही खाते हैं!

हर दशा में जीना अनिवार्य है — क्योंकि

जीवित रहकर मैं मानव को समझाऊंगा कि वह मानसों में, सरोवरों में सहेजे जल कूप गहरे खोदे, वापियाँ बनवाए जिससे अकाल उसे पुनः न पाये छल प्रकृति के प्रकोप को शिरसा स्वीकार कर मानव दिखलाये अपना प्रकृतिदत्त बुद्धि बल कलपाये मन कल पाए, कला विकसाए प्रसाधन बढ़ाये औ न होए पुनः विकल।

(वेदायन, पृ. 60)

स्थान-स्थान पर सतत प्रवाहिनी सरिताओं तथा सरोवरों पर आश्रम बनाये जाएं मानव संतुष्ट रहें, पशु-पक्षी भी प्रसन्न वेद घोष - कलख पशुस्वर सभी मिल जाएं।²⁸

विश्वामित्र ने एक खुशहाल समाज की परिकल्पना की है। लोकमंगल की भावना है। गांधी के समान (रामराज्य) शोषण विहीन स्वाधीन राज्य की कल्पना है —

मानव को जीवन का रहस्य समझाएं
जीवन ब्रह्म कर्तव्य, स्वयं ब्रह्मरूप है²⁹

सही युद्ध को उचित ठहराया गया है। युद्ध विकास की दिशा देते हैं। मानव पाषाण काल से चलकर धातुकाल में आया। अस्त्र-शस्त्रों का विकास हुआ। पौरुष का उपयोग हुआ। चिकित्सा की उन्नति हुई। अश्विनी कुमार (द्वय) उस समय के सबसे बड़े वैज्ञानिक थे। उनको आयुर्वेद का पुरोधा भी कहा जाता है। वे विश्पला का कटा पैर ठीक कर देते हैं। अपाला का कुष्ठ भी ठीक कर देते हैं।

नारी-समाज की प्रतिष्ठा थी। इला और बुध के प्रेम प्रसंग में नारी के सौन्दर्य का निरूपण अति उत्तम और पवित्र है। राजा पुरुरवा के भोगी, विलासी, आतंक से भरे जीवन और उनकी विलासी जनता का चित्रण है। षोडशांश का कर वह सब पर लगाता है; ब्राह्मणों पर भी। सुरा-सुन्दरी का

28. वेदायन, पृ. 60

29. वेदायन, पृ. 61

वह उन्मुक्त सेवन करता है, प्रजा भी। पुरुरवा और उर्वशी का प्रेम-विरह वर्णित है। उसका जीवन भोगी, विलासी और दुखी है। प्रजा भी दुःख झेलती है। ऐसे समाज का चित्रण है जहाँ पति घरजमाई बनकर रहता है। उर्वशी के यहाँ यही प्रथा थी, परन्तु एक वर्ष के लिए उर्वशी प्रतिष्ठानपुर (राजधानी) में रुकती है। ब्राह्मणों में पुरुरवा का भयंकर विरोध होता है। स्वच्छन्द कामुकता का परिणाम सर्वनाश है, यह दिखाया गया है। अन्त में उर्वशी भी पुरुरवा को ठुकराकर चली जाती है। जब सौन्दर्य का सात्विक उपयोग होता है तब समाज आनन्दित होता है नहीं तो दुःखी। पुरुरवा का पौत्र नहुष उससे भी अधिक अत्याचारी और कामी हुआ। पुरुरवा और नहुष का पतन हुआ। आर्य-अनार्य का संगम भी दिखाया गया है। नहुषपुत्र राजा ययाति का समाज है। सब प्रभुता के मद में चूर थे। आर्यों का सामाजिक जीवन है। वही आदर्श, मर्यादित और संयमी थे। अनार्य का समाज स्वेच्छाचारी, अमर्यादित, भोगी और विलासी था। दोनों के मिलाने का भी प्रयास है। कालान्तर का समाज आर्य-अनार्य का समन्वयी समाज है।

‘पुरुषोत्तम’ महाकाव्य में आदि से लेकर राम तक के समाज का चित्रण है। समाज में नारी का महत्व था। राम ने नारी वध को अनुचित ठहराया है, परन्तु लोक-अमंगल करने वाली नारी को उचित दण्ड देने के लिए भी कहा गया है। वे स्वयं ताटकावध करते हैं। नर हो या नारी, उसको समाज का मंगल करना चाहिए। वर्ण-व्यवस्था को स्वीकार किया गया है, पर छुआ-छूत को नहीं। सभी वर्णों के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया गया है।³⁰ आदर्श राज्य था, धर्म का शासन था -

ऋत्विज-राज! मिथिला के प्रदेश में न तो कोई राज्य है, न राजा है, न दण्ड है, न दण्डिक है, केवल एक धर्म है। तस्कर, दस्यु, साहसिक, हन्ता आदि शब्दों के अर्थ नागरिकों को ज्ञात नहीं, सन्धि केवल व्याकरण में रही। पता नहीं, मुझको क्यों जनता देवतात्मा हिमालय की ओर जाने से रोकती है और जग राजा कहता है? समझ नहीं पाता हूँ।³¹

30. दे. पुरुषोत्तम, सर्ग - 3

31. पुरुषोत्तम, सर्ग-3, पृ. 41

नगर-समाज, आश्रम-समाज, काननचारी-समाज, ग्रामीण-समाज के सुन्दर चित्रण हैं। सबके प्राचीन, मध्य और आधुनिक रूपों को दिखाया गया है। सिन्धु घाटी तथा सैन्धव प्रदेश के आदिम एवं विकसित समाज पर विशेष प्रकाश डाला गया है।³² तब शाकाहारी लोग कंद-मूल-फल खाते थे। वस्त्र और वल्कल (छाल) पहनते थे। आश्रम और पद के अनुसार वस्त्र की व्यवस्था थी। वनवासी राम वल्कल धारण करते हैं। बिना सिले हुए वस्त्र धारण किये जाते थे। एक अघोतवस्त्र, दूसरा उत्तरीय लोग आभूषण पहनते थे। बड़े लोगों के आभूषण सोने और चाँदी के होते तथा गरीबों के हड्डी हाथीदाँत और मूंगों आदि के। स्त्रियाँ अधिक गहने पहनती थीं। पुरुष केयूर, कुण्डल, हार, अंगूठी, इत्यादि पहनते थे। स्वेच्छा से दहेज (कन्यादान) में बहुत कुछ दिया जाता था। समाज सम्पन्न था जनसंख्या, मोती, माणिक्ये, सोने, चाँदी की कमी न थी। विविध पकवान बनते थे, दूध, घी की सम्पन्नता थी। वृषभयान, गज, कल्पांतर में अश्व सवारी के प्रमुख साधन थे। सामान्यजन पैदल चलते थे। शिविका और नौका से भी लोग चलते थे। वर्ण व्यवस्था तथा अपने कर्तव्य में निष्ठा थी। सेवा धर्म का महत्त्व था। स्त्री और सेवक सब में बहुत बड़ी सीमा तक समानता थी। परन्तु आदर्श पुरुष नारी की बहुत सम्मान देते थे। राम सीता को सदैव सहधर्मिणी मानते रहे। उनका आदर्श दाम्पत्य-जीवन था। सिंहासन पर वे सीता के साथ बैठते थे। पर्दाप्रथा नहीं थी, पर लज्जा थी। बड़े-छोटे का लिहाज था। आदर्श आचार-संहिता का उलंघन अधर्म माना जाता था। समाज पर धार्मिक शासन था। आपस में उत्तम शिष्टाचार था। सम्यता और संस्कृति थी। आदर्श समाज या आर्य समाज का चरमोत्कर्ष काल था। मानव का वह यौवन काल था। तीर्थ और नदी स्नान का विशेष महत्त्व था। पवित्र नदियाँ देवी और माँ के समान पूज्या थी। ऐसे समाज में ही वसिष्ठी और विश्वामित्री। आदर्शों का निर्माण हुआ। समाज नियंत्रण के धार्मिक विधान बने। इनको भारतीय धार्मिक संविधान कहा जा सकता है। अंधविश्वास सदा रहते हैं। तब स्वप्न, शकुन, अपशकुन आदि का महत्त्व था। आदर्श-समाज का नमूना कवि ने प्रस्तुत किया है। राम का परिवार धन्य है जहाँ राम-सा बल, सीता-सी सुन्दरता, भरत-सा भावधन और लक्ष्मण-से कर्तव्यरूप हैं।

मुहम्मद खण्डकाव्य में मुहम्मद साहब के पूर्ण अरबी समाज पर प्रकाश डाला गया है। तब अरब में प्रकृति और बहुदेववादी तथा यहूदीवादी थे।

मरुभूमि का वट-वृक्ष

अधिकांश जन पूजते थे मूर्तियाँ, बहु देवोपासक थे, बलि का जोर था। शराबी, लुटेरे और सूदखोर थे। कबीलों का समाज था। मुहम्मद साहब ने एक इस्लाम के ढाँचे में सबको ला दिया। इससे छठवीं सातवीं शताब्दियों का अरब सर्व समक्ष हुआ है मदीना में यहूदी, ईसाई, बहुदेवदेवीवादी, व्यापारी, लाभार्थी और दस्यु थे। मदीना करनी मुस्लिम (सहायक) और मक्का वासी मुहाजिर (त्यागी) कहलाते थे। यात्राश्रांत, स्वजन-पृथक्, निर्धन थे। पैगम्बर मुहम्मद ने सबमें भ्रातृभाव पैदा किया। यहूदी मुहम्मद को मसीहा मानने को तैयार न थे। मुहम्मद साहब ने शांतिमास रमजान (रामदान) की व्यवस्था स्थिर की। सबमें ईमान लाने का उन्होंने प्रयत्न किया। सबको उन्होंने रोजी-रोटी का महत्व समझाया। बताया कि नियति (ईमान) से रहने पर ही बरक्कत होती है। अरब का समाज, खान-पान सब कुछ इसमें दिखाया गया है। खजूर, जौ की रोटी, चर्बी, आदि मुख्य भोज्य पदार्थ थे -

उन दिनों अरब में जौ की रोटी का चलन
डेगची पानी, आटा, खजूर, चर्बी डाल
कर हरीरा-सा व्यंजन बनाया जाता था
अप्रचलित सब्जियाँ थीं, अज्ञात थी दाल
खजूर, ऊंटनी का दूध, दही और मक्खन पर्व,
अशन थे, कभी-कभी खाने पर सब निहाल
ऊंट के मांस का अधिक प्रयोग था
अज-मेष-मांस भी, बिस्तर सभी की खाल।³³

इस्लाम की स्थापना में 65 युद्ध हुए। 27 में मुहम्मद साहब स्वयं विद्यमान थे। 9 कठिन युद्ध थे, 9 में आहत भी हुए थे। दीन के प्रचार के लिए उन्होंने सब कुछ को स्वीकार किया था। मुहम्मद साहब आदर्श और यथार्थ के समन्वयी थे। उन्होंने भाईचारा का भाव पैदा किया, अरब गैरअरब का भेद मिटाया गुलामों के साथ सदभाव किया। उस समय समाज में अनुचित भोग-विलास था। स्वेच्छाचारिता थी। मुहम्मद साहब ने विरोध किया। ईश्वरीय विधान को नियम माना। "ईश्वर की इच्छा ही विधान है" का आशय उन्होंने समझाया, जड़ता का विरोध किया, यहूदी और ईसाइयों की कमियों को निकाला। भारतीय, यहूदी, ईसाई और मुसलमान को कवि ने निष्पक्षता के साथ दिखाया है। सामन्तवादी समाज के अवगुणों को कवि

ने बार-बार कहा है। तब अरब के समाज में मूर्तियों और नक्षत्रों के पूजक थे। मुहम्मद साहब ने सबको मुस्लिम समाज में लाने का सफल प्रयास किया। मुसलमान विश्व भर में फैले। अपने साथ वे इस्लाम को भी ले गये। अपने युद्धों का उन्होंने जिहाद बताया।

कवि ने अपने काव्य-जगत के माध्यम से दीर्घकालीन समाज को प्रस्तुत किया है - पूर्व-वैदिक काल ('वेदायन'), रामायण काल (पुरुषोत्तम) महाभारत काल ('कल्यान्त') और 20वीं सदी ('नेताचरित्रम्') के समाज को प्रस्तुत किया हैं प्रस्तुति सम्पन्न, सुन्दर, सत्य और आकर्षक है। इससे बहुत कुछ जाना, समझा और सीखा जा सकता है।



परिचय

- नाम : डॉ० अनुज प्रताप सिंह
- पिता : स्व० राजबहादुर सिंह
- माता : स्व० श्रीमती मोतीराजकुंवारी
- जन्म तिथि : तीन जनवरी, उन्नीस सौ तिरपन
- जन्म स्थान : ग्रा० पो०—लिलवाही, जनपद—
सोनभद्र, उ०प्र०
- शिक्षा : एम०ए० (हिन्दी), पीएच०डी०,
डी०लिट०, साहित्य महोपाध्याय
- व्यवसाय : कृषि एवं अध्यापन
- पद : उपाचार्य, हिन्दी विभाग, रणवीर
रणज्जय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अमेठी, सुलतानपुर, उ०प्र०
- सम्मान व उपाधियां : सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं से
करीब पच्चीस बड़े-बड़े सम्मान व
उपाधियां।
- प्रकाशित रचनाएं : कहानी, उपन्यास व समीक्षा ग्रंथ १८
विभिन्न पुस्तकों में।
कहानी, कविता, लेख, समीक्षा व भूमिकाएं
करीब ५०० विभिन्न राष्ट्रीय स्तर की
पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।
- वर्तमान सम्पर्क सूत्र : अन्तू रोड, वार्ड नं० १०, अमेठी,
सुलतानपुर, उ०प्र०—२२६५०५
- दूरभाष : ०५३६८—२३३२०१